

श्री विश्वकर्मा प्रणित

वास्तुविद्यायां

क्षीरार्णव

KHSHIRARNAVA

मूल सहित-सुप्रभा नाम्नी
हिन्दी-गुजराती भाषाटीका

: सपादक :

स्थपति प्रभाशंकर ओ. सोमपुरा

शिल्प विशारद

Edited by :

Sthapati Prabhashanker O. Sompura, Shilpa Visharad.

PALITANA (Saurashtra)

'शिल्प स्थापत्य' ग्रंथ प्राप्तिस्थान : Shilpa books will be available at

संपादक

१ स्थपति प्रभाशंकर ओ सोमपुरा
शिल्प विशारद,
गोरावाडी, पालीताणा

प्रकाशक

२ बलवंतराय सोमपुरा तथा भ्रातृपं
३, पथिक सोसायटी, अहमदाबाद-१३

३ सरस्वति पुस्तक भंडार, बुक सेलर्स,
रतनपोल, हाथीखाना, अहमदाबाद

४ महादेव रामचन्द्र जागुष्टे
त्रण दरवाजा अहमदाबाद

Edited by

1 **Prabhashanker O Sompura**
Architect Shilpi Visharad,
Gorawadi, **Palitana** (Gujarat)
(INDIA)

Publishers

2 **B P. Sompura & Bros**
3, Pathik Society,
Ahmedabad-13

3 **N. M. Tripathi & Co**
Princess Street, **Bombay-2**

4 **Motilal Banarasidas**
Bungalow Road, Jawahar
Nagar, **Delhi-7**

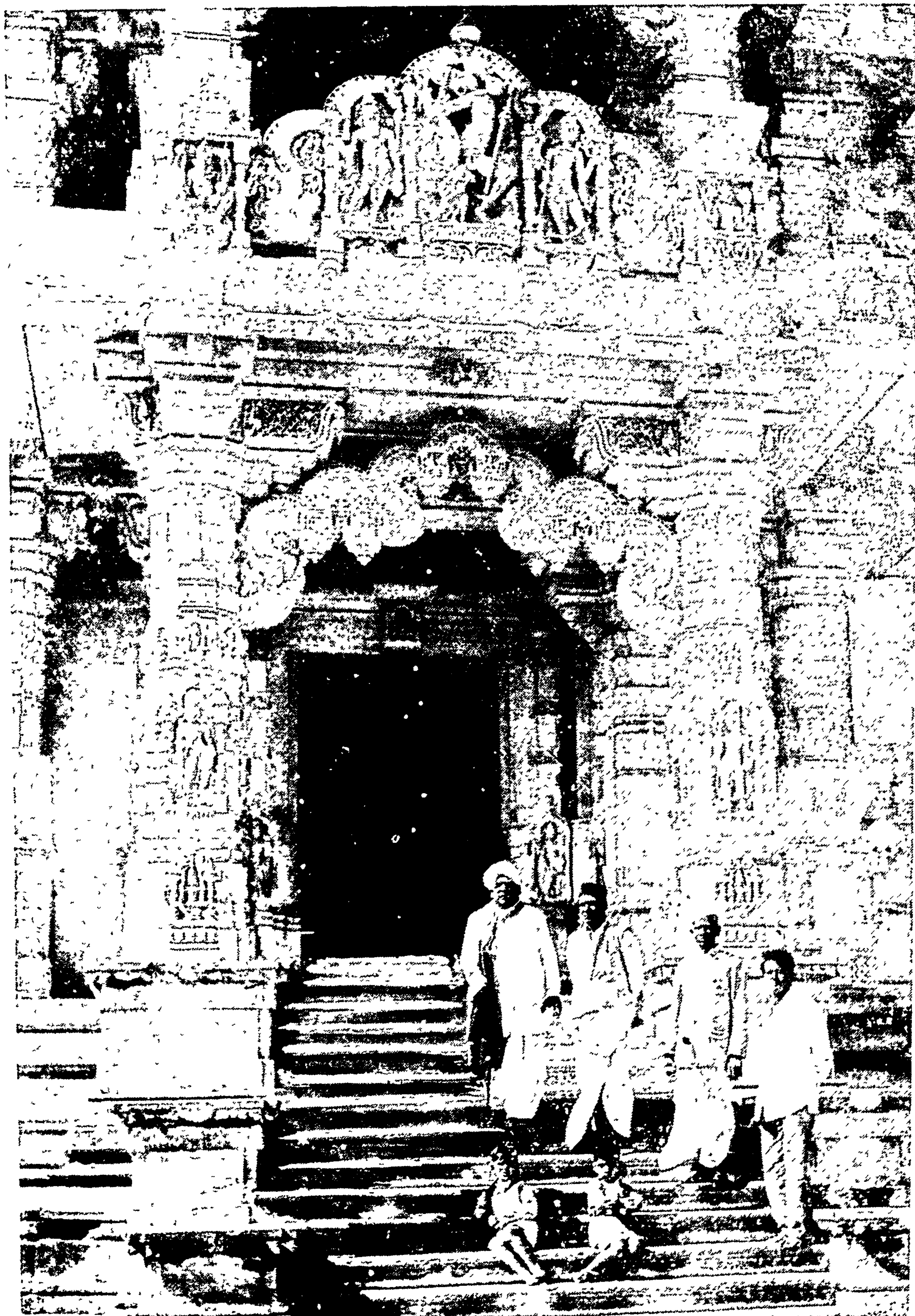
5 **Motilal Banarasidas**
Nepali Khapada, P B No
75, **Varanasi** (U P)

प्रत १००० 1000 Copies

मूल्य रु २५/- (पोस्टेज पृथक)

Price Rs 25/- (Postage Extra)

मुद्रक
श्री मणिलाल छगनलाल शाह
नवप्रभात प्रिन्टिंग प्रेस,
घीकांटा रोड, अहमदाबाद



सुप्रसिद्ध भगवान सोमनाथजी के मंदिरका प्रवेशभाग. मंदिर के निर्माता श्री प्रभाशंकर ओ. सोमपुरा खडे है

स्थपति प्रभाशङ्कर-ओघडभाई-सोमपुरा-शिल्पविशारदके वास्तुशास्त्रके ग्रंथसंग्रह

श्री विश्वकर्माप्रणित

१ क्षीरार्णव
२ वृक्षार्णव
३ दीपार्णव
४ जयपृच्छा
५ वास्तुविद्या
६ ज्ञानसंतान-अपराजित पृच्छा
७ ज्ञान रत्नकोश
८ सूत्रसंतान
९ विश्वकर्मा प्रकाश
१० वास्तुशास्त्रकारिका
११ विश्वकर्मा विद्याप्रकाश
१२ विश्वकर्मा वास्तुशास्त्रम्
१३ समराङ्गण सूत्रधार
१४ राजवल्लभ
१५ वास्तुसार
१६ वास्तुमण्डन
१७ प्रासादमण्डन
१८ रूपमण्डन
१९ रूपावतार
२० देवतामूर्ति प्रकरणम्
२१ ज्ञानसार अपराजित
२२ वास्तुमञ्जरी (ठक्करफेरु)
२३ वास्तुसार मडन
२४ बेडायाप्रासादतिलक सू० वीरपाल
२५ प्रमाणमंजरी सूत्र० मल्लदेव
२६ वास्तुराज सूत्र० राजसिंह
२७ वास्तुराज अन्य सर्व विषय
२८ वास्तुकौतुक सूत्र० गणेश
२९ कलानिधि सूत्र० गोविंद
३० वास्तुउद्धारधोरणी
३१ वास्त्वध्याय सूत्र० कौशिक
३२ सुखानंदवास्तु सूत्र० सुखानंद
३३ वास्तुरत्नतिलक
३४ जलाश्रयाधिकार
३५ वेध्याविचार
३६ वास्तुप्रदीप प० वासुदेव
३७ सन्ध्शिल्पतत्र
३८ वापिलक्षणम्
३९ मयशास्त्र
४० शिल्पशास्त्र (उडीया)
४१ **लक्षण समुच्चय** (विरोचन प्रणित)
४२ नारदीय शिल्प

उपग्रंथ (छुटक प्रकरण)

१ आयतत्त्व
२ केशराज
३ जिनप्रासाद
४ ऋषभादिप्रासाद
५ मेरुविंशतिभेद
६ लिङ्गलक्षण

७ श्री वश्यप्रासाद लक्षण

नीतिशास्त्रके ग्रंथ मुद्रित

१ शुक्रनिति २ विवेकविलास
३ बृहत्संहिता ४ वसिष्ठसंहिता
५ नारदसंहिता ६ गर्गसंहिता
७ हयशिर्ष पंचरात्र
८ अभिलषितार्थ चिन्तामणी
९ मानसोल्लास

द्राविड शिल्पग्रंथ

१ मयमतम् २ शिल्परत्नम्
३ मानसार
४ काश्यपशिल्प ५ वास्तुविद्या
६ मनुष्यालयचंद्रिका
७ इशान।शिवगुरुदेव पद्धति (३)
८ विश्वकर्माय शिल्प

पुराण व्यासमुनि

१ मत्स्य २ अग्नि ३ भविष्य
४ गरुड ५ स्कंध ६ उत्कल
७ विष्णुधर्मोत्तर

आगम ग्रंथ

१ सुप्रभेद २ कामिक
३ किरणा ४ अंशुमनभेद
५ सकला ६ सिद्धांत शेखर
७ जीर्णोद्धार दर्शक
८ सारसंग्रह ९ पूर्वकीरण



प्रस्तावना

किसी भी देशके प्राचीन स्थापत्य और साहित्यसे ही उस देशकी संस्कृतिका मूल्य आँका जाता है। विद्या और कला देशका अनमोल धन है। शिल्प–स्थापत्य मानव जीवनका अति उपयोगी और मर्मपूर्ण अंग है।

भारतीय शिल्प स्थापत्य (वास्तुविद्या) का प्रारम्भ काल कब से माना जाय अिस बारेमें निर्णय करनेमें प्राचीन साहित्यके आधार लेनेकी आवश्यकता है। ऋग्वेद, ब्राह्मण ग्रंथों, रामायण, महाभारत, पुराण, जैन आगमों और बौद्ध ग्रंथों आदि साहित्यके संदर्भ सहायक हो सकते हैं। ऋग्वेदके सातवें मंडलके दो अध्यायोंमें घरको सुदृढ स्तंभोंके साथ वास्तुपति इंद्रकी स्तुति है। यहाँ इंद्रको देवोंके स्थपत्ति त्वष्ठा कहा गया है। विश्वकर्मा को समग्र विश्वके त्वष्टा माना गया है, उनके पुत्रको भी त्वष्टा कहकर उनके शिष्य विभुकी स्तुति की गई है।

और ऋग्वेदमें वास्तुविद्याके ज्ञाता अगस्त्य और वसिष्ठके नाम भी दिये गये हैं। त्वष्टा और विभुने इन्द्रको वज्र बना दिया था। पाषाणके बनाये हुए सौ नगरोंमें सप्रमाण भवनोंकी रचनाका उल्लेख मिलता है। अिससें हम यह अनुमान लगा सकते है कि स्थापत्य कलाका प्रारम्भ ऋग्वेदसे भी बहुत वर्षोंसे पहले हुआ होगा। अथर्ववेदके सूक्तोंमें स्थापत्यकलाके बहुत शब्द पाये जाते हैं। सामवेदके गृह्यसूत्रमें गृहारम्भकी धार्मिक क्रियाके तीन अध्याय है। आश्वलायन गृह्यसूत्रमें भी वास्तु विद्याके पर तीन अध्याय हैं। भूमिको अतीव वंदनीय मानकर उसका पूजन और उसकी स्तुति दी गई है। इन सब बातोंको होते हुए भी ऋग्वेद या ब्राह्मण ग्रंथोंमें वास्तुविद्याके बारेमें स्वतन्त्र अध्याय नहीं मिलते हैं। मूर्तिपूजाका प्रारम्भ भी वैदिक ब्राह्मण युगमें हुआ था।

संसारके प्रत्येक प्राणीको जन्मसे ही शीत उष्ण और वर्षाकी प्राकृतिक प्रतिकूलताओंके सामने सुरक्षाकी जरूरत महसूस हुई इसीसे ही वास्तुविद्याका प्रारम्भ स्थूल रूपसे आदिकालमें माना जा सकता है। पर्वतोंकी गुफा या पर्णकुटि बनाकर मानवीने वास किया। वास्तुद्रव्यमें प्रथम घास और वांसका उपयोग हुआ, बादमें काष्टका, बादमें ईटोंका उपयोग होने लगा। अंतमें पाषाणका उपयोग बाँधकामोंमें होने लगा।

शुक्राचार्य कहते हैं कि विद्या अनंत है और कलाकी तो गिनती ही नहीं हो सकती। परन्तु मुख्य विद्या बत्तीस और कलाओं चौसठ उनके द्वारा कही

गई हैं। वे विद्या और कलाकी सामान्य व्याख्या देते हुए कहते हैं कि 'जो कार्य वाणीसे हो सके वह विद्या है और मूक मनुष्य भी जो कार्य कर सके वह कला है।' शिल्प, चित्र इत्यादि मूक भावे हो सके उसको कला कहा है।

भिन्न भिन्न आचार्योंने कलाकी संख्याको कम और अधिक बताया है। शुक्राचार्यने चौसठ कलाएं बतायी हैं। समुद्र पालने जैन सूत्रमें ७२ कलाएं, काम सूत्रमें यशोधरने ६४ (अवान्तरसे ६४ × ८ = ५१२ कलाएं कही गई हैं।) ललित विस्तरामें ६४, काम सूत्रमें ७७, श्रीमद् भागवतमें ६४ कलाएं गिनी गई हैं।

विविध कलाएं विविध क्रियामें होती हैं। मनुष्य जिस कलाका आश्रय लेता है उस कला परसे उसकी जातिका नाम होता है। इस तरह कलाके वर्गानुसार ज्ञातियोंके समूह भी बनने लगे। चार वर्णाश्रमोंमेंसे भेद पडने लगे।

वास्तुशास्त्र स्थापत्य और शिल्पकी व्याख्या—

वास्तुविद्या या वास्तुशास्त्र, स्थापत्य और शिल्प शब्दकी व्याख्याके अभावसे उसका मिश्र स्वरूप समझकर भाषाका प्रयोग हो रहा है। परन्तु वास्तुशास्त्र इन सबोंसे व्यापक अर्थमें है। उसका अंतर्गत स्थापत्य और स्थापत्यका अंतर्गत शिल्प है।

१. वास्तुशास्त्र–देशपथ, नगर, दुर्ग, जलाश्रयादि सर्व, उद्यानवाटिका आराम स्थानों, राज प्रासादों, देव प्रासादों, भवनों, सामान्यगृहों, शल्यज्ञान, शिराज्ञान, भूमिपरीक्षा इन सर्व विद्या वास्तुशास्त्र है।

२ स्थापत्य–दुर्ग, जलाश्रयो, राजप्रासादो, देवप्रासाद, भवनों, सामान्यगृहो वगैरहके बाँधकाम स्थापत्य है। इनके शास्त्रको विशेषकर स्थापत्य शिल्पशास्त्र कहा गया है।

३ शिल्प–दुर्गके द्वार, राजभवन, देवप्रासाद, जलाश्रयो वगैरह स्थापत्योंके सुशोभन, अलंकृति, गवाक्ष, झरोखे, नकशी, मूर्तियाँ=प्रतिमाऐं ये सब शिल्प है।

वास्तुशास्त्रके प्रणेता—मत्स्यपुराणमें शिल्पके अठारह आचार्यो के नाम ऋषि-मुनियों आदि के दिये हुए हैं। बृहत् संहितामें दूसरे सात आचार्यों के नाम दिये हुए हैं। अग्निपुराण अ० ३९ में लोकाख्यायिकामें शिल्पशास्त्रके पर पचीस ग्रंथोंकी नोंध दी हुई है। उनमें कई तांत्रिक और क्रियाओंके ग्रंथ हैं। परन्तु उनमें शिल्पशास्त्रके बहुत उल्लेख हैं। स्मृतिकार आचार्यों के संहिता ग्रंथोंमें और नीतिशास्त्रके ग्रंथोंमें और पुराणोंमें भी शिल्पशास्त्रके बहुत उल्लेख है। विश्वकर्म

प्रकाशमें प्रारम्भमें स्तुति करते कहा है कि महादेवने पाराशरको वास्तुशास्त्रका ज्ञान दिया। पाराशरे बृहद्रथको और बृहद्रथने विश्वकर्माको वह ज्ञान दिया। 'मानसार' में बत्तीस शिल्पाचार्यों के नाम दिये हुए हैं। विश्वकर्माके मानसपुत्र चार जय मय सिद्धार्थ और अपराजित नामसे थे। कई ग्रंथोंमें सिद्धार्थको त्वष्टा भी कहा है। उन्होंने लोह कर्म, यंत्रकर्ममें कौशल्य प्राप्त किया। बाकी पुत्रोंने विश्वकर्माको प्रश्नों करके वास्तुविद्याका संपादन किया। उनके संवादके रूपमें ग्रंथ रचे गये हैं।

स्थापत्योंका विकास क्रम

स्थापत्योंमें मुख्यतया देवमंदिरोंके विविध विभाग घाट पद्धतिका विकास क्रमशः पृथक् पृथक् कालमें और देशके खास विभागमें प्रचलित एक या दूसरी सांप्रदायिक शैलीमें देशके उस विभागमें कालबलसे नौवीं दशवीं शताब्दी तक शिल्पकृतियोंमें परिवर्तन होते गये। उसके बाद उसकी रचनाके खास सिद्धांत निश्चित हुए। इस तरह देवमंदिरादिकी रचनाके रूढ नियम पिछले कालमें अर्थात् बारहवीं शताब्दीसे निश्चित होकर लिखे गये यह निःशंक माना जा सकता है।

पाश्चात्य विद्वानों भारतीय शिल्पकलाके सांप्रदायिक भेद मानकर शिल्पकी रचनाकी पहचान कराते है, यह बिलकुल अयोग्य है। यह तो सिर्फ प्रवर्तमान शिल्प पद्धतिमें कालभेद या तो प्रांतिय भेद हैं।

भारतका शिल्पी वर्ग—

भारतका प्रमुख शिल्पी वर्ग—भारतके प्रत्येक प्रांतमें प्राचीन वास्तुशास्त्रका अभ्यासी वर्ग विद्यमान था। वे अपने अपने प्रांतके प्रासादोंकी शैली रचना करते थे। कालबलसे या धर्मके प्रति दुर्लक्ष्यसे या विधर्मिओंकी धर्मांधताके कारण अमुक प्रांतमें यह वर्ग नष्ट हो गया है या धर्म परिवर्तनसें नष्ट हुआ है। बंगाल, बिहार, आंध्र, पंजाब, सिंध, सरहद प्रांत या कश्मिरमें तेरह चौदहवीं शताब्दी तक इस वर्गका अस्तित्व था।

१. पश्चिम भारतमें **सोमपुरा** ब्राह्मण शिल्पीओं–वास्तुशास्त्रके निष्णात् माने जाते हैं। अभी भी वे अपनी कलाको सुरक्षित बनानेका प्रयास करते हैं। गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, राजस्थान और मेवाडमें वे वेर विखेर वसते हैं। स्कंदपुराणके कथनानुसार प्रभासके पुत्र विश्वकर्माके अवतार रूप उनको माना गया है। वे ब्राह्मण जातिके होते हुए भी यजमानवृत्तिका दान नहीं स्वीकारते हैं। शिल्पज्ञ गृहस्थके रूपमें जीवन व्ययतित करनेका आग्रह उनका है। वे शिल्प

ग्रंथके संग्रह कर्ता है। उनके चार्ह गोत्र ऋषि कुलके है। वे यज्ञोपवित रखते है। सगोत्र लग्न नही करते है। और मृत्युके पश्चात अग्नि संस्कार करते हैं।

२ भारतके पूर्वमे उडीया–ओरिस्सा प्रदेशमे महाराणा नामक शिल्पी वर्ग है। वह शिल्पग्रंथोंका संग्रहकर्ता है। मंदिर बनाता है। हालमे उसका व्यवसाय विशेषत मूर्तिकलाका है। महाराणा ज्ञातिमे पाषाण कर्म करनेवाले लोगोंको राज्य द्वारा महापात्रका मानद् पद भी मिला हुआ है। उसी तरह लोह या काष्ठके काम करनेवालोंको 'चोधरी' और 'ओझा'का मानद् पद भी मिला है। खोरधाके राजाने लोहकर्म करनेवाले एक परिवारको 'दास'का पद दिया है। पाषाण कर्म करनेवालेमे स्थपति मूर्तिकार भी है। इन सभी काष्ठलोहादि कामों करनेवाली एक ही ज्ञाति महाराणा नामकी है। उसमे परस्पर रोटी बेटी व्यवहार है। उन लोगोंमे क्षत्रिय हो या उससे निम्नवर्ग हो यह नही कहा जा सकता है। वे यज्ञोपवित नहीं रखते हैं। स्त्रियाँ पुन-र्लग्न कर सकती है। उडीयामे ब्राह्मणादिमे मत्स्याहारकी छूट है। महाराणा ज्ञातिमे मृत्युके बाद अग्निसंस्कार होता है।

३ द्रविड दक्षिण–मदुराई और मद्रासकी और विराट विश्व ब्राह्मण आचार्यके नामसे अपनेको बताता हुआ शिल्पीवर्ग है। वह शिल्पी ग्रंथका संग्रहकर्ता है। मंदिरका और मूर्तिका काम करता है। विधिसे यज्ञोपवित धारण करता है। उस वर्गमे विधवा पुनर्लग्नकी प्रथा है। उसके तीन गोत्र है। १ अगस्त्य २ राज्यगुरु ३ सन्मुख सरस्वती सगोत्र लग्न नहीं करता है। मृत्युके बाद भूमिदाह देता है। उस प्रदेशमे नायकर, पिल्लेवाल, केन्टर और मुग्लीआर असी निम्नजातिके कारीगर शिल्पकाम करते हैं। परन्तु वे मूलमे शिल्पी जातिके नहीं हैं। महाबलिपुरममे गणपति स्थपति और कांचिपुरममे गौरीशंकर स्थपति वहाँकी शिल्पशालाओंमे अध्यापक है।

४ कर्णाटक–मैसुर–आंध्र तेलगण और महाराष्ट्र प्रदेशमे पंचाननके नामसे विश्वकर्मा जातिके शिल्पी बसते है। उनके पाँच कर्म व्यवसायके अनुसार उसमे गोत्र है। (१) पाषाणकर्मवालेका, गोत्र प्रत्नस (२) लोहकर्म, गोत्र सानस (३) काष्ठकर्म, गोत्र सनातन (४) कंसकार, गोत्र अभनवश्व (५) सुवर्णकार, गोत्र सूपर्यास इन पाँचोंका कर्मके अनुसार गोत्र है। ब्राह्मणके सिवा वे किसीके हाथका भोजन नही करते हैं। इन पाँचोमे परस्पर रोटी बेटीका व्यवहार है। वे सगोत्र लग्न नहीं करते है। यज्ञोपवित धारण करते हैं। स्त्रियाँ पुनर्लग्न नहीं करती हैं। उनमे कुछ मांसाहारी भी है। वे शिल्पग्रंथोंका संग्रह करते

हैं । वे मंदिर, रथ, मूर्ति और काष्ट वगैरहका काम करते हैं । गायत्री आदि का नित्यपाठ करते हैं। मृत्युके बाद अग्निसंस्कार करते हैं। आंध्रमें श्रीकाकुलम् लक्ष्मीपुरम्में उदुपुडु नामकी शिल्पीओंकी जाति थी। उसके दो चार घर वहाँ थे । उन लोगोंके पास "सारस्वती विश्वकर्मीयम" नामका ग्रंथ था। उनका अस्तित्व अभी नहीं मिलता है। यह परिवार शिल्पकार्यके अभावमें अन्य व्यवसायमें पडा हुआ मालुम पडता है।

५ तैलंगणमें विश्वकर्मा शिल्पी बसते हैं । वे शिल्पग्रंथका रक्षण करते हैं। मंदिर और मूर्तिका काम करते हैं । काष्ट और लोहका काम भी करते हैं । करीब तीन सौ सालसे मुस्लीम राज्य प्रदेशोंमें रहनेसे सहवास दोषसे मांसाहार करते हैं । तो भी उनका ब्रह्मत्व कम नहीं हुआ है । गायत्री पाठ पूजा आदि करते हैं । यज्ञोपवित धारण करते हैं । किसी भी उच्च जातिके ब्राह्मणके हाथका भोजन भी लेते नहीं हैं । उपरोक्त पंचाननज्ञातिमें वे नहीं गिने जाते हैं । मृत्युके बाद अग्निसंस्कार भी करते हैं ।

कर्णाटक मैसुरमें कन्नडी भाषा–मद्रास प्रदेशमें तमिल–केरालामें मलयालम और आंध्र तैलंगण प्रदेशमें तेलुगु भाषाका व्यवहार लोगोंमें है । उनके शिल्पग्रंथ संस्कृत नागरीलिपीके बदले उनकी लिपीमें लिखे हुए हैं ।

६ जयपुर अलवरके प्रदेशोंमें गौड ब्राह्मणोंकी जातिके शिल्पीओं विशेषकर प्रतिमाका कुशल काम करते हैं। मंदिरोंका निर्माण भी करते हैं। यज्ञोपवित विधिसे धारण करते हैं । शुद्ध शाकाहारी हैं । उनमेंसे कभी देहातोंमें कृषिकर्म भी करते हैं । मृत्युके बाद अग्नि संस्कारका रिवाज है ।

मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेशमें कभी भागोंमें 'जांगड' नामकी जाति अपनेको शिल्पीवर्गमें गिनती है । उनमें कभी सादा पाषाणकर्म, काष्टकर्म, चित्रकर्म और लोहकर्म करते हैं । कभी देहातोंमें कृषिकर्म भी करते हैं । विश्वकर्माको अपने इष्टदेव मानते हैं । जांगडमें कभी यंत्रविद्यामें कुशल हैं, जिस तरह गुजरातमें पंचाल जाति है ।

७ गुजरात सौराष्ट्र और कच्छमें वैश्य, मेवाडा, गुर्जर, पंचोली जाति काष्टकर्ममें प्रवीण है । पाँचवीं पंचाल जातिके शिल्पीओं लोहारका काम करते हैं । वे सब विश्वकर्माको अपने इष्टदेव मानते हैं । आगेकी चारों जातियोंके शिल्पी सुथारी काम रथकाम देवमंदिरोंके साधनों वगैरह चांदीका अलंकृत काम करते हैं । पंचालभाइओं लोहकर्ममें और यंत्र विद्यामें भी 'जांगड' जातिकी

तरह कुशल है । उपरोक्त पाँचों जातिमे पचोली अपनेको उच्च मानते है । यज्ञोपवित भी धारण करते है ।

स्थापत्याधिकारी शिल्पग्रथोंमे उल्लेख है कि यजमानको चाहिये कि गुणदोष परखकर वह शिल्पीका सत्कार करें । और अपने कार्यका प्रारम्भ करे । शास्त्रकारोने बाँधकामके अधिकारीके चार वर्ग बनाये है । १ स्थपति (प्रमुख) २ सूत्रग्राही जिसको शिल्पीओंकी भाषामे "सुतर छोडा" कहते है । वह नकशे बनानेमे और कार्यकी शुरूआत करनेवाला निपुण होता है । ३ तक्षक-सूत्रमानके प्रमाणको जाननेवाला सुंदर-काष्ट या पाषाणादि कार्य या नकशीरूप करनेवाला करानेवाला ४ वर्धकी-दो प्रकार है । एक तो काष्ठकर्म करनेवाला वर्धकी (सुथार-सूत्रधार) और दूसरा माटीकार्यमे निपुण-मोडलीस्ट ।

भारतीय शिल्पीयोंकी प्रशंसा

जहाँ शिल्पीओंने जड पाषाणको सजीवरूप देकर पुराण के काव्यको हुबहु बताया है, जिसका दर्शनकर गुणज्ञ प्रेक्षकों शिल्पीकी सर्जनशक्तिकी प्रशसा करते नहीं थकते हैं, यहाँ टकनके शिल्पसे तथा पिंछीके चित्रसे ये शिल्पी अमर कृतियोंका निर्माण कर गये है । अखड पहाडमेसे कडारी हुई इलोराकी काव्यमय विशाल स्थापत्यकी रचना तो शिल्पीकी अद्‌भूत चातुर्य कलाका बेनमून प्रतीक है ।

भारतके शिल्पीओंने पुराणोंके प्रसगोंका पाषाणमे सजीव कडारें है । उनके ओजारकी सर्जनशक्ति परमप्रशसाके पात्र है । पाषाणके शिल्प परसे शौर्य और धर्मबोध प्राप्त होता है । जडपाषाणको वाणी देनेवाले कुशल शिल्पी भी कवि ही हैं । वे बहुत धन्यवादके पात्र है । अलबत्त कला किसी धर्म या जातिकी नही है । वह तो समग्र मानव समाजकी है ।

जड पाषाणमे प्रेम, शौर्य, हास्य, करुणा या किसी भी भावको मूर्त करना कठिन है। चित्रकार तो रगरेखासे वह सरलतासे बता सकता है। परतु शिल्पी ऐसे रगोंकी सहायके बिना ही पाषाणमे भावकी सृष्टि खडा करता है। उधर ही उसकी अपूर्व शक्तिका परिचय होता है । भारतीय शिल्प स्थापत्य आज भी जियन्त कला है । युरोपिय शिल्पीओंके साथ तुलना करते कहना पडता है कि भारतीय शिल्पका लक्षण अपनी कृतिमे केवल भावना उतारनेका होता है । जब युरोपी शिल्पी तादृश्यताका निरूपण करता है । उन दोनोंके मूर्ति-विधानका उदाहरण लें । अनेक कवियोंने स्त्रीकी प्रकृति विकृतिके गुणगान किये है । उसके सौंदर्यका पान करानेवाले भवभूति और कालिदास जेसे महान कविओंने

उसके रूप गुणकी शाश्वतगाथा गाई है। उसकी प्रकृतिसे प्रसन्न भारतीय शिल्पीओंने स्त्री सौंदर्यको मातृत्व भावसे प्रदर्शित किया है जब युरोपी शिल्पीओंने वासनाके फलरूप स्त्रीको कंडारी है।

भारतीय शिल्पीओंने भारतीय जीवन दर्शन और संस्कृतिको अपना सर्वोत्तम लक्ष्य मानकर राष्ट्रके पवित्र स्थानोंको चुन कर वहाँ अपना जीवन बिताकर विश्वकी शिल्पकलाके इतिहासमें अद्वितीय विशाल भवनोंका निर्माण किया हैं। दीर्घ काय शिलाओंको तोडकर भूख और तृपाकी भी परवाह किये बिना अपने धर्मकी महत्तम भावनाको राष्ट्रके चरणोंमें समर्पित किया है। जनताने भी शंखनादसे अपने शिल्पकारोंकी अक्षय कीर्तिका चतुर्दिश प्रसारण किया है। ऐसे शिल्पीओंकी अद्भूत कलाके कारण जगतने भारतको अमरपद दिया है। ऐसे पुण्यश्लोक शिल्पीओंको कोटि कोटि धन्यवाद !

भारतके उत्तम कला धामों पर तेरहवीं सदीके बाद दुर्भाग्यके चक्र चल गये, चारों और धर्मांधताके बहुतसे प्रहार सात सौ साल तक हुए, तो भी भारतीय कला और संस्कृति जिवित रही है उसकी दृढ बुनियादको चलित नहीं किया जा सका है। उसके अवशेष भी गौरवप्रद हैं। आज विदेशी कला-पारखुओं आश्चर्य मुग्ध होकर उनको देखते हैं। भारतीय शिश्पीओंने कलाके द्वारा स्वर्गको-वैकुंठको पृथ्वीपर उतारा है। राष्ट्र जीवनको समृद्ध कर प्रेरणा दी है। ऐसी स्थापत्य कलाके प्रति आज राज्य कर्ता सरकार वेपरवाह बनी है। श्रीमंत वर्ग दुर्लक्ष्य करता है यह देशका दुर्भाग्य है। क्षणिक मनोरंजन नृत्य-गीतकी कलाको वर्तमानमें राज्याश्रय मिल रहा है। जब स्थायी ऐसी सुंदर शिल्प कलाके प्रति दुर्लक्ष्य किया जाता है। यह भी कालका वैचित्र्य माननेके सिवा और क्या ?

भारतीय कलामें आयी हुई विकृति

भारतीय कलामें आयी हुई पाश्चात्य विकृति—वर्तमान शिल्प स्थापत्य और चित्र इन तीनों कलाओंमें आयी हुई विकृति प्राचीन भारतीय कलाका विनाश करेगी। १. स्थापत्यमें पश्चिमका अनुकरण कर पक्षीके घोंसले जैसे बेढंग और कढंगे विकृत और कलाविहीन भवन बन रहे हैं। २. शिल्पमें जहाँ सुंदर मूर्तियोंका सर्जन आँख और मनको आनंद प्रद था उनके स्थान पर सुखे काठके ठूंठे कि, जिनको हाथ, पैर, मुँह या माथाका ठिकाना नहीं है उनकी प्रशंसा करते हैं, जो वास्तवमें विकृति है। ३. चित्रकला उसकी तादृश्यता और छाया

प्रकाश या रगोंकी सुदर रचनासे शोभती थी, वैसी कलाको देखते ही प्रसशक आनद विभोर हो उठता था, उसके स्थान पर जिसके बारेमे कुछ भी समझमे न आये ऐसी टेढी मेढी रेखाओं या शण जैसे तुच्छ द्रव्योंमे रगके धब्बेडेमे कल्पनाको उतारकर उसका गुणगान कर कलाका सत्यानाश करनेवाले मोर्डन आर्टके नामसे जगतकी वचना कर रहे है। ऐमी विकृतिको देखकर घृणा और दु:खकी लागणी होती है।

जिस कलाको दूरसे देखते ही प्रेक्षक उसके गुण और मर्मको जानकर आनदित होता था, उसके बदले यह कही जाती मोडर्न आर्ट नामकी कृति प्रेक्षकको 'वह क्या चीज है?' यह नही समझा सकती है। ऐसी विकृतिको 'आर्ट' के नाम पर प्रदर्शनोंमे दिखाकर जगतको उल्लू बनाया जाता है। ऐसी कलाविहीन विकृतिके प्रवाहके सामने देशकी प्राचीन कलावाच्छओंको झुबेश उठाकर भारतीय कलाकी सुरक्षा करनेका अपना फर्ज नहीं भूलना चाहिये।

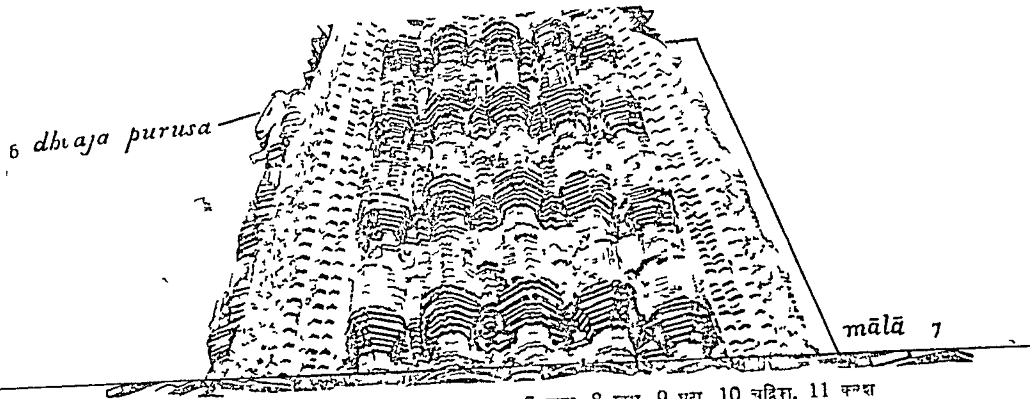
भारतके प्रासादकी जातियाँ—

प्रासाद वास्तुग्रथों मे मुख्य विषयमे जातिके बारेमे जानना अति आवश्यक है। वास्तुग्रथों मे बतायी हुई धार्मिक विधि और ज्योतिष विषय और ऐसी दूसरी बावतों की लम्बी चर्चामे स्थापत्यके अभ्याशीओंकी कम रूचि होती है।

क्षीरार्णव-अपराजितपृच्छा और ज्ञानरत्नकोष जैसे नागरादि शिल्प ग्रथोंमे भारतीय प्रदेशोंमे प्रवर्तमान प्रासादकी चौदह जातियाँ कही गई हैं। वास्तुराज, वास्तुमजरी और प्रासाद मडन जैसे पन्द्रहवी-सोलहवीं सदीके ग्रन्थो मे भी उसकी नोंध ली गई है। मण्डनने चौदहमें से आठ जातिओंको श्रेष्ठ कहा है। अपराजितपृच्छाकारने चौदह जातिओंके बारेमे पूरे चार अध्यायो (१०३ से १०६) विगतसे दिये हुए हैं। १ नागर, २ द्रविड, ३ लतिन, ४ भूमिज, ५ वराट, ६ विमान, ७ मिश्र, ८ सांधार, ९ विमान नागर, १० विमान पुष्पक ११ वलभी १२ फासनाकार (नपुमकादि), १३ सिंहावलोकन, १४ रथारूह।

समरांगण सूत्रधार अ० ५२ मे इस विषयकी चर्चा करता एक छोटा-सा अध्याय है। लेकिन उसमे चौदह जातियाँ नही कई है और उस विषय के पर विस्तृत चर्चा भी जातिके भेद करके नहीं कि गई है। भूमिज, लतिन, नागर, द्रविड, वलभी जातियाँ कही गई है। लेकिन उसमे अपराजितपृच्छाकार की तरह व्याख्या नहीं की गई है।

लक्षणसमुच्चयमे छ प्रादेश प्रकार कहे है। १ कलिङ्ग, २ नागर, ३



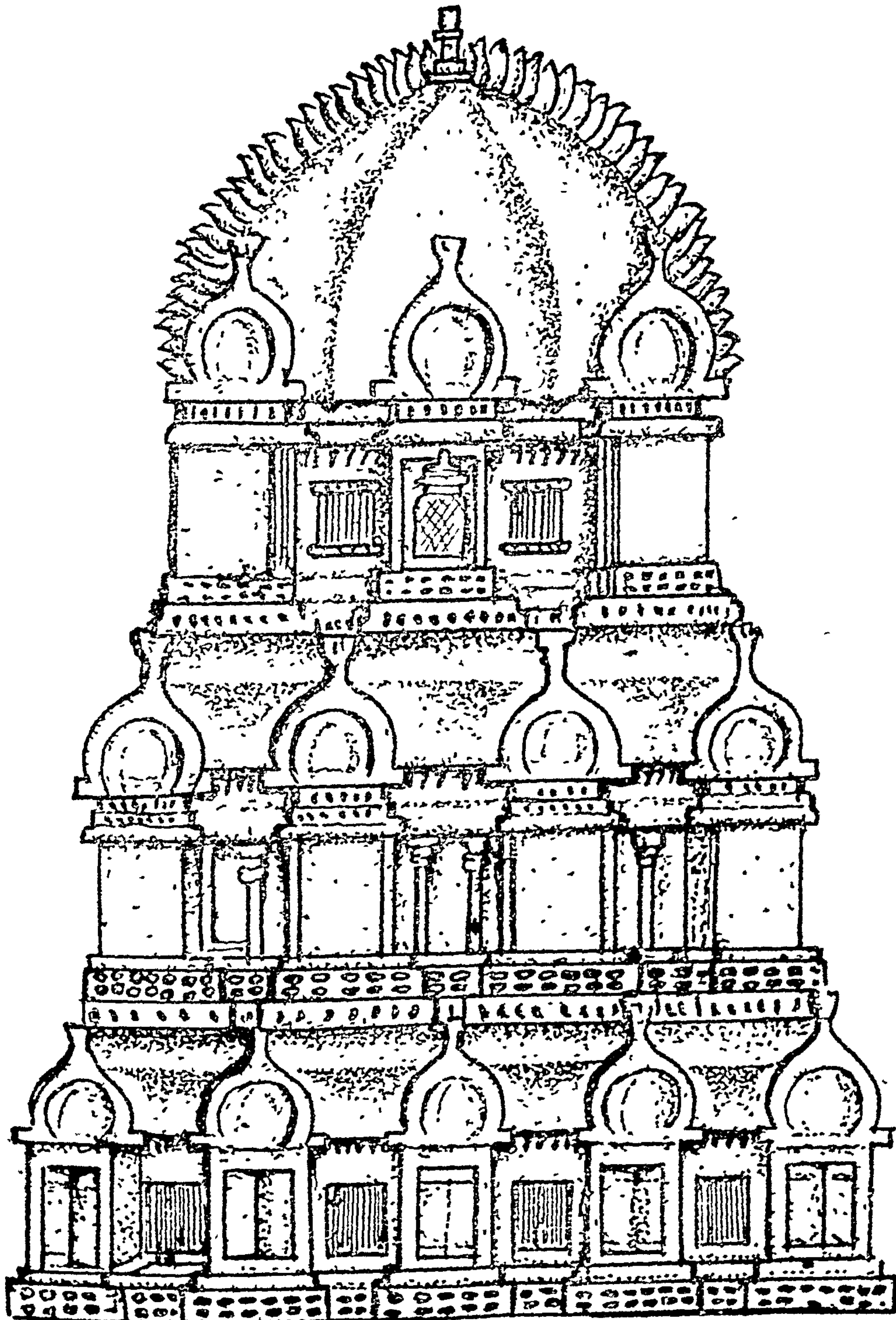
1 वरंडिका, 2 प्रहार, 3 रथिका, 4 शुरसेनक, 5 स्तम्भकूट 6 ध्वजापुरुष, 7 माला, 8 स्कंध, 9 घंटा, 10 चंद्रिका, 11 कलश

ीराणंव प्रस्तावना प्रासाद जाति शैली

Sthapati Prabhashanker O Sompura, Shilpa Visharad

लाट, ४ वराट, ५ द्राविड, ६ गौड ये छः प्रथायें बताई है। लक्षणसमुच्चयकारने विधि स्वरूपानुसार दूसरी छः जातियाँ बताई हैं। जिसके अनुसार १ लतिन, २ कुटिन, ३ शेखरी, ४ चक्रीण, ५ भूमिज, ६ सांधार—इनके उपरांत वलभी और फासनाकारके दो प्रकार निर्दिष्ट हैं।

द्रविड प्रदेशके दशवीं सदीके कामिकागम के अ० ४९ में भी छः प्रकार बताये हैं। १ नागर २ द्रविड ३ वेसर ४ वराट ५ कलिंग ६ सर्वदेशी।



घंटाशालग्रामके पहेली शताब्दीका स्तूपमें द्रविड प्रासाद शिखरके तकतीमें-अंकन..
लखनऊ म्युजियम

द्रविड शिल्पग्रंथोंमे काश्यपशिल्प और मयमतम् और शिल्परत्नमे तो सिर्फ तीन ही जातियाँ बताई गई हैं। १ नागर २ द्रविड ३ वेसर। भारतके पूर्व, पश्चिम, उत्तर प्रदेशो मे नागर, दक्षिण मे नीचे, द्रविड और उन दोनोंके बिचके प्रदेशोंमे वेसर जातिके प्रासादोंकी शैली प्रवर्तमान है ऐसा बताया है।

कामिकागम को बाद करते बाकी के द्रविड वास्तुग्रन्थो मे जो उपरोक्त जातिका विवरण किया गया है उसके लक्षणके आधार पर केवल दक्षिणके द्रविड मंदिरों को ही लागु होता है। उत्तर भारत की नागर शैली दक्षिण भारत की नागर शैलीकी विभावना एक दूसरेसे बिलकुल भिन्न है। द्रविड मंदिरों कोशलमे राजीवलोचन और सौराष्ट्र के नीलेश्वरका प्रख्यात है।

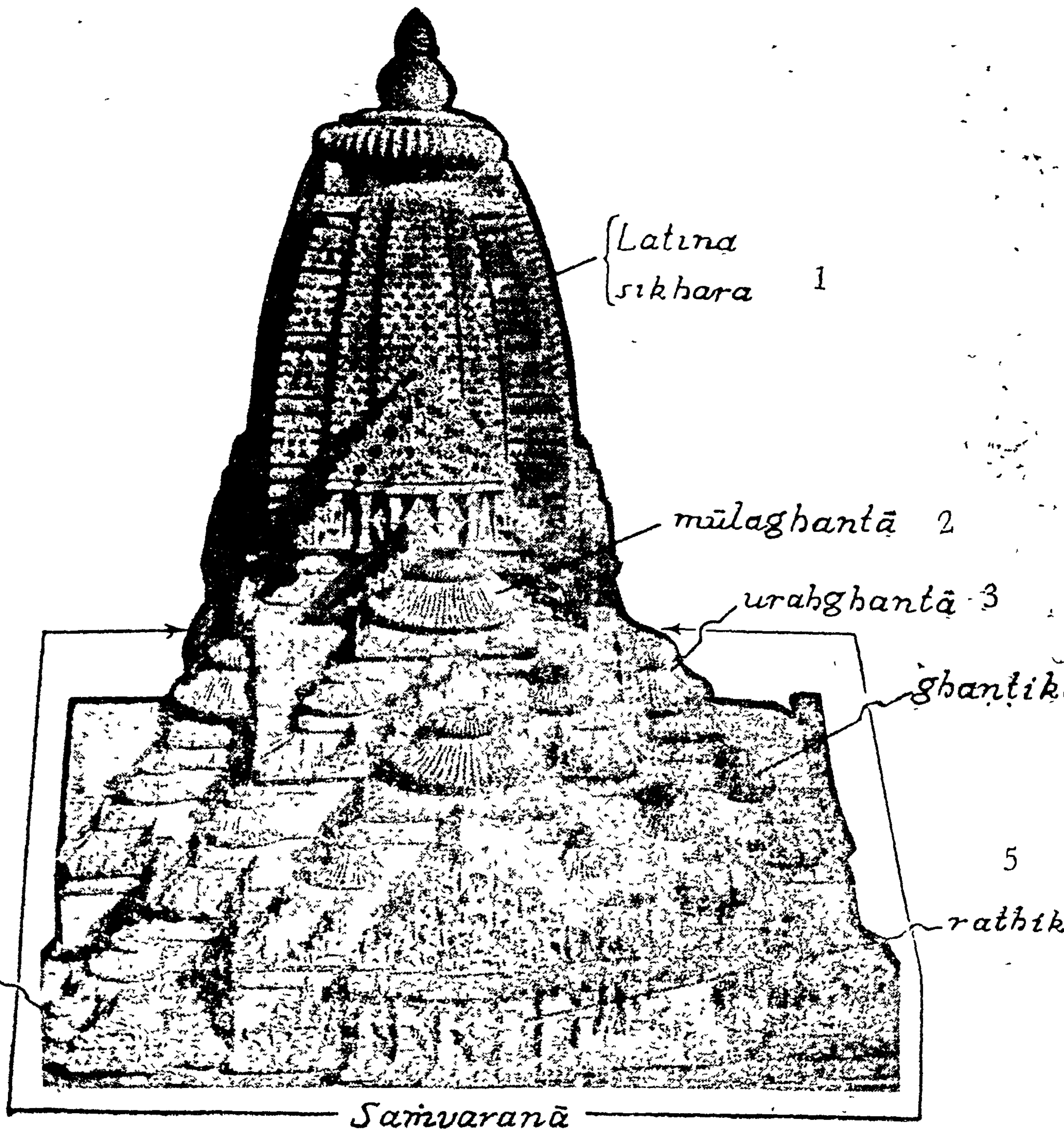
लतिन, भूमिज, फामना और वलभीके प्रकार बहुधा प्रादेशिक शैली के प्रख्यात है। साधारकी व्याख्याके अनुसार प्रदक्षिणा मार्ग सहितके प्रासाद, उनके लक्षण और प्रकारका वर्णन अस्पष्ट है। प्रदक्षिणा मार्गवाले प्रासादों द्रविड के अलावा बहुत-सी प्रांतीय शैलीके हैं। भारत के पृथक् पृथक् भागो मे प्रवर्तमान जातिके बारेमे कई प्राचीन शिल्पग्रंथकारोंने सर्वदेशीयतासे जातिके वर्णनके साथ कहा है।

अपराजितपृच्छामे सम्पूर्ण रितसे नागरशैलीका वर्णन उत्तर भारत के दूसरे प्रादेशिक लक्षणभेद को बाद करते गुजरात, राजस्थान के ग्यारहवीं सदीके बाद बनाये हुए मंदिरोंको लागु होता है। उत्तर भारतके पश्चिम भागको अर्थात् भारतकी प्रांतीय पद्धतिके मंदिरो को सच्चे स्वरूपमे नागरादि शैलीका कहा है वह योग्य है।

लक्षणसमुच्चय नागरी वर्तना के लिये मध्यप्रदेश, लाट–गुजरात अथवा पश्चिम भारतीय प्रदेशको योग्य मानता है। उपांगवाले चोरसतल पर उर्ध्व वक्र रेखावाले शिखरोंके ऊपर वर्तुल आमलकवाले ऐसी आकृतिके शिखरोंवाले मंदिरों नागर शैलीके व्यापक अर्थमे इस प्रकारमें आ जाते है। कर्णाटक प्रदेशमे उत्तर भारत के लतिन स्वरूपवाले मंदिर देखनेमे आते हैं और उत्तर भारत के प्रासादों जो चोरस आकारपर गोल आमलक है उसे वेसरजातिके कई विद्वानों पहचानते हैं। उनको श्री एम रामराव द्रविडग्रन्थों के आकारसे बताते हैं लेकिन द्रविडग्रन्थों इस विषयमे अस्पष्ट है। कामिकागम तो कई द्रविड विद्वानों के मतसे विरुद्ध उनको स्पष्टतया उत्तर भारतके मंदिरोंको नागरादि जातिके कहता है।

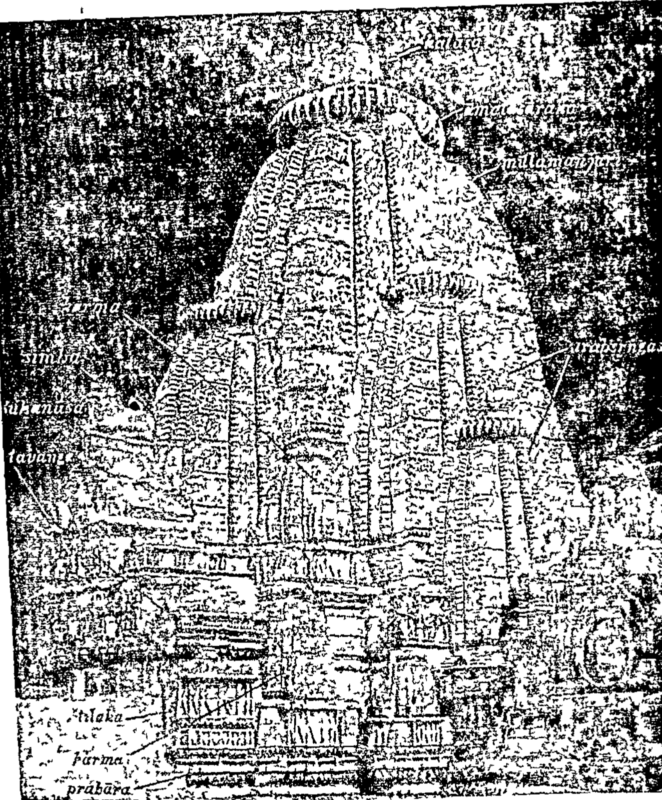
अपराजितपृच्छाकारके मतसे नागरकों जातियोंमे प्रथम कहा जाता है। परन्तु उनकी दि हुई व्याख्याके अनुसार गुजरात राजस्थान और खजुराहो के और एकांडक प्रासादोंका नागर जातिकी मर्यादामे समावेश हो जाता है, परन्तु

विकासक्रम की दृष्टिसे अर्थात् उस एकांडक शिखरवाली जाति ज्यादा प्राचीन होनेसे और उस एकांडकका ही सन्तान होनेसे लतिन को ही नागर कहने का लक्षणसमुच्चय जैसे अपराजितपृच्छासे भी अधिक प्राचीन ग्रन्थों में मत है। इस दृष्टिकोणको ध्यानमें रखें तो प्रासादों की जातिमें एकांडक लतिन जातिको आदि मानना चाहिये। अथवा व्यापक अर्थमें देखें तो एकांडक और अनेकांडक दोनोंको नागरके ही प्रकार के मानना चाहिये। एकांडक ज्यादा प्राचीन और



1 ललितशिखर 2 मूलघंटा 3 उरुघंटा 4 घंटिका 5 रथ 6 कूट 7 संवर्ण।

नागर प्रासाद शिखर



1 कलश 2 आमलसारक 3 मूलरेखा (मूलमंजरी) 4 ऊरशृङ्ग 5 कर्म 6 सिंह
7 शुकनास 8 तवङ्ग 9 तिलक 10 कर्म 11 प्रहार

१ नागर—अनेकाऽक नागरप्रासाद –सामान्यतया कामदपीठ या गजाश्वनरादिपीठ
पूर्णालंकार मंडोवरछाद्ययुक्त-उसपर शिखरमें शृङ्ग, ऊरुशृङ्ग, प्रत्यङ्ग तवङ्ग

अनेकांडक उत्तरकालीन भी सविशेष प्रचलित है। इस स्पष्टीकरण के आधारपर प्रासाद: जाति विवेचन लतिनसे किया जाय तो विशेष तर्कयुक्त गिना जायगा।

१ **नागर**–अनेकांक नागर–सामान्यतया बृहद्‌का मदपीठ या गजाश्वनरादिपीठ, पूर्णालंकारी मंडोवर, छाद्ययुक्त, उसके शिरपर शृङ्ग, ऊरुशृङ्ग, प्रत्याङ्ग, तवङ्ग तिलक और मूलमंजरी को दल विभक्ति से प्रकट होता हुआ अनेक अंडक के समुहसे रचे जाते शिस्तबद्ध शिखर, जिसके स्कंधके सिरपर आमलसारा कलशयुक्त शिखरको अपराजितपृच्छाकारने नागर जातिको माना है, उसके आगे कवली चोकी होती है लेकिन ज्यादातर वितानयुक्त रंगमंडप अथवा गूढमंडप ऊपर फासना या संवरणायुक्त होती है।

अपराजितकारने नागरके पाँच भेदो और उनके स्वरूप और उनके भेद कहे हैं:।

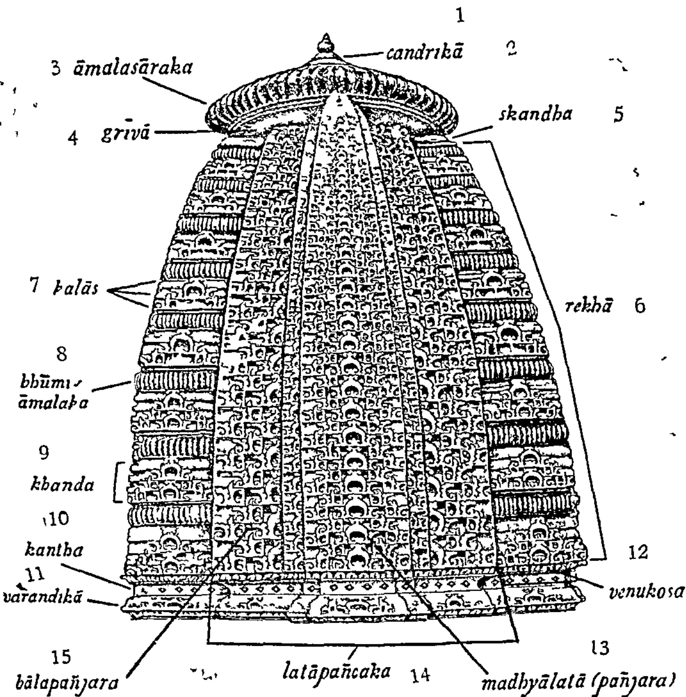
नाम	स्वरूप	भेद
१. वैराज्य	चोरस	५८८
२. पुष्पक	लम्बचोरस	३००
३. कैलास	वृत्त (गोल)	५००
४. मणिपुष्प	लम्बगोल	१५०
५. त्रिविष्टप	अष्टांश	३५०
	कुल	१८८८

नागरजातिके तलदर्शन पत्र ७५ पर है नागरजाति नारघाट प्रासादके संपूर्ण अंगयुक्त आलेखन यहां बडा पेज २ पर दिया है।

२ **लतिन**–शिखर जालांकृत लताओं से बना हुआ (कुडचलेवाला) अने रेखा-युक्त वेणुकोपसे आकारबद्ध बनता हुआ और शृङ्गाशृङ्ग रहित एक अमलसारा को कलशयुक्त शिखर होता है। पुराने लतिनका मंडोवरपर छाद्य नहीं होता है। ऐसे प्रासादोंके आगे कवलीके वाद वहुत करके प्राग्रिव (केवल चोकियाला) होता है। नीचे कामद पीठसे उठे हुए उपांगों शिखरके स्कंध तक जाते हैं। शिखर वरंडिकाके ऊपर अंतराल जैसे कण्ठ पर वेणुकोपसे शिखरकी रेखा उत्पन्न होती है। रेखाके अलावा कईमें लतापंचक (पाँच उपांग) होते हैं। उनके शिखर के मध्य भद्रको मध्यलता कहते हैं। शिखरके उपांगोंको बालपंजर (बालञ्जर) कहते हैं। ऊपर की खडी रेखा खण्ड कला और भूमि आमलयुक्त होती हैं। इन उपांगोंके उपरी भागको स्कन्ध कहते हैं। लतिन प्रासादों रेखा विस्तारसे सामात्य तया सवागुने (१$\frac{१}{४}$) उदयके स्कन्ध तक होते हैं। स्कन्ध पर आमलसारक होता है। उसके अङ्गमें नीचे ग्रीवा चंद्रिका आमलसारिका (पर चुलिका से कही होती है) उसके उपर कलश होता है। शिखर के नीचेका विस्तारका १० भाग करके ५ से ६ भाग स्कन्ध विस्तार होता है।

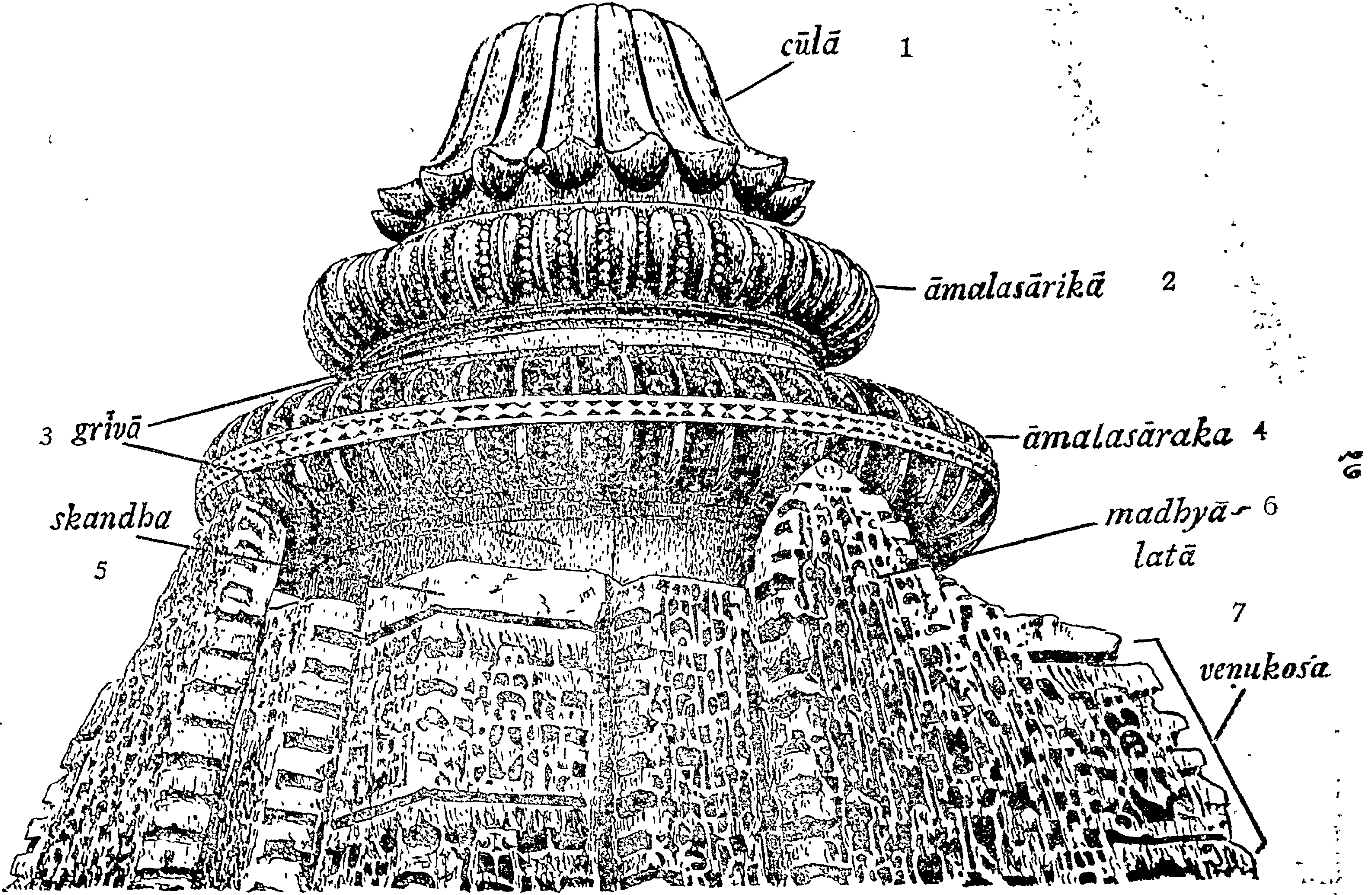
अपराजितकार कहते हैं कि नागर रेखाके समान परन्तु शृङ्गोंके रहित एकाडी शिखर रूचकादिसे उद्‌भूत होता है। अपराजितपृच्छाकार लतिन के पाँच स्वरूपके पाँच नाम कहते हैं। १ रूपक–चोरस–लब चोरस २ भव–विभ

लतिन शिखर



1 कलश 2 चद्रिका, 3 आमलसारक, 4 ग्रीवा, 5 स्कध, 6 रेखा, 7 कला 8 भुमि–आमलक, 9 खड, 10 कठ, 11 वरडिका, 12 वेणुकोश 13 मध्यलतापजर 14 लतापचक 15 बालपजर—लतिनशिखर

३ वृत–पद्ममालाधर ४ लम्बगोल=मलयमकरध्वज ५ अष्टाश्र वज्रक–स्वस्तिक इस तरह एक द्वारके पच्चीश भेद कहे हैं।



लतिन शिखरके ऊर्ध्व अंश

1 चूला. (चूली) 2 आमलसारिका. 3 ग्रीवा. 4. आमलसारक. 5 स्कंध. 6 मध्यलता. 7 वेणुकोश.

३ द्रविड—दक्षिणपथके वास्तुग्रंथोंके अनुसार द्रविडजाति को पड़वर्ग कहा गया है। तदनुसार १ अधिष्ठान (पीठ) २ पाद (स्तभयुक्त मडोवर) ३ प्रस्तर—(वरंडिका और छाद्य—छज्जा) ४ ग्रीवा ५ चुलिका (आमलकचंद्रिका—कर्परी पद्मपत्र) ६ स्तूपिका (कलश) जिसे इतने अंग होते हैं उसी द्रविडजातिका प्रासाद जानना। कई बार प्रस्तरके ऊपर कूट और शाला शिखर की व्यजनासे भूमियाँ बनायी जाती हैं। आगे मुखमंडल किया जाता है। उसके बाह्य भागमें पाद—स्तभयुक्त मडोवर और ऊपर प्रस्तर होता है। मडप के अदर मध्यमें चार स्तम्भों पर छाद्य—छत्तियाँ रखते हैं। इससे मडप को मात्र समदल छादन (Flat Roof) धन्या किया जाता है।

द्रविडतल दर्शन—तल आयोजन में सामान्यतया चोरस क्षेत्रमे कर्णभद्रादि अगों एक सूत्रमे होते हैं। पादान्तर शलिलान्तर से अगोको जुदा किया जाता है नागर छन्दको अट्टाईकी तरह मध्यका भद्र और छेडे पर कर्ण कहते हैं। उपरोक्त पड़ वर्गके प्रत्येक के भिन्न भिन्न अगो है। उनका विशेष स्पष्टीकरण करने की आवश्यकता है।

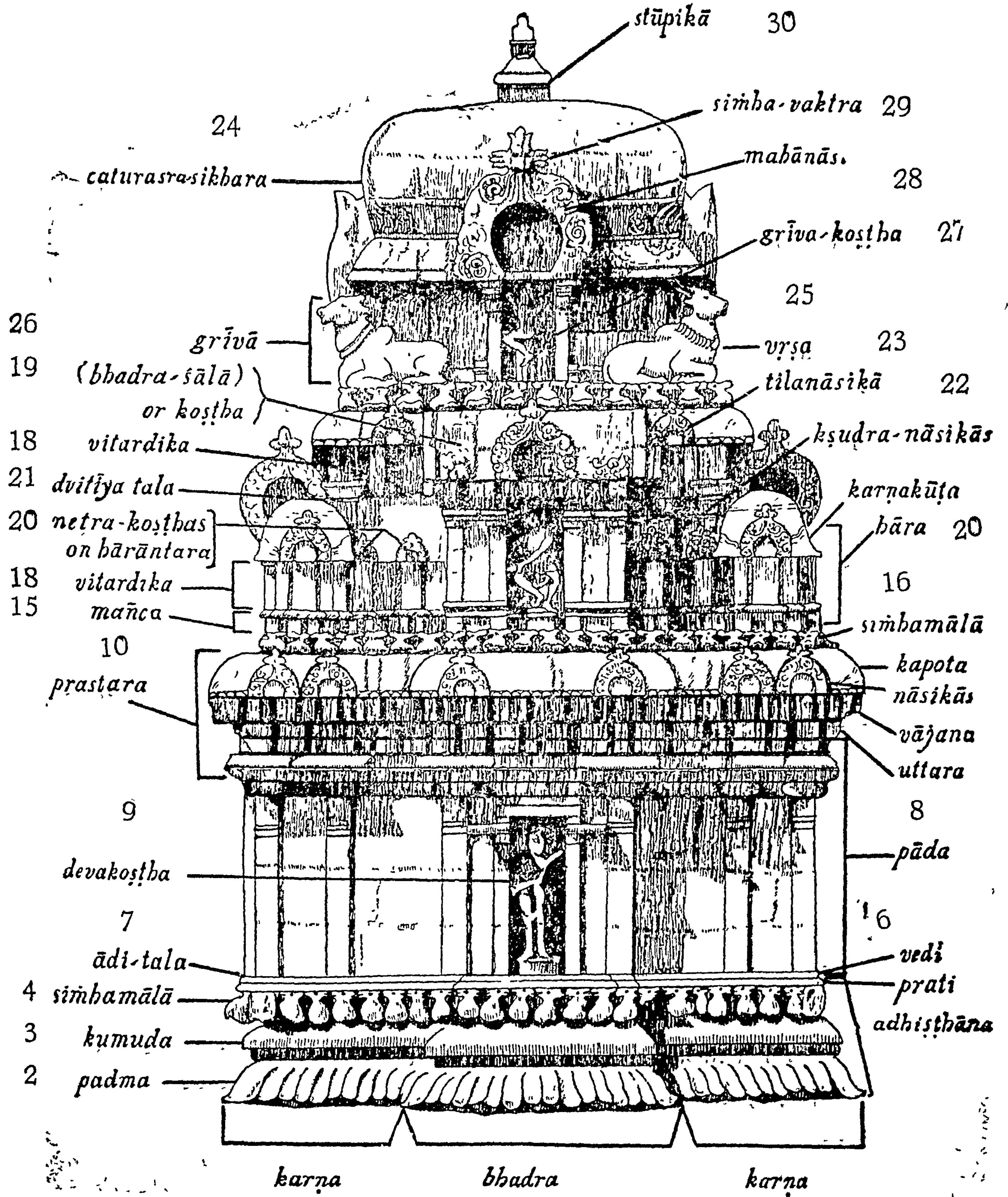
१ अधिष्ठान—पीठको तीन थरों सामान्य रीतसे है। १ पद्म (जाड्म्बा) २ कुमुद (कणी छजी) ३ सिंहमाला (ग्रासपट्टी जैसा) उसके पर प्रति और वेदी नामके दो सपाट थर किये जाते हैं। वहाँसे आदितलका प्रारम्भ होता है। उसे पादमें समाविष्ठ माना जाता है।

२ पाद—(स्तम्भयुक्त मडोवर) उसकी तीन बाजु पर भद्रको देवकोष्ठ कहा जाता है। उसमे जिस देवका प्रासाद हो उसके पर्याय स्वरूप रखे जाते हैं। यह बाह्यस्वरूप कहा। अदर गर्भगृह होता है।

३ प्रस्तर—प्रस्तरके अगमे १ वरंडिका २ उत्तर ३ वाजन और ४ कपोत (अर्धगोल) उसमे चैत्य जैसी नासिकाएँ होती हैं। कपोत—छजेका निर्गम ज्यादा होता है। जो ऊपर मजला हो उसे द्वितीय तल कहते हैं। उसके अगों नीचे दिये हुए हैं।

अ प्रस्तरके उपर सिंहमाला—मचके थरों पर कोण—कोने पर कर्णकूट—(दो स्तम्भोका पर चैत्य—झूल (कमान) उस स्तम्भिकाके भागको वितर्दिका कहते है। मध्य गर्भमे गवाक्ष—कोष्ठको दो तरफ दो दो स्तम्भपर सन्मुख चैत्य झूल और उसके बिच अर्ध गोलाकार वरडिका को भद्रशाल कहते हैं। कर्ण कूट और भद्रशाल के बिचके अतरमे नेत्रकोष्ठ (द्वारान्तर)—द्वारके नीचे क्षुद्रनासिका के उपर तिलनासिक (छोटी ठकार) यहाँ द्वितीय तालपूर्ण होता है।

ब—उसके पर चतुस्त्र अष्टाश्र या धृत—शिखरका (गुंबज जैसे) प्रारम्भ होता है। उसमे सिंहमाला पर पीठान फलक (छत छतियासे ढँका हुआ) उपर जो



द्रविड प्रासाद शिखर सह

1 अधिष्ठान. 2 पद्म. 3 कुमुद. 4 सिंहमाला. 5 प्रति. 6 वेदी. 7 आदितल. 8 पाद. 9 देवकोष्ठ. 10
11 उत्तर. 12 वाजन. 13 नासिका. 14 कपोत. 15 मंच. 16 सिंहमाला. 17 कर्णकूट. 18
19 भद्रशाल-(कोष्ठ). 20 नेत्रकोष्ठ (बारान्तर). 21 द्वितियतल. 22 क्षुद्र नासिका. 23 तील
24 चतुरस्त्र शिखर. 25 वृष. 26 ग्रीवा. 27 ग्रीवा कोष्ठ. 28 महानास. 29 सिंहवक्त्र. 30 स्तुपिका.

गोल या अष्टास्र शिखर (गुँबज) हो तो कोने पर वृषभ, सिंह या गरूडके बडे स्वरूप रखते हैं। अगर कर्णकूट रखते हैं।

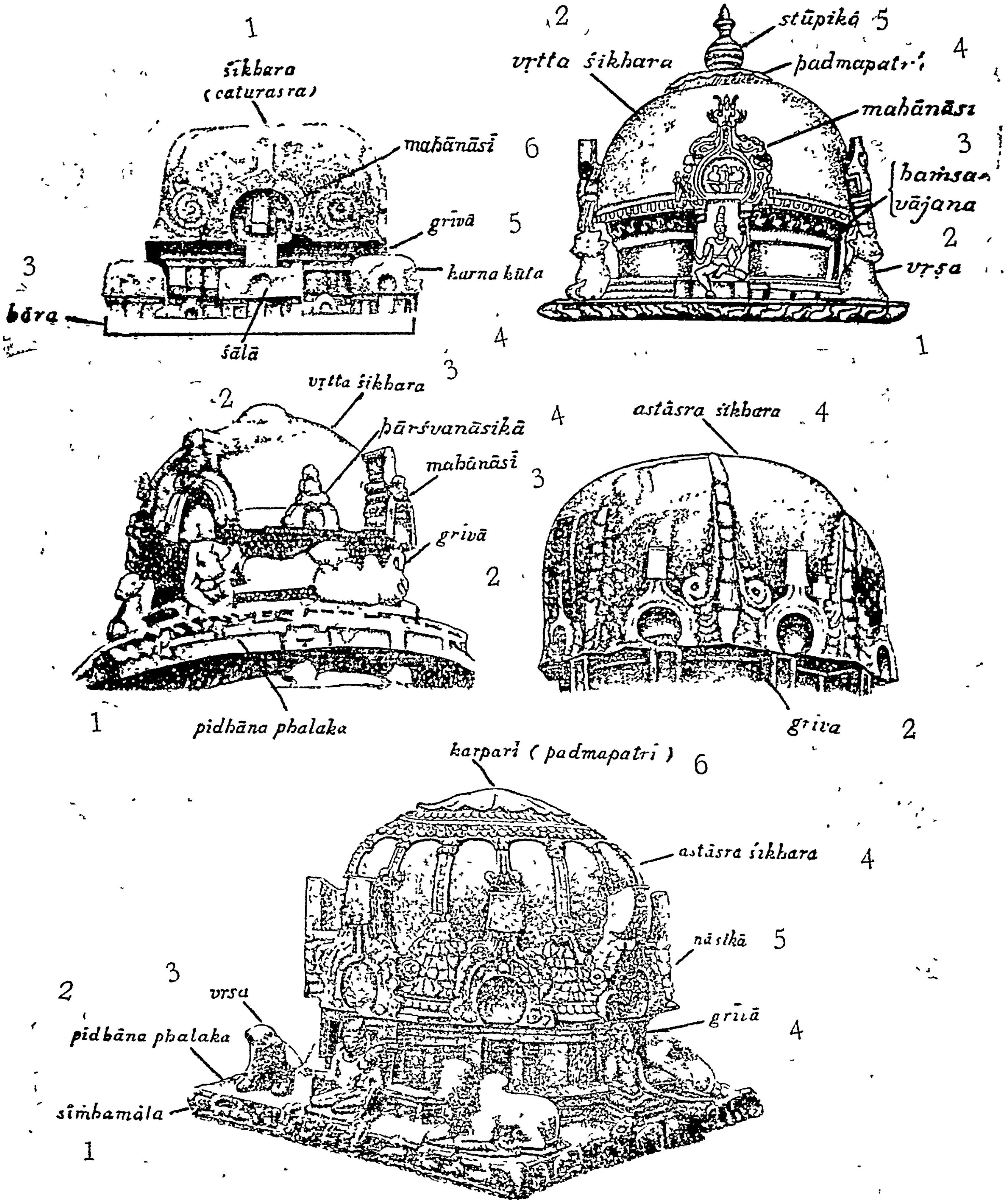
४ ग्रीवा–नरडिका कपोत पर सादी जघाके जैसे भागको ग्रीवा कहते हैं। (उसके कोनेमे वृषादि और मध्यमे दो स्तभों को ग्रीवाकोष्ट–गोखमे देवस्वरूप करते हैं। उसके उपर महानासी (चैत्य–शूल), महानासी की मचपर ढेरके रूपमे सिंहवक्त्र (ग्रास मुखके समान) किया जाता है। गर्भके दो महानासी के मध्यमे कोने पर पार्श्वनासिक भी कई लोग करते हैं। महानासीका अपर नाम भद्रनासी भी है। कई स्थलों पर ग्रीवाके थरमे स्तभो करने के अलावा वहाँ दो देव रूप या ऋषिमुनिके वैठे रूप भी करते हैं। परन्तु उनका पट महानासी से अलकृत करते हैं। कोई उस रूपके स्थानपर शाला (सादा भद्र) भी करते हैं। उपर महानासी तो कोई भी प्रकारमे होता ही है। ग्रीवाके उपर निकलता हुआ हसवाजनका फिरता थर करके उसके पर दूसरा छाटवाला उससे निकलता हुआ थर किया जाता है। उसके पर शिखर होता है।

ग्रीवाके पर हसवाजन या दूसरे थरके स्थानपर दडछाद्य जैसा छज्जा निकालकर उसके पर भी शिखर (गुँबज जैसा) होता है। ग्रीवा स्तूपिका के मध्यके गुँबज जैसे शिखरका यह्वर्गमे स्थान नहीं है।

५ चूलिका–शिखर अर्द्ध भागमे (नागर छन्दके चद्रसरूप) पद्मपत्रिका–अथवा कर्पटी पत्र रूप विस्तृत होता है।

६ स्तूपिका–चूलिकाके पर द्रविड शिखरका सर्वोपरि स्तूपिका नागर छन्दके कलशरूप होता है।

अपराजितकारने द्रविड प्रासादके पाँच भेद कहे हैं। १ स्वस्तिक, २ सर्वतोभद्र ३ वर्धमान, ४ सूत्रपद्म, ५ महापद्म इन पाँचोंके क्रमसे एक एकके सौ दोसौ, तीनसौ, चारसौ और पाँचसौ इस तरह कुल पन्द्रहसौ भेद किये हैं। परन्तु उसका स्पष्टीकरण दिया नहीं है। अपराजितकार द्रविड छदके स्वरूप का वर्णन करते हुए कहते हैं कि पीठके उपर कर्णरेखा की भूमिका क्रमसे करना। उसकी विभक्ति दल–लताशृगों के क्रमसे उत्पन्न होती है। मेष, मकर कूटादि कटकोंसे आवृत्त वेदी घटा नासिकादि से शोभता हुआ द्रविड छदका प्रासाद समझना।



द्रविड प्रासादके शिखरके पृथक् पृथक् स्वरुप

1. 1 चतुस्रशिखर. 2 शाला. 3 हार. 4 कर्णकूट. 5 ग्रीवा. 6 महानासि.
2. वृतशिखर–1 वृष. 2 हंसवाजर. 3 महानासि. 4 पद्मपत्र. 5 स्तूपिका.
3. वृतशिखर–1 पीढान फलक. 2 ग्रीवा. 3 महानासि. 4 पार्श्वनासि.
4. अष्टाशिखरे–1 सिहमाला. 2 पीढान फलक. 3 वृष. 4 ग्रीवा. 5 नासिक. 6 कर्परि पद्मपत्रिका.

४. भूमिज—

भूमिज प्रासादोंमें कई वार तलदर्शन अष्टभद्री या अष्टकर्णी या वृत्तसंस्थान पर आँका जाता है। पीठ और मंडोवर के सामान्य लक्षणों अनेकाऽक नागर जैसे ही होते हैं। परन्तु शिखर प्रकृतिके मूलगत फर्क होनेसे उसका पूरा दृश्य विशिष्ट बनता है। उसे छाद्य-छज्जा क्वचित् होता है। उसके शिखरकी रेखा नागरीके जैसी लेकिन रेखाकी अंदर उत्तरोत्तर श्रृंगयुक्त होती है। शिखरके कर्ण प्रतिरथ और रथके उपांगमें एक पर दूसरा-तीसरा-इस तरह सात श्रृंगों उत्तरोत्तर चढ़ाये हुए होते हैं। उसके शिखरको बालपंजर (बालंजर) के उपाङ्ग नहीं होते है। परन्तु भद्रके पर मालारूपमें लता खिंची हुई होती है। भद्रकी लताको माला कहते हैं? इससे सिर्फ शिखरके भद्रमें कुडचल कडारा होता है। और कर्ण और प्रतिरथके उपांगोंमें उत्तरोत्तर श्रृंगों (कूट) चढ़ाये हुए होते हैं। प्रत्येक श्रृंगों पर कुंभी स्तंभीकायुक्त जंघा और उसके पर प्रहारके ऊँचे थरों करके फिर क्रमसे श्रृंग-कूट चढ़ाये हुए होते हैं। एक, दो, तीन, पाँच, सात इस तरह क्रमसे उत्तरोत्तर श्रृंगों शिखरके स्कंधतक चढ़ाये हुए होते हैं। स्कंध पर ग्रीवा, घंटा, पद्म, छत्र, चंद्रिकायुक्त आमलक होता है। उसके पर सर्वोपरि कलश होता है।

उसके मंडोवरके थरोंमें छज्जा क्वचित ही होता है। छज्जे पर वरंडिका और केवालके घाटोंवाले थर पर प्रहार होता है। वहाँसे शिखरका प्रारम्भ होता हैं। भद्रको रथिका कहते हैं। वह देवरूपसे अलंकृत होता है। उसके पर (नागरछंदके उद्गमको) शुरसेनक कहा जाता है नीचे बड़ा होता है। शिखरके कर्ण-प्रतिरथ पर चढ़ाये हुए श्रृंगोंके थरको स्तम्भकूट कहते हैं। नागरछंदकी तरह स्कंधसे नीचे ध्वजाधारके पीछे बाहर प्रतिरथमें निकाला हुआ होता है।

भूमिज दृष्टांतोंमें आगे गूढमंडप अगर रंगमंडप किया जाता है। मालवा, महाराष्ट्रमें भूमिज जातिके प्रासाद देखनेमें आते हैं। क्वचित उत्तरकर्णाटकमें भी अपराजितकारने भूमिजके स्वरूपका वर्णन करते कहा है कि—घासकी तरह उत्पन्न हुआ हो जिस तरह कूट बडेसे छोटे जैसे क्रमसे चढाते जाना। देल विभक्ति उपांगोंके अंगोंसेयुक्त भूमिज छंदके प्रासाद जानना।

अपराजितकारने भूमिजके तीन प्रकार कहे हैं। १ चोरस निषध-२ वृत्त-कुमुद ३ अष्टाश्र-स्वस्तिक-और उसके दश-सात और आठ इस तरह तीन प्रकारसे भूमिज करना। जिन सबके ६२५ भेद कहते हैं।

५—वराट जाति-भूमिकाके क्रमसे जंघाहीन करते जाना। भूमिकावाली श्रृंग श्रृंगोंसे युक्त-बहुत श्रृंगोंवाला रेखा प्रतिरथ भद्र और प्रतिभद्र युक्त मंदार पुष्पिका और घंटावाला जैसी वराट जातिके लक्षण जानना।

अपराजितकारने वराटजातिके पांच प्रकार कहे हैं। १ वराट २ पुष्पक ३ श्रीपुंज ४ सर्वतोभद्र ५ सिंह। इन पाँचोंके १२०२ भेद कहे हैं।

६ **विमानजाति**–चोरस तलको रथ उपरथको भद्रके थोडे उपांगोंवाले विमानजातिके प्रासाद जानना।

विमान छंदके पाँच प्रकार–१ विमान २ गरूड ३ ध्वज ४ विजय ५ गंधमादन। इन प्रत्येक पुष्पमाला घर आकारके लता श्रृंगवाले जानना। उनके प्रत्येक नामानुक्रमसे भेद कहे हैं। ३००–४००–५००–६००–७०० इसे तरह कुल पच्चीस सौ भेद कहे हैं।

७. मिश्रक जाति–नागर छंदका अनेक तिलकवाला तिलकोंसे शोभता मिश्र छंदका प्रासाद जानना। अनेक आकार रूपवाला जानना। अपराजितकार उसके अठारहसौ भेद कहते हैं।

८ **सांधारा जाति**–या सांधार जाति–व्युत्पत्तिकी दृष्टिसे स-अंधार–जो प्रासादों गर्भगृह प्रदक्षिणा मार्ग सहितके हों तो उन्हें सांधार कहा जाता है। असी रचनामें प्रकाशका बहुत कम अवकाश होता है। जिससे वे स–अंधार कहे जाते हैं। असे प्रदक्षिणा मार्गवाले सांधार प्रासाद नागर जातिमें बहुत स्पष्ट रीतसे बताया गया हैं। जिनको प्रदक्षणा मार्ग नहीं होते हैं। वैसे प्रासादोंको निरंधार प्रासाद कहा गया है।

सांधार प्रासादके बाह्य भागके प्रमाणसे शिखर किया जाता है। असे सांधार प्रासादों गुजरात सौराष्ट्र, राजस्थान, मेवाड़में हैं। वैसे सांधार प्रासादों मध्यप्रदेश के खजुराहोंमें भी हैं। सोमनाथका महाप्रसाद सांधार जातिका है। सांधार जातिका तलदर्शन पत्र ७५ पर है। यह देखो!

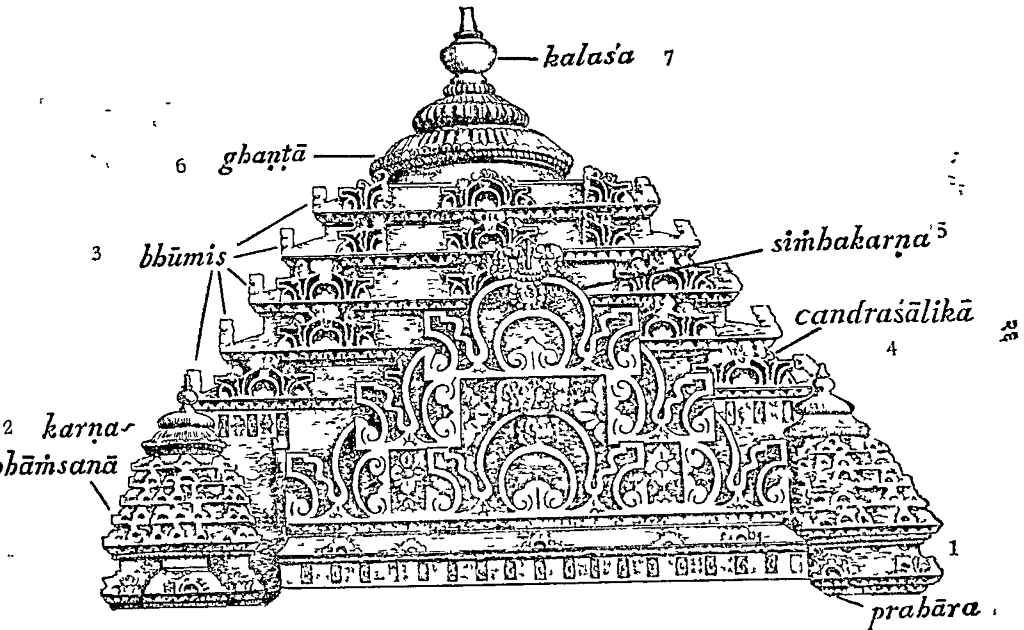
अपराजितकार उसका स्वरूप बताते हैं। तलच्छंद जिसके विभक्त उपांगों-वाले है, उसमें गर्भगृह, दिवारें, भ्रमवाला-जिसे भ्रमों क्रमयोगसे कहे हो उसके पर शिखर हो उसे सांधार छंदके प्रासाद जानना।

उसके सात प्रकार—१ केसरी २ नंदन ३ मन्दर ४ श्रीतरू ५ ईन्द्रनील ६ रत्नकूट ७ गरूड उन सातोंका अनुक्रमसे भेद कहा है। दो–तीन–एक–छः–तीन–सात और तीन अिस तरह मिलकर कुल पच्चीस भेद कहे हैं।

९. विमान नागर–नागर उपर छंदयुक्त लताशृंगवाला हो वैसे प्रासादका विमान नागर छंद जानना।

१०. विमान पुष्पक–विमान नागर छंद उपर शिखरमें पुष्पक जैसा उरुश्रृंग होवे वैसा, वह सर्व कामनाओंको देनेवाला असा विमान पुष्पक छंदका प्रासाद जानना।

११. वलभी–वलभी जातिके प्रासादों लतिन नागर छंदसे भी प्राचीन जातिके मालुम होते हैं। सौराष्ट्रमें उत्तर गुप्त कालके कदवार (प्रभासके पास) हैं, और पोरबंदर द्वारिकाके बिचके हर्षद माताके स्थानपर बहुत सामान्य रूपमें वलभी प्रासाद हैं।


kalaśa 7
6 ghaṇṭā
3 bhūmis
siṁhakarṇa 5
candraśālikā
4
2 karṇa-
bhāṁsanā
1
prahāra

फासनाकार शिखर

नपुंसका–फासनाकार कहा है। कितनोंके कोने पर कर्णफासना–फासनाकार कूट चढाते हैं। फासनाकार प्रासादोंका तलदर्शन हस्तांगुल उपांगोवाला सिर्फ कर्ण–रेखा और भद्र विशेषकर होता है। उदकान्तर वर्जित–पानीतारके उपांग होते हैं। फँसकिया–फांसना शैली गर्भगृह परसे मंडप फासना करनेकी पद्धति बादमें प्रविष्ट हुई है।

फासनाकार मंदिरों, खजुराहो, गुजरात, चेदी प्रदेश, अमरकंटक, आबू, देलवाडा, राजस्थान, कलिंग–ओरिस्सा–भुवनेश्वरमें हैं। फासनाकारके पाठों जयपृच्छा–प्रमाणमंजरी–वृक्षार्णव–अपराजित पृच्छा और लक्षणसमुच्चयमें उल्लेख है।

फासनाको गुजरात-सौराष्ट्रके शिल्पीओंने ‘तरसटियु’ कहा है। वह ‘त्रिषट्र’ का अपभ्रंश है। अर्थात् तीनों तरफके दर्शनवाला–परंतु त्रिषटा शब्द शिल्पग्रंथोंमें नहीं मिलता है। बहुत सादगीसे फासना मंदिर होता है जिससे भारतके हरेक प्रदेशोंमें सादे स्वरूपमें फासनाकार मंदिर देखनेमें आते हैं।

कलिंग–उडिया प्रदेशोंमें भुवनेश्वर पुरी और कोनार्कके मंदिरोंके मंडपों पर फासना चढ़ाई हुई दिखती है। छाजलीके पाँच, सात या नौ थरोंके बिच एक सादा थर जंघाके जैसा चढ़ाया जाता है उसे “कांति” कहा जाता है। उसके पर फिर पाँचेक थर छाजलीके चढ़ाकर घंटा और कलश चढाते हैं! कलिंग शिल्प ग्रंथोंमें छाजलीको ‘पीडा’ कहा गया है। वैसे सात–नव थरोंके उदयको ‘पोटल’ कहते हैं और उसपर बीचके एक सादे थरको कान्ति कहते हैं। उपरके दूसरे पाँच–सात थरोंके उदयको भी ‘पोटल’ कहते हैं। उसके पर घंटाके नीचे ग्रीवाको “बेकी” कहते हैं। उसके पर मंढपकी फासनाके सर्व थरोंके उदयको “गंडी” कहते हैं। यद्यपि, शिखरके उदय भागको भी “गंडी” कहते हैं। इस तरह शिल्पीओंको प्रांतीय भाषाके शब्दोंसे थरोंका परिचय दिया गया है। अपराजितकारने फासनाकारको नपुंसक छंदका प्रासाद कहा है।

१३. सिंहालोकन–छाद्य–छाद्योंसे उत्पन्न हुआ, जिसके उपर कोनेको सिंहसे शोभायमान करना। उसके पर घंटा–घंटा आकृति की करना। उसे ‘सिंहालोकन’ छंदका प्रासाद कहते हैं।

१४. रथारुह–नागर छंदसे उद्भूत–शकट–गाडेके उपर नागरछंदका, जिसको तीन चक्र हो वैसे आकारका कामनाको देनेवाला ऐसा रथारूह छंदका प्रासाद जानना। अपराजितकारने दारू कर्म (काष्टकार्य) से उद्भूत सिंहावलोनन दारूके जैसे छंदका रथारूह जाननेके लिये कहा है।

उपरोक्त चौदह जातिमे पाँच-छः जातिका विशेष स्पष्टीकरण नहीं है। इससे उसका परिचय करना मुश्किल है। तो भी उसके अधिक प्रयत्नसे सशोधन प्रादेशिक भ्रमण करके करने की जरूरत है। जावा, सुमात्रा, अनाम (चपा) कबोडिया, सियाम आदि बृहद्भारत प्रदेशोमे भारतीय शैलीके भव्य और विशाल प्रासादोंका निर्माण हुआ है। वे अपनी इन चौदह शैलियोंमे आये हुए होना चाहिये। या-भारतीय शैलीकी कौटुंबिक प्रथा है।

शिल्पस्थापत्य में विवादग्रस्त प्रश्नो

शिल्पियों मे कई विवादग्रस्त प्रश्न हैं। कई वार यजमानको ऐसे प्रश्न उलझनमें डालते है। इनमेसे कई प्रश्नो बुद्धियुक्त है और कई निरर्थक दुराग्रही भी हैं। स्थलके पर हुए पुराने कामके उदाहरण देकर वे विवाद उग्र बनाते हैं। कई रूढिग्रस्त प्रणालिका को अग्र करते है। इन सबका समाधान शास्त्राधार विशेष सबल गिना जाता है। कईवार शास्त्रके पाठोंका अपनी बुद्धयानुसार अर्थ करके अपने मतका समर्थन करते हैं। निष्पक्ष रीतसे बुद्धि पूर्वक व्यवहार को भी लक्ष्यमे लेकर सोचना चाहिये। जहाँ पाठोंका अभाव हो वहाँ परपरागत प्रणालिका को भी मान देना पडता है। अगर वहाँ पुराने स्थापत्य को उदाहरण रूप स्वीकारने पर बाध्य होना पडता है।

सत्रहवीं सदीसे शिल्पियों कई प्रथाओंको अनुसरे है। उसमे कुछ शास्त्र विसुरा है। ये प्रथायें शास्त्रविहीन है परन्तु प्रणालिकाए है इस तरह मानकर उसका अनुसरण या ऐसे मतमतांतर के लिये दुराग्रह न करना चाहिये। ऐसे उदाहरण देकर अपने मतका समर्थन न करना चाहिये। प्रतिपक्ष का अपमान अवगणना करनेकी वलण भी अनीच्छनीय है।

१. **गणितके विषयमे**—इकीस अग मीलानेको कहा है। जिस तरह ज्योतिषी को पूरे अगोको देखकर मुहूर्त नीकालनेमे असमर्थ होता है उस तरह शिल्पमे विशेषकर लगभग चार-अगोंको मीलानेका प्रयास करते है। १ आय, २ नक्षत्र ३ गण, ४ चन्द्र। शास्त्रकारों कहते है कि—

"द्विभिश्रेष्ठ त्रिभिश्रेष्ठ पंचभिः सर्वमुत्तमम्।"

सामान्यतया लबाई चौडाई के गजके उपरके आँगूलोंमे विषमअक होना चाहिये। तो आय श्रेष्ठ आता है। शिल्पशास्त्रमे शिल्पिओं गज अर्थात्-हस्त और उसके २४ आँगुल प्रमाणका मानते है, फूटकी प्रथाको नहीं स्वीकारते

हैं। क्योंकि उसके गणितकी रचना इस प्रकार हुई हैं। सामान्यतया दो फूटका एक गज होता है।

२. यह गणित कहाँसे मिलायें, यह कहा है—मंदिर के बाहर के भागमें मिलानेके लिये कहा है। व्यवहार दृष्टिसे कुछ ठीक करने के लिये अंदर भी गणित मिलानेकी कोशिष करता है। जब प्रतिपक्ष कहता है कि बाहरके विभाग कर उसके विभाग पर ओसार–दिवार रखते अंदर जो माप रहा उसे वहाँ गणित मिलानेकी जरूरत नहीं है, चाहे वह राक्षस गणका नक्षत्र क्यों न हो? इस पक्षकी बात दुर्लक्ष्य करने योग्य नहीं है। परन्तु जो वहाँ भी गणित मिलाया जाय तो अच्छा ऐसा मेरा मत है।

३ **नक्षत्रके** विषयमें शिल्पियों देवमंदिरको देवगण, गृहांको मनुष्यगण या यवनको राक्षसगणना नक्षत्र सामान्यतया मिलाते हैं। वह परंपरा है लेकिन ज्योतिषके नियमानुसार देवोंका जन्म नक्षत्र राक्षसगण हो वहाँ देवमंदिरमें राक्षस गण नक्षत्र मिलानेका आग्रह कभी लोग रखते हैं। शिल्पियोंकी परंपरा जो आगे कही गई है वह है। देवमंदिरमें देवगण ओर मंडपों या चोकीको मनुष्य गण या देवगण नक्षत्र मिलाते हैं। शिल्पियोंकी परंपराका समर्थन करता हुआ अेक पाठ है। परंतु उसे द्वीअर्थी मानते हैं।

४ **शिलास्थापन**—मध्यकी कुर्मशिलाके नौ खंडोंमें नौ चिह्नों करनेमें विश्वकर्माके सभी ग्रँथों अेक मत हैं। लेकिन मध्यकालके अेक सूत्रधार वीरपालने 'प्रासादतिलक' ग्रंथमें इन चिह्नोंको अग्निकोणके क्रमसे करनेके लिये स्पष्टरूपसे कहा है। इस विषयमें शिल्पी वर्गमें चर्चा है। लेकिन अब तक कोई दुराग्रह नहीं है इस बात आनंदकी हय।

५ **शिलास्थापन** कहाँ करना? उस विषयमें सामान्य मतसे गर्भगृहके बिच खडे मध्यगर्भमें शिलास्थापन करना। परंतु देवता पद स्थापनके हिसाबसे जहाँ देव स्थापन करना हो उसके नीचे शिला स्थापन करना चाहिये। वह सूत्र अिस दीपार्णव और ज्ञानरत्नकोषमें है। और नाभि खडी करनेकी प्रथा है। ग्रंथोंमें उसका स्पष्टीकरण नहीं है। और मध्यकी कूर्मशिलाका प्रमाण भी कहते हैं। परंतु फिरती अष्टशिलाओंका प्रमाण नहीं दिया हुआ है। वहाँ शिल्पियों प्रथाको अनुसरते हैं। जहाँ शास्त्राधार न हो वहाँ शिल्पियों प्रथानुसार वर्ते यह स्वाभाविक है। कूर्मशिलाके कहे हुअे मानके अनुसार लम्बी और उससे आधी चौडी अष्टशिला रखनेकी परंपरा है।

६ जगति विषयमें—प्रासादकी सीमा मर्यादा—शिल्पियों उसका सामान्य अर्थ दुर्ग भी मानते हैं। लेकिन प्रासादकी चारों ओर देवकुलिकाओ सहस्रलिंगकी या जिनायतनकी या ६४ देव्यायतनकी या पचायतन जहाँ हो वहाँ विशाल जगती विस्तारसे करनी होती है। जगतीका प्रासादकी भूमिमर्यादा मानकर सामान्य ओटा—जगती ऊँची कर उस पर भीट पीठका प्रारंभ होता है। परन्तु स्थान मान और शहरमें भूमि सकोचके कारण वैसे प्रकारकी जगती न हो तो वह दोष नहीं है। या तो विशाल भूमि पर मध्यमें प्रासादका निर्माण किया जाता है। वहाँ उसकी विशालताको ही जगती माननेका कारण है।

७. भीट—पर पीठके विषयमे प्रासादके प्रमाणसे महापीठ या कामदपीठ शास्त्रमान प्रमाणित बनाना कहा है। परतु स्थानमान और कभी वार द्रव्यानुसारके हेतुका आश्रय जानकर पीठ प्रमाणसे कम करनेका कहा है। तब कभी शिल्पिओं गहरे अभ्यासके अभावसे विरोध करते हैं। परन्तु कहे हुओ मानसे पीठ कर्म करनेके प्रमाण दीपार्णव—क्षीरार्णव और 'ज्ञान रत्न कोषादि' ग्रंथोमे स्पष्ट दिया है।

अर्ध- भागे त्रिभागेन पीठं- चैव नियोजयेत्।
स्थानमानाश्रयं ज्ञात्वा तत्र दोषो न विद्यते॥

कहे हुओ मानसे आधा या तीसरे भाग उदय प्रमाण पीठ करनेमें दोष नहीं जानना। मुख्य मदिरका महापीठ या कामदपीठ और फिरती देवकुलिकाओंको १०८ शिवायतन, ६४ शक्त्याय २४ विष्णायतन् या २४–५२–७२–८४ या १०८ जिनायतनोंको कर्णपीठ कम करनेमे दोष नहीं है।

८ प्रासाद्—उदयमानके विषयमे शिल्पीवर्गमे सोलहवीं सदीके बादके मदिरोंमे कुछ छूट लेकर उदयमान अधिक करने लगे। क्योंकि पद्रहवीं सदीके बाद स्तभके अतरके बीच कमानों बनानेकी प्रथा शुरु हुई। अिससे द्वारकी शाखाके समसूत्रमें स्तभको रखते थे। ऐसे रखकर पद (दो स्तभोके बीचका अतर) के अर्ध भागके बराबर उदय—उभणी कमानके कारण ठेकीको चढाकर रखते हैं। अिससे उदयमान बढ जाता है। परतु अिस विषयमें शिल्पियोंमे वादविवाद नहीं है। अैसे समयमे स्तभको कितना ऊँचा गिना जाये यह प्रश्न उपस्थित होता है। वस्तुत भरणेके तल पर्यतका स्तभ गिना जाय, कभ उदय—उभणीमे कमान करने जाते तब द्वार बाढसे स्तभको छोटा कर उस पर काठासरा चढाके कमान करते हैं। तब उसे 'पाय चागलका दोष' अज्ञानतासे कहते है। कमान शिल्पमें कहाँ कही गई है? तब यह 'पायचा' शब्द शिल्पग्रंथोंमे कहाँसे निकाला? अैसे

बीना समझसे विवाद (कम अभ्यासीओंके द्वारा) उठाये जाते हैं। यह निरी अज्ञानता है। प्रतोल्यामें और मेघनाद मंडपमें तोरण करते हैं। तब स्तंभ पर ठेकी—गडदी चडानेका कहा है।

९ **द्वारमान**—इस विषयमें खास वादविवाद नहीं है। सामान्यतया निरंधार प्रासादोंमें ५'—५" या ६'—१" या ६'—९" का द्वारोदय अपने हिसाबसे आयमेल करके रखनेकी प्रथा है। परन्तु विस्तारमान विषयमें बर्तमानकालके यजमानोंका आग्रह द्वारविस्तार अधिक रखनेके लिये होता है। यद्यपि यथा योग्य रीतसे विस्तार हो सके इतना रखना। शास्त्रदृष्टिसे थोडी छूट लेकर करे, परंतु यजमान तो गर्भगृहमें वाहनको ले जाना हो वैसा दुराग्रह करे तब शिल्पियोंको शास्त्रीय दृष्टिकी मर्यादासे थोडा बडा करना, परंतु मर्यादाका विशेष लोप न करना चाहिये।

१० **द्वार—शाखाके नीचे कुंभीवाढको तिलकडे** कहे हैं। उनसे अंगुल डेढ अंगुल उदम्बर—उंबर नीचा होता है। मंडोवरके थरवाले कुंभावाढसे उंबर अर्ध भागमें, तीसरे भागमें या चौथे भागमें नीचे उतारनेका प्रमाण देते हैं। तो कई शिल्पियों उंबर नीचे उतारनेके साथ तिलकडे और मंडपकी कुंभीओं भी उतारेने मतके हैं। यह वादविवाद उग्र होकर चलता है। अेक पक्ष मानता है कि जो "कुंभके न सभा कुंमी" यह प्रमाण है तो तिलकडों या कुंमीओंको नीचे नहीं उतार सकते हैं। तिलकडे कुंभा कुंभीको बराबर रख सिर्फ उंबर ही खोडना—नीचे उतारतेका प्रमाण कहा है। इस तरह उंबर नीचे उतारना जिससे दर्शनार्थीओंको आनेजाने की सानुकूलता रहे।

"उदम्बरान्ते हृते कुंभि स्तम्भ च पूर्ववत्।
सांधारे च निरंधारे कुंभि कृत्वा उदरम्बम्॥

इस श्लोकका अर्थ—उंबर ही फक्त खोडनाकुम्भी और स्तंभकको तो पूर्ववत् रखना। लेकिन प्रतिपक्ष "**उदंबर हतें कुंभिः**" का अर्थ उंबर और कुम्भी खोडना—नीचे उतारना ऐसा अर्थ करते हैं। यह वादविवाद जो मध्यस्थ दृष्टिसे देखा जाय तो सांधार प्रासादमें उंबर और कुम्भी नीचे उतारे हुए पुराने कामोंमें देखते हैं। परन्तु निरंधार प्रासादमें उंबरके साथ कुंभी खोडनेका बराबर नहीं है। तो भी हम यह नहीं कह सकते कि ये दोनों पक्ष झूठे हैं।

११. **मंडोवर पर विभागमें**—शास्त्रकारोंने कुम्भा कलश छज्जे तकके बारह, तेरह थरों कहे हैं। परंतु अल्पव्ययके कारण यजमान कम थर करावे उसमें दोष नहीं है। स्तंभ वाढ—समसूत्र जंघा टोच पर होती है और सामान्य रीतसे

द्वार-वाढ समसूत्र भी स्तभ वरावर होता है। परन्तु जघामे भद्रके गवाक्षो द्वार वाढसे नीचे होते है। ऐसे समयमे द्वार और गवाक्ष वाढ समसूत्र मे होनेका आग्रह न रखना चाहिये। अठारहवीं सदीमे बहुतमे मन्दिर गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, राजस्थान वगैरह स्थलों पर हुए तीन पदोंका गर्भगृह पर तीन शिखरों और बाह्य मडोवरके घाटके बदले कडाउ दावडी की सादी दिवारोंकी प्रथा शुरू हुई है। यहा समाजने यह शैलीका इस कालमे स्वीकार किया वह सामुहिक रीतसे दोष मान स्विकार किया और हजारो मन्दिरो यह शैलीका हुआ तव वहाँ दोप मानना न चाहिये ऐसा मेरा मतव्य है।

१२. देवता–दृष्टिपद–विषयमे भिन्न भिन्न ग्रथकारोंमे मतभेद है, परन्तु सर्वसाधारण द्वारोदयके आठ भागके सातवें भागमे फिर उसके आठ भाग कर सातवे भागमे देवदृष्टि त्रिपुरुष और जिनकी–मिलाने के लिये कहा है। अर्थात् द्वारोदयके ६४ भागमे पचपन मे भागमे दृष्टि मिलाना। इस प्रथाको शिल्पीवर्ग स्वीकारता है। आये हुए सूत्रमानसे दृष्टि ऊँची या नीची जरा भी न रखने के लिये शिल्पग्रथोंमे कहा है। कई जैन विद्वानों "सप्तमा सप्तमे भागे" का अर्थ करते हैं कि सातवे के आठवे, भागकर सातवें भागमे अर्थात् छ. और सात के बीच दृष्टि आय मेलमे रखना। परन्तु शिल्पीवर्ग सातवें भागमे ही भागपर और नहि कि नीचे–आय मेल–प्रासाद मडनकार कहते हैं। परन्तु विश्वकर्मा के कोई भी प्राचीन ग्रथमें आय मेल पर दृष्टि रखनेके लिये नहीं कहा है। वृक्षार्णव और क्षीरार्णव आदि ग्रथोमे गजाश विभागमें ही दृष्टिसूत्र रखना। एक वालके अग्रभाग जितना भी फर्क नहीं रखना। यह मतमतान्तर शिल्पियों और जैन विद्वानों के बीचका सामान्य है। गजाशका अर्थ सातमा हि होता है नहि के गजाय।

उपरोक्त मतमतान्तर तो इचके आठवें भागके बराबर है। परन्तु ठक्कुर-फेरुके मतसे (५′–५″ द्वारोदयके हिसाबसे) १८ अगुल नीची, दिगम्बराचार्य वसुनन्दीके मतसे सोलह अगुल, 'क्षीरार्णव' 'दीपार्णव' के दूसरे मतसे २२ अगुल दृष्टि उत्तरगसे नीची रखनेके लिये कहते हैं। ऐसे वडे अतर ग्रथकारों के मतमतान्तरमे कौनसा मत स्वीकारना ? यह प्रश्न होता है, यद्यपि वर्तमान मे सर्वमान्य ६४ भागके पचपनमे भागका मत अधिक व्यवहारमे है। पृथक् पृथक् देवदेवीकी दृष्टि स्थिर भिन्न भिन्न करके प्रतिष्ठाके समय पर वादविवाद होनेसे पहले उसका निर्णय कुशल शिल्पियोंको ले लेना चाहिये। अब जो कोई पुराने मन्दिरोंमे जो दृष्टि नीची हो तो तव शिल्पियो धीरज रखकर पूर्वाचार्यके कोई ग्रथका मत देखकर अपना अभिप्राय देना चाहिये।

१३. देवता पद स्थापन के–संबंधमें भिन्न भिन्न ग्रंथकारोने पृथक् पृथक् विभाग प्रतिमा स्थापनके कहते हैं। यद्यपि उसमें कमज्यादा तफावत है। प्रासाद तिलक, और विवेकविलास, गर्भगृहार्ध के पीछलेमें पाँचवें के तीसरे भागमें कृष्ण, जिन और सूर्यकी मूर्ति स्थापन करनेके लिये कहा है। अलबत्त, शास्त्राधार सच्चा है, परन्तु जिन तीर्थंकर के बारेमें वह अपवादरूप हो वैसा पुराने उदाहरणोंसे लगता है। अन्य देवोंको तो पधराई हुई मूर्तिके पीछे प्रदक्षिणा करने की प्रथा है। वह जो कहे हुए विभागमें पधराई हुई हो तो प्रदक्षिणा होस के तो जैनोंमें चातुर्मुख के सिवा कहीं भी जिनप्रभु के गर्भगृह के अंदर प्रदक्षिणा होती हो वैसा देखनेमें नहीं आता है। इससे जिन प्रभुकी पिछली दिवार से परिकर जितनी जगह रखकर पधराई हुई देखनेमें आती है। जो कि पद विभाग के अनुसार प्रतिमा बिठानेका आग्रह रखनेवाले शिल्पीका मंतव्य झूठ है ऐसा नहीं कहा जा सकता। परन्तु वह व्यवहारमें नहीं है। गर्भगृहके अर्धमें $\frac{3}{4}$ भागमें सिंहासनपीठ रखे जाते हैं। 'प्रासाद मण्डन' के एक दूसरे प्रमाणमें—

'पटाऽधो यक्ष भूताद्या–पटाग्रे सर्वदेवता'

इस सूत्रको जिन प्रभुके बारेमें शिल्पियोंने स्वीकारा हो ऐसा लगता है।

१४. शिखर का विषय–गहन है। उसे अधिक अंडकों या कर्म उरूशृङ्ग प्रत्यागादि वगैरह चढ़ानेके होते हैं। अनुभवके रहित सूत्रोंसे पकड़कर रखनेवाले और दुसरोंकी क्षति निकालते हैं यह अयोग्य हैं। 'समदल' उपांगवाले प्रासाद के शिखरमें शिल्पिओंको कम तकलीफ पड़ती है। परन्तु 'हस्तांगुल' उपांगवाले प्रासादके शिखरमें तो शिल्पीकी सचमुच कसौटी होती है। उसकी कदर करने के बदले अल्पज्ञों क्षति निकालते हैं, यह दुःसह लगता है। अठारहवीं सदीमें हुए तीन पदपर तीन शिखरोंके पायचे–मूलकर्ण गर्भगृहके पाटके समसूत्रमें मिलाने की शिल्पियों की प्रथा उस समयमें थी। हस्तांगुल शिखरमें शृङ्गोंके निर्गम ऊरू शृङ्गों पर शृङ्ग मिलानेमें शिल्पिओंको मुश्केली आती है। यह सब कठिनाईयां बुद्धिमान शिल्पि मिलाके सुन्दर शिखर बनाते हैं।

१५. शिखरके ध्वजादंड को धारण करता हुआ ध्वजाधारध्वजाधार–कलावा शिखरकी खड़ी मूल रेखाके उदयके छहवें भागमें उसके $\frac{1}{4}$ हीन करके उस स्थानमें करनेके लिये कहते हैं। ध्वजाधार का अर्थ ध्वजादंडको धारण करता आधाररूप कलावा होता है, यह मेरा मंतव्य है। ऐसा बहुतसे पुराने शिखरोंमें पीछे होता है। किसी स्थानपर ध्वजापुरुष की आकृति भी देखनेमें आती है। इससे ये दोनों मतका परस्पर खंडन करनेवालों का वाद अयोग्य है। परंतु

शिखरके स्कधसे नीचे ध्वजाधार कलावा तो होना ही चाहिये। यह निःशकता से मान्य करना ही चाहिये, उसमे वादको स्थान नहीं है। जो वहाँ दुराग्रह किया जाय तो वह अयोग्य है। शास्त्राधारको मानना ही चाहिये। शास्त्राधार हो वहाँ पुराने किसी स्थानके उदाहरण को प्रमाण नहीं माना जा सकता।

१६. नागरादि शिल्पमें शिखरके स्कधके छः भाग विस्तारसे सात भागका आमलसारा विस्तार करनेके लिये कहा है। जो ध्वजाधार शिखरकी खड़ी मूल रेखाके उदयके $\frac{3}{8}$ भागपर स्कधके नीचे रखनेके लिये कहा है। इस ओलभेको देखनेसे आमलसारा के वृत्तसे ध्वजादड बाहर निकल जाय यह स्पष्ट है। इससे ध्वजादडको स्थिर रखने के तीन स्थानक ध्वजाधार–दूसरा स्कध (बाघणाके पास) एक लाग-छीद्र पाडकर रखना। तीसरे आमलसारा की बाहर कलावा का घाट करके उसमे छिद्र करके उसमे ध्वजादड खडा करनेसे कैसे भी झझावातोंमे वह स्थिर खड़ा रह सके, यह रीत शास्त्राधार है।

आमलसारा मे छिद्र करके ध्वजादड खड़ा करनेकी प्रथा देढसौ–दोसौ सालसे है, यह बराबर नहीं है। 'क्षीरार्णव' अ १३० के श्लोक ११ से २४ तकमे इस सरवेध अर्थात् मस्तकमे वेध कहकर बहुतसे दोष दुष्ट फलदाता कहे हैं और स्कध-बाध के ऊपर ध्वजदड गाड़ने को भी वैसा ही वेधदोष कहा गया है।

ध्वजादडकी लबाईका जो मान कहा है वह ध्वजाधारमे बराबर से गिना जा सकता है, परतु जो आमलसारा मे ध्वजादड गाढा जाय तो उसे साल रखना पडे और वह शिखरके प्रमाणसे बहुत ऊँचा दड होवे। यह झूठा है। शास्त्रोंमे ध्वजादण्ड को साल रखनेके लिये कहा नहीं है। आमलसारा मे उसे गाड़ना होता तो सालका निर्देश उसमे होता।

आमलसारा मे ध्वजादण्ड स्थापन करने का दुराग्रह रखनेवाले शिल्पियों जो पुराना काम हुआ हो उसका उदाहरण देकर अपने मतका समर्थन करते हैं परतु यहाँ शास्त्राधारके स्थान प्रमाणसे अन्य मार्ग असत्य है।

१७. ध्वजादण्डके साथ स्तंभिका खडी करनेके लिये कहते है। अपराजित कार और क्षीरार्णवकारने स्तभिकाको कितनी ऊँची करना? कैसी करना? उसके शिरपर क्या करना? वगैरह विगतसे प्रमाण दिया हुआ है और स्तभिका को दडके साथ गज गजपर मजबूत त्राबेकी पट्टीया बाँधों, बाँधनेके लिये कहा है। आमलसारेमें दड रखनेके मतानुयायीओं स्तभिकाको निरर्थक मानते है। दडको

स्थिर करनेमें वह वह बल नहीं दे सकता है। ऐसी दलीलें करके स्तंभिका की अगत्यको नहीं स्वीकारते हैं। उपरोक्त शास्त्रीय पाठोंके मतका समर्थन करनेवालों के बुजर्गोंने डेढसौ साल पहले जो किया हो उसके प्रमाणरूप देते हैं। परंतु सज्जनोंके लक्ष्यमें सत्य हकीकत समजमें आवे तब वे आगेकी क्षतियों को सुधारें और सत्य मार्गका अवलंबन करें।

१८. **प्रासाद पुरुष** की सुवर्णमूर्ति आमलसारामें स्थापन करनेके लिये कहा है। उसके बायें हाथमें तीन शिखाओंवाली ध्वजापताका धारण करने के लिये कहा है। उसे कई शिल्पीओं त्रिपताकका अर्थ पताका–ध्वजाके बदले मुद्रा मानते हैं। परंतु सामान्यतया शिल्पीओं पताकाका अर्थ ध्वजा करके वैसी आकृति की सुवर्णमूर्ति जो प्रासादके प्राणरूप है उसे स्थापन करते हैं।

१९. **पताका–ध्वजा कैसी करना?** इस विषयमें शिल्पग्रंथोंमें बहुत स्पष्टता से कहा है कि पताका–ध्वजादंड के बराबर लम्बी और उसके $\frac{1}{6}$ भागकी चौडी चोरस करना। लटकते सिरे को तीन या पाँच शिखाग्र करना! कई ब्राह्मण विद्वानों पताका त्रिकोण होती है और पताका दंड के उदयमें रखना वैसी मान्यता रखते हैं। परंतु उपरोक्त रीतसे शिल्पशास्त्रों के आधारको मान्य रखा जाय तो त्रिकोण पताका का स्थान नहीं रहता है। वे अन्य अशास्त्रीत्र रीतसे किये हुए परंपरागत पताकाओं के उदाहरण देते हैं, परंतु वह सत्य नहीं है। विद्वान भूदेवों को उनके मतानुसारका शास्त्रीय पाठ प्रासादकी पताकाका दिखाने का आग्रह करनेसे उन्होंने यज्ञयागादि क्रियाके या उसके मंडप परकी ध्वजाओं का पाठ बताया। अमुक दिशामें अमुक वर्णकी त्रिकोण ध्वजा का प्रमाण है, परन्तु प्रासादके शिखरको वह सूत्र लागु नहीं होता है, तो भी किसी विद्वान आचार्य इस विषयमें प्रकाश देंगे वैसी आशा हम रखते हैं।

२०. **राजस्थानमें शिखर पर** पाषाणके कलशके स्थानपर तांबेके या सुवर्ण के पतरेका कलश पोला बनाकर उसमें घी भरते हैं, परन्तु सिर्फ पतरेका कलश कर चढानेकी रीत झूठी है। राजस्थानमें बहुत करके इस प्रथाको मानने वाले विशेष हैं। पतरेके कलशका विधान झूठा है। पाषाणका ही कलश करके उसका विधिसर अभिषेक पूजन करके रखना चाहिये। बादमें उसके पर सुवर्णके पतरेका कलश चढानेमें हरकत नहीं है। ध्वजादंड काष्टका ही होंना चाहिये–मगर अब पाईप दण्ड बनाते हैं, ये ठीक हे लेकिन पाईपके अंदर सळंग एक काष्टका तो दण्ड रखना ही चाहिये–अन्यथा गलत है!

२१. अठारहवीं सदीमें मूर्तिभंजक विधर्मियोंका भय दूर होनेसे गुजरात, सोराष्ट्र, कच्छ, राजस्थान वगैरहके जैन सघोंने भयसे भंडारी हुई हजारों मूर्तियों को बाहर निकाला इससे अधिक मूर्तिओं को बिठाया जा सके वैसे तीन पदके गर्भगृह करनेकी आवश्यकता समयानुकूल उत्पन्न हुई। प्रत्येक गाँवके जैन सघने वैसे मन्दिरों पर तीन शिखरों बनवानेका आग्रह रखा। उस कालके शिल्पियों को समयानुकूल वर्तन करने पर वाध्य होना पडा। इससे अठारहवीं सदीसे ऐसे तीन पदपर तीन शिखरोंवाले हजारो मन्दिरो हरेक गाँवमे हुए। पालीताणा शत्रुंजय पर उस कालमे हुई टूँकोंके कई सौ मन्दिरों भी ऐसे ही प्रकारके हुए हैं। सामुहिक सर्वमान्य रीतसे इस अपवादको स्वीकारना पडा, परन्तु यह झूठा है यह कहते पहले सोचना चाहिये। वर्तमानकालमे ऐसे तीन पदवाले गर्भगृह करनेके हो तब अभी-चाहे एक शिखर करे या पाँच पदपर तीन करे परन्तु डेढसे-सो साल पहलेके ऐसे मन्दिरोंको दोषित नहीं कहना चाहिये।

कईवार मूलपाठोका अर्थ करनेमे मतभेद होता है। कईवार मूलपाठ और क्रियाकी भिन्नतासे ऐसा होता है। परन्तु विद्वान पुरुषो अपने मतका दुराग्रह नहीं रखते है। किसी भी कालमे क्रियाका भिन्न अर्थ करके कार्य हुआ हो ऐसा हो सकता है। तब वे सब मन्दिर झूठे है, यह कहना अतिशयोक्ति है, सोच समजसे निर्णय करना।

क्षीरार्णव

क्षीरार्णव ग्रथके सशोधन के लिये हमारे हस्तलिखित ग्रथसग्रह की करीब छ-सात प्रतियाँ वि स १८१० से १९०३ तकके समयमे लिखाई हुई है और रोयल एशियाटिक सोसायटी की बॉम्बे ब्राचकी लाईब्रेरीकी पुस्तककी शके १८१८ की प्रत, (३) बरोडा प्राच्य विद्यामन्दिर की प्रत परसे लिखी हुई कॉपी और गुजरातके शिल्पी श्री नटवरलाल मो सोमपुरा की और वि स १७१० के अदाजकी प्रत-इन सब प्रतोंका मिलान करके हो सके इतना क्रमबद्ध सशोधन करनेका मैंने प्रयत्न किया है। सौराष्ट्रके सोमपुरा शिल्पीयों की कुछ प्रतें मैंने पहले प्राप्त की थीं, वे मेरे ग्रथसग्रहसे अधिक नहीं थी, और बहुत कम भिन्न थीं और १०१ अध्यायसे १२० वे अध्यायके ९३ वे श्लोक तककी अपूर्ण प्रतें प्राप्त हुई थीं, कुछ तो इससे भी कम अध्यायोंवाली प्रते भी मिली थी।

मूल ग्रथके आगेके ९८ अट्ठानवे अध्यायो लुप्त है और अध्याय १२० के बादका ग्रथ-विस्तार कितना है यह नहीं प्राप्त हुआ। गुजरात सौराष्ट्रकी प्रतों १०१ अध्यायके कूर्म शिला प्रकरण से शुरू होती है परन्तु रोयल एशियाटिक

सोसायटी की पुस्तकोंमेंसे मुझे आगेका दो अध्याय, गणित विषयका और जगति लक्षणका प्राप्त हुई। कहते हैं कि मेवाड राजस्थानमें कोई सोमपुरा शिल्पी के पास ज्यादा विस्तारवाली प्रत हैं। दुर्भाग्यवशात् उसको प्राप्त नहीं कर सका हूँ।

संशोधन करते प्राप्त हुई प्रतोंकी (१) अशुद्धता (२) कुछ अध्यायोंमें अस्तव्यस्तता (३) एक विषय अपूर्ण छोड़कर दूसरे विषयोंके अशुद्ध पाठों आना (४) अध्याय ११२ में सिर्फ तीन ही अशुद्ध श्लोकमें दिया हुआ है, जिसका कुछ अर्थ प्राप्त नहीं होता है। (५) और स्तंभ, कुंभी, द्वार, शंखोद्वार-गर्भगृहके प्रमाण, स्वरूप, मंडोवरके साथ स्तंभके छोड़का समन्वय इन विषयोंकी प्राप्त हुई प्रतोंके अध्याय १०१, १११, ११७ और ११५ में आगे-पीछे या कम-ज्यादा या बारबार पाठो आता है, पुरानी शुद्ध प्रतोंके अभावसे ऐसी स्थितिमें ग्रंथको क्रमबद्ध करने की छुट लेनी ही पड़ती है। इसमें मैं तो क्या निष्णात और बड़े विद्वान भी क्या कर सकें? वैसे समय सुज्ञ विद्वानोंका कर्तव्य छूट देनेका है। अनिच्छासे ऐसी छूटके लिये शिल्पज्ञाता विद्वानोंकी क्षमा चाहता हूँ।

अगर इस ग्रंथको अपूर्ण रखूँ? क्षीरार्णवकी प्राप्त प्रतों इतनी अशुद्ध हैं कि कितने स्थानपर उनको मूल स्वरूपमें रखनेका कार्य अर्थहीन और मुश्किल था! तो भी उसको क्रमबद्ध करने का प्रयास किया है। तो भी मेरे अल्प प्रयत्नोंसे मैं शिल्पी समाज या उसके रसज्ञ विद्वान समाजके आगे कुछ इतना तो रखनेके लिये सौभाग्यशाली हुआ हूँ। इसकी कद्र होगी तो मुझे आत्म-संतोष मिलेगा।

निरन्धार प्रासादोंकी शैलीके नियमों शिल्पीवर्गमें कई लोगोंसे परम्परासे रूढ हो गये हैं। पिताके कार्यका अनुकरण उसका परिवार करे, इस तरहसे सैंकडों वर्षोंसे हुआ है। इससे शिल्पीवर्ग में कुछ निरक्षरता आने लगी। हस्तलिखित ग्रन्थोंकी अगत्यता कम मालूम समजनेसे, और ग्रंथकी प्रतोंमें अशुद्धि बढ़ती जानेसे और ग्रंथों-पिटारों के आभूषणरूप मिलकत गिने जाने लगे इससे पद्धतीपूर्वक अभ्यास बहुत अल्प सहस्रांश में होता था। विद्याके मर्म विस्मृत होते चले। सभाग्यसे सिर्फ सक्रिय ज्ञान रहा है। इसीलिये भारत का शिल्पीवर्ग अभी कुछ सजीव है ऐसा दिखता है।

निरंधार प्रासादों परंपरासे-रूढिसे शिल्पयों बाँधते रहे परन्तु भ्रमवाले सांधार महाप्रासादोंके स्थापत्यका अति दुर्घट ज्ञान और क्रिया छः सौ, सात सौ, सालसे विधर्मी राज्यभयसे बँधाये नहीं गये। इससे वैसे प्रकारका ज्ञान विस्मृत होता गया। वर्तमानमें श्री सोमनाथका सभ्रम महाप्रासादका निर्माण मेरे नेतृत्व

मे हुआ। उसके कार्यारंभमे वैसे शिल्प साहित्यकी बहुत अगत्य मालुम हुई। सद्भाग्यसे हमारे भारद्वाज कुल परंपरामे ऐसे प्रकारके साधार महाप्रासाद के विषयका ज्ञान–साहित्य श्री विश्वकर्मा की कृपासे रक्षित रहा था। इससे वैसा कठिन शिल्प-साहित्यको समझनेके लिये बहुत सरलता रही।

क्षीरार्णव ग्रंथमे निरधार प्रासादोंके यम-नियमो हैं लेकिन विशेष कर वह साधार महाप्रासादके विषय अधिक उपयोगी साहित्य है। सामान्य शिल्पी-वर्गको उपयोणी अध्यायों मे थोड़ी अशुद्धि थी परन्तु जो प्रयोगमे कम है वैसे साधार महाप्रासादोंके अध्याय बहुत अशुद्धियोंसे भरे हुए थे। इससे ग्रंथशुद्धिका कार्य कठिन बना था।

वृक्षार्णव ग्रंथ भी जितना छुटक छुटक अध्यायों प्राप्त हुआ है उसमे महा-प्रासादोंकी रचनाके पाठों, उनके यम नियमों दिये हुए हैं। जैसा कि ऊपर कहा है वह ग्रंथ व्यवहारमे वर्तमान कालमे न होनेसे उनकी प्रतों बहुत अल्प प्राप्त हुई हैं। यद्यपि वह ग्रंथ भी सपूर्ण मिलता नहीं है। उसकी स्थिति भी क्षीरार्णव जैसी है। उसका संशोधन मैंने यथामति प्रयत्नसे करीब तीस सालसे अनुवाद के साथ किया था परन्तु दूसरी प्रतोंके अभावमे उसका मिलान न हो सका था। वहाँ तक उसमें क्षतियाँ रहनेका भय बहुत रहता था। सुयोगसे मारवाड़ पालीकी और वि–स १७६८ की एक प्रति और पाटणकी छुटीछवाइ पाठोंवाकी प्रत उपरांत रोयल एशियाटीक सोसायटीकी प्रतके आधारपर अभी उसका संतोषप्रद संशोधन कर रहा हूँ। यह वृक्षार्णव–ग्रंथके प्रकाशनके लिये मुझ विद्वानों और पुरातत्त्वज्ञों मुझपर स्नेहभावसे दबाव डाल रहे थे तो सद्भाग्यसे गुजरात की एक बड़ी मानवती मातबर संस्था की तरफसे प्रकाशन के लिये कार्य होनेकी संभावना है। वृक्षार्णव ग्रन्थ अद्भुत है।

वृक्षार्णव ग्रन्थके संशोधनमे बहुत मुश्किल हैं, यह कार्य कठिन है तो भी उसको पूरा करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, जिसके अंग्रेजी संस्करणमें मेरे स्नेही श्री मधुसुदन अ ढाकी मुझे सहायक हो रहे हैं।

शिल्प स्थापत्यका विषय हमारे कुल परम्परा का है। इससे पारिवारिक संस्कार वारसेमें मिले यह स्वाभाविक है। कैलासवासी पूज्य पिताश्री और मेरे दो स्व वडील बन्धुओं त्र्यंबकलालभाई और श्री भाईशंकरभाईने विद्या के संस्कार सींचे, मार्गदर्शन दिया। उनका ऋण मुझसे अदा नहीं हो सकता है। कनिष्ठ वडीलबंधु श्री रेवाशंकरभाई हमारी समस्त ज्ञातिमें ५० साल पहले प्रथम ग्रेज्युएट हुए थे। वे मेरे ग्रन्थ-प्रकाशनमे श्रम और अनुभवका लाभ हमेशा देकर

उपकृत कर रहे हैं। वडिलोंके ऋण स्वीकारको नोंध लेते मुझे आनन्द होता है। उनकी शुभाशिषों की कृपावर्षा हमेशां मेरेपर होती रहो ऐसी जगन्नियंता श्रीहरिके प्रति मेरी नम्र प्रार्थना है।

सुप्रसिद्ध श्री सोमनाथ महाप्रासादका निर्माण मेरे हाथोंमें होनेसे उसके ट्रस्टके कामकाजके बारेमें राजप्रमुख श्री नामदार स्व. जामसाहब, सर दिग्विजय सिंहजी साहब और महाराज्ञी वर्तमान राजमाता नामदार गुलाबकुंवरबा साहेबाके परिचय में अवारनवार आनेका प्रसंग होता था। वे नामदार शिल्प के प्राचीन अमूल्य विद्या और साहित्य के प्रकाशन के लिये मुझे प्रोत्साहन देते थे और वर्तमान नामदार राजमाता साहेबा शिल्पका अभ्यासक्रम योजकर उसका क्रियात्मक ज्ञान मिले वैसी पाठशालएँ स्थापकर शिल्पी विद्यार्थीओंको तैयार करनेके लिये मुझपर बहुत दबाव डाल रहे हैं। विद्यार्थीका सर्वप्रकार के आर्थिक बोझा उठाने की व्यवस्था भी कर रही हैं। यह उनका विद्या-कलाके प्रति प्रेम हैं। इस ग्रन्थ-प्रकाशनके लिये मैं उन नामदारोंका ऋणी हूँ।

गुर्जर साहित्यकी अस्मिताके प्रकटकर्ता उत्तर प्रदेशके भूतपूर्व गवर्नर श्रीमान् कन्हैयालाल मा. मुन्शीजी जो हालमें सोमनाथ ट्रस्टके प्रमुखश्री हैं। वे मेरे प्रति सदा सद्भाव बता रहे हैं, उन्होंने ग्रंथका पुरोवाचन लीखनेकी कृपा की है, इसलिये मैं उनका उपकृत हूँ।

श्रीमान् श्रीगोपालजी, नेवटियाजी, शेठजी, शिल्प-स्थापत्य कला प्रति और हमारे परिवार प्रति हमेशां प्रेम और आदर रखते हैं। उन्हीसे श्री बिरला परिवारके संसर्गमें आनेका प्रसंग रहता है। शिल्प-स्थापत्य कला साहित्य के प्रकाशन के लिये हमेशां प्रोत्साहन देते रहते हैं।

प्रीन्स ऑफ वेल्स म्युझियमके डायरेक्टर, पुरातत्त्वके प्रखर विद्वान पुरातत्वज्ञ डॉ. मोतीचन्द्र भाईसाहबने समय और श्रम लेकर यह ग्रन्थकी भूमिका लिखी है इसलिये मैं उनका हृदयपूर्वक आभार मानता हूँ।

क्षीरार्णव ग्रंथके संशोधन कार्यमें व्याकरण शुद्धिकी क्षतियाँ विद्वानों को मालूम पड़ेगी लेकिन वास्तुशास्त्र के ग्रंथोंको भाषा ही वैसी निराली है। मूल संस्कृतमेंसे प्राकृत, मागधी, पाली वगैरह भाषाएँ उत्पन्न हुई। इस तरह वास्तु-शास्त्रके ग्रन्थोंकी भाषा ही वैसी है। एक विद्वानने संस्कृत पद्यमें कहा है,

ज्योतिषे तन्त्रशास्त्रे य विवादे वैद्यशिल्पके
अर्थमात्रं तु गृहणीयान्नात्र शब्दं विचारयेत्।

"ज्योतिष, तन्त्रशास्त्र, विवाद, आयुर्वेद और शिल्प ग्रन्थोमे उनकी भाषाके शब्दोंका बहुत विचार न करते उनके भावार्थको ग्रहण करना।" सुज्ञ पुरुषो व्याकरणादि क्षतियोंके प्रति उपेक्षा कर हसवृत्ति धारण करेगे ऐसी मेरी प्रार्थना है।

इस ग्रन्थका यथायोग्य अनुवाद किया गया है, परन्तु जहाँ जहाँ अस्पष्ट पाठों हों या जहाँ शकाओं या अपूर्ण पाठों हों वहाँ भावार्थ दिया है। कई स्थलोपर असनद्ध पाठो या अति अशुद्धि के कारण अनुवाद करनेका अशक्य हुआ है। वैसे पाठभेदो की स्पष्टता मिलते ही वहाँ योग्य सुधारके लिये अवकाश है। मैं नहीं कह सकता हूँ कि मेरा अनुवाद क्षतिरहित है, अपूर्णता और अशुद्धिसे आई हुई क्षतियोंके लिये उदारभावसे विद्वान महाशयों क्षमा करें।

क्षीरार्णवके प्रारम्भके ९८ अध्यायों की अपूर्णता के कारण प्राप्त ग्रन्थों के अध्यायों के एक साथ क्रमाक, अध्याय सख्या सुगमताके लिये रखे गए हैं।

ग्रन्थके भाषानुवाद के साथ प्रत्येक अगकी टीका और अन्य ग्रथोंके मतान्तर की नोंध दी हुई हैं। ग्रन्थ-वाचन से अर्थ नहीं सरता है। क्रियात्मक ज्ञान (प्रेक्टीकल) का मर्म देनेसे ग्रन्थ सपूर्ण बनता है। उसके साथ कोष्ठकों अनेक आलेखनो, नकशे और चित्रों भी इसी विषयोंको स्पष्ट करनेके लिये जरूरी हैं। वे और अन्य प्राचीन ग्रथोंके अवतरण भी दिये गए हैं। ग्रथको अधिक समृद्ध बनानेके लिये यथामति प्रयास किया है। मेरे प्रयास की कद्र विद्वान वाचक करेंगे ऐसी आशा रखता हूँ।

वशपरम्परा के व्यवसाय मे मेरा ज्येष्ठ पुत्र श्री बलवतराय और पौत्र श्रीचन्द्रकात यह शिल्प-स्थापत्य व्यवसायमे जुड़ायें है वो कुलपरम्परा को समृद्ध करेंगे यही प्रभु प्रार्थना है। दूसरा पुत्र विनोदराय एम ई अमेरिका सीवील एन्जिनीयर है। श्रीहर्षदराय बी ए एल एल बी अहमदाबाद हाईकोर्ट एडवोकेट है। श्रीधनवन्तराय बी ए एल एल बी बेंक व्यवसायमें हैं।

क्षमायाचना—एक विद्वान कहते हैं, "कविकी जिह्वामे और शिल्पीयोंके के हाथोंमे सरस्वती बसती है" शिल्पीकी बानी-भाषामे व्याकरणकी त्रुटियाँ सहज ही हो उनके प्रति उपेक्षा दिखाकर ग्रन्थके मूल अर्थ-भावार्थको विद्वानों ग्रहण करेगे ऐसी मेरी प्रार्थना है।

ग्रंथका हिन्दी अनुवाद श्री जयेन्द्रकुमारमाणेकलाल शाह, एम ए "राष्ट्र-भाषा रत्न" ने श्रम लेकर सुन्दर किया है और ग्रन्थका सुन्दर और स्वच्छ छपाईकाम अहमदाबादके नवप्रभात प्रेसमे उसके प्रोप्रायटर श्री मणिलालभाई और

प्रेस स्टाफके हेड श्री शंकरसिंहजीने श्रम लेकर किया है। ग्रंथमें आये हुए कई ब्लोकका सुन्दर काम कर प्रोग्युलर प्रोसेस स्टुडियोने ग्रंथको सुन्दर आकर्षक बनाने का यथाशक्ति प्रयत्न किया है, इन सभी मित्रोंकी सहर्ष नोंध लेकर आभार मानता हूँ।

ग्रन्थमें आये हुए कई ब्लोकके आलेखन सौराष्ट्र गुजरातके प्रख्यात युवान शिल्पकार श्री चन्दुलाल भगवानजी और अभी प्रभासपाटण सोमनाथजी के कार्य पर है वे मेरे भानजे शिल्पकार श्री भगवानजी मगनलालने भी अन्य आलेखादि कार्यमें–दोनों मुझे सहायक हुए हैं। इस बातका सहर्ष उल्लेखकर आभार मानता हूँ।

सर्वेत्र् सुखिनःसन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चं दुःखमाप्नुयात् ॥

इति शुभं भवतु, श्री कल्याणमस्तु।

स्थपति प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुरा
शिल्प–विशारद

वि. सं. २०२३ वैशाख शुदी त्रीज,
अक्षयत्रतीया
पालीताणा ता. १२, मी मे सन १९६७





भूमिका

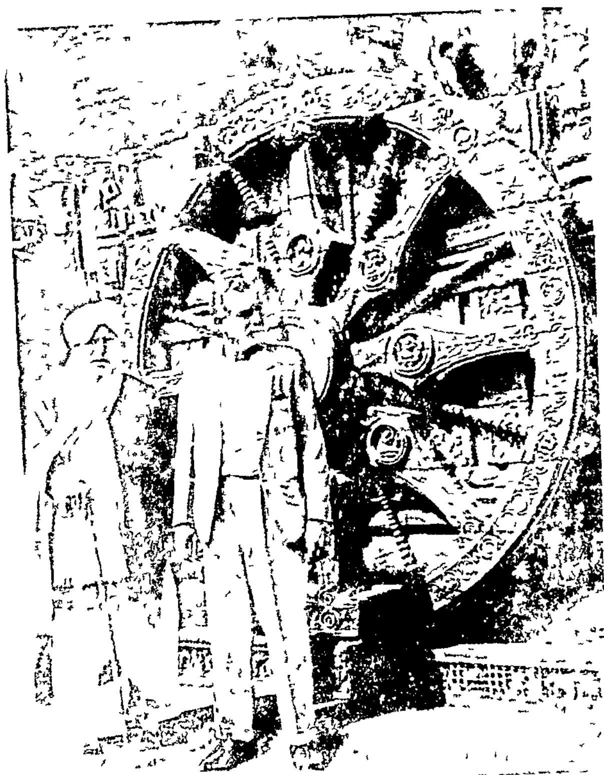
डॉ मोतीचन्द्र, (एम ए, पीएच डी (लण्डन)
डायरेक्टर, प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम, बम्बई

क्षीरार्णवके टीकाकार श्री. प्रभाशंकर ओघडभाई–सोमपुरा भारतीय स्थापत्य शास्त्रके उन इने गिने विद्वानोंमे है। जिन्होंने अपनी कुलगत परंपरा और संस्कृतमें लिखित वास्तुशास्त्रकी चर्चा और अध्ययनको एक नया रूप दिया है। यह तो प्राय: सभी विद्वान मानते हैं कि स्थापत्य शास्त्रकी पुस्तकोंमें अनेक असबद्ध विस्तार होने पर भी उनमे सत्यका अच्छा खासा अश है। जिसका वास्तविकतासे नजदीकका सबंध है। पर उस वास्तविकता को पकडमे लानेके लिये मध्यकालीन वास्तुशास्त्रकी परिभाषिक शब्दावली तथा उपलब्ध देवमदिरोंके अवयवोंसे उसकी तुलना केवल श्री सोमपुराजी जैसे विद्वानोंके बसकी ही बात है। सच बात तो यह है, श्री सोमपुराजीने मध्यकालीन वास्तुशास्त्र अध्ययनके लिए हमारे सामने एक दृष्टिबिंदु रखा हैं जिसे ध्यानमे रखकर चलनेसे यह पता चलता है कि देवालयोंके जो नकशे, अवयव तथा अलकार हमारे सामने आते हैं उनमे सार्थकता है और उनकी कृति वास्तुशास्त्रके उन सिद्धांतों पर आश्रित है जिनका क्रमिक विकास हुआ है। इसमें सन्देह नहीं कि मध्यकालीन वास्तुशास्त्रके अनेक अभिप्राय समायान्तरमे रुढिगत होकर अपनी नवीनता खो बैठे, पर यह बात केवल वास्तुशास्त्रों तकका सीमित नहीं थी। मध्यकालीन भारतीय सस्कृतिके अनेक उपादानोंमे भी हमे यही बात दीख पड़ती है।

शास्त्ररूपमें वास्तुविद्याका उदय कब हुआ, यह कहना तो सभव नहीं है। फिर भी प्राचीन साहित्यमे वास्तु सबधी चाहे वह दैविक हो या नागरिक अनेक उदाहरण मिलते हैं। वैदिक साहित्यसे ऐसे उदाहरणोंका समह श्री सुविमलचन्द्र सरकारने अपनी पुस्तक " सम ऑसपेक्टस् ऑफ दी अर्लियेस्ट सोशियल हिस्ट्री ओफ इंडिया " मे कर दिया है। वैदिक शास्त्रोंमे वास्तुशास्त्र सबधी शब्द सीधे सादे हैं। पर वास्तुका जीवनसे इतना निकटका सबंध था कि वास्तु सबधी प्रक्रियायोंके लिए वास्तुयाग और वास्तुनरकी कल्पना की गई। आश्वलायन (४/७/६/१३) गोभिल (४/८) तथा आपस्तब (६/१६) गृह्यसूत्र तो भूमि शोधन सबधी नियमोंका विवेचन करते हैं, तथा वास्तुशांतिका उल्लेख करते हैं। ऋग्वेदमें वास्तोष्पति शायद वास्तुके अधि देवता थे, जो गृह्यसूत्रोंमें वास्तुपुरुष हो गये। सूत्रोंके आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक मध्य स्तंभका आधार मानकर ही गृहकी रचना होती थी।



सुप्रसिद्ध सोमनाथजी के मंदिरमें भारत के राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णजी और
स्थपति प्रभाशंकर सोमपुरा शिल्पविशारद



शिल्पविशारद् श्री प्रभाशङ्करजी सोमपुरा के अपना सुपुत्र शिल्पज्ञ श्री बल्वतराय (आर्चिटेक्ट)
ओरिस्सा के सुप्रसिद्ध कोनार्क सूयमदिरका प्लीथमे रथचक्र के पास

प्राचीन बौद्ध साहित्य (ए. सी. कुमारस्वामी। अर्ली इन्डियन आर्किटेक्चर, ईस्टर्न आर्ट १९३०–१९३१) तथा जैन साहित्य (डॉ. मोतीचन्द्र, आर्किटेक्चरल डेटा इन जैन केनोनिकल लिटरेचर, जर्नल एशियाटिक सोसायटी, वाल्युम २६ भाग २. १९५१) के आधार पर हम ईसापूर्व तथा ईसाकी आरंभिक सदियोंमें भारतीय वास्तु पर प्रकाश डाल सकते हैं। पर वास्तु संबंधी इन साहित्यिक उदाहरणों का सीधा सम्बन्ध या तो स्तूप, चैत्य, तोरण, वेदिकाकी बनावटोंसे अथवा प्रासाद और नगरकी रचना और नकशोंसे है। इन उदाहरणोंका संबंध ईसा पूर्व दूसरी सदीसे लेकर ईसाकी २–३ सदी तकके स्थापत्यसे है।

वास्तुशास्त्र संबंधी जो परिभाषाएँ हमें इस युगमें मिलती है, उनका संबंध अधिकतर काष्ठ निर्मित स्थापत्यसे है। उस युगके जो चैत्य और विहार लेणों बच गई है। उनके नकशे भी काष्टसे बने आरामों तथा प्रासादोंसे लिए गए है। जिन देवमंदिरोंकी कल्पना मध्यकालमें हुई उनका इस युगमें पता न था। जो परिभाषाएँ अपने युगमें पूरी सार्थक थीं, बादमें चलकर जब वास्तुकलामें पत्थर और ईंटोंका प्रयोग होने लगा वह अपने अर्थ खोने लगीं, और गुप्त युगमें उन नई परिभापाओंका जन्म हुआ जिनका तत्कालीन स्थापत्यसे काफी संबंध था। इन परिभाषाओंका कालान्तरमें संग्रह कर लिया गया होगा और इस तरह वास्तुशास्त्रका जन्म हुआ।

अब प्रश्न उठता है कि क्या गुप्त युगके पहले भी लिखित रूपमें वास्तुशास्त्र था अथवा नहीं। तत्कालीन साहित्यमें वास्तु संबंधी शब्दोंका खुलकर प्रयोग होनेसे तो ऐसा पता चलता है कि कुछ ग्रंथ जिनका अब पता नहीं है, ऐसे रहे होंगे जिनमें तत्कालीन वास्तु और उसके अवयवोंका वर्णन रहा होगा। ऐसा लगता है कि ३–४ सदीमें मंदिरोंकी बनावटमें कुछ खोज बीन आरंभ हो गई थी। कमसे कम रायपसेणिय सूत्रसे पता चलता है कि यान–विमानकी जो राजमहल अथवा देवमंदिरका ही प्रतीक था बनावट कुछ अधिक अलंकृत होती। इसके स्तंभोंकी सजावट लीलामयी शालभंजिका तथा ईहामृग, वृषभ, गंधर्व, मकर, विहग, व्यालक किन्नर, शरभ, कुंजर, वनलता तथा पद्मलता इत्यादि अभिप्रायोंका प्रयोग हुआ है। स्तम्भकी वज्रवेदिका पर विद्याधर युगल उत्कीर्ण होते थे, तथा उनकी सज्जा घंटियोंके जालसे होती थी। य न–षिमानके तीर और सीढ़ियाँ होती थी, जिनके अवयवो यथाणेमा, स्तम्भ फलक;—सूची, संधि तथा अवलंबन बाहुका उल्लेख है। यान–विमानके तीन तरफ तोरण होते थे जिनकी ऊपरी शलाका, स्वस्तिक, श्रीवत्स, नंद्यावर्त, वर्धमान भद्रासन, कलश, मत्स्य और कलशसे सजा होती थी। तोरण स्तंभमें निशीदिकाएँ होती

थीं, जिनमे नागदन्तोंमे किंकिणी घंटाजाल तथा चित्रविचित्र सूत्रमालाएँ लटकी होती थी। कुछ निशीदिकाओमें शालभंजिकाएँ बनी होती थीं। द्वार, तोरण, स्तम्भ तथा प्राकारकी बनावटमे जाल कटक, प्रासादावतंसक, शिखर, जालिका, तिलक, अर्धचन्द्र, पद्महस्तक, तुरग, मकर, किंपुरुष, गंधर्व, वृषभ, मिथुन, संघाट, इत्यादिका भी स्थान होता था।

पर गुप्त युगमे वास्तुकलाने एक दूसरा ही रूप ग्रहण किया। उस युगके साहित्यमे वास्तुविद्या सबंधी शब्दोंका खुलकर प्रयोग हुआ जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है, कि गुप्त युगमे वास्तुशास्त्रका प्रणयन हो चुका था। तथा कमसे कम नागरिक वास्तुकला अपनी काफी परिष्कृत रूपमे प्रकट हो चुकी थी। इस युगमे देवमंदिरोंका सीधासाधा आकार हमारे सामने आ चुका था जिसमे स्थापत्य, मूर्ति तथा अभिप्रायका एक अपूर्व संतुलन था। पर जैसे जैसे मंदिरोंकी बनावट पेचीदा होती गई, वैसे ही वैसे स्थपतियों और सूत्रधारोंको स्थापत्यके बहुतसे प्रश्नो पर विचार करना पड़ा, जिसके फलस्वरूप गणित तथा ज्यामितिक आधारों पर भारी भारी प्रस्तर शिलाओंको लगानेके तरकीबोंका समाधान हुआ। वास्तुशास्त्रके विकासके साथ ही साथ उसके पारिभाषिक शब्दोंका भी क्रमश: विकास हुआ और मंदिरके अवयवों और अलंकारोंके लिये भी शब्द स्थिर हुए। वराहमिहिरने बृहत्संहिता ५६/१५ मे लिखा है।

शेषं माङ्गल्यविहगैः श्रीवृक्षैः स्वस्तिकैर्घटैः
मिथुनैः पत्रवल्लीभि प्रमथैश्चोपशोभयेत् ॥१५॥

इसके पहले श्लोकमे द्वारके दोनों द्वारशाखामे द्वारपालोंका उल्लेख है। माङ्गल्यविहग, श्रीवृक्ष, स्वस्तिक, कुंभ, मिथुन (स्त्री-पुरुष युग्म), पत्रवल्ली और प्रमथ तो गुप्त युगके वास्तु-अलंकारकी विशेषता है ही, और इस युगके मध्यप्रदेशके गुप्त मंदिरोंमें पाए जाते है। इन अलंकारोंका प्रयोग कुषाण युगमे भी होने लगा था, पर इनका परिष्कृत प्रयोग गुप्त युगमें ही हुआ।

अब एक प्रश्न उठता है कि गुप्तकालके मंदिरो पर बनी हुई गंगा यमुनाकी मूर्तियोंका जिसका कालिदासने 'मूर्ते च गंगे यमुने तदानीं स चामरे देवमसेविषाताम्।' कुमारसंभव, ७-४२ मे उल्लेख किया है। बृहत् संहिताने क्यों छोड़ दिया है? इसका कारण यही हो सकता है कि, तबतक गंगा यमुनाकी मूर्तियोंका तत्कालीन वास्तुमे सम्मत प्रयोग न रहा हो। पर चन्द्रगुप्त द्वितीयके समयमे श्यामिलक द्वारा विरचित पादताडितकम् (डॉ वासुदेव शरण अग्रवाल डॉ मोतीचन्द्र, चतुर्भाणी, पृ २१२) से तो पता चलता है कि

गुप्त युगमें गंगा–यमुना संज्ञक मंदिर बनने लगे थे। इलोराके कैलासके एक भागमें ऐसाही मंदिर है। पादताडितकम् में (पृ. १७१–७२) देश के महलोंके वर्णनमें एक परिभाषिक शब्दोंकी लंबी तालिका यह बतलाती है कि, इस युगमें भी नागरिक वास्तुशास्त्रकी परिभाषा काफी प्रचलित हो चुकी थी—विट कहता है–

"मैं वेशमें पहुँच गया। अहा, वेशकी वैसी अपूर्व शोभा है। यहाँ अलग अलग बने हुए वप्र (मकानकी कुर्सीका ऊँचा चेजा), नेमि (दीवारोंकी नींव) साल (परकोटा), हर्म्य (ऊपरी तलके कमरे), गोपानसी (खिड़कीकी चोटी), वलभीपुट (मंडपिका और उसकी उभरी छत), अट्टालक (अटारी), अवलोकन (गोख), प्रतोली (पौर), तथा विटंक (पक्षियोंके लिए छतरी) तथा प्रासादों से भरे हुए चौड़े चौक वाले तथा कक्ष्या विभाग में बंटे हुए, सुनिर्मित, जलपूर्ण परिखाओं से युक्त, छिड़काव से सुशोभित, नलकी फूंक से साफ किए हुए (सुषिर फूत्कृत), उत्कोटितलिप्त (टपरियाका पलस्तर किए हुए), लिखित (चित्रकारी किए हुए), स्थूल और सुक्ष्म नकाशियों से सजाए हुए (सूक्ष्म विविक्ता रूपशतं निबद्धानि). बंध–संधि, द्वार, गवाक्ष वितार्दि (वेदिकाका चबुतरा), संजवन (चतुःशाल घरका बडा चौक) तथा वीथी और निर्यूहों (निकली हुई वेदिकाओं वाले छज्जो) से संयुक्त थे...."।

इस तालिका में शिखर शब्द उल्लेखनीय है। लगता है गुप्त युगमें किसी न किसी रूपमें शिखर प्रचलित हो चुका था, पर इसका पूर्ण विकास मध्यकाल ही में हुआ। इस बातकी बड़ी आवश्यकता है कि साहित्य में बिखरे हुए वास्तुशास्त्रकी परिभाषाऐं इकट्ठी की जायँ क्यों कि साहित्यकारों द्वारा इन शब्दोंकी परिभाषाएं निखरी हुई होती हैं तथा स्वकालीन वास्तुका जीवित चित्र खींच देती हैं। ऐसे जीवित चित्र हमें वास्तुविद्या संबंधी ग्रंथोंमें भी नहीं मिलते क्यों कि उनमें शास्त्रीय पक्ष पर ज्यादा ध्यान दिया गया है और व्यावहारिक पक्ष पर कम। इस दिशामें डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल का प्रयत्न स्तुत्य था; पर अब वे नहीं रहे। इस लिये यह आवश्यक है कि संस्कृत–प्राकृत–अपभ्रंश और प्रादेशिक भाषाओंके साहित्यकी पूरी तरह से खोज वीन करके वास्तुविद्या संबंधी शब्द इकट्ठे किये जायं। इससे दो लाभ होंगे। पहला तो यह कि वास्तुशास्त्रमें वर्णित पारिभाषिक शब्दोंकी टीकाके रूपमें ये काम देंगे और दुसरी और वे हमें यह भी बताऐंगे कि उन शब्दों के प्रयोग के अर्थ एकसे रहे हैं अथवा बदले भी हैं।

प्राचीन शिल्पशास्त्रोंका अध्ययन करना उतना आसन नहीं है जितना कि समझ लिया जाता है क्योंकि न केवल शिल्प संबंधी ग्रंथोंकी भाषा ही दुरूह है परंपरा नष्ट हो जानेसे उनका ठीक ठीक अर्थ भी नही लगता। उन पर टीकाएं भी उपलब्ध नहीं हैं, जिससे उनके समझने में कुछ सहारा मिल सके। उदाहरणार्थ डॉ० आचार्य "मानसार" को वास्तुविद्याका आदिम स्रोत मानते

है और उनका विश्वास है कि जो कुछ भी सामग्री उसमे सुरक्षित है, वह प्राचीन और विश्वसनीय है। पर दूसरा मत है कि मानसारकी सामग्रीका संग्रह बहुत बाद मे दक्षिण भारत मे हुआ और इसमे भी अधिक सामग्री केवल शास्त्रीय है जिसका वास्तविकता से संबंध नहीं है। वास्तव मे वास्तु-विद्याकी खोज परख से यह पता चल जाता है, कि उत्तर और दक्षिण भारत मे वास्तुकी परिवृद्धि अपने ढंगसे हुई क्यों कि इनके विकास मे बहुत कुछ समानताए भी हैं। अब समय आ गया है कि उत्तरी और दक्षिणी शैलियोंका संश्लेपणात्मक विवेचन करते हुए यह दिखलानेका प्रयत्न किया जाय कि किन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा भौगोलिक परिस्थितियों के कारण उत्तर और दक्षिण भारत के वास्तु मे अंतर आया तथा भापाओंकी भिन्नता होते हुए दोनो की परिभापाओं मे कितनी समानता है।

पर जिस तरह के अध्ययनकी ओर मैंने इशारा किया है वह तक संभव नहीं जब तक श्री सोमपुराजी ऐसे विद्वान जिनका परंपरासे सीधा संबंध रहा है इस कामको अपने हाथमे न ले क्योंकि विश्वविद्यालयों से निकले विद्यार्थी जिन्होंने प्राचीन भारतीय वास्तुशास्त्र लिया है न तो वे संस्कृत जानते हैं न उन्हें परंपरागत वास्तुकलाका ही ज्ञान होता है। श्री० सोमपुराजी द्वारा "क्षीरार्णव" के अध्ययनसे यह बात स्पष्ट हो जाती है। इस ग्रंथकी भी भापा समझकर उसका ठीक ठीक अर्थ करना तथा तत्कालीन मंदिरोंके अवयवोंसे उस परिभापाकी तुलना करना उन्हींका काम है। ग्रंथके संपादनमे पग पग पर उनकी अध्ययनशीलताका पता लगता है। अनेक स्थलो पर रेखा चित्र तथा नकशोंने तो सोने मे सुहागेका काम किया हैं। ऐसे अपरिचित कामको हाथमे लेनेमें विद्वान लेखकको किन किन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा होगा वे ही जानते है। पर वे इस कहावतके कायल है। प्रारभ्य चोत्तमजनाः न परित्यजन्ति। अतमे श्री० सोमपुराजी का ध्यान एक बातकी ओर दिलाना चाहता हूं। ग्रथोंमे अनेक परिभापाएँ आई है। उनका बहुधा आपसमे सामंजस्य नही मिलता। प्राचीन मंदिरोंके अवयवोंके निश्चित परिभापाओं के लिये यह आवश्यक है कि शब्दों मे एकरूपता लाई जाय। मेरा यह भी सुझाव है कि भारतीय वास्तुकोशका संकलनका भी आरंभ कर दिया जाय। ऐसे कोशके लिए वास्तुशास्त्रके ज्ञाताओं, पुरातत्वज्ञविदों तथा धर्म और समाज शास्त्रोंका सहयोग आवश्यक है। सुना है कि बनारसकी अमेरिकन एकेडेमी इस ओर प्रयत्नशील है। विद्वानों को चाहिए कि इस कार्यमे एकेडेमी का हाथ बटावें।

प्रिन्स ऑफ वेल्स म्यूजियम,
बंबई-१ ता. ३-४-६७

मोतीचंद्र

आमुख लेखक—माननीय श्री कनैयालाल मा० मुनशीजी

उत्तर प्रदेशके भूतपूर्व-गवर्नर, गुजरातके ज्योतिर्धर, गुजराती साहित्यमें अस्मिता प्रकटकर्ता

भाइ श्री प्रभाशंङ्कर—ओघडभाइ सोमपुरा अपने भारतके एक सुप्रसिद्ध स्थपति और शिल्पके ज्ञाता हैं। स्थापत्य और शिल्पके बडे जानकारी सोमपुरा परिवारके वंशानुवंश वारसामें मीली है। पुराण प्रथित भृगु ऋषिके भानजा और प्रभासके पुत्र देवोंका स्थपति श्रीविश्वकर्मा ज्यों भारतके आद्य विख्यात स्थपति थे। यह सोमपुरा परिवार के मूलपुरुप गिना जाता है। और सोमपुरा वंशके उत्पत्ति क्षेत्र प्रभासपाटन गिना जाता है। यह वंशके महापुरुषोने गुजरात, राजस्थान, मेवाडमें मंदिरोका शिल्प स्थापत्यके निर्माणमें महत्वपूर्ण हीस्सा दीया है।

भाइ श्री प्रभाशंकरजी सोमपुरा भगवान श्री सोमनाथके नवनिर्मित महाप्रासादके प्रमुख स्थपति है। स्थापत्यके शास्त्रीय और क्रियात्मक उभय ज्ञान श्री सोमपुराजीके खुनमें हैं। "दीपार्णव" नामक मंदिर स्थापत्यके स्पर्शित महाग्रंथ उन्होने गुजरातके चरणमें अर्पीत कीया है। यह प्रकारके ग्रंथ गुजराती भाषामें प्रथम होनेसे श्री सोमपुराजीकी यह सिद्धि विरल है।

"क्षीरार्णव" के लेखन—संपादन और प्रकाशन द्वारा भाई श्री सोमपुराजी अपने भारतीय स्थापत्य साहित्यका एक अमुल्य ग्रंथ देश समक्ष प्रस्तुत करते हैं। यह ग्रंथ मूल स्वरुपमें बहुत विशाल होगा। परन्तु उनके सिर्फ बावीश प्रकरणो वर्तमानमें उपलब्ध हुये हैं। उन पर भाइ श्री सोमपुराजी मूलपाठ—सहित, हीन्दी—गुजरातीमें "सुप्रभा" नामक विवरणके साथ प्रकाशित कर रहा है। प्रचलित अभिप्रायानुसार यह ग्रंथके प्रणेता श्री विश्वकर्मा था। कालक्रमें यह ग्रंथका कितते खंडो नष्ट हुआ है। परन्तु ज्यों बावीश प्रकरणो भाई श्री सोमपुराजी सविवरण प्रस्तुत करते है। इस परसे मालुम पडता है। कीं मूल ग्रंथ भव्य महाप्रासादो के निर्माणमें स्थापत्यके विविध दृष्टिकोणसे शास्त्रीय शैली प्रस्तुत करते हैं।

यह अद्‌भूत ग्रंथमें मूल श्लोकका हीन्दी—गुजराती विवरण है। और वास्तुशास्त्रके विशाल साहित्यमेंसे उल्लेखनीय अवतरण देवो अनेक सुंदर आकृतियो और आलेखनो सहित भाइ श्री सोमपुराजी प्रतिपादत विषयको एसे विशदतासे पेश कीया है। की सामान्य वाचकगण भी सरलतासे समज सके।

"दीपार्णव" और "क्षीरार्णव" जेसे ग्रंथ भारतीय स्थापत्यके गौरव सम है। वास्तुशास्त्रके यह परंपरागत ज्ञानके विशाल वर्गके लिये ज्यों रीतसे विद्वान् श्री सोमपुराजीये सुलभ कर दिया है। इस लिये धन्यवाद—

भारतीय विद्याभवन
बंबई—७ ता. २३-५ ६७

कनैयालाल मा० मुनशी

विद्या कला और सरस्वती त्रिवेणीका उपासक और लक्ष्मी तथा सरस्वतीका जहाँ सदावास है ऐसे उद्योगपति श्रीमान् श्री श्रीगोपालजी नेवटियाजीका

पुरोवाचन

'क्षीरार्णव' के प्रकाशनके संबधमे श्रद्धेय श्री प्रभाशंकरजीने मुझे भी कुछ लिखकर भेजनेके लिये अनुरोध किया है। मैं इस विषयका कोई ज्ञाता नहीं। मैं तो इतना ही जानता हूँ कि श्री प्रभाशंकरजी प्राचीन भारतीय स्थापत्यके बेजोड विद्वान है। प्राचीन ग्रथोंके अध्ययनके द्वारा ही नहीं, किन्तु भारतके प्राय: सभी प्राचीन मंदिरों और प्रासादोको देखकर तथा अनेक निर्माण-कार्य-संपादन कर आपने जो ज्ञान प्राप्त किया है, वह अद्वितीय है।

बम्बईके निकट कल्याणमे अभी पिछले वर्ष एक नया मंदिर निर्माण हुआ है, और इस कार्यका संपादन श्री प्रभाशंकरजीके द्वारा हुआ। इस विषयमे मेरा श्री प्रभाशंकरजी से निरंतर सम्पर्क रहा और इस बुद्धिमता-विवेकशिलता, सर्वाधिक निस्पृहता और निर्लोभताके साथ वह कार्य आपने संपादन किया उससे हम सब बहुत ही प्रभावित हुवे है।

श्री प्रभाशंकरजीने प्राचीन स्थापत्य संबधी अनेक ग्रथोंका प्रकाशन किया है, और उसी श्रेणीका "क्षीरार्णव" भी एक है। इस ज्ञानको छपी हुई पुस्तकके रुपमे प्रस्तुत करनेका प्रशसनीय कार्य श्री प्रभाशंकरजीने किया है। आजके प्रगतिशील जगतमे यह ज्ञान बहुत पीछे रह जाता है, फिर भी जब कभी इस ज्ञानके आधार पर निर्माण-कार्य सम्पन्न होता है, तो उसके सजीव रुपमे इस प्राचीन स्थापत्यका महत्व प्रदर्शित होता है।

कतिपय वर्ष पहले मै सोमनाथ मंदिरके दर्शनके लिये गया था और तभी से मेरा श्री सोमपुराजी से सम्पर्क बढता गया। सोमनाथ मंदिरके नव-निर्माण से लेकर आधुनिक जमानेमे बहुतसे मंदिरोंके निर्माण इत्यादिका कार्य प्राचीन पद्धतिके अनुसार श्री सोमपुराजीने सम्पन्न किया है। ऐसा मालुम होता है कि इस प्राचीन कालका कोई एक पुरुष जीन्दा रह गया है। और अगले जमानेकी सेवा कर रहा है। उनके द्वारा प्रस्तुत स्थापत्य भले ही प्राचीन कहा जाय लेकिन आज वह कितना अपूर्व है। कितना बहुमूल्य है, वह देखनेवाले ही जान सकते है। मुझे इसका अनुभव हुआ है, इसलिये मुझे ऐसा लिखनेका अधिकार है।

मैं श्री सोमपुराजीके दीर्घायुकी कामना करता हूँ। और भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि उनके हाथोंसे ओर भी निर्माण-कार्य सम्पन्न हो, उन्हे कीर्ति मिले और वे अजर अमर हो।

रत्नाकर-बंबई ता ३०-७-६७ —श्री गोपाल नेवटिया

श्री विश्वकर्मा प्रणित क्षीरार्णव वास्तुशास्त्र ग्रंथकी विषयानुक्रमणिका

युक्त करना एसा चातुर्मुख चार भूमि उदयका करना आगे
नाली मंडप दो तीन भूमि उदयका वेदिका साथ करना–सर्व
अग्रे पगथीकी पक्ति करना २९२
चातुर्मुख प्रासादको एकसे नव जघा करना चारो ओर मिश्रमेघ
ओर सिंहनाद मंडपो करना २९३
आठसे पदरा हाथके प्रासादके भ्रममें दो भूमि योजना करनी
एक भूमिसे बारह भूमि तक जघा करना २९४

भींट्ट १४ भाग पीठ ४७ भागका ऊर्ध्वे प्रथम भूमि मडोवर भरणी तक	४५॥
२४ दुसरी भूमि छज्जा २९	२९
१९ तीसरी भूमि भरणी तक २४	२४
१८ चोथी भूमि छज्जा तक २६	२६
	१२४॥

जघामें लोकपाल दीगपाल देवाङ्गनाओका स्वरुप लास्य ताडवादि २९७ से
नृत्य ताल सह वादित्र साथ करते हैं देवो आयुध वाहन साथ
नृत्य करते हैं जैसेके उत्सव हो रहा हो, छ और आठ हाथ-
वाला देव स्वरुपो इद्र रभाके साथ अग्नीदेव उर्वसी साथ यम
तिलोचना साथ क्षेत्रपाल शची, वरुण, रभा, वायुदेव मजुघोषा,
ईश मेनका साथ करना। प्रासादके इशान कोणसे मेनकादि
देवाङ्गनाका स्वरुप करना ३००

१ मेनका २ लीलावती ३ विधिचिता ४ सुदरी ५ शुभागीनी ३०१ से
६ हसाउली ७ सर्वकला ८ कर्पूरमजरी ९ पद्मिनी १० गूढ
शब्दा (पद्मनेत्री) ११ चित्रिणी १२ चित्रवल्लभा पुत्रवल्लभा
१३ गौरी १४ गाधारी १५ देवशाखा १६ मरिचिका १७
चद्रावली १८ चद्ररेखा १९ सुगवा २० शत्रुमर्दिनी २१
मानवी २२ मानहंसा २३ स्वभावा २४ भावमुद्रिका २५
मृगाक्षी २६ उर्वशी २७ रम्भा (उत्तान) २८ भुजघोषा २९
जया ३० विजया (मोहिनी) ३१ चद्रवक्त्रा (तिलोत्तमा) ३२
कामरुप (श्लोक ११३ से १२८) ३१२

यह बत्तीस देवाङ्गनाओंके नाम स्वरुप लक्षण, उनकी द्रष्टि निम्न
रखके नृत्य करती करना। कई देवाङ्गनाका स्वरुप एकसे
अधिक कोन कोनका करना। ३०३ देवाङ्गना दीगपाल यक्ष गधर्व
सूर्यादि नवग्रहो चतुर्मुख प्रासादमें जघामें वितानमें (गुम्बजमें)
वेदिकामें करना ३१३

देवाङ्गनाओंका स्थान स्वर्ग है। दुसरी शोतवनम, तीसरा मही-
तलके चातुमुख प्रासादमें स्थूल देहे बसेली है श्लोक १२३ पत्र ३०८
दो छज्जा और चार जघाका मडोवर ३१६
कदली मान प्रमाण १ चित्रा २ विचित्रा ३ अभया ४ रूपचित्रा ३१६
साधार निरधार प्रासादके भितिमान ३१७

इति सविस्तर अनुक्रमणिका

देव स्तुति और ग्रंथ संपादक परिचय

गणाधिप नमस्कृत्यं देवीं सरस्वतीं तथा
ब्रह्मा विष्णु महेशादि सूर्य दिनकर सदा ॥१॥
शिल्पशास्त्र प्रकत्तरा विश्वकर्मा महामुनिम् ।
मनसा वचसा नत्वा ग्रन्थारम्भं करोमहम् ॥२॥

गणोंके अधिपति श्री गणेश, सरस्वती ब्रह्मा, विष्णु महेश और सूर्यको नमस्कार करके शिल्पशास्त्रोंको उत्कृष्ठ करनेवाले महामुनि श्री विश्वकर्माको मन वचनसे वंदन करके मैं प्रभाशङ्कर इस ग्रंथ पर सुप्रभा नाम्नी भाषा टीकाको प्रारम्भ करता हुँ।

वंशेस्मिन् रामजी शिल्पि ख्यातोऽय वास्तुकर्मणि ।
तस्मिन्नैवान्वये जात प्रभाशङ्कर पञ्चम ॥३॥
जगत् विख्यात विश्वकर्मा नारद संवाद रुप ।
क्षीरार्णाव ग्रंथ नामाऽय प्राणकृत शिव. ॥
सुप्रभा नाम्नी टीकाया ग्रथेऽस्मिन हि करोति स. ॥४॥

भारद्वाज गोत्रमें श्री रामजीभा जैसे वास्तुकर्ममें विख्यात स्थपति पूर्वकालमें हो गये इसी कुलमें श्री ओघडभाइके कनिष्ठ पुत्र प्रभाशङ्कर स्थपति पाचवी पीढीमें हुए। जगत विख्यात विश्वकर्मा और नारदजीका सवाद रुप क्षीरार्णव नामक शिल्पशास्त्र पर सुप्रभा नाम्नी भाषा टीका ऐसे विख्यात कुलके स्थपति श्री प्रभाशङ्करने लिखी है।



॥ ग्रन्थ संपादकको अभिनन्दन पत्रिका ॥

आदि देव महादेव कृपापात्रो महातनु ।
ओघडजी महाप्राज्ञ शिल्पशास्त्र विशारद ॥५॥
कैलासस्य महामेरो जीर्णोद्धार कारक ।
प्रभाशङ्कर नामाय मान्य केषा न कारक? ॥६॥
सत्य सत्यं पुन सत्य सत्यधर्म प्रवर्तक. ।
वृक्षार्णव शिव प्रोक्ते क्षीरार्णव यतनो हरि ॥७॥
ग्रन्थानां शिल्पशास्त्रस्य पुनरुद्धार कारकः ।
आदि देव नमस्तुभ्य नमस्तुभ्यं विशारद ॥८॥

आदिदेव श्री महेशको कृपापात्र महाप्राज्ञ ऐसे श्री ओघडभाइके सुत महाप्राज्ञ शिल्पशास्त्र विशारद श्री प्रभाशङ्करभाई सोमनाथजी महामेरु कैलासके जीर्णोद्धारकारक हैं। श्री प्रभाशङ्करजी ससारमें कीसके मान्य नहीं है। अपि तु सबके है। यह सत्य है और बारबार सत्य है कि शिवजी द्वारा रचित वृक्षार्णव और हरि रचित "क्षीरार्णव" सत्यधर्मके प्रवर्तक है। श्री प्रभाशङ्करभाई शिल्पशास्त्रके ग्रन्थोके पुनरोद्धारक है। हे! आदि देव! आपको नमस्कार हो और हे! शिल्प विशारद! आपको भी नमस्कार है।

शुभेच्छक स्नेहाधिन **मनसुखलालजी सोमपुरा ।**



सुप्रसिद्ध भगवान सोमनाण मंदिर पर स्व. जामसाहेब भूतपूर्व गवर्नर श्री के. एम. मुनशीजी
बंवइके भूतपूर्व गवर्नर श्री प्रकाशजी सोमनाथ मंदिर के निर्माता स्थपति प्रभाशंकरजी
और मंदिर के शिल्पकलाकार भगवानजी भ. सोमपुरा



श्री कृष्णचद्र प्रभुका देहोत्सर्ग स्थान पर–सपादक स्थपति प्रभाशकर भूतपूर्व
राष्ट्रपति डो राजेन्द्रप्रसाद की और स्व श्री जामसाहेब प्रभासपाटण

श्री गणेशाय नमः　　श्री सरस्वत्यै नमः　　श्री विश्वकर्मणे नमः

श्री विश्वकर्मा विरचित

॥ क्षीरार्णव ॥

वास्तुशास्त्रम्

KSHIRARNAVA

–सुप्रभानाम्नी भाषाटीका–

(अध्याय० ९९) (क्रमांक अ० १)

श्री विश्वकर्मोवाच—

वृक्षार्णवं शिव प्रोक्तं क्षीरार्णवं स्ततो हरिः
हरिहरोक्तं तं श्रेष्ठं ग्रंथाकारे प्रवर्तते ॥ १ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે. શિવજીએ વૃક્ષાર્ણવ કહેલું. અને વિષ્ણુએ ક્ષીરાર્ણવ કહેલું તે શિવ અને વિષ્ણુના મુખથી વહેલું તે ઉત્તમ ગ્રંથના આકારે જગતમાં પ્રવર્ત્યું. ૧.

श्रीं विश्वकर्मा कहते हैं। शिवजीने वृक्षाणवि कहा था और विष्णुने क्षीरार्णव कहा था। शिव और विष्णुके मुखसे निकला हुआ वह शास्त्र ग्रंथ के रूपमें जगतमें प्रचलिन हुआ।

प्रासादो देवरूपः स्यात् पादौ पाद शिलास्तथा
गर्भश्चैवोदरं ज्ञेयं जंघा पादोर्ध्व मुच्यते ॥ २ ॥

स्तंभाश्च जानवो ज्ञेया घंटा जिह्वा प्रकीर्तिता
दीपः प्राण रूपो ज्ञेया ह्यपाने जल निर्गतः ॥ ३ ॥

ब्रह्म स्थानं यदैतच्च तन्नाभिः परिकीर्तिता
हृदयं पीठिका ज्ञेया प्रतिमा पुरुषः स्मृतः ॥ ४ ॥

પ્રાસાદની રચનાને દેવ શરીર રૂપ કલ્પ્યું છે. પાયાની શિલા પગ રૂપે, ગર્ભગૃહ = ઉદર = પેટ રૂપે, પાયા પરની જગતી જાંઘ રૂપે, થાંભલા ઢીંચણ, ઘંટા જીભ રૂપે, દીપક–દીવો પ્રાણ રૂપે, ગુદા રૂપે પ્રનાલ = પરનાળ, દેવનું બ્રહ્મસ્થાન નાભિ, પીઠિકા રૂપે હૃદય, અને પ્રતિમા એ પુરુષ રૂપે જાણવું. ૨–૩–૪.

प्रासादकी रचना को देव शरीररूप माना गया है। नींवकी शिलाको पाँव के रूपमें, गर्भगृहको उदर के रूपमें, नींवकी भूमिको जंघाके रूपमें, स्तंभ को

जानुके रूपमे, घटाको जिह्वाके रूपमे, दीपकको प्राणके रूपमे, प्रनाल को गुदाके रूपमे, देवके ब्रह्मस्थाको नाभि पीठिकाको हृदयके रूपमे और प्रतिमाको पुरुषके रूपमे जानना। २–३–४

पादचारस्त्वहंकारो ज्योतिस्तच्चक्षुरुच्यते
तदूर्ध्वं प्रकृतिस्तस्य प्रतिमात्मा स्मृतौ बुधैः ॥५॥
तलकुंभादधोद्वार तस्य प्रजननं स्मृतम्
शुकनासा भवेन्नासा गवाक्षः कर्णउच्यते ॥६॥
कायापाली स्मृतः स्कंधे ग्रीवा चामलसारिका
कलशस्तु शिरोज्ञेयो मज्जादित्पर संयुतं ॥७॥

પગનો સચાર અહંકાર, દીપનો પ્રકાશ ચક્ષુ રૂપે, ઉપરનો ભાગ તેની પ્રકૃતિ, પ્રતિમા આત્મા રૂપે બુદ્ધિમાને જાણવા દ્વારના કુંભીના તળથી નીચેનો ભાગ તે લિંગરૂપે જાણવો શિખરનો શુકનાસ એ નાસિકારૂપ, ગવાક્ષ ઝરુખા કાનરૂપ, શિખરનો સ્કંધ તે ખભો અને આમલસારાનુ ગળુ તે ગળુ કંઠ રૂપ, આમલસારાને કળશ તે મસ્તક રૂપે જાણવુ ચામડી અને તેની નીચેનો ભાગ તે ચુનાનુ પ્લાસ્ટર જાણવો

पद सचारको अहंकारके रूपमे, दीपकके प्रकाशको चक्षुके रूपमे उर्ध्वभागको उसकी प्रकृतिके रूपमे, प्रतिमाको आत्माके रूपमे बुद्धिमानोंको समझना चाहिये। द्वारके कुंभीके तलसे निम्न भागको लिङ्गके रूपमे जानना। शिखरके शुकनासको नासिकारूप, झरोखों को कानरूप, शिखर के स्कधको खभा, और आमलसारा के कठको कठरूप, आमलसाके कलशको मस्तकरूप जानना। और उसके निम्न भाग को, जो खडीके प्लास्टर का है, चमडी समझनी। ५–६–७

मेदश्च वसुधा विद्यात् प्रलेपो मासमुच्यते
अस्थिनो च शिलास्तस्य स्नायुकीलादयः स्मृताः ॥८॥
चक्षुषि शिखरा स्तस्य ध्वजाकेश प्रकीर्तिताः
एवं पुरुषरूपं तु ध्यायेन्च मनसा सुधीः ॥९॥

પૃથ્વી મેદ રૂપે, માસ ચુનાનો લેપ, હાડકાઓ શિલારૂપે, ખીલા અને પાઉ–કુકરા તે સ્નાયુરૂપે ચક્ષુરૂપ શૃંગ–શિખરીઓ, ધ્વજા કેશરૂપે, એ રીતે પ્રાસાદના સર્વ અંગોનુ પુરુષરૂપે મનથી ધ્યાન કરવુ ८–९

पृथ्वीका मेद के रूपमे, खडीके लेपका माँसके रूपमे, शिलाओंका हड्डीयों-

के रूपमें, कीले, पांड और कुकरों का स्नायुके रूपमें, शृंगका चक्षुके रूपमें, शिखरकी धजाओं का केशके रूपमें—अिस तरह प्रासादके सर्व अंगों का पुरुषरूपसे मनसे ध्यान करना। ८–९

नागरा द्राविडाश्चैव लतिनाश्च विमानकाः
मिश्रकाश्च वराटाश्च सांधारा भूमिजा स्तथा ॥ १० ॥
विमान नागरच्छंदा विमान पुष्पकाथवा
वल्लभा फांसनाकारा सिंहावलोका रथरूहा ॥ ११ ॥

પ્રાસાદની જાતિ છંદ ૧ નાગરાદિ ૨ દ્રાવિડાદિ ૩ લતિનાદિ ૪ વિમાનાદિ ૫ મિશ્રકાદિ ૬ વરાટાદિ ૭ સાંધારાદિ ૮ ભૂમિજાદિ ૯ વિમાન નાગરાદિ ૧૦ વિમાન પુષ્પકાદિ ૧૧ વલ્લભાદિ ૧૨ ફાંસનાકારાદિ ૧૩ સિંહાવલોકનાદિ ૧૪ રથારૂહાદિ એમ પ્રાસાદની ચૌદ જાતિઓ જાણવી. ૧૦–૧૧

प्रासादकी च्छंद जाति १ नगरादि २ द्राविडादि ३ लतिनादि ४ विमानादि ५ मिश्रकादि ६ वराटादि ७ सांधारादि ८ भूमिजादि ९ विमान नागरादि १० विमान पुष्पाकादि ११ वल्लभादि १२ फासनाकारादि १३ सिंहावलोकनादि १४ रथारूहादि इसी तरह प्रासाद की चौदह जातियाँ जानने योग्य हैं। १०–११

एते चतुर्दश विख्याताः प्रासादजातयः स्मृताः
मृत्साकाष्टेष्टकाशैल धातु रत्न भवाः सुधीः ॥ १२ ॥
कुर्यात् स्वशक्ति प्रासादश्चातुवर्गफलं भवेत्
पांसुनादि सुरागारे क्रीड्या विहितश्रितः ॥ १३ ॥

દેવ મંદિરો માટીના. કાષ્ટ લાકડાનાં, ઈંટના, પાષાણનાં, ધાતુ રત્નાદિ વાસ્તુ દ્રવ્યાદિના, પ્રાસાદો પોતાની શક્તિ અનુસાર કરાવવાથી ચાર વર્ગ (ધર્મ અર્થ કામ અને અંતે મોક્ષ) ના ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે. માટી આદિના દેવમંદિરોમાં લક્ષ્મી ક્રીડા કરે છે.[1] ૧૨–૧૩

---

(૧) ક્ષીરાર્ણવ ગ્રંથની પ્રતો ગુજરાત સૌરાષ્ટ્રમાં ઘણી અશુદ્ધ અને અસ્ત–વ્યસ્ત સ્થિતિની, વિષયક્રમના અભાવવાળી, એક વિષય ફરી ફરી આવે, એક વિષય અધ્યાહાર રાખી બીજો વિષય આવે, તેવી પ્રતો ઘણી જોવામાં આવી છે. તેમાંથી બને તેટલો ક્રમ ગોઠવીને જુની પ્રતોના ક્રમને લક્ષ્યમાં રાખીને આ ગ્રંથ ક્રમબદ્ધ લખવા પ્રયાસ કરેલ છે. સૌરાષ્ટ્ર ગુજરાતની પ્રતોમાં પ્રાસાદને દેવ મનુષ્ય સ્વરૂપની કલ્પના અને ગણિત વિષય અમોને દેખવામાં આવતો નથી. કુર્મશિલાના ૧૦૧ અધ્યાયથી પ્રારંભ થાય છે. ગણિત વિષય અમોને રોયલ એશિયાટીક સોસાયટીની લાયબ્રેરીના ચોપડામાંથી જે પ્રાપ્ત છે તેમાં કેટલુંક અધ્યાહાર અને સંક્ષિપ્તમાં હોવાથી અમોએ તેની પૂર્તિ અનુવાદમાં કરી બને તેટલી અપૂર્ણતા ટાળવા પ્રયત્ન કરેલ છે.

मिट्टीके, इटके, पाषाणके, धातुके, रत्नादिके—इन वास्तु द्रव्यादिके देवमंदिर अपनी शक्तिके अनुसार बनवानेसे चार वर्ग (धर्म अर्थ काम और अंतमे मोक्ष) के फलकी प्राप्ति होती है। मिट्टी आदिके देवमंदिरोंमे लक्ष्मी क्रीडा करती है।[1] १२-१३

श्री नारदोवाच—

येनेदं सप्त लोकां तं त्र्यैलोक्यं सचराचरम्
तस्मै ईशाय नित्याय नमः श्री विश्वकर्मयो ॥ १ ॥
अव्यक्तं व्यक्तता नित्यं येन विश्वंचराचरम्
तस्मै ईशाय नित्याय नमः श्री विश्वकर्मणे ॥ २ ॥
वास्तु कर्म लक्षणेन प्रासाद विधि युक्तितः
गणित ज्योतिषाचारं कथय मम प्रभो ॥ ३ ॥

શ્રી નારદજી કહે છે જે સપ્તલોકના અંતે ત્ર્યૈલોકમા સચરાચર છે એની રચના કરવા વાળા એવા શ્રી વિશ્વકર્માને નિત્ય મારા નમસ્કાર હો અવ્યક્ત જાણી ન શકાય અને વ્યક્ત જાણી શકાય એવા જે વિશ્વને વિષે સચરાચર છે તેની રચના કરવાવાળા નિત્ય ઈશ્વિર શ્રી વિશ્વકર્માને મારા નમસ્કાર હો હે પ્રભુ ! લક્ષણયુક્ત વાસ્તુકર્મ કે જે પ્રાસાદની વિધિ ગણિત અને જ્યોતિષના આચાર હે પ્રભુ ! મને કહો ૧-૨-૩

श्री नारदजी कहते है—जो सप्तलोकके अतमे त्र्यैलोकमे सचराचर है उसकी रचना करनेवाले श्री विश्वकर्माको नित्य मेरा नमस्कार हो। अव्यक्त और

તે વાચકવૃંદ દરગુજર કરે આનંદની વાત એ છે કે પૂરા એકવીશ અંગો આ ગ્રંથમાં આપેલા છે મહર્ષિ નારદમુનિ અને વિશ્વકર્માના સંવાદ રૂપ આ ગ્રંથ છે

(१) गुजरात, सौराष्ट्रमे क्षीरार्णव ग्रथकी हस्त प्रते बहुत अशुद्ध, अस्त व्यस्त, विषय के अनुक्रमके अभाववाली, विषयके पुनरावर्तनवाली, एक विषयको छोडकर दूसरे विषय की चर्चावाली, देखनेमें आयी हैं। उनमेंसे जितना होसके उतना क्रम मिलाकर पुरानी प्रतोंके क्रमको लक्ष्यमें लेकर यह ग्रथ क्रमबद्ध लिखनेका प्रयास किया है। सौराष्ट्र गुजरानकी प्रतोंमें प्रासाद के देव मनुष्य स्वरूपकी कल्पना और गणित विषय बहुत करके देखनेको मिलता नहीं है। कुर्मशिला के १०१ अध्यायसे प्रारभ होता है। गणित विषय हमें रोयल एशियाटीक सोसायटीकी लाईब्रेरी की पुस्तकोंमें से जो यत्किंचित् प्राप्त हुआ, उसमें कुछ अध्याहार और सक्षिप्तमे होनेसे हमने उसकी पूर्ति अनुवादमें करके जितनी हो सके उतनी अपूर्णता दूर करनेका प्रयत्न किया है, सो वाचकवृंद हमें क्षमा करें। यह आनदकी बात है कि पूरे इक्किस अग इस ग्रथमें समाविष्ट हैं। महर्षि नारद मुनि और विश्वकर्माके सवादके रूपमें यह ग्रथ प्रस्तुत है।

व्यक्त ऐसे विश्वमें जो सचराचर है उसकी रचना करनेवाले नित्य ईश्वर श्री विश्वकर्माको मेरा नमस्कार हो ।

हे प्रभु, लक्षणयुक्त वास्तुकर्म, प्रासादकी विधि, गणित और ज्योतिषके आचारको मुझे बताओ । १-२-३.

श्री विश्वकर्माउवाच—

(१) आय— शृणुवत्स महाप्राज्ञ यत्त्वं परिपृच्छसि
इदानीं तं कथयिष्यामि गणित वास्तु कर्मके ॥ ४ ॥
आयत्वं च पृथुत्वेन गुणयेदायकर्माणि
अष्टभिर्हरेत्भागं यत्शेषं आयादिशेत् ॥ ५ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે. હે મહાગુણવાન વત્સ ! તમે જ્યારે પૂછો છો ત્યારે હું તમને હમણાં વાસ્તુકર્મનું ગણિત કહું છું. ક્ષેત્રના લંબાઈ અને પહોળાઈના અંકોને ગુણીને આઠે ભાગતાં જે શેષ રહે તે તેટલામો આય જાણવો. ૪-૫

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—हे महागुणवान वत्स ! जब आप पूछते हो तो मैं अभी तुम्हें वास्तु कर्मका गणित कहता हूँ । क्षेत्रकी लंबाई और चौडाईके अंकोंको गुनकर आठसे विभाजित कर जो शेष रहे उतनी संख्याका आय समझना । ४-५

आयानां विषमेशुभे ध्वजः सिंहो वृषोगजः
अधमानो खरध्वांक्षः धूमः श्वानः सुखावह ॥ ६ ॥

તે આઠ આયોમાં જે વિષમ અંક વધે તે ૧ ધ્વજ ૩ સિંહ ૫ વૃષ ૭ ગજ એમ ચાર આય તે શુભ જાણવા અને બેકીસમ આયોમાં ૨ધૂમ ૪ શ્વાન ૬ ખર ૮ ધ્વાંક્ષ એ અધમ છે પણ તેના સ્થાને સુખને દેનાર જાણવા.[૨] ૬

उन आठ आयोंमें जो विषम अंक शेष रहे तो १ ध्वज ३ सिंह ५ वृष ७ गज इन चार आयोंको शुभ समझना और सम आयोंमें २ धूम ४ श्वान ६ खर ८ ध्वांक्ष अधम हैं लेकिन वे अपने स्थान पर सुखकर समझना ।[२] ६

(૨) સ્થાનના આયતું સર્વ શિલ્પગ્રંથોમાં કહ્યું છે. પરંતુ દીપાણવિ જેવા ગ્રંથમાં મનુષ્યનો આય કાઢવાતું કહીને ઘરનો આય અને ઘરધણીના આયના પરસ્પર ભક્ષક ભાવ તજવાતું કહ્યું છે.

(२) स्थानके आयका सर्व शिल्पग्रंथोंमें उल्लेख है । लेकिन दीपार्णव जैसे ग्रंथमें मनुष्यका आय निकालनेके लिये कहकर घरका आय और घरके मालिकके आयके परस्पर भक्षक भावको तजनेके लिये कहा गया है ।

(२) नक्षत्र– आयामे यदि क्षेत्रंतु विस्तरं गुणयेदथ
सप्त विंशत्याहरेत्भागं शेपं स्यात् फलं निश्चयः ॥ ७ ॥
फलेचाष्ट गुणे तस्मिन् सप्ताविंशति भाजिते
यत्च्छेत्रं लभते तत्र नक्षत्रं तद्गृहेपुच ॥ ८ ॥

अष्ट आयका स्वरुप

ક્ષેત્રની લબાઈ અને પહોળાને ગુણીને સત્તાવીશે ભાગતા જે શેષ રહે તે નિશ્ચયથી ફળ જાણવુ (તે નક્ષત્રની મૂળ ગણ') તે ફળને આઠ ગુણા કરી સત્તાવીશે ભાગવાથી જે શેષ રહે તે વાસ્તુના નક્ષત્રનો અક જાણવો.

क्षेत्रकी लम्बाई चौडाईको गुनकर सत्ताईशसे विभाजित करते जो शेष रहे उसे निश्चयसे फल जानना (उस नक्षत्रकी मूल राश) उस फलको आठ गुने कर सत्ताईशसे विभाजित करनेसे जो शेष रहे उसे वास्तुके नक्षत्रका आंक समझना। ७-८.

समचोरस ओर छ आंगुळ सुधीका कमीजास्तीका देवगण नक्षत्रो ओर शुभ आय मीलानेका कोष्टक अंक गज ओर आंगुळका है।

लंबाई चौडाई	देवगणा नक्षत्रो	लंबाई चौडाई	देवगणा नक्षत्रो	लंबाई चौडाई	देवगणा नक्षत्रो
१-१ × ०-२१	स्वाति	• १-१३×१-१३	अनुराधा	• २-१५×२-१५	रेवती
• १-१ × १-१	मृगशीर्ष	१-१५×१-२१	रेवती	२-१५×२-२१	रेवती
१-१ × १-५	श्रवण	१-१९×२-१	पुष्य	२-१७×२-११	पुष्य
१-१ × १-७	अनुराधा	१-१९×१-२३	श्रवण	२-१९×३-१	मृगशीर्ष
——		• १-२१×१-२१	रेवती	२-१९×२-२३	हस्त
• १-३ { १-१, १-३, १-५, १-७, १-९ }	रेवती	१-२१×२-३	रेवती	२-२१×२-२३	स्वाति
——		२-१×२-५	हस्त	——	
• १-५ × १-५	मृगशीर्ष	——		• २-२३×२-२३	अनुराधा
१-५ × १-९	स्वाति	• २-५×२-५	पुष्य	३-१×३-५	हस्त
१-७ × १-११	हस्त	• २-७×२-७	पुष्य	३-१×३-९	रेवती
१-११×१-१७	मृगशीर्ष	२-७×२-११	हस्त	३-३×३-७	स्वाती
१-१३×१-१५	स्वाति	२-१३×२-१७	श्रवण	३-३×३-९	रेवती
१-१३×१-१७	हस्त	२-१५×२-९	रेवती	३-५×३-९	रेवती
——		——			

उपर प्रमाणे देवगणा नक्षत्रो और शुभ आय मीलानेके लीये बडा क्षेत्र-गणीत
ग. आं. ग. आं. ग. आं.
मिलाना हो तो २-६ के ४-१२ के ६-१८ के नवगज उपरोक्त अंकमें मिलानेसे उपर लिखा वोहि देवगणा नक्षत्रो आयगा यह सरल रीत है।

धारेला देव तथा मनुष्य गणका नक्षत्रो लानेके लीये क्षेत्रकी दोनु ओर आंगुळका अंक लानेका कोष्टक

चंद्र	पूर्व			दक्षिण		पश्चिम		उत्तर	
घरेला अंक	मृगशीर्ष	पुनर्वसु	पुष्य	हस्त	स्वाति	अनुराधा	श्रवण	अश्विनी	रेवती
१	४	११	१	५	१२	१९	२३	१७	२७
२	२	१९	१४	१६	६	२३	२५	२२	२७
३	—	—	—	—	४-२२ १३	—	—	—	२७-९ १८
४	१	२३	७	८	३	२५	२६	११	२७
५	१७	१३	११	१	२४	२०	१०	२५	२७
६	—	—	—	—	२-२० ११	—	—	—	२७-१८ ९
७	१६	१७	४	२०	२१	२२	११	१४	२७
८	१४	२५	१७	४	१५	२६	१३	१९	२७
९	—	—	—	—	—	—	—	—	३-६-१२ १८-२१-२७
१०	२२	२०	१९	१४	१२	१०	५	२६	२७
११	२०	१	५	२५	६	१४	७	४	२७

चंद्र	पूर्व		दक्षिण		पश्चिम		उत्तर		
घरेला अंक	रोहिणी	आर्द्रा	पू. फाल्गुन	उ. फाल्गुन	पू. षाढा	उ. षाढा	भरणी	पू. भाद्रपद	उ. भाद्रपद
१	१४	२१	२५	१५	१६	६	७	२०	१०
२	७	२४	२६	२१	८	३	१७	१०	५
३	—	७-१६ २५	—	२३-५ १४	—	२-११ २०	—	—	—
४	१७	१२	१३	२४	४	१५	२२	५	१६
५	१९	१५	५	३	१४	१२	२३	४	२
६	—	८-१७ २६	—	७-१६ २५	—	१-१० १९	—	—	—
७	२	३	१९	६	१०	२४	१	२६	१३
८	२२	६	२०	१२	२	२१	१	१६	८
९	—	—	—	—	—	—	—	—	—
१०	२३	२१	१६	१५	७	६	२५	२	१
११	१६	२४	१७	२१	२५	३	८	१९	२३

१२	—	—	—	—	१-१० १९	—	—	—	९-१८ २७	—	१३-४ २२	—	८-१७ २६	—	५-१४ २३	—	—	—
१३	१९	५	१५	१७	३	१६	८	२०	२७	२६	१२	४	१४	२२	१५	१३	१४	७
१४	८	२२	२	१०	२४	११	१९	७	२७	१	१५	२३	३	५	१२	१४	१३	२०
१५	—	—	—	—	८-१७ २६	—	—	—	२७-९ १८	—	५-१४ २३	—	१-१९ १०	—	१३-४ २२	—	—	—
१६	७	२७	२२	२	२१	१३	२०	२३	२७	११	३	१०	६	१	२४	१९	८	४
१७	५	७	८	१३	१५	१७	२२	१	२७	४	६	११	१२	२०	२१	२	२५	२६
१८	—	—	—	—	—	—	—	—	२७-३-६-९ १५-१८-२१-२४	—	—	—	—	—	—	—	—	—
१९	१३	२	१०	२३	१३	१	१४	८	२७	५	२१	७	१५	२५	६	१६	११	१९
२०	११	१०	२३	७	६	५	१६	१३	३७	२५	२४	८	२१	१७	३	२६	१	१४
२१	—	—	—	—	२५-७ १६	—	—	—	२७-७ १८	—	१९-१ १०	—	२०-२ १	—	१७-८ २६	—	—	—
२२	१०	१४	१६	२६	३	७	१७	२	२७	८	१२	२२	२४	१३	१५	४	२३	२५
२३	२६	४	२०	१९	२४	२	१	१६	२७	१०	१५	१४	३	२३	१२	५	२२	११
२४	—	—	—	—	५-१० २३	—	—	—	९-१८ २७	—	२-११ २०	—	४-१३ २२	—	७-१६ २५	—	—	—
२५	२५	८	१३	११	२१	४	२	५	२७	२०	३	१	६	१९	२४	१०	१७	२२
२६	२३	१६	२६	२२	१५	८	४	१०	२७	१३	६	२	११	१९	२१	२०	७	१७
२७	—	—	—	—	—	—	—	—	१ थी २७ का सर्व अंको	—	—	—	—	—	—	—	—	—

आगळना १ से २७ अंको एक पक्ष और उपरका छुटा छुटा अंको लंबाई चौडाईकी दुसरी पक्षका समजना.

(३) व्यय— नक्षत्रं वसुभिर्भक्तं यत्तच्छेषं व्ययो भवेत्
समोव्ययः पिशाचश्च राक्षसश्च व्ययोऽधिकः ॥
व्ययो न्यूनो नरोऋक्षो–धनधान्यकरः स्मृतः ॥ ९ ॥

નક્ષત્રના અંકને આઠે ભાગતા જે શેષ રહે તે વ્યય જાણવો. આયનો અંક અને વ્યયનો અંક એક સરખો આવે તો પિશાચ જાણવો. જો વ્યયતો અંક અધિક આવે તો રાક્ષસ જાણવું અને જો વ્યયનો અંક આય કરતા ઓછો આવે તો શ્રેષ્ઠ અને ધનધાન્યને દેનાર જાણવો. ૯

नक्षत्रके अकको आठसे विभाजित करनेमें जो शेष रहे उसे व्यय समझना। आयका अक और व्ययका अक समान हो तो पिशाच जानना। जो व्ययका अक अधिक आवे तो राक्षस समझना और जो व्ययका अक आयसे कम आवे तो श्रेष्ठ और धन धान्यको देनेवाला समझना। ९

(४) अंशक— मूलराशौ व्ययं क्षिप्यं गृहनामाक्षराणिच
त्रिभिरेवं हरेद्भागो यच्छेष तदंशकः ॥ १० ॥
इन्द्रो यमश्च राजाना अंशक स्त्रिभिरेवच
प्रमाणं त्रिविधोत्कतव्या ज्येष्ठ मध्यम कन्यसाः ॥ ११ ॥

નક્ષત્રની મૂળરાશિનો અંક, વ્યયનો અંક, અને ઘરના નામાક્ષરનો અંક, એ ત્રણેનો સરવાળો કરી તેને ત્રણે ભાગતા શેષ રહે તે ૧ ઇંદ્ર ૨ યમ ૩ રાજાંશ એમ અનુક્રમે ત્રણ અંશક જાણવા. એ ત્રણ પ્રમાણની જ્યેષ્ઠ મધ્યમને કનિષ્ઠ ત્રણ વિધિ છે [3] (ત્રણ અંશકના સ્થાન નીચે ફૂટનોટમા આપેલા છે)

[1] नक्षत्रकी मूल राशीका अक, व्ययका अक, और घरके नामाक्षरका अक, इन तीनोंको मिलाकर उसे तीनसे विभाजित करते जो शेष रहे वह १ इन्द्र २ यम ३ राजाश इसी तरह अनुक्रमसे तीन अशक जानना। इन तीन प्रमाण की ज्येष्ठ मध्यम और कनिष्ठ–तीन विधियाँ है। (तीन अशकके स्थान नीचे फूटनोटमे दिये हैं)।[3]

(૩) (૧) ઈન્દ્રાંશક–પ્રાસાદ, પ્રતિમા, લિંગ, પીઠ, મંડપ, વેદી કુંડ, વિપ્રગૃહ ધ્વજાદંડ, પતાકા, ગાન શાળા, અન્નાગાર, અને વસ્ત્રના સ્થાને ઈન્દ્રાંશક આપવો.
(૨) યમાંશક–નાગદેવને ભૈરવ, નવગ્રહ, માતૃમાતૃકા, દુર્ગા એ બધા પ્રાસાદો, વેપારીની દુકાન, મદ્ય માસની દુકાને, સર્વ અસ્ત્રોને એ સર્વ સ્થાને યમાંશક આપવો તે શુભ છે.
(૩) ગજાંશક–ગજ સિંહાસન, પલંગ, પાલખી, ગજગૃહ, અશ્વગજશાળા, નગર ગ્રામની રચનામા અને સાધારણ ઘરોને વિષે ગજાંશક આપવો તે શુભ છે.

(५) तारा— गणयेत्स्वामि नक्षत्रं यावद्दक्षं गृहस्य च
नवभिश्च हरेत्भागं शेषे ताराः प्रकीर्तिताः ॥ १२ ॥
ताराः षड् शुभा श्येकाद्वि चतुः षड्चाष्टनवके
त्रि पंच सप्तभिः श्चै एभि तारा विवर्जिता ॥ १३ ॥

ઘરધણીના નામના નક્ષત્રથી ઘરના નક્ષત્ર સુધી ગણતો જે અંક આવે તેને નવે ભાગતાં જે શેષ રહે તેટલામી તારા જાણવી. છતારા શુભ જાણવી. પહેલી બીજી ચોથી છઠ્ઠી આઠમી અને નવમી તારા શુભ છે. અને ત્રીજી પાંચમી સાતમી એ ત્રણ તારા નેષ્ઠ છે તે તજવી.[૪] ૧૨–૧૩

गृहपतिके नामके नक्षत्रसे घरके नक्षत्र तक गिनते जो अंक आवे उसे नौसे विभाजित करते जो शेष रहे इतनी संख्याकी तारा जानना। छः ताराको शुभ समझना। ये प्रथम, दूसरी, चौथी, षष्ठी, और अष्टमी, नवमी शुभ जानना। तीसरी, पाँचवीं और सातवीं ये तीन तारा नेष्ठ हैं—इन्हें छोडना चाहिये। १२–१३[४]

(६) गण— पुनर्वस्वश्विनी पुष्य मृगश्रवण रेवती
स्वाति हस्तानुराधा च एते देवगणाः स्मृताः ॥ १४ ॥
भरणी रोहिणी चार्द्रा पूर्वाणां तृतीयं तथा
उत्तरात्रितयं चैव नवैते मानुषागणाः ॥ १५ ॥
विशाखा कृतिकाश्लेषा मघा च शततारका
चित्रा ज्येष्ठा धनिष्ठा च मूलमे ते च राक्षसाः ॥ १६ ॥

(३) (१) इन्द्रांशक–प्रासाद, प्रतिमा, लिङ्ग, पीठ, मंडप, वेदी, कुण्ड, विप्रगृह, ध्वजादण्ड पताका, गानशाला, अलंकार और वस्त्रके स्थानपर इन्द्रांशक देना।

(२) यमांशक–नागदेवको भैरव, नौग्रह, सप्त मातृका, दुर्गा ये सब प्रसादों व्यापारीकी दुकान, मद्य मॉसकी दुकातको, सर्व अस्त्रोंको–इन सर्व स्थानोंको यणांशक देना शुभ है।

(३) गजांशक–राज सिंहासन, पर्यक, पालखी, राजगृह, अश्वगज शाला, नगर ग्रामकी रचनामें और सामान्य घरोंके लिये गजांशक देना शुभ है।

(४) તારાનાં નામો–૧ શાંતા ૨ મનોહરા, ૩ રા ૪ વિજયા ૫ કલોદ્ભવા ૬ પદ્મિની ૭ રાક્ષસી ૮ વીરા ૯ આનંદા એ નવ તારાઓમાં ૩ ક્રૂરા ૫ કલોદ્ભવા ૭ રાક્ષસી એ ત્રણ તારા અશુભ કહી છે.

(४) ताराके नाम–१ शांता २ मनोहरा ३ क्रूरा ४ विजया ५ कलोद्भवा ६ पद्मिनी ७ राक्षसी ८ वीरा ९ आनंदा इन नौ ताराओंमें ३ क्रूरा ५ कलोद्भवा ७ राक्षसी तीन ताराओंको अशुभ कहा गया है।

દેવગણના નક્ષત્રો-પુનર્વસુ, અશ્વિની, પુષ્પ, મૃગશીર્ષ, શ્રવણ, રેવતી, સ્વાતિ હસ્ત અને અનુરાધા એટલા નવ નક્ષત્રો દેવગણના જાણવા-ભરણી, રોહીણી, આર્દ્રા ત્રણે પૂર્વા ત્રણ ઉત્તરા એ નવ નક્ષત્રો મનુષ્યગણના છે રાક્ષસગણના નક્ષત્રો-વિશાખા, કૃતિકા, અશ્લેષા, મઘા, શતભિખા, ચિત્રા, જ્યેષ્ઠા, ધનિષ્ઠા, અને મૂળ એટલા નવ નક્ષત્રો રાક્ષસ ગણના જાણવા

देवगणके नक्षत्र—पुनर्वसु, अश्विनी, पुण्य, मृगशीर्ष, श्रवण, रेवती, स्वाति हस्त और अनुराधा ये नौ नक्षत्र देवगणके हैं।

मनुष्य गणके नक्षत्र—भरणी, रोहीणी, आर्द्रा, तीन पूर्वा और तीन उत्तरा ये नौ नक्षत्र मनुष्यगणके हैं। राक्षसगणके नक्षत्र-विशाखा, कृतिका, अश्लेषा, मघा, शतभिखा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, और मूल-ये नौ नक्षत्र राक्षसगणके हैं।

स्वगणे चोत्तमा प्रीति-र्मध्यमा देव मानुषे
कलहो देव दैत्याना मृत्युर्मानव राक्षसे ॥ १७ ॥

ઘર અને ઘરધણીના નક્ષત્રનો જો એક જ ગણ હોય તો ઉત્તમ પ્રીતિ દાયક જાણવું જો એકનો દેવગણ અને બીજાનો મનુષ્યગણ હોય તો મધ્યમ જાણવું અને જો એકનો દેવગણ અને બીજાનો રાક્ષસગણ હોય તો હમેશા કલેશ કરાવે જો એકનો મનુષ્ય ગણ અને બીજાનો રાક્ષસગણ હોય તો મૃત્યુ કરાવે[૫] ૧૭

घर और घरके मालिकके नक्षत्रका जो एक ही गण हो तो उत्तम प्रीतिदायक जानना। जो एकका देवगुण और दूसरेका राक्षसगण हो तो हमेशा क्लेश कारक बना रहे। जो एकका मनुष्यगण और दूसरेका राक्षसगण हो तो मृत्यु करनेवाला बने। १७[५]

(७) चंद्र— कृतिकादि सप्तसप्त पूर्वादितः प्रदक्षिणे
अष्टा विंशति ऋक्षाणि ततः चंद्र मुदीरयेत् ॥ १८ ॥
अग्रतो हरते आयु पृष्ठतो हरते धनं
वाम दक्षिण तो चंद्रो धनधान्य करस्मृताः ॥ १९ ॥

(૫) ગણના સબધમા મનુષ્યના કે દેવના જન્મ નક્ષત્ર ના ગણ પરથી કહેલુ છે પરંતુ સામાન્ય રીતે દેવનો દેવગણ અને મનુષ્યનો મનુષ્યગણ અને યવનમ્લેચ્છનો રાક્ષસ ગણ આમ માનવાની શિલ્પીઓની પ્રથા છે

(५) गणके बारेमें मनुष्यके या देवके जन्म नक्षत्रके गणके उपरसे कहा गया है। लेकिन सामान्यत देवका देवगण और मनुष्यका मनुष्यगण और यवन म्लेच्छका राक्षसगण माननकी शिल्पीओंकी प्रणालिका है।

प्रासादे राजवेश्मषु चंद्रोदयाचसन्मुखः
अन्येषां च न दातव्यं श्रीमंतादि गृहेषुच ॥ २० ॥

કૃતિકાથી સાત નક્ષત્રો પૂર્વમાં મઘાથી સાત નક્ષત્રો દક્ષિણમાં અનુરાધાથી સાત નક્ષત્રો અને સાભિજિત સહિત સાત નક્ષત્રો પશ્ચિમમાં અને ધનિષ્ઠાથી સાત નક્ષત્રો ઉત્તરમાં એમ સાત સાત નક્ષત્રો ચારે દિશાઓમાં પ્રદક્ષિણાએ જાણવા. એટલે જે નક્ષત્ર જે દિશાનું હોય ત્યાં તેનો ચંદ્રમા જાણવો. ઘરને સન્મુખ ચંદ્રમા હોય તો આયુષ્ય હરે. પાછળ ચંદ્રમા હોય તો લક્ષ્મીનો નાશ થાય. ડાબી જમણી તરફ ચંદ્રમા હોય તો ધન અને ધાન્યની વૃદ્ધિ થાય. પ્રાસાદ અને રાજભવનને વિષે ચંદ્રમા સન્મુખ દેવો (ડાબી જમણી તરફ પણ આપી શકાય) બાકી બીજા વર્ણને કે શ્રીમંતના ઘરને પણ સન્મુખ ચંદ્રમા ન દેવો. ૧૮–૧૯–૨૦ [૬]

कृतिकासे सात नक्षत्र पूर्वमें, मघासे सात नक्षत्र दक्षिणमें, अनुराधासे सात नक्षत्रों और साभिजित सहित सात तक्षत्रों पश्चिममें और धनिष्ठासे सात नक्षत्रों उत्तरमें, इसी तरह सात सात नक्षत्रों चारों दिशाओंमें प्रदक्षिणासे जानना। अर्थात् जो नक्षत्र जिस दिशाका हो वहाँ उसका चँद्रमा जानना। घरके सन्मुख चँद्रमा हो तो आयुष्य हरता है। पीछे चँद्रमा हो तो लक्ष्मीका नाश होता है। बायीं और दायीं तरफ चँद्रमा हो तो धन धान्यकी वृद्धि होती है। प्रासाद और राजभवन आदि के लिये चँद्रमा सन्मुख देना। (बायीं–दायीं तरफ भी देते हैं।) इसके अलावा दूसरे वर्णको या श्रीमंत के घरको भी सन्मुख चँद्रमा नहीं देना। १८–१९–२०[६]

८राशि गृहक्षेत्रेच यद्धृक्षं षष्टिभिर्गुणितं तथा
पंचत्रिंशच्छतै र्भक्त्वाच्छेषं भुक्ति रजादयः ॥ २१ ॥
अश्विन्यादित्रयं मेषः सिंहः प्रोक्तो मघात्रयं
मूलादि त्रितयं चापः शेषेषु नवराशयः ॥ २२ ॥

વાસ્તુઃ ઘરના ક્ષેત્રનું જે નક્ષત્ર આવ્યું હોય તેને સાઠે ગુણીને એકસો

---

(૬) ચંદ્રમાને મેળવવા વિષયમાં સૂત્રધાર રાજસિંહ વિરચિત "वास्तुराज" અ૦ ૭માં કહ્યું છે કે पार्श्वा दक्षिण वामेपु भवनाग्रे देव भूपयो । દેવને રાજ ભવનને સન્મુખ અને ડાબી જમણી તરફ ચંદ્રમા આપવો.

(६) चँद्रमाको मिलानेके विषयमें सूत्रधार राजसिंह विरचित 'वास्तुराज' अ० ७ में कहा गया है कि **पार्श्वे दक्षिण वामेपु भवनाग्रे देवभूपयो** । देव और राजभवनको सन्मुख और बायीं दायीं तरफ चँद्रमा देना।

गृहस्वामी के नाम परसे और गृहका नक्षत्र परसे राशि जाननेका कोष्टक

गृहस्वामीका नामाक्षर	ड ह	द च झ थ	न य	अ ल इ	म ट	भ ध फ ढ	व व उ	प ठ ण	ख ज	क छ घ	र त	ग श
बार राशि	क की घ	मीन १२	वृश्चिक ८	मेष १	सिंह ५	धन ९	वृष २	कन्या ६	मकर १०	मिथुन ३	तुला ७	कुंभ ११
नक्षत्र	—	—	—	कृतिका ३	उ फाल्गुन १२	उ. पाषा २१	—	—	—	—	—	—
	अश्लेषा ९	रेवती २७	जेष्ठा १८	भरणी २	पू. फाल्गुन ११	पू पाढा २०	मृगशिर्ष ५	चित्रा १४	धनिष्ठा २३	पुनर्वसु ७	विशाख १६	पू भाद्र २५
	पुष्य ८	उ भाद्र २६	अनुराधा १७	अश्वीनी १	मघा १०	मूल १९	रोहिणी ४	हस्त १३	श्रवण २२	आर्द्रा ६	स्वाति १५	शतभिष २४
जाति	ब्राह्मण जाति			क्षत्रिय जाति			वैश्य जाति			शुद्र जाति		

पांत्रीशे भागवा जे शेष रहे ते चालु मेषादि भुक्त राशि जाणवी. (लब्धी आवे ते गत राशि जाणवी.) अश्विनी भरणीने कृतिका ए त्रण नक्षत्रोनी मेष राशि, मघा, पू. फाल्गुनी, उ. फाल्गुनी ए पण नक्षत्रोनी सिंह राशि जाणवी. मूळ, पू. षाढा ए त्रण नक्षत्रोनी धन राशि जाणवी. बाकी बब्बे नक्षत्रोनी एकेक राशि एम नव राशि जाणवी. २१-२२

वास्तु—घरके क्षेत्रका जो नक्षत्र आया हो उसे साठसे गुनकर एक सौ पैंतीससे विभाजन करते जो शेष रहे वह चालु मेषादि मुक्त राशि जानना। (लब्धी आवे, वह गत राशि है।) अश्विनी, भरणी, और कृतिका—ये तीन नक्षत्रोंकी मेष राशि—मघा, पू—फाल्गुनी, उ—फाल्गुनी ये तीन नक्षत्रोंकी सिंह राशि जानना। इसके अतिरिक्त दो दो नक्षत्रोंकी एक राशि इस तरह नौ राशि समझना। २२ ८ इति राशि.

कर्कमीब वृश्चिकते विप्र मेष सिंह धन ते क्षत्रिय
वृषकन्या मकर ते वैश्य मिथुन तुला कुंभ ते शुद्रक
गृहस्वामी समोच्च जात्या न जात्या गृहस्योच्च च ॥ २३ ॥

कर्क मीन अने वृश्चिक राशिनी ब्राह्मण जाति, मेष सिंह अने धननी क्षत्रिय जाति, वृष कन्याने मकरनी वैश्य जाति, मिथुन तुलाने कुंभनी शुद्र जाति जाणवी. घरनी राशिनी जाति एक होय अगर घरधणीनी राशिनी जाति एक होय अगर घरधणीनी राशि उच्च जाति होय तो श्रेष्ठ जाणवुं. परंतु जो घरनी राशिथी घरधणीनी राशिनी उच्च जाति होय तो ते कनिष्ठा जाणी तेवुं न करवुं. २३

घरकी राशिकी जातिसे गृहपतिकी जाति समान हो अगर गृहपतिकी राशिकी उच्च्य जाति हो तो श्रेष्ठ समझना। लेकिन जो घरकी राशिसे गृहपति की जाति उच्च हो तो उसे कनिष्ठा जान कर वैसा नहीं करना। २३ [७] इति राशि अङ्क ॥ ८ ॥

९ राशि मैत्री सप्तमे चोत्तमा प्रीतिः षडष्टे मरणं ध्रुवं ।
(षडाष्टक) नवपंचमिते क्लेशः पुष्टि द्वंदश चतुर्थके ॥ २४ ॥
तृतीयैएकादशमैत्री द्वितीये द्वादशे रिपुः ।
एवं च षड्विधोक्तव्यं शेषेषु प्रीतिरुत्तमा ॥ २५ ॥

---

(७) भाषा छंद—

कर्कमीन वृश्चिक ते विप्र, मेष सिंह धन ते क्षत्रिय
वृषकन्या मकर ते वैश्य, मिथुन तुला ते कुंभ क्षुद्रक ॥
गृह अने स्वामि समानजात अथवा स्वामि उच्च जात
शुभ फलदाता कहिये एह धन धान्यनी वृद्धि करेह ॥

भवन ओर भवनपतिकी राशि परसे

		अ व ई	व व उ	क छ घ	ड ह
भवनका नक्षत्रो	राशि	मेप १	वृपभ २	मिथुन ३	कर्क ४
अश्विनी १ भरणी २ कृतिका ३	मेप १	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ट	श्रेष्ट
रोहीणी ४ मृगशिर्ष ५	वृपभ २	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ट
आर्द्रा ६ पुनर्वसु ७	मिथुन ३	श्रेष्ट	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र
पुष्य ८ अश्लेपा ९	कर्क ४	श्रेष्ट	श्रेष्ट	दरिद्र	इष्ट
मघा १० पू. फा ११ उ फा १२	सिंह ५	क्लेश	श्रेष्ट	श्रेष्ट	दरिद्र
हस्त १३ चित्रा १४	कन्या ६	मरण	क्लेश	श्रेष्ट	श्रेष्ट
स्वाति १५ विशाखा १६	तुला ७	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ट
अनुराधा १७ जेष्ठा १८	वृश्चिक ८	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश
मूल १९ पू पाढा २० उ पाढा २१	धन ९	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण
श्रवण २२ धनिष्ठा २३	मकर १०	श्रेष्ट	क्लेश	मरण	प्रीति
शतभिपा २४ पू भाद्रा २५	कुभ ११	श्रेष्ट	श्रेष्ट	क्लेश	मरण
उ भाद्रपद २६ रेवती २७	मीन १२	दरिद्र	श्रेष्ट	श्रेष्ट	क्लेश

इष्ट अनिष्ट खडाष्टक दर्शक कोष्टक

म ट	प ठ ण	र त	न य	भ घ फ ढ	ज ख	ग म	द च झ घ
सिंह ५	कन्या ६	तुला ७	वृश्चिक ८	धन ९	मकर १०	कुंभ ११	मीन १२
क्लेश	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ट	श्रेष्ट	दरिद्र
श्रेष्ट	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ट	श्रेष्ट
श्रेष्ट	श्रेष्ट	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ट
दरिद्र	श्रेष्ट	श्रेष्ट	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण	क्लेश
इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ट	श्रेष्ट	क्लेश	मरण	प्रीति	मरण
दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ट	श्रेष्ट	क्लेश	मरण	प्रीति
श्रेष्ट	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ट	श्रेष्ट	क्लेश	मरण
श्रेष्ट	श्रेष्ट	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ट	श्रेष्ट	क्लेश
क्लेश	श्रेष्ट	श्रेष्ट	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ट	श्रेष्ट
मरण	क्लेश	श्रेष्ट	श्रेष्ट	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र	श्रेष्ट
प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ट	श्रेष्ट	दरिद्र	इष्ट	दरिद्र
मरण	प्रीति	मरण	क्लेश	श्रेष्ट	श्रेष्ट	दरिद्र	इष्ट

આગળ કહ્યુ તેમ અશ્વિનીથી ત્રણ નક્ષત્રની મેષ રાશિ મઘાથી ત્રણ નક્ષત્રની સિંહ રાશિ મૂળથી ત્રણ નક્ષત્રની ધનરાશિ જાણવી બાકી બબ્બે નક્ષત્રોની એકેક રાશિ જાણવી

ઘરની રાશિથી ઘરના સ્વામીની રાશિ ગણુતા જો સાતમી આવે તો પ્રીતિ કરાવે છઠ્ઠી કે આઠમી આવે તો મૃત્યુ કરાવે નવમી કે પાચમી આવે તો કલેશ કરાવે બીજી કે બારમી આવે તો શત્રુતા કરાવે ચોથી કે દસમી આવે તો પુષ્ટિ કરાવે ત્રીજી કે અગ્યારમી આવે તો મૈત્રી ભાવ જાણવો એ રીતે ખડાષ્ટક કહ્યુ બાકી પ્રીતિ કર્તા છે ૨૪-૨૫

पूर्वोक्तिके अनुसार अश्विनीसे तीन नक्षत्रकी मेष राशि मघासे तीन नक्षत्रकी सिंह राशि मूलसे तीन नक्षत्रकी धन राशि समझना। इसके अलावा दो दो नक्षत्रोंकी एक एक राशि जानना ।

रोहिणी–मृगशीर्ष	आर्द्रा पुनवसु	पुष्य अश्लेषा	हस्त चित्रा	स्वाति विशाखा
वृष	मिथुन	कर्क	कन्या	तुला

अनुराधा ज्येष्ठा	श्रवण धनिष्ठा	शतभिषा–पू भाद्रपद	उ भाद्रपद रेवती
वृश्चिक	मकर	कुंभ	मीन

घरकी राशिसे घरके स्वामिकी राशि गिनते जो सातवीं आवे तो प्रीति कारक है। छट्ठी या आठवीं आवे तो मृत्युकारक बने। नौवीं या पाँचवीं आवे तो क्लेश कारक बने। दूसरी या बारहवीं आवे तो शत्रुता करानेवाली बने। चौथी या दसवीं आवे तो पुष्टिकारक बने। तीसरी या ग्यारहवीं राशि आवे तो मैत्री भाव जानना। इसी तरह षडाष्टक कहा गया है। इसके सिवा प्रीतिकर्ता है। २४–२५

१० गृह मैत्री–मेष वृश्चिकयो र्भौमः शुक्रो वृष तुलाधिपः ।
कन्या मिथुनयोः सौम्यः कर्कस्य चंद्रमा स्मृतः ॥ २६ ॥
सूर्यक्षेत्रे भवेत्सिंह धनमीने सुरोरगुरुः ।
मकरकुंभे शनि श्चैवं एते क्षेत्र गृहाधिपाः ॥ २७ ॥
आत्मक्षेत्रे न पीडयंते स्वस्थाने क्षेत्रपालकाः ।
निषम स्थाने प्रपीडयेत् इति च गृहेमाः स्मृताः ॥ २८ ॥

બારે રાશિના સ્વામિ કહે છે મેષ અને વૃશ્ચિકનો સ્વામિ મંગળ તુલા અને વૃષનો શુક્ર, કન્યાનો મિથુનનો બુધ, કર્કનો સ્વામિ સોમ સિંહનો સૂર્ય, ધન અને મિનનો ગુરુ, મકર અને કુંભ રાશિનો સ્વામિ શનિ જાણવો આ સાત ગ્રહોને બાર રાશિ ક્ષેત્રના અધિપતિ જાણવા તે પોત પોતાની રાશિમા

સ્વસ્થ રહી પીડા ન કરે પોતાના આપ્તજન (મિત્ર)ના ક્ષેત્રસ્થાનમાં હોય તો પણ પીડા ન કરે પણ શત્રુસ્થાન વિષમસ્થાનમાં પીડા કરે. તેથી શત્રુ મિત્રભાવ જોવો. ૨૬–૨૭–૨૮

बारह राशिके स्वामिके बारेमें कहा जाता है। मेष और वृश्चिकका स्वामि मंगल, तुला, और वृषका शुक्र, कन्या और मिथुनका बुध, कर्कका स्वामि सोम, सिंहका सूर्य धन और मिनका गुरु, मकर और कुंभ राशिका स्वामि शनि समझना। इन सातों ग्रहोंको बारह राशि क्षेत्रके अधिपति समझना। वे अपनी राशिमें स्वस्थ रहकर पीडा न करें। अपने आप्तजन (मित्र) के क्षेत्रस्थानमें हो तो भीं पीडा न करें लेकिन शत्रुस्थान–विषम स्थानमें पीडा करें इसी लिये शत्रुमित्र भाव देखना। २६–२७–२८

राशिका स्वामी और मित्र शत्रु या समभाव देखनेका कोष्टक

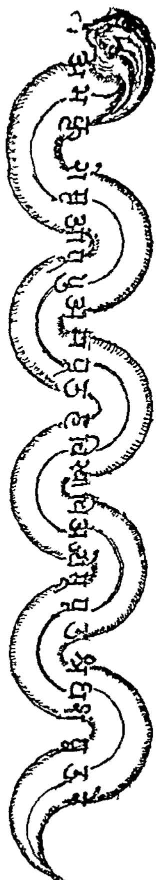
राशि	स्वारी	मित्रभाव	शत्रुभाव	समभाव
सिंह	सूर्य	चंद्र–गुरु मंगळ	शुक्र शनी	बुध
कर्क	चन्द्र	सूर्य बुध	—	गुरु शुक्र मंगळ शनी
मेष वृश्चिक	मंगक	सूर्य–चंद्र गुरु	बुध	शुक्र शनी
मिथुन कन्या	बुध	सूर्य शुक्र	चंद्र	मंगळ गुरु शनी
धन मीन	गुरु	सूर्य चंद्र मंगल	बुध–शुक्र	शनी
वृषभ तुला	शुक्र	बुध–शनी	सूर्य मंगळ	चंद्र गुरु
मकर कुंभ	शनी	बुध शुक्र	सूर्य चंद्र मंलग	गुरु

रवि रक्तानुगोमैत्री गुरुचंद्रादितः शुभाः ।
शेपा तृतीयाणा एभिर्युक्ताना शस्यते ॥ २९ ॥
रविमंदे सदा वैर कुंजमदे तथैव च
गुरुश्च शुक्रयो वैरं वैरंच बुध चॅद्रयोः ॥ ३० ॥

રવિને મગળ તથા ગુરુ અને ચદ્રને મૈત્રી બાકી ત્રણ ગૃહો સાથે પણ મૈત્રી રવિ અને શનિને વેર મગળ અને શનિને વેર, ગુરુ ને બુધ તથા શુક્રને વેર, બુધને સોમ શત્રુ (સૂર્યને શુક્ર શનિને વેર) ચદ્ર ને મગળ બુધને વેર શુક્રને સૂર્ય ચદ્રને વેર શનિને ચદ્ર મગળને રવિ સાથે વેર ૨૯-૩૦

रवि और मगल तथा गुरु और चँद्रको मैत्री, अन्य तीन ग्रहों के साथ भी मैत्री, रवि और शनिनो वेर, मगल और शनिको वैर, गुरु और वुध को तथा शुक्रको वैर, वुध और सोम शत्रु (सूर्यको शुक्र, शनिसे वैर) चँद्र और मगल, वुधको वैर, शुक्र और सूर्य चँद्रको वैर-शनिको चँद्रसे, मगलको रविसे वैर। २९-३० इति गृहमैत्री अङ्ग ॥ १० ॥

त्र्यनाड्यात्मकं चक्रं सर्पाकार स्वरूपकम्
नव भागाकितं कुर्यादश्विन्यादि त्रिकं लिखेत् ॥३१॥
एक नाडी स्थित तस्मिनृक्षं चेद् वरकन्ययोः
तेन मरण विजानियादशतश्चे स्थितं त्यजेत् ॥ ३२ ॥
स्वामि सेवक मित्राणां गृहाणा गृहस्वामिना
राज्ञा तथा पौराणा च नाडीवेधः सुखावहः ॥ ३३ ॥



ત્રણ નાડીની રેખાવાળુ સર્પાકાર રૂપ નવ ભાગની વાકી આકૃતિવાળુ એક ચક્ર કરવુ તે વાકના એકેક ભાગમા અનુક્રમે અશ્વિન્યાદિ ત્રણ ત્રણ નક્ષત્રોનુ જોડકુ સિદ્ધિ પક્તિમા વેધવુ તે રીતે નવસર્પાગ ભાગમા સત્તાવીશ નક્ષત્રો લખવા આ સર્પાકાર ચક્રમા વર અને કન્યાનુ નક્ષત્ર એક નાડીમા આવે તો મૃત્યુ થાય તેથી નક્ષત્ર અશ તજવા સ્વામિ સેવક, ઘર અને ઘરધણી, રાજા અને નગર, આ જો એક નાડીમા વેધ થાય તો સુખદાયક જાણવુ ૩૧-૩૨-૩૩

तीन नाडियोंकी रेखावाला सर्पाकार रूप नौ भागकी वक्र आकृतिवाला एक चक्र बनाना। उस वक्राकृतिके एक एक भागमें अनुक्रमसे अश्विन्यादि तीन तीन नक्षत्रोंके युगलको सीधी पंक्तिमें वेधना (लिखना) इस तरह नौ सर्पांग भागमें सत्ताबीस नक्षत्रों लिखना। इस सर्पाकार चक्रमें वर और कन्याका नक्षत्र एक नाडीमें आवे तो मृत्यु होती है। इसी लिये नक्षत्र अंशको तजना। स्वामि सेवक, घर और मालिक राजा और नगर—एक नाडीमें उसका वेध हो तो सुखदायक समझना। ३१–३२–३३ इति नाडीवेध अङ्ग ॥ ११ ॥

१२. अधिपति—गेहस्योदयकं क्षेत्रफलेन गुणयेद्बुधः
अष्टभिस्तु हरेच्छेषं शुभः सोऽधिपतिः समः ॥ ३४ ॥
विकृतः कर्णकश्चैवं धूम्रदो वितथस्वरः
बिडालो दुन्दुभिश्चैव दान्तः कान्तोऽधिनायकः ॥ ३५ ॥

બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ ઘરની ઉભણીના અંકને ક્ષેત્રફળે ગુણનાં જે અંક આવે તેને આઠે ભાગતાં જે શેષ રહે તે અધિપતિ જાણવો. તેમાં સમ–એકી અધિપતિ શુભ જાણવો. અને એકી અંકનો અધિપતિ નેષ્ટ જાણવો. ૧ વિકૃત ૨ કર્ણક ૩ ધૂમ્રક ૪ વિતથસ્વર ૫ બિડાલ ૬ દુન્દુભિ ૭ દાંત અને ૮ કાંત એ આઠ અધિપતિનાં નામ જાણવાં. ૩૪–૩૫

बुद्धिमान शिल्पीको घरके उदयके अंकको क्षेत्रफलसे गुनते जो अंक आवे उसे आठसे भागते जो शेष रहे उसे अधिपति जानना चाहिये। उसमें सम अधिपति शुभ जानना। और विषम अंकके अधिपतिको नेष्ट समझना। १. विकृत २ कर्णक ३ धूम्रन ४ वितथस्वर ५ बिडाल ६ दुन्दुभि ७ दांत और ८ कान्त, ये आठ अधिपतिके नाम हैं। ३४–३५.

मतांन्तर— यदायव्यय संयोगे यदैक्यं वसुभिर्भजेत्
शेष स्त्वधिपतिः केचिन्विषमः स भयावहः ॥ ३६ ॥

અધિપતિનું ગણિત કરવાનો બીજો મત આય અને વ્યયના અંકનો સરવાળો કરી તેને આઠે ભાગતાં શેષ રહે તે અધિપતિ જાણવો. (અધિપતિનો વિષમ એકી અંક હોય તે ભય ઉત્પન્ન કરે બેકી સમ શુભ જાણવો.) ૩૬

अधिपतिका गणित करनेका दूसरा मत—आय और व्ययके अंकका मिलान कर उसे आठसे विभाजित करते जो शेष रहे उसे अधिपति समझना। अधिपतिका विषम अंक भय उत्पन्न करे। सम अंक शुभ समझना। ३६

इत्याधिपति अङ्ग बारहवाँ ॥ १२ ॥

१३ १४ १५
लग्न तिथी वार—आयर्क्षव्यय तारांशाधिपात् क्षेत्रफले क्षिपेत्
अर्के भक्ते भवेल्लग्न मथ लग्नेष्ट संगुणे ॥ ३७ ॥
हते शरकैः शेषन्तु तिथिर्नाम समं फलम्
तिथौ नवघ्ने वारः स्यान्नुर्काद्योमुनिभिर्हृते ॥ ३८ ॥

ઘરનુ ગણિત કરતા આવેલ આય, નક્ષત્ર, વ્યય, તારા, અ શક અને અધિપતિના અ કોમા ક્ષેત્રફળના અ કના સરવાળાને બારે ભાગતા જે શેષ રહે તે લગ્ન જાણવુ લગ્નના અ કને આઠે ગુણીને પ દરે ભાગતા શેષ રહે તે તિથિ વાર જાણવી તેનુ ફળ નામ પ્રમાણે છે તિથિને નવે ગુણીને સાતે ભાગતા શેષ રહે તે વાર જાણવો ૩૭–૩૮

घरका गणित करते आये हुए आय, नक्षत्र, व्यय, तारा, अशक और अधिपतिके अकोमे क्षेत्रफलका अक मिलाकर बारहसे निभाजित करते जो शेप रहे उसे लग्न समझना । लग्नके अकको आठसे गुनकर पद्रहसे विभाजित करते जो शेप रहे उसे तिथि जानना । उसका फल नामके अनुसार है । तिथिको नौसे गुनकर सातसे विभाजित करते जो शेप रहे उसे 'वार' समझना । ३७–३८

लग्नफल–वृपभ सिह वृश्चिक कुभ लग्न उत्तम फलवाले, मिथुन कन्या, धन मिन लग्न मध्यम फलवाले, मेप कर्क तुला मकर लग्न कनिष्ठ फलवाले है । उसमे कनिष्ठ फलवाले लग्नको तज देना ।

तिथिफल–पष्ठमी, एकादशी, एका, नदातिथि–ब्राह्मणके लिये श्रेष्ठ, दूज, सप्तमी, द्वादशी, भद्रातिथि–क्षत्रियके लिये श्रेष्ठ, तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी–वैश्यके लिये श्रेष्ठ, चतुर्थी, नौमीं, और चतुर्दशी–रिक्ता तिथि–शूद्रके लिये श्रेष्ठ, दशवी और पूर्णिमा देवमदिरोंके लिये श्रेष्ठ उससे उलटी तिथियाँ नेष्ट जानना ।

वारफल–ध्वजाय हो तो रविवार श्रेष्ठ, वृपाय हो तो सोमवार श्रेष्ठ, धूम्राय हो तो मगलवार श्रेष्ठ, खर और श्वानाय हो तो बुध, गजाय हो तो गुरूवार श्रेष्ठ, ध्वाजाय हो तो शुक्रवार श्रेष्ठ, सिंहाय हो तो शनिवार श्रेष्ठ समझना । इससे उलटा तजना ।

वार प्राकारान्तर—क्षेत्रंरुद्रगुण कृत्वा सप्तभिर्भागमाहरेत्
शेपंरव्यादयोवारा रवि भौमौ विवर्जितौ ॥ ३९ ॥

ક્ષેત્રફળને અગ્યારે ગુણીને સાતે ભાગતા જે શેપ રહે તે અનુક્રમે રવિ આદિ સાત વારો જાણવા તેમા રવિ અને મ ગળવાર તજવા ૩૯

क्षेत्रफलको ग्यारहसे गुनकर सातसे भागते जो शेप रहे उसे अनुक्रमसे रवि आदि सातवार जानना । उसमे रवि और भोम वारको तजना । ३९

१६. अथोत्पत्ति—नवघ्नं गृह नक्षत्रं रुद्रसंख्या समन्वितम्
पंचमिस्तु हरेभागं शेषमुत्पत्तिः पंचधा ॥ ४० ॥

પ્રાસાદ કે ઘરના નક્ષત્રને નવગણું કરવાથી જે અંક આવે તેમાં ૧૧ ઉમેરી સરવાળો કરતાં જે સંખ્યા થાય તેને પાંચે ભાગતાં જે શેષ રહે તે પાંચ પ્રકારની ઉત્પત્તિ જાણવી. ૪૦

૧ વધે તો ઘણું દાન ૨ વધે તો સુખપ્રાપ્તિ ૩ વધે તો સ્ત્રી પ્રાપ્તિ ૪ વધે તો ધનપ્રાપ્તિ અને ૫ વધે તો પુત્રપ્રાપ્તિ થાય.

प्रासाद या घरके नक्षत्रको नौसे गुनकर जो एक आवे उसमें ग्यारह मिलाकर जो संख्या हो उसे पाँचसे विभाजित करते जो शेष रहे उसे पाँच प्रकारकी नक्षत्रकी उत्पत्ति समझना । १ शेष होनो बहुत दान २ शेष हो तो सुख प्राप्ति ३ शेप हो तो स्त्री प्राप्ति ४ शेष हो तो धन प्राप्ति और ५ शेष हो तो पुत्र प्राप्ति होती है । ४० इति उत्पत्ति अङ्ग ॥१६॥

(१७) अथोधिपतिवर्गवैर

नामाक्षर		वर्ग	नामाक्षर		वर्ग
अ–इ–उ–ए का	(१)	गरुडवर्ग	त–थ–द–ध–न का	(५)	सर्पवर्ग
क–ख–ग–घ–ङ का	(२)	बिडालवर्ग	प–फ–ब–भ–म का	(६)	मूषकवर्ग
च–छ–ज–झ–ञ का	(३)	सिंहवर्ग	य–र–ल–व का	(७)	मृगवर्ग
ट–ठ–ड–ढ–ण का	(४)	श्वानवर्ग	श–प–स–ह का	(८)	मेषवर्ग

गृह और गृहपतिके नामाक्षरपरसे वर्ग निकालना ।

सूपर्ण ओतुः सिंहः श्वा सुसर्पाखु मृग मीढकाः
वर्णाधिपाः क्रमा दृष्टौ भक्ष्यो यः पंचमो मतः ॥ ४१ ॥

૧ ગરુડ ૨ બિડાલ ૩ સિંહ ૪ શ્વાન ૫ સર્પ ૬ ઉંદર ૭ મૃગ ૮ મેષ આ આઠે અનુક્રમે તે તે વર્ણના અધિપપતિ છે. એ અધિપતિના વર્ગમાં દરેકનો તેનાથી પાંચમો ભક્ષક છે, માટે તે તજવો. ૧ ગરુડને ૫ સર્પને વેર ૩ સિંહ અને ૭ મૃગને વેર, ૨ બિડાલને મુષકને વેર, ૪ શ્વાન અને ૮ મેષને વેર ૪૧.

१ गरुड २ विडल ३ सिंह ४ श्वान ५ सूर्य ६ मूपक ७ मृग ८ मेष ये आठों अनुक्रमसे अपने अपने वर्गके अधिपति हैं । ये अधिपतिके वर्ग में प्रत्येकका उससे पाँचवाँ भक्षक है । असीलिये त्याज्य है । गरुडको ५ सर्प से वैर ३ सिंह और मृगको वैर २ विडाल और मूषकको वैर ४ श्वान और ८ मेपको वैर ४१ इति अधिपति वर्ग अङ्ग ॥१७॥

१८. योनिवैर—अश्वोऽश्विनी शतभयो भरिणी भौष्णमयोगजिः
कृत्तिका पुष्ययोच्छागो रोहिणी मृगयो रहिः ॥४२॥
श्वाच मूलार्द्रयोर्योनिः सर्पादित्यो विडालकः
पूर्वाफा मघयोशस्तु रुफोत्तर ययो स्तुगौः ॥४३॥
हस्त स्वात्योस्तु महिषी व्याघ्रश्चित्रा विशाखयोः
ज्येष्ठानुराधयो रेणः पुषाढा श्रवणे कपिः ॥४४॥

अश्विनी और शतभिया की अश्वयोनि । भरणी और रेवतीकी गजयोनि ॥
कृत्तिका और पुष्यकी अजयोनि । रोहिणी और मृगशीर्षकी सर्पयोनि ॥
मूल और आर्द्रीकी श्वानयोनि । आश्लेषा और पुनर्वसुकी विडालयोनि ॥
पूर्वाफाल्गुनी और मघाकी मूषकयोनि । उ भाद्रपद ओर उ फाल्गुनीकी गौयोनि ॥
स्वाति और हस्तकी महिषी योनि । चित्रा ओर विशाखाकी व्याघ योनि ॥
ज्येष्ठा और अनुराधाकी मेढायोनि । पू पाढा और श्रवणकी कपियोनि ॥
उ पाढा और अभिजितकी नकुलयोनि । पृ भाद्रपद और घनिष्ठाकी सिंहयोनि ॥
४२–४३–४४

उपाढाभिजितोर्नभ्रुः सिंहेः मिहेः पूभाधनिष्ठयोः
मेषमर्कटयोर्वैरंगो व्याघ्रं गज सिंहयोः ॥४५॥
श्वानैणं सर्पनकुलं विडालोन्दुरके महत् ।
महिषाश्वमिति त्याज्यं मृत्युः स्त्री मश्च चेऽस्मस्तु ॥४६॥

मेष योनीको मर्कट योनिसे वैर । गौ योनि और व्याघ्र योनिको वैर ॥
गज योनि और सिंह योनिको वैर । श्वान योनि और वानर योनिको वैर ॥
सर्प योनि और नकुल योनिको वेर । विडाल योनि और मूषक योनिको वैर ॥
महिष योनि और अश्व योनिको वैर

नक्षत्र और योनिका उपरके अनुसार परस्पर वेर है । जिससे स्त्री और पुरुष गृह और गृहपतिके नक्षत्रोंकी योनियोंका परस्पर वेर तज देना । नहि तो मृत्यु होती है । ४५-४६ इति योनि वैर अङ्ग ॥१८॥

१९. अथ नक्षत्र वैर—वैरंचोत्तरफाल्गुन्यश्वि युगले श्वाति भरण्योर्द्वयो ।
रोहिण्युत्तर पाढ्योः श्रुति पुनर्वस्वो विरोध स्तथा ॥
चित्रा हस्तभयोश्च पुष्यफणिनो ज्येष्ठा विशाखद्वयोः
प्रासादे भवनासने च शयने नक्षत्र वैरं त्यजेत् ॥४७॥

उत्तरा फाल्गुनी और अश्विनीको वैर । रोहिणी और उत्तराषाढाकी वैर ॥
चित्रा और हस्तको वैर । स्वाति और भरणीको वैर ॥
श्रवण और पुनर्वसुको वैर । पुष्य और अश्लेषाको वैर ॥

नक्षत्रों के वैर इस तरह हैं । अिसीलिये प्रासादमें, गृहमें, आसन और शैयामें घर और घरके मालिकके परस्पर वैरको तजना । ४७ इति नक्षत्रवैर अङ्ग ॥१९॥

अथायुष्यत्था विनाश—गुणयेदष्टभिः क्षेत्रफलं षष्टिविभाजितम्
लब्धं दसगुणं जीवंच्छेषं भूत समाहृतम् ॥४८॥
पृथिं व्यापस्तया तेजोवायुराकाशमेव च
पँचतत्त्वानि जानीयादंतकाले प्रभेदने ॥४९॥

ક્ષેત્રફળને આઠે ગુણી સાઠે ભાગ દેતાં જે અંક આવે તેને દશે ગુણતાં જે અંક આવે ત્યાં સુધી તે વાસ્તુનું આયુષ્ય જાણવું. (તેટલો સમય તે સ્થિર રહે) સાઠનો ભાગ દેતાં જે શેષ રહે તેને પાંચે ભાગ દેવા એટલે તત્ત્વ આવશે એ. એ વિનાશના તત્ત્વના નામ જાણવા. ૧ વધે તો પૃથ્વી ૨ વધે તો જળ તત્ત્વ ૩ વધે તો તેજ અગ્નિ તત્ત્વ ૪ વધે તો વાયુ તત્ત્વ ૫ વધે તો આકાશ તત્ત્વ વિનાશ જાણવું. એ પાંચેય તત્ત્વોથી વાસ્તુના અંત કાળનો ભેદ જાણવો. (૮) ૪૮–૪૯

[८]क्षेत्रफलको आठसे गुनकर साठकी संख्यासे भागते जो अंक आवे उसको दससे गुनते जो अंक आवे वहाँ तक उस वास्तुका आयुष्य जानना । (उतना समय वह स्थित रहे ।) साठकी संख्यासे भागते जो शेष रहे उसे पाँचकी संख्यासे भागना । अिससे तत्त्व निकलेगा । इसे विनाश के तत्त्वका नाम जानना । १ शेष रहे तो पृथ्वी तत्त्व २ शेष रहे तो जल तत्त्व ३ शेष रहे तो तेज तत्त्व (अग्नि) ४ शेष रहे तो वायु तत्त्व ५ शेष रहे तो आकाश तत्त्व विनाशका जानना । इन पाँचों तत्त्वोंसे वास्तुके अंतकालका भेद जानना । ४८–४९

---

[८]सच्छिल्पतंत्र નામના ગ્રંથમાં વાસ્તુ દ્રવ્યના અધિકાર પ્રમાણે તેનું આયુષ્ય બતાવેલ છે. ઉપર કહ્યું તેમ ક્ષેત્રફળને આઠગણું કરી સાઠે ભાગતાં જે આવે તે જ ફળ થયું તે કાંકરી અને માટીના વાસ્તુનું સ્થિર આયુષ્ય જાણવું. તે ફળને દશ ગણું કરવાથી ઈંટ અને માટીને ચુનાથી બનેલ વાસ્તુનું આયુષ્ય જાણવું. તે ફળને નેવું ગણું કરવાથી પત્થર અને સીસાથી બનેલ વાસ્તુનું આયુષ્ય જાણવું. તે ફળને એક સો સિત્તેર ગણું કરવાથી ધાતુથી બનેલ વાસ્તુનું આયુષ્ય જાણવું.

[८]सच्छिल्पतंत्र नामके ग्रंथमें वास्तुद्रव्यके अधिकार अनुसार उसकी आयु बतायी है । क्षेत्रफलको आठ गुनाकर आठसे भागते जो शेष आवे वह ही फल हुआ । इसे कँकरी और

द्वि भिः श्रेष्ठं त्रिभि श्रेष्ठं पंचभिश्चोत्तमोत्तमम्
सप्तभिः सर्वकल्याणम् नवभिः सर्व सपदः ॥५०॥

પ્રાસાદ કે ઘરનુ આય નક્ષત્રાદિ ગણિત કરવામા ઓછામા ઓછા બે અગ મેળવવા અગર ત્રણ અગ મેળવે તો શ્રેષ્ઠ, પાચ અગ મેળવાય તો સર્વથી ઉત્તમ જાણવુ અને જો સાત અગ મેળવાય તો સર્વ કલ્યાણ કારક જાણવુ અને નવ અગ મેળવાય તો સર્વ સપત્તિની પ્રાપ્તિ થાય ૫૦

प्रासाद या घरके आय, नक्षत्रादिके गणित करते समय कमसे कम दो अङ्ग मिलाना या तो तीन अङ्ग मिलाये जाय तो श्रेष्ठ, पाँच अङ्ग मिलाये जाय तो सर्वसे उत्तम समझना। और जो सात अङ्ग मिलाये जाय तो सर्वकल्याण कारक जानना। और नो अङ्ग मिलाये जाय तो सर्वसपत्तिकी प्राप्ति होती है। ५०

आयऋक्ष चंद्रगण व्यय तारांशक राशयः।
राशिमैत्री ग्रहमैत्री नाडीवेध अधिपतिः ॥५१॥
लग्नतिथिवारोत्पत्ति अधिपत्ति वर्ग वैरंः
योनि वैरं ऋक्ष वैरं स्थितिर्नाशेक विंशतिः ॥५२॥

પ્રાસાદ કે ગૃહાદિ વાસ્તુકાર્યમા ૧ આય ૨ નક્ષત્ર ૩ ચદ્ર ૪ ગણ ૫ વ્યય ૬ તારા ૭ અશક ૮ રાશિ ૯ રાશિમૈત્રી ૧૦ ગ્રહમૈત્રી ૧૧ નાડીવેધ ૧૨ અધિપતિ ૧૩ લગ્ન ૧૪ તિથિ ૧૫ વાર ૧૬ ઉત્પત્તિ ૧૭ અધિપતિ વર્ગ વૈર ૧૮ યોનિ વૈર ૧૯ નક્ષત્ર વૈર ૨૦ સ્થિતિ અને ૨૧ નાશ એ રીતે એક વીશ અગો કહ્યો ૫૧-૫૨

प्रासाद या गृहादिके वास्तुकार्यमे १ आय २ नक्षत्र ३ चद्र ४ गण ५ व्यय ६ तारा ७ अशक ८ राशि ९ राशि मेत्री १० ग्रहमेत्री ११ नाडी वेध १२ अधिपति १३ लग्न १४ तिथि १५ वार १६ उत्पत्ति १७ अधिपति वर्ग वेर १८ योनि वैर १९ नक्षत्र वेर २० स्थिति और २१ नाश इस तरह अिक्कीस अंङ्ग कहे। ५१-५२

गुणाश्च वहुवो यत्र दोप मेको भवेद्यदि
गुणाधिक्यं चाल्पदोप कर्तव्यं नात्र संशयः ॥५३॥

मिट्टीके और लकड़के वास्तुका स्थिर आयुष्य जानना। उस फलको दस गुना करनेसे ईंट मिट्टी और लकड़ीसे बने हुए वास्तुका आयुष्य जानना। उस फलको निन्यानवे गुना करनेसे पत्थर और सीसे से बने हुए वास्तुका आयुष्य जानना। उस फलको एक सौ सत्तर गुना करनेसे धातुसे बने हुए वास्तुका आयुष्य जानना।

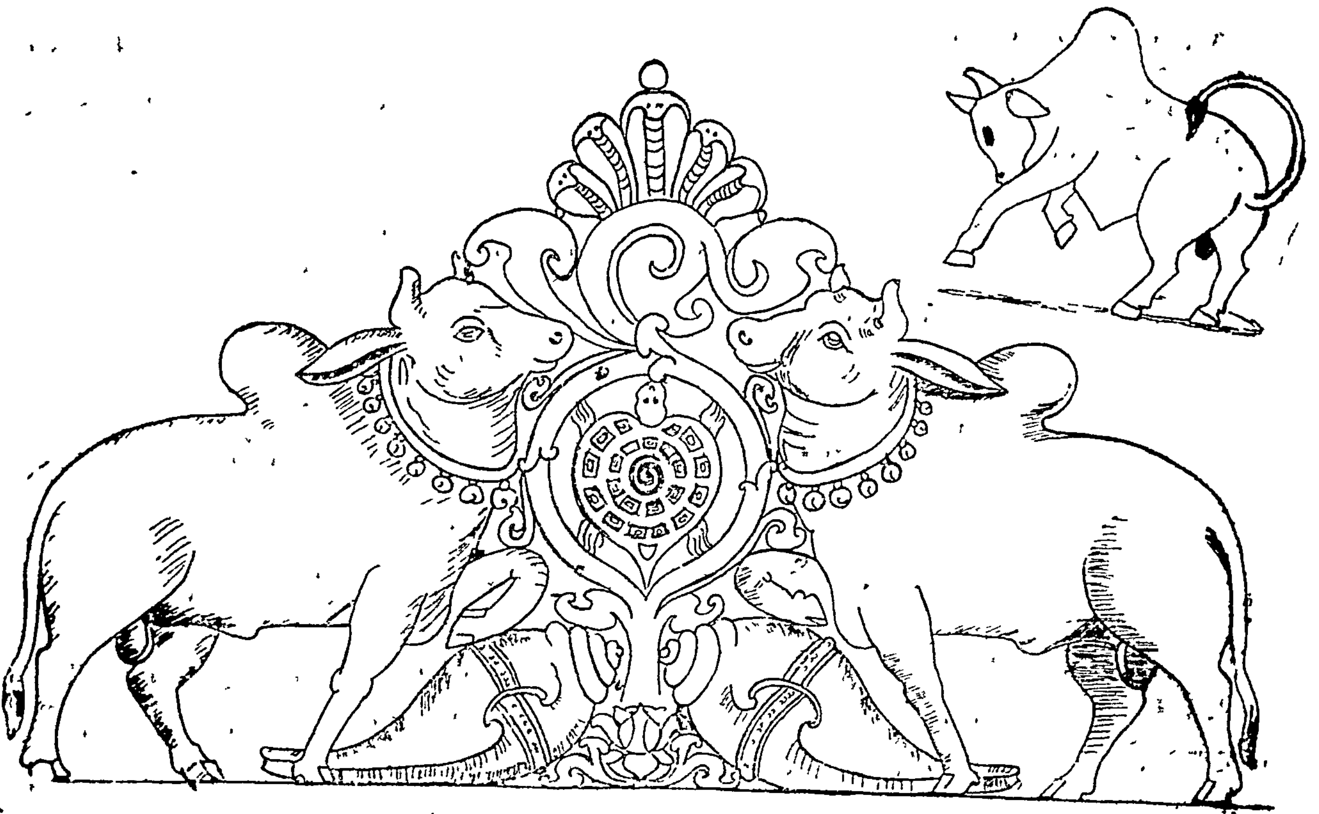
જે વાસ્તુમાં ઘણા ગુણો હોય અને કોઈ એકાદ દોષ હોય તો પણ તે અગર ઘણા ગુણો હોય અને અલ્પદોષ હોય તોપણ તેવાં કાર્ય નિર્દોષ જાણવાં. તેમાં કદિ પણ શંકા ન રાખવી જેમ અગ્નિમાં જળનાં થોડાં બિંદુ અસર કરતાં નથી તેમ તે જાણવું. ૫૩

जिस वास्तुमें बहुत गुण हों और किंचित् एक दोप हो तों भी यां बहुत गुण होने पर भी अल्प दोष होता भी तो वैसे कार्यको निर्दोष समझना। अिसमें कभी संशय नहीं करना। जिस तरह अग्निमें जलके थोडे बिन्दु असर नहीं करते हैं अिस तरह समझना। ५३

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां आयव्ययादि गणिताधिकारे नवनति तमोऽध्याय ॥९९॥ (क्रमांक अ. १)

इति श्री शिल्प विशारद स्थपति प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुरा अनुवादित विश्वकर्मा और नारदजीके संवादरुप क्षीरार्णव वास्तुशास्त्रका आयव्ययादि गणिताधिकार निन्यानबे ॥९९॥ अध्याय पर सुप्रभा नाम्नी भाषा टीका ॥९९॥ (क्रमांक अ० १)

ઈતિ શ્રી શિલ્પ વિશારદ સ્થાપિત પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરા અનુવાદિત વિશ્વકર્મા અને નારદજીના સંવાદરૂપ ક્ષીરાર્ણવ વાસ્તુ શાસ્ત્રના આયવ્યયાદિ ગણિતાધિકાર ૯૯ મા અધ્યાય પર સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકા. ૯૯



नंदी युग्मका टेकरा

जगती लक्षणम्

क्षीरार्णव अ० १००—क्रमाक अ० २

श्री विश्वकर्मा उवाच—

अथात: संप्रवक्ष्यामि जगतीं लक्षणं रिपि
प्रासादो लिङ्गमित्युक्तं जगती पीट भेवच ॥ १ ॥
सा चा मुढ दिशा भागा मनोज्ञा सर्वत. प्लवा
प्रतिहारी देवकुलं विभागा नामत' परे ॥ २ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે કે હે ઋષિરાજ, હવે હુ તમને પ્રાસાદની જગતીના લક્ષણ કહુ છુ પ્રાસાદ શિવલિંગ રૂપ છે અને જગતી પીઠ જળાધારી રૂપ જાણવી તે દિગ્મૂઢ ન હોય તેવી દિશાવિભાગમા અને મનને આનદ આપનારી અને ઉપરથી સર્વ તરફ પાણીના ઢાળવાળી તેવી જગતી શુભ જાણો તેમા દેવના પ્રતિહારો અને દેવકુળના સ્વરૂપો કરવા તેના વિભાગ પરથી (૬૪) નામો કહ્યા છે ૧–૨

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—हे ऋषिराज, अब मैं आपको जगतीके लक्षण बताता हूँ। प्रासाद शिवलिङ्ग स्वरूप है। और जगती पीठ–जलाधारी रूप है। वह दिङमूढ न हो वैसी दिशाके विभागमे और मनोरंजनी और उपरसे सर्व बाजुमे जलके ढालवाली जगतीको शुभ समझना। उसमे देवके प्रतिहारों और देवकुलके स्वरूपकरना। उसके विभाग परसे (६४) नाम कहे हैं। १–२

[1]प्रासादस्यानुमानेन जगति विस्तरो भवेत्
प्रथमा पड्गुणा प्रोक्ता द्वितीया च चतुर्गुणा ॥ ३ ॥
तृतीया द्विगुणाख्याता पँचगुणा थवा भवेत्
प्रथमा कनिष्ठा प्रोक्ता द्वितीया चैव मध्यमा ॥ ४ ॥
तृतीया ज्येष्ठ मित्युक्ता चतुर्था सर्वगा भवेत्
ज्ञातव्या क्रमयोगेन सर्वशिल्पि विशारद' ॥ ५ ॥

(१) इससे मिलते जुलते पाठ ज्ञानरत्न कोशके प्राचीन शिल्प ग्रथमें दिये हुए हैं। जगतीका अर्थ सामान्यतया प्रासादकी चारों ओरका ओटा, दूसरे अर्थमें प्रासादकी सीमा–मर्यादा अर्थात् उतने विस्तारमें उस प्रासादका दुर्ग ऐसा किया जाता है। ऐसा द्राविड शिल्पमें विशेष है। सांधार प्रासादमें सीमा मर्यादा, दुर्ग–किला ऐसा मेरा नम्र अभिप्राय है। निरंधार प्रासादके

પ્રાસાદના વિસ્તાર માનથી જગતીનું વિસ્તાર માન કહે છે. પહેલી છ ગણી જગતી કનિષ્ઠ માનને કહી છે. બીજી ચારગણી મધ્યમાનને કહી છે. અને ત્રીજી બમણી જગતી પહોળી રાખવાનું જ્યેષ્ઠ માનને કહ્યું છે. અને ચોથું પ્રાસાદથી પાંચ ગણી જગતી પહોળી રાખવાનું સર્વને કહ્યું છે. એ રીતના ક્રમયોગથી સર્વ શિલ્પના જ્ઞાતા વિશારદે જાણવું. ૩–૪–૫

प्रासादके विस्तारमानसे जगतीका विस्तारमान कहा जाता है। प्रथमा छः गुनी जगती कनिष्ठमानको कही है। दूसरी चार गुनी मध्यमानकी कही है। और तीसरी दूगुनी जगती चौडी रखनेका ज्येष्ठ मानको कहा है। और चौथी प्रासादसे पाँच गुनी जगती चौडी रखनेके लिये सर्वको कहा है। इस प्रकारके क्रम योगसे सर्व शिल्पके ज्ञाता विशारदोंको समझना। ३–४–५

भ्रमणी कन्यसे चैका मध्यमे भ्रमणी द्वयम्
ज्येष्ठया त्रय भ्रमण्या च शाला त्रिशालिका ॥ ६ ॥
भ्रमणी त्रिभागोत्सेधे यावत् मूल प्रासादकम्
तथैवानुक्रमैर्वृद्धि भ्रमेण्यो परिज्ञायते ॥ ७ ॥

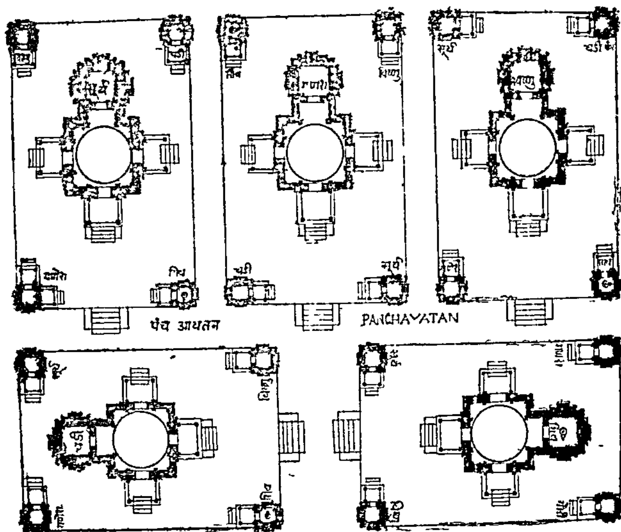
કનિષ્ઠ માનને એક ભ્રમણી કરવી. મધ્યમાનને બે ભ્રમણી (નીચે ઉપર બે ટપ્પે બે ભ્રમ પ્રદક્ષિણા) કરવી અને જેષ્ઠ માનને ત્રણ ભ્રમણી (ત્રણ ટપ્પે પ્રદક્ષિણા) કરવી. આગળ શાલા કે ત્રિશાલ કરવી. ભ્રમણીના ટપ્પાની ઊંચાઈ–મૂળ પ્રાસાદથી ત્રણ ભાગ કરીને રાખવી તેવા ક્રમ અને યોગથી તેની ઉપર કરતાં નીચેની વૃદ્ધિ રાખવી. ૬–૭

कनिष्ठमानको एक भ्रमण करना। मध्यमानको दो भ्रमणी (नीचे उपर दो टप्पेमें दो भ्रम प्रदक्षिणाएं) करना। और ज्येष्ठमानको तीन भ्रमणी (तीन टप्पों में प्रदक्षिणाएं करना। आगे शाला या त्रिशाला करना। भ्रमणीके टप्पेकी ऊँचाई

मंदिरोंको चारों ओरका ओटा यह अर्थ बराबर लगता है। उसके उदयमें घाट हो और निरंधार प्रासादोंमें दुर्गके आगे प्रवेश द्वार उसके पर गोपुरम् और प्रतोली ऐसा द्रविड मंदिरोंमें वर्तमानमें देखा जाता है।

(૧) આને મળતા પાઠો જ્ઞાનરત્નકોશના પ્રાચીન શિલ્પગ્રંથમાં આપેલ છે. જગતી એટલે સામાન્ય રીતે પ્રાસાદની ફરતો ઓટલો. બીજા અર્થમાં પ્રાસાદની સીમા મર્યાદા એટલે તેટલા વિસ્તારમાં તે પ્રાસાદનો ગઢ કે કિલ્લો કરવામાં આવે છે, આવું દ્રવિડ શિલ્પમાં વિશેષ છે. સાંધાર પ્રાસાદમાં સીમા મર્યાદા દુર્ગ કિલ્લો એમ મારો નમ્ર અભિપ્રાય છે નિરંધાર પ્રાસાદનાં મંદિરોને ફરતો ઓટલો અર્થ વધુ બંધ બેસે છે. તેના ઉદયમાં ઘાટ થાય અને સાંધાર પ્રાસાદોમાં પ્રાસાદની સીમા મર્યાદાના દુર્ગને આગળ દરવાજો તેના પર ગોપુરમ્ પ્રતોલી આવું દ્રાવિડ મંદિરોમાં હાલમાં જોવામાં આવે છે.

मूल प्रासादसे तीन भागकी करके रखना। वैसे क्रम और योगसे उसकी उपरसे अधिक नीचेकी वृद्धि करना। ६–७

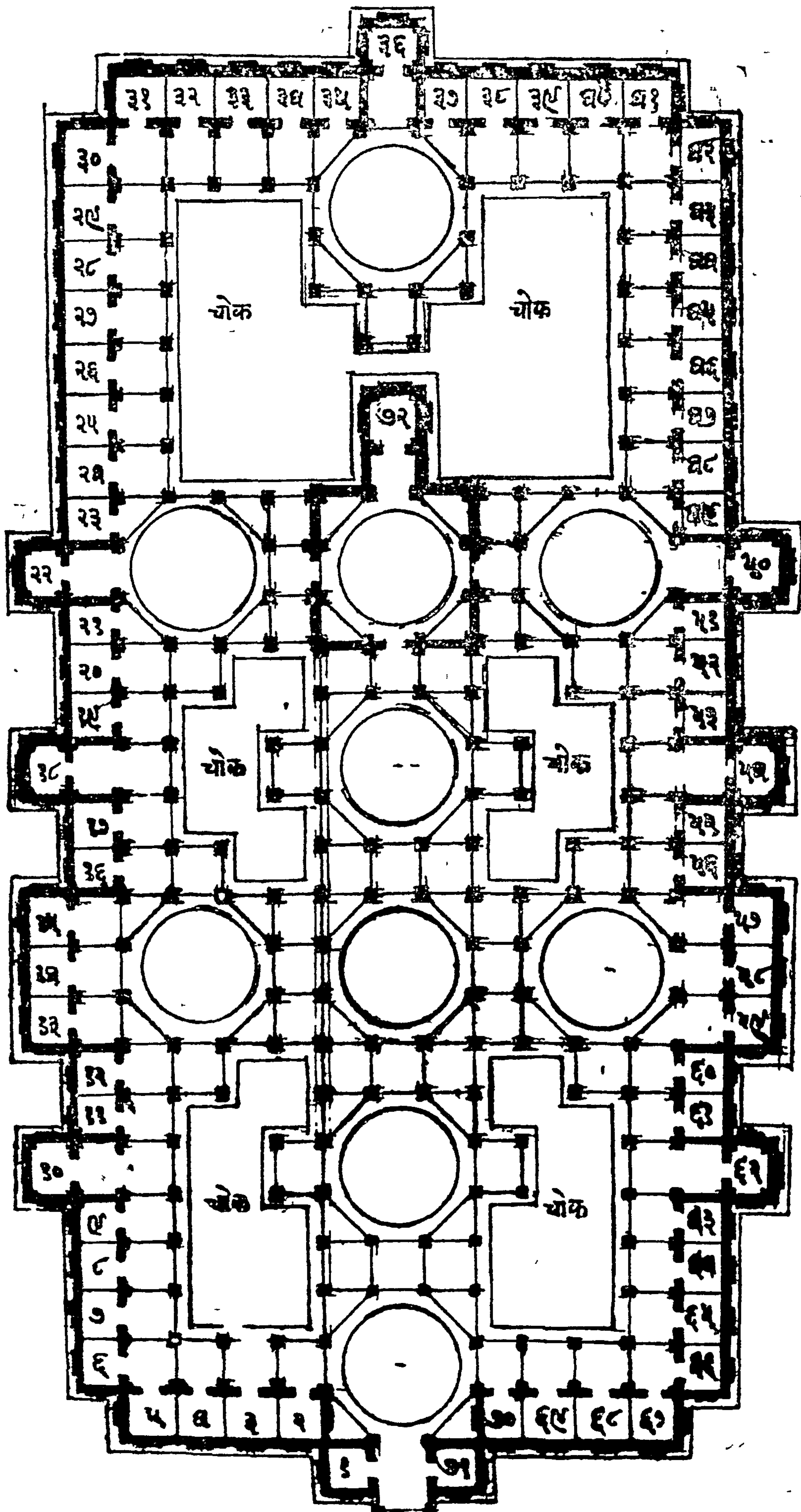


पचदेवोका पचायतन–जगती

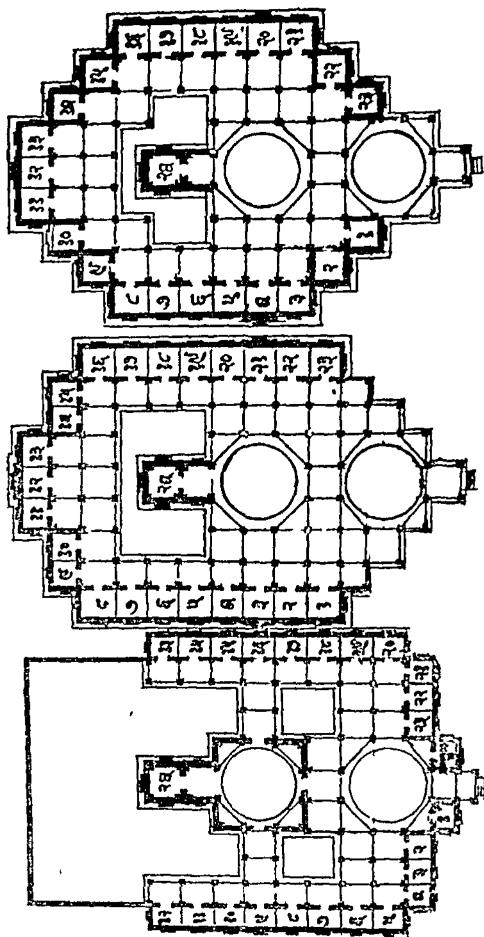
[२]करद्वादशेऽर्धांश शालात्र्यंशं द्वाविंशके
द्वात्रिंशतिश्चतुर्थांशं सा भूताश शताधिके ॥ ८ ॥
एव मन्यश्चंकर्तव्यो जगतीनां समुच्छ्रयं ॥ ९ ॥

(२) जगतीकी ऊंचाईका दूसरा मान भी अन्य ग्रथोमे कहा गया है। १ हाथके प्रासादको १ हाथ तक जगती करना, दो हाथके प्रासादको डेढ हाथ ऊँची जगती करना। तीन हाथके प्रासादको दो हाथकी चार हाथके प्रासादको ढाई हाथकी–पाँचसे बारह हाथके प्रासादको जगतीकी ऊँचाई प्रासादके अर्ध भागकी करना। तेरहसे चौवीस हाथके प्रासादको प्रासादके तीसरे भाग पर जगती ऊँची करना। पचीससे पचास हाथके प्रासादको जगतीकी उँचाई प्रासादके चौथे भाग पर ऊँची करना। इस तरह दूसरा मान कहा है। जगतीको सन्मुख ज्यादा रखनेके लिये कहा है क्यो कि आगे देखना हो तो महोत्सव हो सके।

(૨) જગતીની ઊચાઈનુ બીજુ માન અન્ય ગ્રથોમા કહે છે એક હાથના પ્રાસાદને ૧ હાથ સુધી જગતી કરવી, બે હાથના ને દોઢ હાથ ઊચી જગતી કરવી ત્રણ હાથના ને



बावन जिनायतन की जगती



तीन प्रकारे चोविस जिनायतन क्रम और उसकी जगती

એક થી બાર હાથ સુધીના પ્રાસાદની જગતી પ્રત્યેક ગજે અર્ધા અર્ધા ગજની ઊંચી કરવી. તેર થી બાવીશ હાથના પ્રાસાદને ગજના ત્રીજા ભાગની (આઠ આઠ આંગળની વૃદ્ધિથી ઊંચી કરવી. તેત્રીશથી પચાસ હાથના પ્રાસાદની જગતી પ્રાસાદના પ્રત્યેક ગજે ગજના પાંચમા ભાગની (ચાર આંગળ અને ૬॥ દોરા) ની વૃદ્ધિથી ઊંચી કરતા જવું. એ રીતે જગતીની ઊંચાઈનું માન જાણી કરવું. ૮–૯

एकसे बारह हाथ तकके प्रासादकी जगतीको प्रत्येक गज पर आधे गजकी उँची करना। तेरहसे बाईश हाथके प्रासादकी जगतीको गजके तीसरे भागकी (आठ आठ अँगुलकी वृद्धि से) करना। तेईशसे बत्तीस हाथके प्रासादकी जगतीको गजके चौथे भागकी (छः छः अंगुलकी वृद्धि से) ऊँची करना। तेतीस से पचास हाथके प्रासादकी जगतको–प्रासादके प्रत्येक गज पर गजके पाँचवें भागकी (चार अंगुल–६½ धागेकी वृद्धिसे) ऊँची करते जाना। इस प्रकार जगतीकी ऊँचाईका मान जान लेना। ८–९

[१]रससप्तगुणा ख्याता युक्तिपर्याय संस्थिता
योगिन्योत्रिपुरुषे च सहस्रायतनो शिव ॥ ८ ॥

બે હાથની, ચાર હાથના ને અઢી હાથની, પાંચથી બાર હાથનાનો જગતીની ઊંચાઈ પ્રાસાદના અર્ધ ભાગે કરવી. તેરથી ચોવીશ હાથના પ્રાસાદના ત્રીજે ભાગે જગતી ઊંચી કરવી. પચ્ચીશથી પચાસ હાથના પ્રાસાદને જગતીની ઊંચાઈ પ્રાસાદના ચોથે ભાગે કરવી. આમ બીજું માન કહેલ છે. જગતી સન્મુખ વધુ નીકળતી રાખવાનું કહ્યું છે. આગળ જગ્યા હોય તો મહોત્સવો થાય.

(३) जगतीके विस्तारके लिये तो श्लोक ८ में कहा गया है। इसके अनुसार मुख्य मंदिरकी चारों ओर सहस्रलिङ्ग का आयतन, चौबीस अवतारके चारों ओर मंदिर, ब्रह्माके चार रूपके चारों ओरके मंदिर, शिवके ग्यारह रूद्रके मंदिर, चौसठ योनियोंकी ६४ देव कुलिकायें, जिन–तीर्थंकरकी फिरती चौबीस बावन, वहोंतर या एकसौ आठ जिनायतन देवकुलिकाअे, गणपतिके ३२ स्वरूपकी देवकुलिकायें, इस तरह अन्य देव–देवियोंके विशेष पर्याय रूपोंकी चारों ओर देव कुलिकाओंसे युक्त प्रासाद और पंचायतन करनेका हो तब वह छः सात गुने से भी विशेष विस्तारमें लेना पड़ता है, उससे कम भी हो सकता है।

(૩) જગતીના માટેનો શ્લોક ૮ માં કહ્યા પ્રમાણે મુખ્ય મંદિર ફરતું સહસ્રલિંગનું આયતાન, ચોવીશ અવતારનાં ફરતાં મંદિરો બ્રહ્માનાં ચાર રૂપનાં ફરતાં મંદિરો શિવના એકાદશ રૂદ્રનાં મંદિરો, ચોસઠ યોગિનીઓની દેવ કુલિકાઓ, જિન તીર્થંકરના ફરતી ૨૪ ૫૨–૭૨ કે ૧૦૮ જિનાયતન દેવકુલિકાઓ, ગણપતિના બત્રીશ સ્વરૂપની દેવકુલિકાઓ એ રીતે અન્ય દેવદેવીઓના વિશેષ પર્યાય રૂપોની ફરતી દેવકુલીકાઓ યુક્ત પ્રાસાદ કરવાનો કે પંચાયત મંદિર હોય ત્યારે તે ૭ સાત ગણાથી પણ વિશેષ વિસ્તારમાં લેવું પડે છે, તેથી ઓછું પણ થાય.

પરિવાર સાથેના મંદિરોને એટલો ચોસઠ યોગિનીઓ, વિષ્ણુના ચોવીશ અવતારના આયતનો કે શિવના સહસ્રાયતનની દેરીઓ (કે જિન તીર્થંકરોના ૨૪-૫૨-૭૨-૮૪ કે ૧૦૮ જિનાયતનો) ના પચાટાતન મંદિરો સારુ તેના પ્રમાણથી યુક્તિથી તેનો વિસ્તાર છ સાત ગણો જગતીનો રાખવો ૮

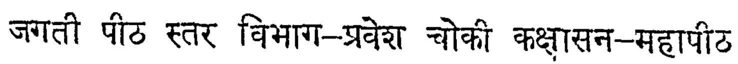
परिवारके साथके मंदिरोंको चौसठ योगिनीयों, विष्णुके चौवीस अवतारके आयतनो या शिवकी सहस्रायतनी देरियाँ (जिन-तीर्थकरोंके २४-५२-७२-८४ या १०८ जिनायतनों) के लिये उसके प्रमाणकी युक्तिसे उसका विस्तार छ सात गुना रखना । ८

एतत्ता जगत्योदयं (संगृह्य) सप्तसार्ध विभाजते
भागार्धखुरकं ज्ञेयं पादोनं जाड्य कुंभकम् ॥१०॥
भागार्धकर्णकं कुर्यात् पादोनं सरपत्रिका
भागार्ध खुरकं कार्यं सार्ध भाग तु कुंभकम् ॥११॥
पादोनं भाग मुत्सेधं कलशं कुर्याद्विचक्षण'
भागार्धन्नातरंपत्र पादोन कपोतिका ॥१२॥
पुष्पकंठच भागेकं निर्गमं भाग द्वयम्
एतत् कथितं सर्वं जगतीना समुछ्रिया ॥१३॥

જગતીના આવેલા ઉદય માનમા સાડાસાત ભાગ કરવા તેમા અર્ધા ભાગનો ખરો, પોણા ભાગનો જાડબો, અર્ધા ભાગની કણી, પોણા ભાગની છજીઆસ પટ્ટી તે ઉપર અર્ધા ભાગનો ખુરો, દોઢ ભાગનો કુંભો, પોણા ભાગનો કળશો, અર્ધા ભાગની અંધારી, પોણા ભાગની કેવાળ અને એક ભાગનો પુષ્પ કંઠ ગલતો (પહોળી અંધારી સાથે) કરી તેનો નીકાળો (અંધારીથી ખરા સુધીનો) બે ભાગનો રાખવો આ જગતીની ઊંચાઈના ભાગ કહ્યા

जगतीके आये हुए उदयमानमे साढेसात भाग करना । उसमे आधे भागका खरा, पौने भागका जाडवा, आधे भागकी कणी, पौने भागकी छजीआसपट्टी उसके उपर आधे भागका खुरा, डेढ भागका कुंभा, पौने भागका कलश, आधे भागकी अधारी, पौने भागकी केवाल, और एक भागका पुष्पकंठ गलता (चौडी अधारीके साथ) कर उसका नीकाला (अधारीसे खरे तकका) दो भागका रखना । इस तरह जगतीकी ऊँचाईके भाग कहे । १०-११-१२-१३

देव्यासुदिक्पालाश्च यथा स्थानंप्रकल्पयेत्
प्रासाद पश्चिमे भद्रे जगत्या त्रय कुमारिका ॥१४॥



जगती. JAGATI.

प्रभाशंकर.ओघडभाइ.सोमपुरा.
स्थपति. पालीताणा.(सौराष्ट्र)

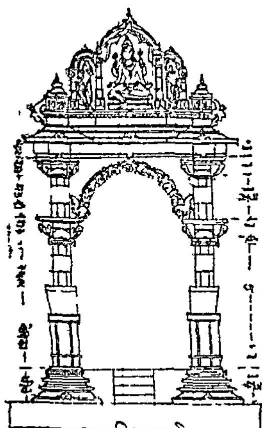
जगती पीठ स्तर विभाग–प्रवेश चोकी कक्षासन–महापीठ

દેવ પ્રાસાદની જગતીમાં–ઉદયમાં યથાસ્થાને દિશા પ્રમાણે દિક્પાલોના સ્વરૂપો વગેરેનાં સ્વરૂપો કરવાં. પ્રાસાદની પાછળ જગતીના ભદ્રમાં ત્રણ કુમારિકાઓ નાં પ્રાતઃ મધ્યાહ્ન ને સંધ્યાનાં સ્વરૂપો કરવાં ૧૪

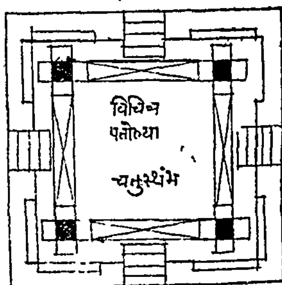
देव प्रासादकी जगतीके उदयमे यथास्थान पर दिशाके अनुसार दिग्पालोंके स्वरूप वगैरह देवोंके स्वरूप करना । प्रासादके पीछे जगतीके भद्रमे तीन कुमारिकाओंका (प्रातः मध्याह्न और संध्याके) स्वरूप करना । १४

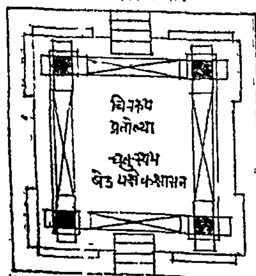
प्रासाद विस्तरं तुल्यं प्रासादार्द्ध प्रमाणत
पादेनं वाथ कर्तव्यं सोपाना याम किर्त्तित ॥१५॥
शुंडिकासन विज्ञेया तत्पदे गंड विस्तरम्
द्वितीयं तत्समं ज्ञेयं शुंडिकोऽभय' स्थिता ॥१६॥

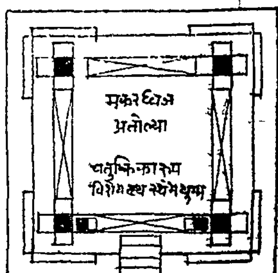
प्रतोल्या स्वरूप



चित्ररूप दर्शन







P.O.S.

भद्रनिर्गम तुल्यं तु जगती गंड निर्गमा
द्वितीयं तत्समं कार्यं प्रतिहारास्तदग्रत ॥१७॥
मूल नायक यन्मानं तन्मानात्पादवर्जितं
तत्समं प्रतिहारा द्वारेच वामदंक्षिणे ॥१८॥

પ્રાસાદ જેટલો કે તેથી અર્ધ કે પોણા ભાગના પહોળા આગળ પગથિયાં કરવાં. બે બાજુ હાથીની સુંઢની આકૃતિના ચોથા ભાગે ગંડસ્થળ હાથણીઓ પહોળો રાખવો. બીજો તેના જેટલો બે બાજુ હાથણીઓ કરવી. ભદ્રના નીકાળા બરાબર જગતીના ગંડસ્થળનો નીકાળો રાખવો. બીજો પણ તેટલો જ કરવો. અને તેનાથી આગળ નિકળતા પ્રતિહારોનાં સ્વરૂપો કરવાં મૂળ નાયકમૂળ મંદિરમાં પધરાવેલ દેવના માનથી તેનાથી પોણા કે તેટલા પ્રતિહારનાં સ્વરૂપો ડાબી જમણી તરફ કરવાં. ૧૫-૧૬-૧૭-૧૮

प्रासादके बराबर या उससे आधे या पौने भागके चौडे पगथिये आगेके भागमें करना। दोनों तरफ हाथीकी सुंढकी आकृति, चौथे भागपर गंडस्थल विशाल रखना। दूसरा भी उसके बराबर, दोनों तरफ हाथिने करना। भद्रके नीकालेके बराबर जगतीके गंडस्थलका नीकाला रखना। दूसरा भी उतना ही करना। और उसमेंसे आगे निकलते प्रतिहारोंके स्वरूप करना। मूल नायक–मूल मंदिरमें पधराये हुए देवके मानसे उससे पौने या उसके बराबर प्रतिहारके स्वरूप बायीं दायीं ओर करना। १५–१६–१७–१८

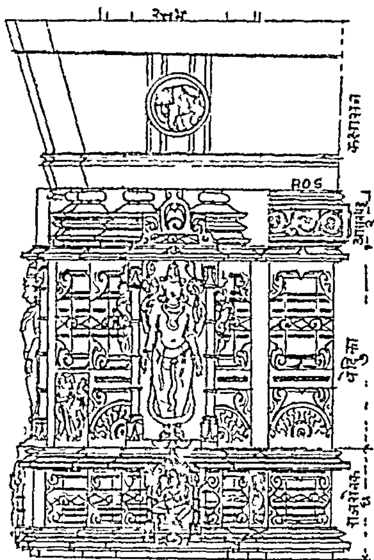
बलाणक जगत्योर्द्ध्वे ग्रस्त वामन नामत:
जगत्योपरिमत्तवारण सन्मुखो वामदक्षिणे ॥१९॥

જગતીની ઉપર આગળ નીકળતું અગર જગતીના ઉદયમાં સમાય તેટલી ઊંચાઈના મંડપને તે પર વામન નામનું બલાણક કહ્યું છે. જગતીની ઉપર (બલાણક કરતાં બાકી રહે ત્યાં) સન્મુખ અને ડાબી જમણી તરફ મત્તવારણ કક્ષાસનો કરવાં.

जगतीके उपर आगे निकलता अगर जगतीके उदयमें समा सके [१६]इतनी ऊँचाई के मंडपको उसके पर 'वामन' नामक बलाणक कहा है। जगतीके उपर (बलाकण करते बाकी रहे वहाँ) सन्मुख और बायीं–दायीं तरफ मत्तवारण कक्षासनों करना। १९

राजसेनश्चतुर्भागे भारपुत्तलिकायुत:
वेदिका रुपसंघाटै: सप्तभाग समुच्छ्रितै ॥२०॥
द्विपदचासनपदं कूटागारै: समन्वितम्
लिलासनं सुखार्थे च कक्षासन करोन्नतम् ॥२१॥

જગતી ઉપર મત્તવારણ કરવાના ભાગ કહે છે ગજસેનક ચાર ભાગનુ કરવુ તેમા ભાગ પુત્તલીકાના લામના સાથે તે કરવુ સાત ભાગ ઊંચી વેદિકા દેવગધર્વાદિ સ્વરૂપ અને વેણી રાશિયાના ઘાટવાળી કરવી તે પર બે ભાગ જાડો ચપટ થરનો આસન પટ્ટ કરવો તેમા આગળના ભાગમા કૂટ–ગ્રામ-મુખ અને દોઢીયા વગેરે ઘાટ-વાળા સુદર બનાવવા તેના પર સુખથી તકીયાની જેમ બેસવાને કક્ષાસન એક હાથ ઊચુ કરવુ ૨૦-૨૧

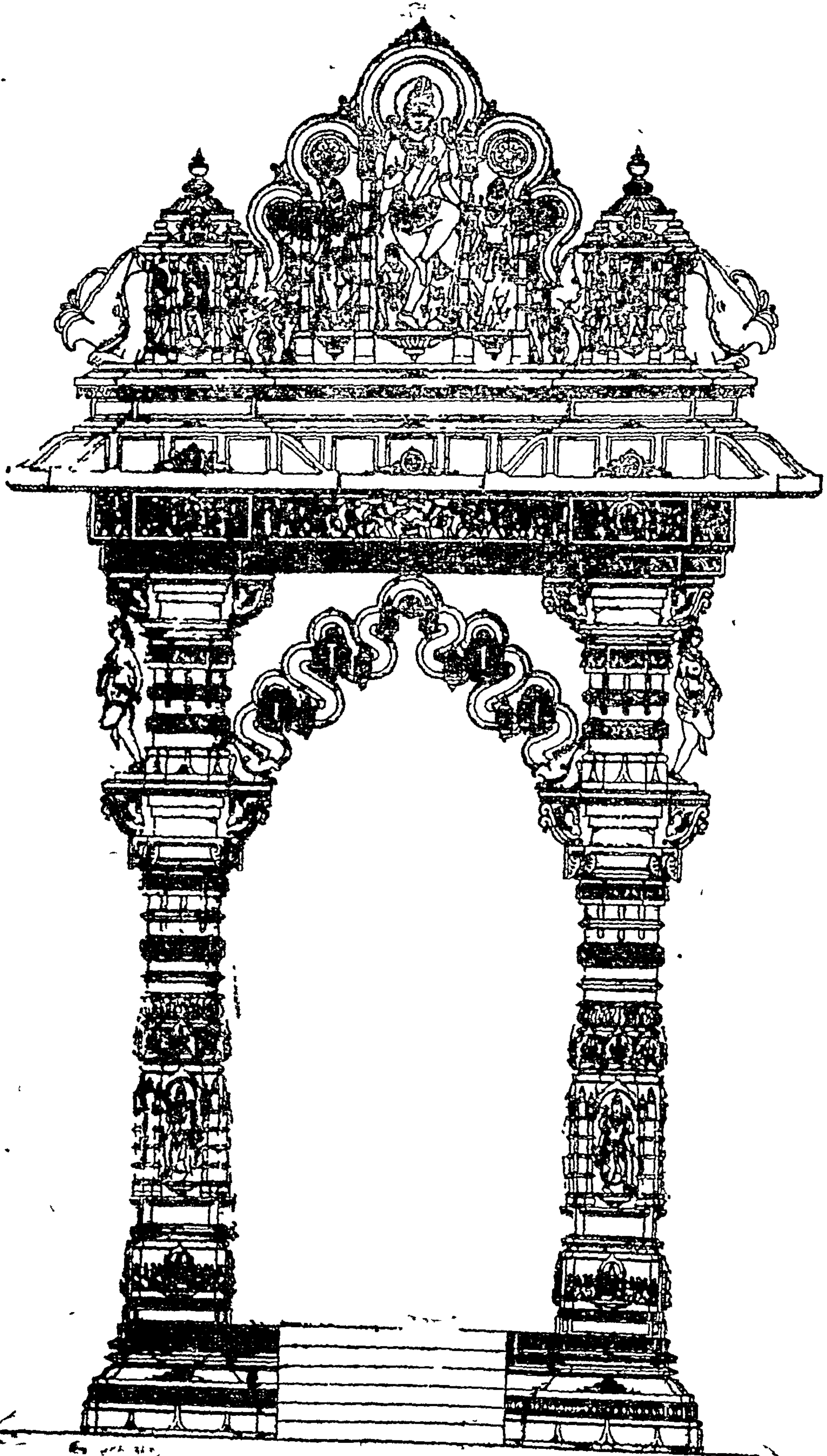


राजसेनक, वेदिका, आसनपट, कक्षासन

जगतीके उपर मत्तवारण करनेके भाग कहते हैं। राजसेनक चार भागका करना। उसमे भारपुत्तलिकाका लामसाके साथ वह करना। सात भाग ऊँची वेदिका देव गधर्वादि स्वरूप (और वेनी राशियाके) घाटवाली करना। उसके पर दो भाग मोटा सपाट थरका आसनपट करना। उसमे आगे के भागमे कूट ग्राममुख और दोढिया वगैरह घाटवाला सुदर बनाना। उसके पर सुखसेम सनदकी तरह बैठनेके लिये कक्षासन एक हाथका ऊचा करना। २०–२१

मंडपाग्रे शृंडिकाग्रे च प्रतोल्याग्रे तथैव च।
तोरणं त्रिविधं ज्ञेयं ज्येष्ट मध्य कनिष्ठकम् ॥२२॥
स्तंभगर्भे भित्तिगर्भे तन्मध्ये च विचक्षण'
तोरण स्योभय स्तंभे ब्रह्मगर्भेतु संस्थितो ॥२३॥

મડપની આગળ પગથિયા, હાથણીનો આગળ પ્રતોલ્યા કરવી તે તોરણ ત્રણ પ્રકારના જયેષ્ઠ મધ્યમ અને કનિષ્ઠ એ ત્રણ માનના તોરણ કરવા ચોકીના સ્થભના ગર્ભ ૨ પ્રાસાદની ભિતના ગર્ભ ૩ તે બે વચ્ચે એટલે ચોકી થાભલા



पीठयुक्त रूपस्तम्भ–इलिका तोरण–प्रवेश प्रतोल्या

ભિંતની વચ્ચે એમ ત્રણ પ્રકારે મધ્યનો ઊભો બ્રહ્મગર્ભ સાચવીને તેની બે બાજુ તોરણના સ્થંભો ઊભા કરવા. ૨૨–૨૩

मडपके आगे पगथिये, हाथिनके आगे प्रतोल्या करना। उसमें तोरण तीन प्रकारके ज्येष्ठ, मध्यम और कनिष्ठ मानके करना। १ चौकीके स्तभ के गर्भ २ प्रासादकी दिवारके गर्भ ३ इन दोनोंके विच अर्थात् चौकी, स्तभ और दिवारके विच गर्भ ये तीन प्रकारसे मध्यके खडे ब्रह्म गर्भको सम्हालकर उसकी दोनों तरफ तोरणके स्तभ करना। २२—२३

व्योमो वृषभ सिंहश्च गरुडो हंस एव च
एकादि सप्तातर चतुष्किका कर्तु फलप्रदा ॥२४॥

વિમાન નદી સિંહ ગરુડ કે હંસ આદિ દેવવાહનોનુ સ્થાન એક થી સાત પદના અતરે ચતુષ્કિા કરીને કરવુ કે મંડપ કરવાથી કર્તાને ફળ મળે છે ૨૪

विमान, नदी, सिंह, गरुड, या हस आदि देव वाहनोंका स्थान एक से सात पदके अतरसे चतुष्किका करके करना जिससे मडप करनेसे कर्ताको फल मिलता है। २४

प्रतोली चाग्रत कार्या कपाटपुट संयुता
दृढार्गला च कर्तव्या कथ्यतेऽथोच्छ्रय ॥२५॥

પ્રતોલ્યાની આગળ ગઢ-દુર્ગના મજબુત આગળિયાવાળા કમાડની જોડ કરવાનુ કહ્યુ છે ૨૫

प्रतोल्याके आगे दुर्गके मजबूत आधारवाले किवाड़की जोड करनेके लिये कहा है। २५

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छाया जगती लक्षणाधिकारे शत तमोऽध्याय ॥ १०० ॥ (क्रमाक अ० २)

ઈતિ શ્રી શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ પ્રભાકર ઓઘડભાઈ સોમપુરા અનુવાદિત શ્રી વિશ્વકર્મા અને નારદજીના સવાદરૂપ ક્ષીરાર્ણવ વાસ્તુશાસ્ત્રના જગતી લક્ષણાધિકારના ૧૦૦ મા અધ્યાય પર સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકા. (૧૦૦)

इति श्री शिल्पविशारद स्थपति प्रभाशकर ओघडभाई सोमपुरा अनुवादित श्री विश्वकर्मा और नारदके सवादरूप क्षीरार्णव वास्तुशास्त्रके प्रासाद जगती लक्षणाधिकारके १०० वें अध्याय पर सुप्रभा नामकी भाषा टीका। १०० (क्रमाक अ० २)

॥ अथ कूर्मशिलानिवेशनम् ॥

क्षीरार्णव अ० १०१—क्रमांक अ० ३

श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे शिला वेदाङ्गुला भवेत।
द्व्यंगुला भवेद्वृद्धि यावत्दशहस्तकं ॥ १ ॥
दशोर्ध विंशपर्यंत हस्ते हस्तैक मंगुलं।
अर्धांगुलं भवेद्वृद्धि यावत्हस्त शतार्द्धकं ॥ २ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા નારદજીને કહે છે. પ્રાસાદની કૂર્મશિલાનું માન કહું છું. એક હાથના પ્રાસાદને ચાર આંગળની કૂર્મશિલા કરવી. એથી દસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે બબ્બે આંગળની વૃદ્ધિ કરવી દસ થી વીસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે એકેક આંગળી વૃદ્ધિ કરવી. એક વીસથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે અર્ધા અર્ધા આંગળની વૃદ્ધિ પાષાણની કૂર્મશિલાની કરવી.[1] ૧–૨

श्री विश्वकर्मा नारदजीको कहते हैं। कूर्मशिलाका मान कहते हैं। एक हाथके प्रासादको चार अँगुलकी कूर्मशिला करना। दोसे दस हाथके प्रासादको प्रत्येक हाथपर दो दो अँगुलकी वृद्धि करना। दससे वीस हाथके प्रासादको प्रत्येक हाथपर एक एक अँगुलकी वृद्धि करना। इकीससे पचास हाथके प्रासादको प्रत्येक हाथपर आधे आधे अँगुलकी वृद्धि पाषाणकी कूर्मशिलाकी करना।[1] १–२.

तृतीयांशे कृते पिंड स्तदोर्ध्वक्षोभमामकं।
पुष्परम्य यदाकारं शिलामध्येमलंकृतम् ॥ ३ ॥
लहेरं च मच्छ मंडूकं मकरे ग्रासमेव च।
शंख सर्प घटयुक्तं कूर्ममध्येमलकृतम् ॥ ४ ॥

આવેલ કૂર્મશિલાના માનથી (સમ ચોરસ કરવી.) કહેલા માનથી ત્રીજે ભાગે જાડી કરવી. તેના ઉપરના ભાગમાં પુષ્પના આકાર રમ્ય એવી આકૃતિ નવ ખાનાં પાડીને અલંકૃત કરવી. કોતરવી. તે નવ ખાનામાં ૧ જળની લહેર ૨

---

૧. પ્રાસાદના પ્રત્યેક પ્રમાણોમાં જ્યાં જ્યાં હાથ કહેલાં છે ત્યાં એનો ગજ અથવા ૨૪ આંગળ સમજવો. હાથ = ગજ = ૨૪ આંગળ.

(१) प्रासादके प्रत्येक प्रमाणमें जहाँ जहाँ हाथ कहे हैं, वहाँ हाथका अर्थ गज या २४ अँगुल समजना। हाथ = गज = २४ अँगुल।

માછલી ૩ દેડકો ૪, મગર ૫ ગ્રાહ ૬ શંખ ૭ સર્પ ૮ કુંભ અને મધ્યમા કૂર્મ કોતરવા (જળચરાદિ જીવો અને શુભ ચિહ્નો કોતરવા)[२] ૩-૪

आये हुए कूर्मशिलाके मानसे (समचोरस करना) कहे हुए मानसे तीसरे भागकी मोटी करना। उसमे उपरके भागमे पुष्पके आकारम रम्य ऐसी आकृति नौ स्थाने बनाकर अलंकृत कर कोतरना। उन नौ स्थानोंमे १ जलकी लहर २ मछली ३ मेंडक ४ मगर ५ ग्राह ६ शंख ७ सर्प ८ कुंभ और मध्यमे कूर्म कोतरना (जलचरादि जीवो और शुभ चिह्नोंको कोतरना।)[२] ३-४

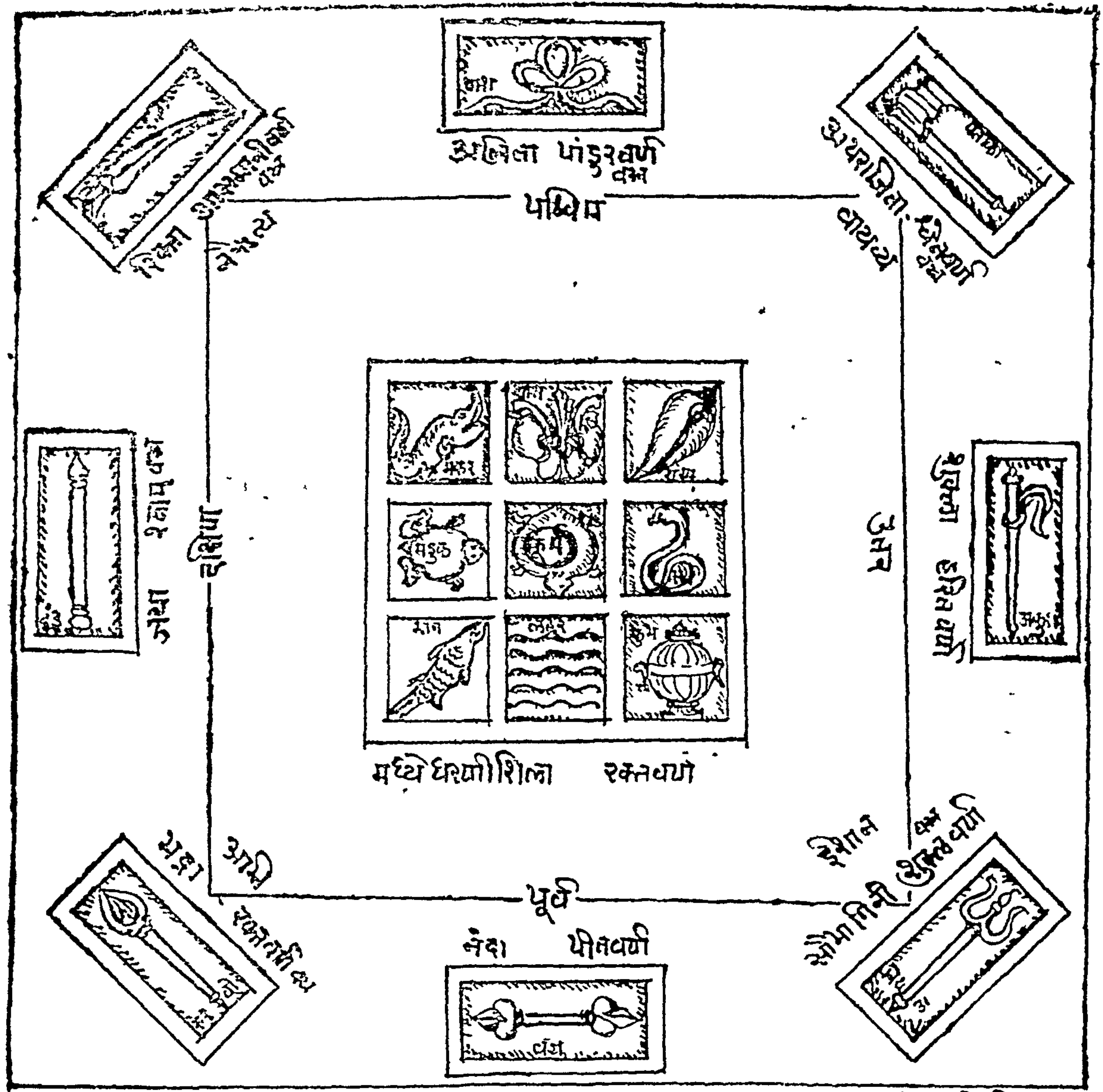
२ अ શ્રી વિશ્વકર્માએ પાષાણની કૂર્મ શિલામા લહેર, મચ્છ મેડક આદિ આઠ આકૃતિ કોતરવાનુ કહ્યુ છે પરંતુ તે સ્વાભાવિક રીતે પૂર્વાદિ દિશાના ક્રમે કોતરવી જોઇએ તેમ શિલ્પિઓનો કેટલોક વર્ગ માને છે પરંતુ સૂત્રધાર વીરપાલ વિરચિત બેડાયા 'પ્રાસાદ તિલક' નામના ગ્રંથમા આ આકૃતિઓ અગ્નિકોણના ક્રમથી દિશા વિદિશામા નામ કહીને સ્પષ્ટ આપેલ છે આ મતે પણ કેટલાક શિલ્પીઓ તેમ કરે છે વૃદ્ધોની એક પરંપરા એમ માને છે કે ગમે તે દિશા હોય પણ જ્યા દ્વાર હોય તેજ પૂર્વ માનીને દ્વારની તરફ લહેર આવવી જોઈએ તેથી યજમાનનુ કલ્યાણ થાય અને લીલા લ્હેર થાય વૃદ્ધોની આ માન્યતાને અનુવાદક આપે છે

(ब) કૂર્મ શિલાનુ જે માન કહ્યુ હોય તે પ્રમાણની સમચોરસ અને ૧/૩ ભાગની જાડાઈની શિલા મધ્યની કરવી પરંતુ નંદા ભદ્રાદિ આઠ શિલાઓનુ માન કે માપ આપેલુ નથી પરંતુ પરંપરાથી તેનુ માન કૂર્મશિલા જેટલી લાંબી અને લંબાઈમા અર્ધ પહોળી અને પહોળાઈમા અર્ધ જાડી અગર મધ્યની કૂર્મ શિલા જેટલી જાડી આઠ શિલાઓ દિશા અને વિદિશામા સ્થાપન કરવી આઠ શિલાના માન માપની એ પ્રથા છે જ્યા માન માપ કહ્યા ન હોય ત્યા તે સંબંધમા ખોટા વાદ વિવાદમા ઉતરવુ નહિ વૃદ્ધોની પરંપરાને અનુસરવુ

(२) "अ" श्री विश्वकर्माने पाषाणकी कूर्मशिलामे लहर-मच्छ-मेंडक आदि आठ आकृतियाँ कोतरनेके लिये कहा है, लेकिन वह स्वाभाविकतासे पूर्वादि दिशाके क्रमसे कोतरनी चाहिये, ऐसा शिल्पीओंमे से कोई वर्ग मानता है। परन्तु सूत्रधार वीरपाल विरचित बेडाया 'प्रासाद तिलक' नामके ग्रंथमे ये आकृतियाँ अग्निकोण के क्रमसे दिशा विदिशामें नाम कह कर स्पष्ट बतायी गयी हैं। इस मतके अनुसार भी कई शिल्पीयाँ करते हैं। वृद्धोंकी परंपरा का मत है कि कोई भी दिशा हो लेकिन जहाँ द्वार हो वही पूर्व मानी गयी है। द्वारकी तरफ लहर आनी चाहिये। इससे यजमानका कल्याण होता है और आनंद मंगल होता है। वृद्धोंकी इस मान्यताको अनुवादक मान लेता है।

(ब) कूर्मशिलाका जो मान कहा हो उसके प्रमाणकी समचोरस और १/३ तीसरे भागके मोटेपनकी शिला मध्यकी करना। परंतु नंदा भद्रादि अष्ट शिलाओंका मान या माप नहीं दिया है, तो भी परंपरासे उसका मान कूर्मशिलके बराबर लम्बी और लम्बाईमें आधी चौडी और चौडाइमें आधी मोटी अगर मध्यकी कूर्मशिलाके बराबर मोटी अष्ट शिलाओंको दिशा और विदिशामें स्थापन करनेके लिये कहते हे। अष्ट शिलाके मान मापकी यह प्रथा है।

कूर्म शिला तथा अष्ट शिला



कूर्मशिला तथा अष्टशिला चिन्ह और वस्त्रवर्ण

(क) મધ્યની કૂર્મશિલા અને અષ્ટ શિલાના માપથી તેનાથી પહોળી તેની ઢંક શિલાઓ કરવી. મૂળ શિલાઓ પર થોડી જગ્યા રાખીને સંપૂટની જેમ રાખીને ઢંક શિલા મૂકવી. મધ્યની કૂર્મશિલા પર ચાંદીનો કૂર્મ મૂકાય છે. તેનું માપ અન્ય ગ્રંથોમાં આપેલ છે. એક ગજે અર્ધા આંગળનું માન કહ્યું છે. મધ્યની કૂર્મશિલા મૂકી ચાંદીનો કૂર્મ સ્થાપન કરી તે પર નાભિનું ભૂંગળું–પાઈપ ઊભો કરવામાં આવે છે. આ નાભિ ઉપર મુખ્ય પ્રભુ બિરાજમાન થાય તેના નીચે સુધી લંબાવાય છે.

जहाँ मान माप न बताये हो वहाँ उसके संबंधमें व्यर्थ वाद–विवादोंमें उतरना नहीं। परंतु वृद्धोंकी परंपराको मानना।

(क) मध्यकी कूर्मशिला और अष्टशिलाके मापसे उससे चौडी उसकी ढंक शिलायें बनाना। मूल शिलाओंके उपर थोडी जगह रखकर संपुटकी तरह रखकर ढक शिलाको रखना। मध्यकी कूर्मशिलाके उपर चाँदीका कूर्म रखा जाता है। उसका माप अन्य ग्रंथमें दिया है।

કૂર્મશિલામાન

ગજ	આ
૧	૪
૨	૬
૩	૮
૪	૧૦
૫	૧૨
૬	૧૪
૭	૧૬
૮	૧૮
૯	૨૦
૧૦	૨૨
૨૦	૩૨
૩૦	૩૭
૪૦	૪૨
૫૦	૪૭

पचमुख-दशभुज महाविश्वकर्मा ऊँचे तोरण पक्षे विरालिका युक्त परिकर
नीम्न-जय-मय-त्वष्टा और अपराजित

(ड) કૂર્મશિલા ગર્ભગૃહના મધ્યમા પધરાવવાનું સાધારણ રીતે કહ્યું છે પરંતુ दीपार्णव ગ્રંથમા શ્રી વિશ્વકર્માએ કૂર્મશિલા માટે કહ્યું છે કે अर्धं पादे त्रिभागे वा शिलाचैव प्रतिष्ठयेत् ॥ ગર્ભગૃહના અર્ધમા કે ગર્ભગૃહના ચોથા ભાગ કે ત્રીજા ભાગે પણ કૂર્મશિલા પ્રતિષ્ઠિત કરવી આમ કહેવાનો હેતુ છે શિવલિંગ હોય તો મધ્યમા પધરાવે ત્યા કૂર્મશિલા મધ્યમા પધરાવી વિષ્ણુ આદિ દેવોના સ્થાપના વિભાગ કહ્યા છે ત્યા તેની નીચે કૂર્મશિલા પધરાવવી તે યોગ્ય છે કૂર્મ શિલા પરની નાભિ અર્થાત્ ધ્ર દેવ પ્રતિમા નીચે બરાબર આવી શકે

एक गज पर आध अँगुलका मान कहा है। मध्यकी कूर्मशिला रखकर चाँदीके कूर्मको स्थापित कर उसके पर नामिका भुगला-पाइप खडा किया जाता है। और नामिके उपर मुख्य प्रभु बिराजमान हो वहाँ नीचे तक लगाया जाता है।

(ट) सामान्यतया कूर्मशिलाको गर्भगृहके मध्यमें पधरानेके लिये कहा गया है। परतु दीपार्णव ग्रथमें श्री विश्वकर्माने कूर्मशिलाके लिये कहा है कि **अर्धपादे त्रिभागेवा शिला-चैव-प्रतिष्ठयेत्।** ' गर्भगृहके आध भागमे या चौथे भागमे या तीसरे भागमें भी कूर्मशिलाका प्रतिष्ठित करना। इस कथनका तात्पर्य यह है कि शिवलिङ्ग हो तो मध्यमें पधरावें वहाँ

नंदा भद्रा जयारिक्ता अजिता वा पराजिता।
शुक्ला सौभागिनी चैव धरणी नवमी शिला ॥५॥

(इ) અષ્ટશિલાઓ દિશા વિદિશામાં સ્થાપન કરવાની પ્રથા છે. પરંતુ અન્ય ગ્રંથોમાં પાંચ શિલાઓનું પણ કહ્યું છે. મધ્યની એક અને ચાર કોણમાં ફરતી એમ પાંચ આવાં પ્રમાણો છે. કેટલાક ગ્રંથોમાં નવ શિલા સ્થાપન કરવાની પ્રથા વર્તમાન કાળમાં શિલ્પીમાં છે.

(फ) કોઈ જોખમી કામમાં પાયો ધસી પડે તેવા ભયસ્થાનોમાં અષ્ટ શિલા પધરાવવાનું અશક્ય બને છે. ત્યારે ત્યાં દોષ ન માનવો જોઈએ જરૂરી મુહુર્ત કરવું.

(ज) પંચશિલા કે અષ્ટશિલામાં કોતરવાના ચિન્હો વિશે એક એવો મત છે કે પ્રત્યેક દિશા વિદિશાના દિક્‌પાલોનું એક આયુધનું ચિન્હ કોતરાય છે. विश्वकर्म प्रकाश ગ્રંથમાં કૂર્મશિલાસ્થાપન વિધાનમાં કહે છે.

स्वस्वासु वाहनाद्यंकै धातुजैस्ताषपात्रगै
मुक्तं दाष विधि नाद्यै न्यसे द्दर्भ सुरालये ॥

(च) જે દેવનું મંદિર હોય તેના વાહન આયુધ શિલાઓમાં અંકિત કરવા શિલાઓની નીચે ધાતુપાત્ર સર્વૌષધિ સપ્ત ધાન્યાદિ પાત્રોમાં ભરી મૂકવા. શિલાઓને દિક્‌પાલના વર્ણ વસ્ત્રો લપેટી નીચે કળશ, શેવાળ, કોડી, સપ્ત ધાન્ય, ચણોઠી, ગંગાજળ, પંચરત્નની પોટલી, વગેરે કળશમાં મૂકી પધરાવે છે. તે નીચે ચાંદી કે ત્રાંબાના નાગ અને કાચબો પણ પધરાવવાની પ્રથા શિલ્પીઓમાં છે.

कूर्मशिलाको मध्यमें पधराना। विष्णु आदि देवोंके स्थापना विभाग कहे है। वहाँ उसके नीचे कूर्मशिलाको पधराना योग्य है। कूर्मशिलाके ऊपरकी नाभि ब्रह्मरंध्र देव प्रतिमाके नीचे बराबर आ सके।

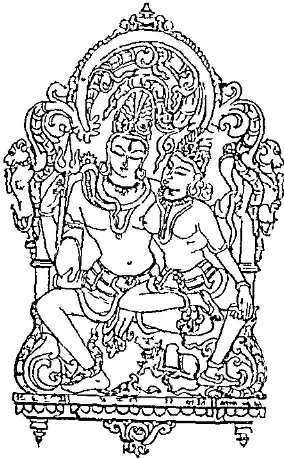
(इ) अष्ट शिलाओंको दिशा विदिशाओंमें स्थापन करनेकी प्रथा है। परंतु अन्य ग्रंथोंमें पाँच शिलाओंका भी कहा है। मध्यकी एक और चार कोनेमें फिरती इस तरह पाँच ऐसे प्रमाण हैं। अन्य ग्रंथोंमें नौ शिलाओंका प्रतिस्थापन करनेकी प्रथा वर्तमानकालमें शिल्पियोंमें हैं।

(फ) किसी जोखमी काममें नीव टूट पडे वैसे भयस्थानमें अष्ट शिलाओंको पधराना, अशक्य बनता है तब वहाँ दोष नही मानना चाहिये। आवश्यक मुहूर्त कर लेना।

(ज) पंच शिला या अष्ट शिलामें कोतरनेके चिह्नोंके बारेमें एक ऐसा मत है कि प्रत्येक दिशा विदिशाके दिग्पालोंके एक आयुधका चिह्न किया जाता है। 'विश्वकर्मा प्रकाश' ग्रंथमें कूर्मशिला स्थापन विधानमें कहा है—

स्वासु वाहनाद्यैकं धातुजैस्ताष पात्रगै
मुक्तं दाष विधिनाद्यै न्यसे द्दर्भ सुरालय ॥

(च) जिस देवका मंदिर हो उसके वाहन, आयुध शिलाओंमें अंकित करना। शिलाओंके नीचे धातुपात्र सर्वौषधि सप्तधान्यादि पात्रोंमें भरकर रखना। शिलाओंको दिग्पालके वर्णके वस्त्रों लपेटकर नीचे कलश, सेवाल, कोडी, सप्त, धान्य, गंगाजल, पंचरत्नकी गठडी वगैरह कलशमें रखकर पधराते हैं। उसके नीचे चाँदी या ताम्रके नाग और कूर्मको भी पधरानेकी प्रथा शिल्पियोंमें है।



મધ્યની કૂર્મશિલાઓની ફરતી આઠ ગિલાઓના નામ કહે છે ૧ નદા ૨ ભદ્રા ૩ જયા ૪ ગીક્તા અજિતા ૬ અપરાજિતા ૭ શુકલા અને ૮ સૌભાગિની એ આઠ ગિલાઓ પૂર્વાદિ પ્રદક્ષિણાએ સ્થાપના કરવી અને મધ્યની નવમી 'ધરણી' શીલા સ્થાપન કરવી ૫

मध्यकी कूर्मशिलाओंके फिरती आठ शिलाओंके नाम कहते हैं। १ नन्दा २ भद्रा ३ जया ४ रिक्ता ५ अजिता ६ अपराजिता ७ शुक्ला और ८ सोभागिनी—ये आठ शिलाओंको पूर्वादि प्रदक्षिणासे स्थापन करना। और मध्यकी नोमीं 'धरणी' शिलाको भी स्थापन करना। ५

उमा महेश युग्म तोरण विरालिकायुक्त परिकर

मध्ये कूर्मप्रदातव्यं रत्नालङ्कारसंयुतं।
हेमरुप्यमयः कार्यो द्रढरुपमयो भवेत् ॥६॥
तं शिलायां पंचमांशेन कर्तव्यकूर्ममुत्तमम्।
सकलालकार संयुक्ता दिव्य पुष्पेन पूजिताम् ॥७॥
वस्त्र वैडूर्य संयुक्तं इंद्रनीकमणी स्तथा।
पुष्पराग च गोमेद प्रवाल परिवेष्टितं ॥८॥

પૂર્વાદિ દિશા વિદિશાઓમા અષ્ટ શિલા પધરાવી તેમા મધ્યમા નવમી ધરણી નામે શિલા કૂર્મગિલા સ્થાપન કરવી કૂર્મશિલા રત્ન અલંકારો સહિત સોના અને રૂપા સહિત દઢ રૂપે સ્થાપન કરવો [3] તે કૂર્મને રત્ન અલંકારો સહિત સર્વ પ્રકારના દિવ્ય પુષ્પાદિ સામગ્રીથી પૂજન કરવુ ઉત્તમ વસ્ત્રો, વૈડૂર્ય ઇન્દ્રનીલ મણી પદ્મરાગ ગોમેદ અને પ્રવાલાદિ રત્નોથી પરિવેષ્ટિત કરી સ્થાપના કરવી ૬–૭–૮

૩ કૂર્મશિલા પર ચાદીનો કૂર્મ કરવાનુ પ્રમાણ અહી શિલાના પાચમા ભાગે કહ્યુ છે પરંતુ સૂત્ર સંતાન અપરાજિત સૂત્ર ૧૫૩ મા ધાતુના કૂર્મનુ અને પાષાણના કૂર્મશિલાના પ્રમાણો સ્પષ્ટ કહ્યા છે ઉપર કહ્યો તે ગણે અર્થ આગળનો ચાદીનો કૂર્મશિલા પર વિધિથી પધરાવવો

पूर्वादि दिशा विदिशाओंमें अष्ट शिलाओंको पधराना । उसमें मध्यमें नौवीं धरणी नामकी शिला–कूर्मशिलाको स्थापन करना । कूर्मशिला रत्नालंकारोंके सहित सोना और रुपाके सहित दृढरूपसे स्थापन करना । कूर्मशिलाका पाँचवे भागका चाँदीका उत्तम कूर्म बनाके स्थापन करना ।[३] उस कूर्मको रत्न अलंकारोंके सहित सर्व प्रकारके दिव्य पुष्पादि सामग्रीसे पूजन करना । उत्तम वस्त्रों, वैडूर्य, इन्द्रनील मणी, पद्मराग, गोमेद और प्रवालादि रत्नोंसे परिवेष्ठित कर स्थापना करना । ६–७–८.

[४]नंदापूर्वे प्रदातव्यम् शिलाशेषप्रदक्षिणे ।
धरणी मध्ये च संस्थाप्यं यथाकर्म प्रयत्नतः ॥९॥

પ્રથમ પૂર્વમા નંદા શિલાને પધરાવવી. બાકીની સાત શિલાઓ પ્રદક્ષિણાએ પધરાવવી. મધ્યની કૂર્મશિલા ધરણી શિલાને યથાયોગ્ય કર્મના પ્રયત્ને કરીને મધ્યમાં-સ્થાપના કરવી. ૯

प्रथम पूर्वमें नंदा शिला को पधराना । बाकी सात शिलाओंको प्रदक्षिणासे पधराना । मध्यकी कूर्म धरणी शिलाको यथायोग्य कर्मके प्रयत्नसे मध्यमें स्थापन करना । ९.

दिग्पालं बलिंदद्यात् दिव्यवस्त्रं च शिल्पिने ।
नारिकेल फलं दद्यात् ब्रह्मभोजं च दक्षिणा ॥१०॥

કૂર્મશિલા સ્થાપન કરતાં દિગ્પાલાદિને બલી આપવા શિલ્પીઓને દિવ્ય વસ્ત્રાભૂષણો દેવા. બ્રહ્મભોજ જમાડી દક્ષિણા અને નાળિયેર–શ્રીફળાદિ આપી સંતુષ્ઠ કરવા. ૧૦

कूर्मशिलाका स्थापन करते दिग्पालादिको बलि देना । शिल्पियोंको दिव्य वस्त्राभूपण देना । ब्रह्मभोज कराकर दक्षिणा और श्रीफलादि देकर संतुष्ट करना । १०.

इतिश्री विश्वकर्माकृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां कूर्मशिला निवेशने शताग्रे प्रथमोऽध्याय ॥१०१॥ (क्रमांक अ० ३)

(३) कूर्मशिलाके पर चाँदीका कूर्म वनानेका प्रमाण यहाँ शिलाके पाँचवे भागमें कहा है, लेकिन सूत्रसंतान अपराजित सूत्र १५३ में धातुके कूर्म और पाषणके कूर्मके प्रमाण पृथक् पृथक् स्पष्ट कहे हैं । उपर वताये हुए गजें आधा आँगुलका चाँदीके कूर्मको मध्यकी कूर्मशिला पर विधिसे पधराना ।

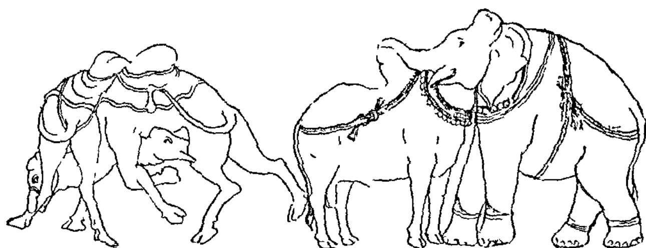
૪. કૂર્મશિલા અને અષ્ટ શિલામાં અંકિત કરવાનાં ચિહ્નો બાબત ગ્રંથોમાં સ્વસ્તિક આદિ ચિહ્નો કરવાનું કહે છે.

ઉત્તર ભારતના ગ્રંથોમાં નવ શિલા અને પંચ શિલાઓ પણ પધરાવવાનું કહ્યું છે. ઘર કાર્યમાં પંચશિલા યોગ્ય છે. પ્રાસાદમાં નવ શિલાનું પ્રમાણ ઠીક લાગે છે.

ઇતિશ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવે શ્રીનારદમુનિએ પૂછેના કૂર્મશિલા નિવેશનનો શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી ગુર્જર ભાષાનુવાદની સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકા સાથેનો એકસો એકમો અધ્યાય १०१

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारद मुनिके सवादरूप कूर्मशिला निवेशन शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशकर ओघडभाई सोमपुरा रचित सुप्रभा नामकी भाषा टीकाका १०१ अध्याय ॥१०१॥ (क्रमाक अ० ३)

कुतूहल



दो साढ युद्ध वृषभ और हस्तियुद्ध एकमें दूसरे का मुख प्रदर्शित होता है।

મધ્યની કૂર્મશિલા પર નાભિનુ ભૂંગળુ ઊભુ કરવાનુ નાગરાદિ શિલ્પમા સ્પષ્ટ નથી પરંતુ શિલ્પીઓ નાભિ ઊભી કરવાની પ્રથાને અનુસરે છે દ્રવિડ ગ્રંથમા આ વિષયમા સ્પષ્ટ કહે છે કે નાભિ ઊભી કરવી શ્રી વિશ્વકર્મા પ્રકાશ અને અગ્નિ પુરાણ મા પણ નાભિ વિશેનો સ્પષ્ટ ઉલ્લેખ છે

(४) कूर्मशिला और अष्टशिलामें अस्ति किये जानेवाले चिह्नोंके बारेमें अन्य ग्रंथोंमें स्वस्तिक आदि चिह्न बनानेके लिये कहा है।

उत्तर भारतके ग्रंथोंमें नौ शिला और पाँच शिलाओंको भी प्रमाण ठीक है।

मध्यकी कूर्मशिलाके पर नाभिकी नाली खडी करनेकी प्रथाको अनुसरते हैं। द्राविड ग्रंथोंमे इस विषयमें स्पष्ट कहते हैं कि नाभी खडी करना। श्री विश्वकर्मा प्रकाश और अग्निपुराणमें भी नाभिके बारेमें स्पष्ट उल्लेख है। नागरादि शिल्प ग्रंथोंमें नाली खडी करनेका स्पष्ट कहा नहीं है।

अथ भिट्टमान

क्षीरार्णव अ० १०२—क्रमांक अ० ४

श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे भिट्टं वेदाङ्गुलं भवेत् ।
हस्तादि पँच पर्यंत वृद्धिरेकैक मंगुलम् ॥ १ ॥
पादोनमंगुलावृद्धि यावत्दशहस्तकम् ।
शतार्द्ध हस्तमानेन करवृध्यार्द्धांगुलम् ॥ २ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે. એક હાથના પ્રાસાદને ચાર આંગળ ઊંચું (જાડું) ભિટ્ટ કરવું. બેથી પાંચ હાથનાને પ્રત્યેક હાથે એકેક આંગળ અને છથી દસ આંગળનાને પોણા પોણા આંગળની વૃદ્ધિ કરવી. અગ્યારથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે અર્ધા અર્ધા આંગળની વૃદ્ધિ કરવી. ૧–૨.

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—एक हाथके प्रासादको चार अँगुल ऊंचा (मोटा) भिट्ट करना। दोसे पाँच हाथके प्रासाद को प्रत्येक हाथ पर एक एक अँगुल और छः से दस हाथके प्रासादको पौने पौने अँगुलकी वृद्धि करना। ग्यारहसे पचास हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथपर आधे आधे अँगुलकी वृद्धि करना। १–२.

एवं त्रिपुष्पकं चैव हस्वा चतुर्थांशकृत् ।
तृतीया च तदुर्धेन कर्तव्यं तद्विचक्षणे ॥ ३ ॥
प्रथमं निर्गमं कार्यं चतुर्थांशेन महामुनि ।
द्वितीया तृतीयांशेन तृतीयं च तदूर्ध्वत् ॥ ४ ॥

એ ભિટ્ટ પુષ્પ સમાન ઉપરાપર ત્રણ કરવા. પોતપોતાનાથી ચોથા અંશ જાડાઈમાં ઓછા રાખતા જવું એવું વિચક્ષણ બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ કરવું. હે મહામુનિ નારદજી ! પહેલા ભિટ્ટનો નીકાળો તેની ઊંચાઈના ચોથા ભાગ રાખવો એ રીતે બીજા અને ત્રીજા ભિટ્ટનો નીકાળો રાખવો. તે ત્રીજા ભિટ્ટ ઉપર પીઠ કરવું. ૩–૪.

यह भिट्ट पुष्पसमान उपरपर तीन करना। अपने अपने से चौथे अंश के मोटेपनमें कम रखते जाना। ऐसा विचक्षण बुद्धिमान क्षिल्पीको करना चाहिये। हे महामुनि नारदजी ! पहले भिट्टका नीकाला उसकी ऊँचाई के चौथे भागमें रखना। इस तरह दूसरे और तीसरे भिट्टका नीकाला रखना। तीसरे भिट्टके ऊपर पीठ बनाना। ३–४.

પ્રભાશંકર.ઓ.શિલ્પશાસ્ત્રી

भिट्ट और महापीठ

प्रथमं भिट्टस्यार्धेन पिंडवर्णशिलोत्तमा ।
तत्सपिंड चार्धेन परशिलापिंडमेव च ॥५॥
*(विशेष प्रतिक्षाणाग्रे हन्यतेन महामुनि ।)
सुदृढ सजलं चूर्ण मुद्गरैश्चापि हन्यते ॥६॥
पुनर्जल मुद्गर च यदा द्रव्याधिक ततः ।
तस्य मुर्ध्वे च प्रासादं कनव्यं च महामुने ॥७॥

ભિટ્ટની નીચેની વર્ણશિલા અને ખર શિલાનુ પ્રમાણ અને તેની સુદૃઢતા કહે છે પહેલા ભિટ્ટની દોઢી વર્ણશિલા,ની જાડાઈ રાખવી વર્ણશિલાની જાડાઈના અર્ધની ખરશિલાની જાડાઈ રાખવી હે મહામુનિ ! વિશેષે કરીને પ્રત્યેક ઘરો સુદર-મોઘરીના પ્રહારથી દૃઢ કરવી કરી પાણીથી ને મુદરથી બીજા થરને પણ દૃઢ કરવો હે મહામુનિ ! તે ઉપર પ્રાસાદની રચના કરવી

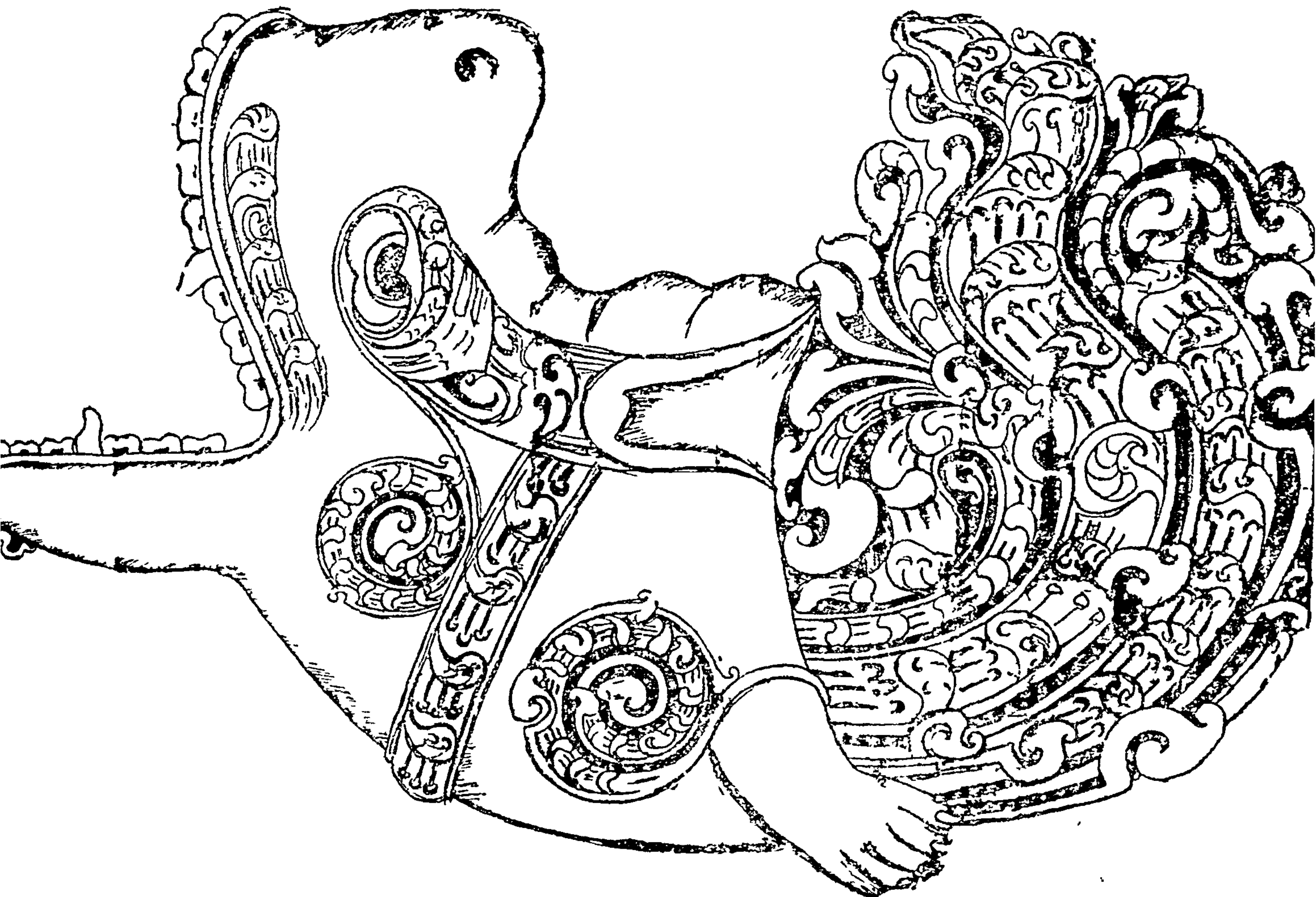
* पाठांतर च वज्रमामदायर महामुनि

भिट्टकी नीचेकी वर्णशिलाका प्रमाण और उसकी सुदृता कहते हैं। पहले भिट्टसे डेढ गुना वर्णशिलाका मोटापन रखना। उस वर्णशिलाके मोटेपन के अर्ध भागका खरशिलाका मोटापन रखना। हे महामुनि, विशेषकर प्रत्येक स्तरों को मुद्गरके प्रहारसे दृढ करना। संपूर्ण खडीवाले पानीसे रसबस कर मुद्गरसे पीट कर उन शिलाओं को दृढ करना। हे महामुनि! उसके ऊपर प्रासाद की रचना करना।

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां भिट्ट मानाधिकारे नाम शताग्रे द्वितियोऽध्याय ॥१०२॥ (क्रमांक अ. ४)

ઈતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ નારદમુનિએ પૂછેલ ભિટ્ટ માનનો શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકા નામનો એકસો બે મો અધ્યાય,

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारदमुनिके संवादरुप भिट्ट मानका शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुरा के हिन्दी भाषानुवादकी सुप्रभा नामकी भाषा टीका नामका एकसौ दूसरा अध्याय ॥१०३॥ (क्रमांक अ० ४)



पानीका-प्रनालका मकरमुख

॥ अथ पीठमान प्रमाण ॥

क्षीरार्णव अ० १०३—क्रमांक अ० ५

श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे पीठंच द्वादशांगुलम् ।
हस्तादि पंचपर्यंतं हस्ते हस्ते पंचाङ्गुलम् ॥१॥
पंचोर्ध्वं दशयावत् वृद्धि वेदाङ्गुलं भवेत् ।
दशोर्ध्वे विंशपर्यंतं हस्ते चैवाङ्गुलं त्रयं ॥२॥
विंशोर्ध्वपटत्रिशंति कर वृध्याद्वयांगुलम् ।
अत उर्ध्वं शतार्धेन हस्ते हस्तैकमंगुलम् ॥३॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે એક હાથના પ્રાસાદને બાર આગળનુ ઊચુ પીઠ કરવુ બે થી પાચ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે પાચ પાચ આગળની વૃદ્ધિ કરતા જવુ છ થી દશ હાથ સુધીનાને પ્રત્યેક હાથે ચચ્ચાર આગળની વૃદ્ધિ કરતા જવુ અગ્યારથી વીશ હાથ સુધીનાને પ્રત્યેક હાથે ત્રણ ત્રણ આગળની વૃદ્ધિ કરવી એકવીશથી છત્રીશ હાથ સુધીનાને પ્રત્યેક હાથે બબ્બે આગળની વૃદ્ધિ કરવી સાડત્રીસથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે એકેક આગળની વૃદ્ધિ કરવી ૧–૨–૩

श्री विश्वकर्मा कहते हैं। एक हाथके प्रासादको बारह हाथकी अँगुल की ऊँची पीठ करना। दो से पाँच हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथपर पाँच पाँच अँगुल की वृद्धि करते जाना। छ से दस हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथ पर तीन तीन अँगुलकी वृद्धि करना। इकीससे छत्तीस हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथ पर एक एक अँगुल की वृद्धि करना। १–२–३

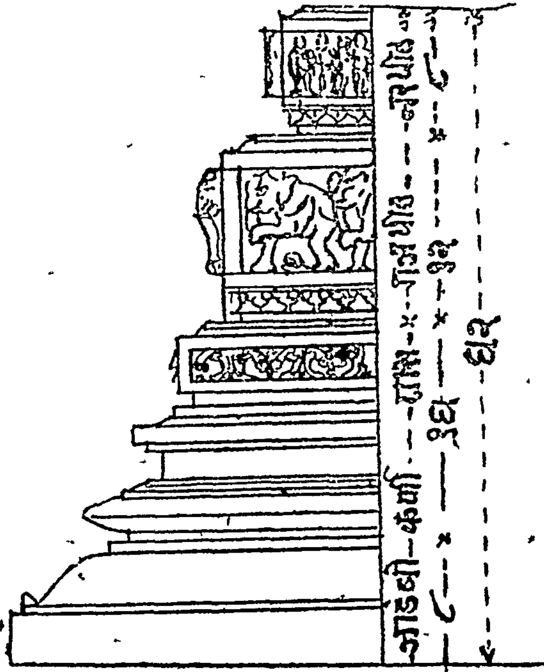
पंचमांशे ततोहीनं कन्यसंशुभ लक्षणम् ।
पंचमांशाधिकं चैव ज्येष्ठे तद्वविचक्षते ॥४॥

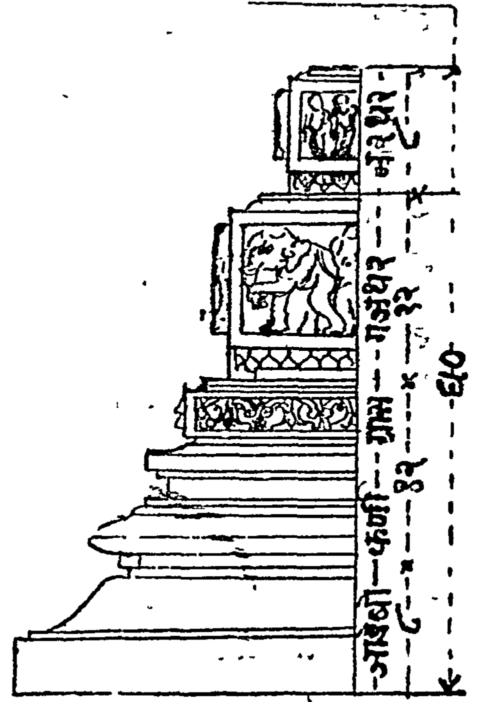
આવેલા પીઠના માનનો જો પાચમો ભાગ ઓછો કરીએ તો શુભ એવા લક્ષણવાળુ કનિષ્ઠ માન અને પાચમો ભાગ અધિક કરીએ તો જ્યેષ્ઠ માન બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ જાણવુ ૪

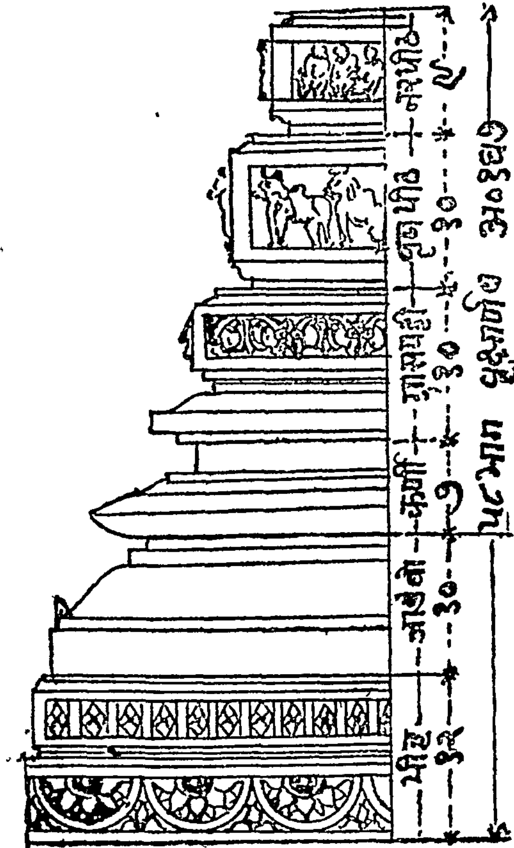
आये हुए पीठके मानका जो पाँचवाँ भाग कम करे तो शुभ ऐसे लक्षण वाला कनिष्ठ मान और पाँचवाँ भाग अधिक करे तो ज्येष्ठ मान बुद्धिमान शिल्पियो को जानना। ४

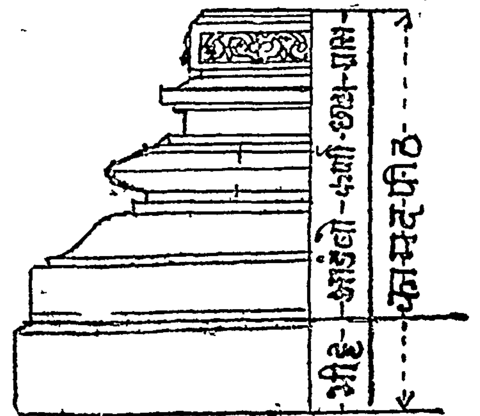
दिव्यव्यापी महाभुक्तं प्रमाणं द्वयमेव च ।
भिट्ट त्रयेण संयुक्तं महापीठं विमानकं ॥५॥
मिश्रकपीठ कर्तव्यं द्वि भिट्टं चोर्ध्वयो भवेत् ।
भिट्टैक त्रि महायुक्ता प्रमाणं द्वयमेव च ॥६॥

પીઠમાન
ગજ ગજ આં
૧—૦•૧૨
૨—૦•૧૭
૩—૦•૨૨
૪—૧•૩
૫—૧•૮
૬—૧•૧૨
૭—૧•૧૬
૮—૧•૨૦
૯—૨•૦
૧૦—૨•૪
૨૦—૩•૧૦
૩૦—૪•૬
૪૦—૪•૨૨
૫૦—૫•૮

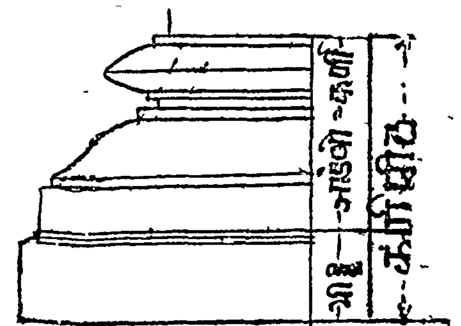








પ્રભાશંકર ઓ. શિલ્પશાસ્ત્રી



महापीठ—कामद पीठ और कर्णपीठ

एव मादि मुने कार्या पीठभेद मुनीश्वरम् ।
उदयं कथितं पूर्व (मतो विभागं निगद्यते ।) ॥७॥

હે દિવ્ય બ્રહ્મમા વ્યાપી રહેલા મહામુનિ ! પીઠના બે પ્રમાણ છે ત્રણ ભિટ્ટવાળુ ઊંચુ મહાપીઠ વિમાનાદિ જાતિને કરવુ બે ભિટ્ટ ઉપર પીઠ મિશ્રકાદિ જાતિને કરવુ વળી (નાગરાદિમા એક કે ત્રણ ભિટ્ટ યુક્ત એમ બે પ્રમાણો કહ્યા છે એ રીતે હે મહામુનિ ! મે પીઠના ભેદ કહ્યા પીઠનુ ઉદય પ્રમાણ માન તો કહ્યુ હવે પીઠના વિભાગો આગળ કહીશ ५-६-७

हे दिव्य ब्रह्ममे व्याप्त महामुनि ! पीठके दो प्रमाण हैं। तीन भिट्टवाला ऊँचा महापीठ विमानादि जातिको करना। दो भिट्टके ऊपर पीठ मिश्रकादि जातिको करना। और (नागरादि)मे एक या तीन भिट्टसे युक्त-इस तरह दो प्रमाण कहते हैं। हे महामुनि, मैंने वे पीठके भेद कहे। पीठका उदय, मान कहा अब पीठके विभाग आगे बताऊँगा। ५-६-७

द्राविडं प्रासादो मानं वैराटं च अतः शृणु ।
मंडोवरं विंशभाग षड्भागं पीठमेव च ॥८॥

દ્રાવિડાદિ અને વૈરાટાદિ પ્રાસાદનો પીઠ ઉદય હવે કહુ છુ મંડોવરની ઊંચાઈના વીશ ભાગ કરી છ ભાગના પીઠનો ઉદય જાણવો ८

द्राविडादि और वैराटादि प्रासादका पीठ उदय अब मैं कहता हूँ। मँडोवर की ऊँचाईके वीश भागकर छ' भागके पीठका उदय जानना। ८

अर्धभागे त्रिभागे वा पीठचैवं नियोजयेत् ।
स्थानमानाश्रयं ज्ञात्वा तत्र दोषो न विद्यते ॥९॥

પીઠની ઊંચાઈના કહેલા માનથી અર્ધા કે ત્રીજા ભાગે પીઠની યોજના સ્થાન માનનો આશ્રય જાણીને કરવી તે રીતે ઓછુ કરવામા દોષ ન જાણવો ९

पीठके ऊँचाईके कहे हुए मानसे आधे या तीसरे भागमे पीठ की योजना स्थान मानका आश्रय जानकर करना। इस तरह क्रम करनेमे दोष न जानना। (पीठके थर विभाग १०६ अध्यायमे कहा है।)[1]

---

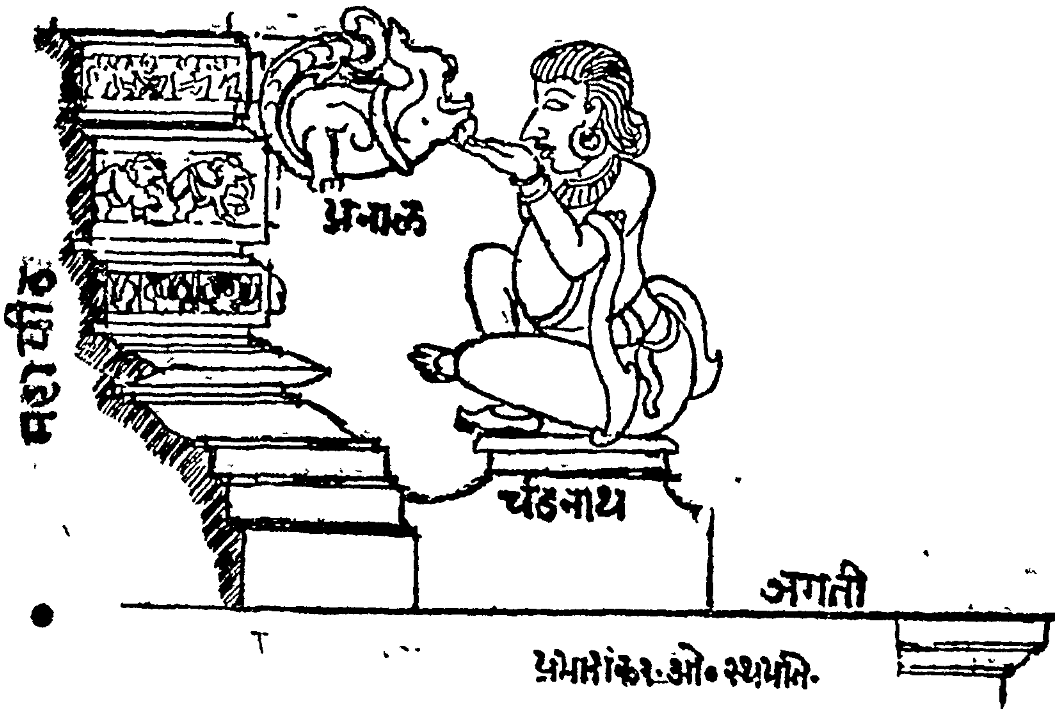
१ આવેલા પીઠમાનથી ઓછુ કરવામા દોષ નથી આ પ્રમાણના દાખલા ઘણા મહાપ્રસાદોમા જોવામા આવે છે તારંગા દ્વારકા, શત્રુંજય મુખ્ય મંદિર વગેરે વળી વિશાળ આયતનોની દેવ કુલીકાઓમા પણ તે રીતે માનથી ઓછુ પીઠ કરી શકાય છે પીઠના થર વિભાગ અ० १०६ મા કહ્યા છે

(१) आये हुए पीठ मानसे कम करनेमें दोष नही है। इस प्रमाणके दृष्टाण बहुतसे महाप्रासादोमें देखनेमें आते हैं। तारगा, द्वारका-शत्रुंजय मुख्य मन्दिर वगैरह विशाल और आयतनोका देवकुलीकाओमे भी इस तरह मानसे कम पीठ कर सकते हैं। इसमे दोष नहीं है। पीठका थरविभाग अध्याय १०६ मे सविस्तर कहा है।

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां पीठ मानाधिकारे शताग्रे तृतीयोऽध्यायं ॥१०३॥ (क्रमांक अ० ५)

ઇતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ શ્રીનારદમુનિને પૂછેલ પીઠમાનનો શિલ્પ વિશારદ્ સ્થપિત શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ સુપ્રભા નામની રચેલી ટીકાનો એકસો ત્રીજો અધ્યાય. (૧૦૩)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव वास्तुशास्त्र नारदजीके संवादरूप पीठ मानाधिकार शिल्प विशारद स्थपति प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुरा की रची हुई सुप्रभा नामकी भाषाटीका का एकसौ तीसरा अध्याय ॥१०३॥ (क्रमांक अ० ५)



महापीठ साथप्रमाल और शिवनिर्माल्यका चंडनाथ

॥ अथ प्रासादोदयमान ॥

क्षीरार्णव अ० १०४—क्रमांक अ० ६

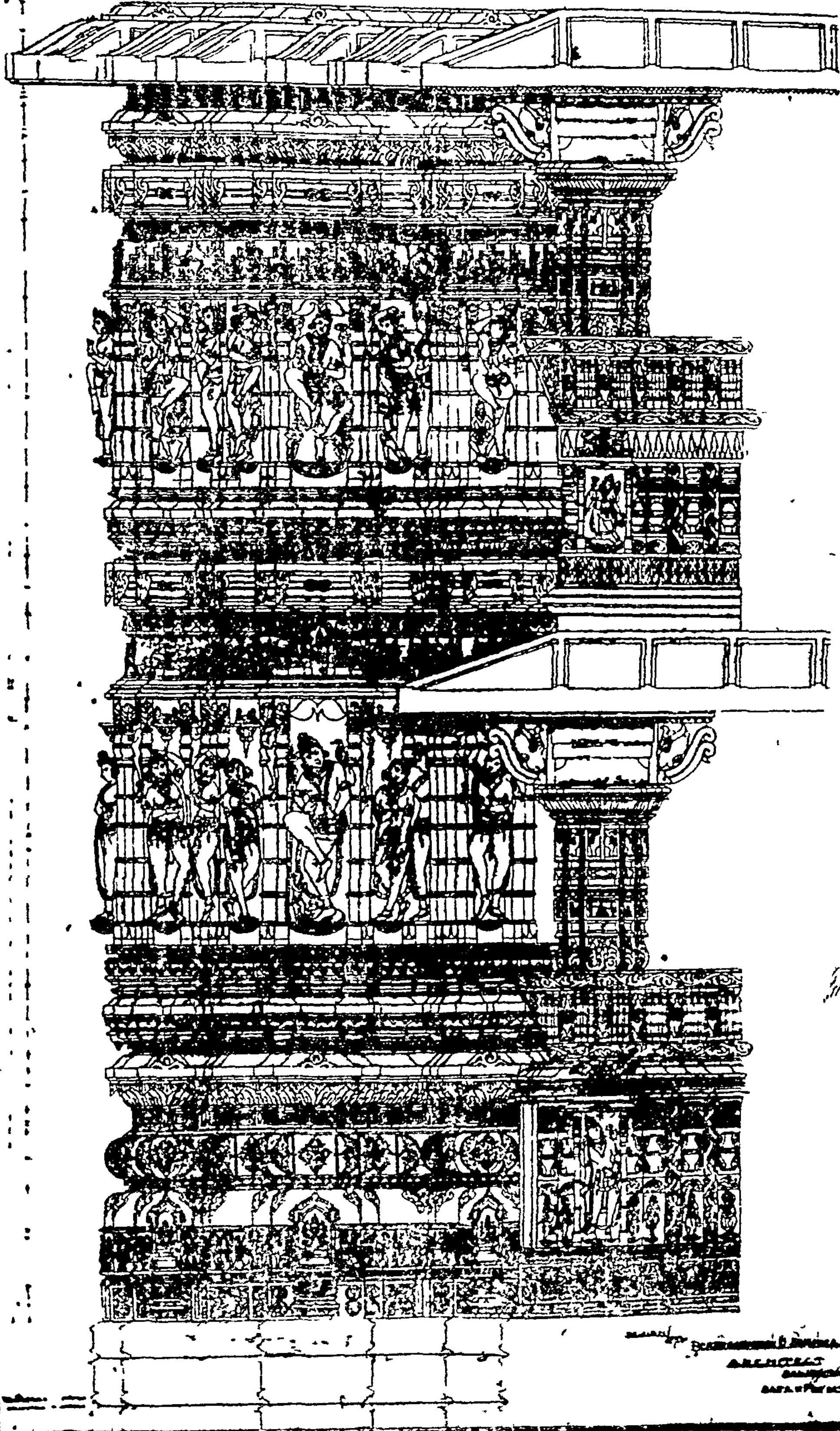
श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे त्रयस्त्रिंशद्भिरंगुलैः ।
द्विहस्ते उदयं कार्यं द्विहस्ते सप्तांगुल ॥ १ ॥
त्रि हस्तस्य यदामानं मधिकं पंचमांगुला ।
चतुर्हस्तोदयं कार्यं मेकेणाधिकमंगुलम् ॥ २ ॥
विस्तारेण समं कार्यं पंचहस्तोदय भवेत् ।
षट हस्तोदयं कार्यं न्यूना च द्वयमंगुलम् ॥ ३ ॥
उदयं सप्त हस्तेन न्यूनं च सप्तमंगुलम् ।
अष्टहस्तोदयं कार्या षोडशांगुल हीनकम् ॥ ४ ॥
हीन एकोन त्रिंशस्यात् प्रासादे नवहस्तके ।
दश हस्तोदयं कार्यं अष्टहस्त प्रमाणकम् ॥ ५ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા પ્રાસાદના ઉદય ઉભણીનુ માન કહે છે એક હાથના પ્રાસાદને તેત્રીશ આગળનો ઉદય કરવો, બે હાથના પ્રાસાદને બે હાથ સાત આગળનો, ત્રણ હાથનાને ત્રણ હાથને પાંચ આગળનો, ચાર હાથનાને ચાર હાથને એક આગળનો અને પાંચ હાથના પ્રાસાદનો ઉદય પાંચ હાથનો એટલે વિસ્તાર પ્રમાણે સરખો ઉદય રાખવો, છ હાથનાને છ હાથમા બે આગળ ઓછો, સાત હાથનાને સાત હાથમા સાત આગળ ઓછો, આઠ હાથના પ્રાસાદને આઠ હાથમા સોળ આગળ ઓછા (એટલે ૭ ગજને ૮ આગળ) નવહાથમા ઓગણત્રીસ આગળ ઓછી ઉભણી રાખવી દશ હાથના પ્રાસાદની આઠ હાથની ઉભણી રાખવી

પ્રાસાદોદયમાન	
ગજ	ગજ આ
૧—	૧.૯
૨—	૨.૭
૩—	૩.૫
૪—	૪.૧
૫—	૫.૦
૬—	૫.૨૨
૭—	૬.૧૭
૮—	૭.૮
૯—	૭.૧૯
૧૦—	૮.૦
૨૦—	૧૨.૧૨
૩૦—	૧૭.૦
૪૦—	૨૧.૨
૫૦—	૨૫.૦

श्री विश्वकर्मा प्रासादके उदयका मान कहते हैं। एक हाथके प्रासाद को तेत्तीस अँगुलका उदय करना। दो हाथके प्रासादको दो हाथ सात अँगुल का तीन हाथके प्रासाद को तीन हाथ और पाँच अँगुलका, चार हाथके प्रासाद को चार हाथ और एक अँगुलका और पाँच हाथके प्रासाद का उदय पाँच हाथका अर्थात विस्तार के अनुसार समान उदय रखना। छः हाथके प्रासादको छः हाथमे दो अँगुल कम, सात हाथके प्रासाद को सात हाथमे सात अँगुल कम, आठ गजके प्रासाद को सात गज आठ अँगुल, नौ हाथ के प्रासाद को नौ हाथमे उनतीस अँगुल कम उदय रखना। दस हाथके प्रासाद को आठ हाथका उदय रखना। १–२–३–४–५



પ્રાસાદયોમાન	
ગજ	આંગુલ
૧—	૧·૯
૨—	૨·૭
૩—	૩·૫
૪—	૪·૧
૫—	૫·૦
૬—	૫·૨૨
૭—	૬·૧૭
૮—	૭·૮
૯—	૭·૧૯
૧૦—	૮·૦
૧૫—	૧૦·૬
૨૦—	૧૨·૧૨
૨૫—	૧૪·૧૮
૩૦—	૧૭·૦
૩૫—	૨૧·૬
૪૦—	૨૧·૧૨
૪૫—	૨૩·૧૮
૫૦—	૨૫·૦

गांधार मंडोवर द्वयभूमि द्वयजंघा और एक छाद्य

નિરેધાર પ્રાસાદમા માટી કે ઇંટના પ્રાસાદની ભિંત-દિવાલની જાડાઈ પ્રાસાદના ચોથા ભાગે રાખવી પાષણુના પ્રાસાદને પાચમે કે છઠ્ઠાભાગે ભાગે ભિંતો જાડી રાખવી કાષ્ટના કાર્યમા સાતમા ભાગે સાધાર મહાપ્રાસાદોમા આઠમા ભાગે અને ધાતુ અને રત્નના પ્રાસાદને પ્રાસાદના દશમા ભાગે ભિંતની જાડાઈ દિવાલ રાખવી ૧૪-૧૫.

निरेधार प्रासादमे मिट्टी या ईंटके प्रासाद की दीवारका मोटापन प्रासाद के चौथे भागका रखना । पाषाणके प्रासादको पाँचवे या छट्टे भागमे दिवारे मोटी करना । काष्ठके कार्यमे सातवे भागमे—साधार महाप्रासादोमे आठवे भागमे और धातु और रत्नके प्रासादको प्रासादके दसवें भागमे दिवारका मोटापन रखना । १४-१५

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारदपृच्छाया प्रासादोदय मानाधिको शताग्रे चतुर्थोऽध्याय ॥१०७॥ (क्रमाक अ० ६)

ઈતિશ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ નારદ મુનીશ્વરે પૂછેલા પ્રાસાદના ઉદય માનનો શિલ્પ વિશારદ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી સુપ્રભા નામની ટીકાનો એકસો ચારમો અધ્યાય (૧૦૪)

इतिश्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारद मुनीश्वरके सवाद रूप प्रासादके उदय मानका शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाईकी रची हुइ सुप्रभा नामकी भाषा टीकाका एकसौ चौथा अध्याय । १०४ क्रमाक अ० ६



॥ अथ द्वारमान ॥

क्षीरार्णव अ० १०५—क्रमांक अ० ७

श्री विश्वकर्मा उवाच—

एक हस्ते तु प्रासादे द्वारं च षोडशांगुलम् ।
इयं वृद्धिः प्रकर्तव्या चतुर्हस्तं यदा भवेत् ॥ १ ॥
वेदांगुला भवेद्वृद्धि यवित्दशहस्तकम् ।
हस्ताविंशति मानेन हस्ते हस्ते त्रयंगुला ॥ २ ॥
द्वयङ्गुला भवेद्यावत् प्रासादे त्रिंशहस्तके ।
अङ्गुलैक स्ततो वृद्धि यावत्पंचाश हस्तकम् ॥ ३ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે. એક હાથના પ્રાસાદને સોળ આંગળ ઊંચું દ્વાર કરવું તેવી રીતે સોળ સોળ આંગુલની વૃદ્ધિચાર હાથ સુધી કરવી. પાંચથી દશ હાથના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે ચચ્ચાર આંગળની વૃદ્ધિ કરવી. અગ્યારથી વીશ હાથ સુધીનાને પ્રત્યેક હાથે ત્રણ ત્રણ આંગળની વૃદ્ધિ કરતા જવી. એકવીશથી ત્રીશ હાથનાને બબ્બે આંગળની વૃદ્ધિ કરવી. એકત્રીશથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે એકેક આંગળની વૃદ્ધિ દ્વારના ઉદય માનમાં કરવી. ૧–૨–૩.

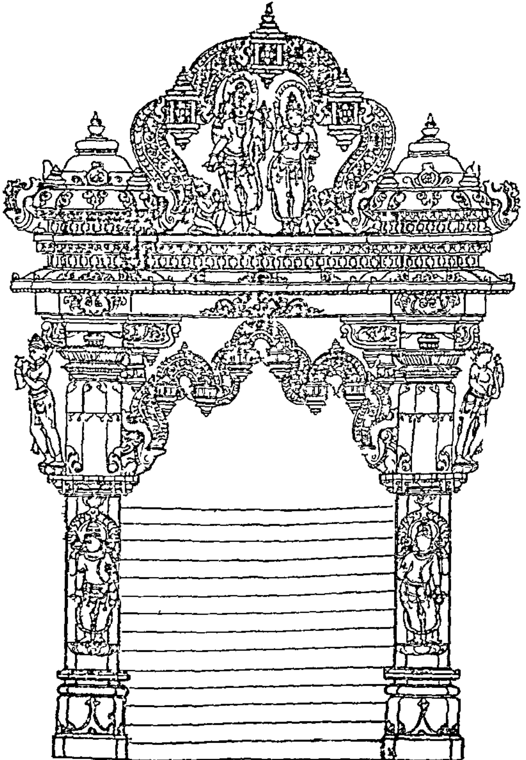
श्री विश्वकर्मा कहते हैं। एक हाथके प्रासादको सोलह अँगुल उँचा द्वार करना। इस तरह सोलह सोलह अंगुलकी वृद्धि चार हाथ तक करना। पाँचसे दस हाथके प्रासादको प्रत्येक हाथपर चार चार अँगुलकी वृद्धि करना। ग्यारहसे वीस हाथके प्रासादको प्रत्येक हाथपर तीन तीन अँगुलकी वृद्धि करते जाना। इक्कीससे तीस हाथके प्रासादको दो दो अँगुलकी वृद्धि करना। इकतीससे पचास हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथपर एक एक अँगुलकी वृद्धि करके उदयमानमें करना। १–२–३.

नागरं च मिदं द्वारं उक्तं क्षीरार्णवे मुने ।
दशभांशे यदि हीनं द्वारं स्वर्गे मनोरमे ॥ ४ ॥
अधिक दशमे प्राज्ञ प्रासादे पर्वताश्रके ।
ताव क्षेत्रान्तरे प्राज्ञत्वामर्हवादि मुनीश्वरः ॥ ५ ॥

ઉપરોક્ત કહેલું દ્વારમાન નાગરાદિ જાતિ છંદના પ્રાસાદનું જાણવું હે મુનિ, આ ક્ષીરાર્ણવમાં કહ્યું છે. કહેલા માનથી જો દશમો ભાગ હીન કરવાથી

તે સ્વર્ગમા મનોરમ એવુ દ્વાર થાય અને જે પર્વતની તલાટીએ ચતુરશિલ્પીઓ કરેલા પ્રાસાદના દ્વારને દશમો ભાગ અધિક કરે તો તે શુભ જાણવુ મહર્ષિ-ઓમા આદિ એવા હે મુનીશ્વર, એ રીતે ક્ષેત્રાન્તર (સ્થળાતરાનુસાર) દ્વારમાન જાણવા ૪–૫

દ્વારમાન ગજ	ગજઆ
૧–	૦•૧૬
૨–	૧ ૮
૩–	૨•૦
૪–	૨ ૧૬
૫–	૨•૨૦
૬–	૨•૦
૭–	૨•૪
૮–	૩•૮
૯–	૩•૧૨
૧૦–	૩•૧૬
૨૦–	૪•૨૨
૩૦–	૫ ૧૮
૪૦–	૬•૮
૫૦–	૬ ૧૪



स्तभ-भरणा-सरा-आदोल्क हीडोल्क तोरण देवाङ्गनाओ ऊन्ने लक्ष्मीनारायणका गेचल प्रतोल्या प्रवेश,

उपरोक्त द्वारमान नागरादि जाति छंदके प्रासादका समझना। हे मुनि, इस क्षीरार्णवमें कहे हुए मानसे जो दसवाँ भाग हीन किया जाय तो वह स्वर्गमें मनोरम अैसा द्वार होता है। और जो पर्वतकी तलहटीपर चतुर शिल्पीके बनाये हुए प्रासादके द्वारको दसवाँ भाग अधिक करे तो उसे शुभ जानना। महर्षीयोंमें आदि अैसे हे मुनीश्वर, इस तरह क्षेत्रान्तर (स्थलान्तरका सार) द्वारमान जानना। ४–५.

शिवद्वारं भवेज्ज्येष्ठं कन्यसं च जिनालये।
मध्यमं सर्वदेवानां सर्वकल्याण कारकः ॥६॥
उत्तम उदयार्द्धेन पादाधिमध्यमानक।
कन्यसं चाधिकं तत्र विस्तारे द्वारमेव च ॥७॥

શિવાલયનું દ્વાર જ્યેષ્ઠ માનનું સર્વજનોમાં આલયનું કે જીનમંદિરનું દ્વાર કનિષ્ઠ માનનું અને સર્વ દેવોને મધ્યમાનનું દ્વારમાન કરવાથી તે સર્વ કલ્યાણકર્તા જાણવું. જ્યેષ્ઠમાનનું દ્વારના ઉદયથી અર્ધ પહોળું કરવું. મધ્યમાનના દ્વારને ચોથો ભાગ વધારવો. અને કનિષ્ઠ માનનું દ્વાર તેથી પણ અધિક પહોળું રાખવું. ૬–૭.

शिवालयके द्वारको ज्येष्ठ मानका सर्वजनोंके आलयका द्वार और जीनमंदिरका द्वार कनिष्ट मानका और सर्व देवोंको मध्य मानका द्वारमान करनेसे सर्व कल्याणकर्ता समझना। ज्येष्ठ मानका द्वारके उदयसे आधा चौड़ा करना। मध्य मानके द्वारको चौथा भाग बढ़ाना। और कनिष्ठ मानका द्वार उससे भी अधिक चौडा रखना। ६–७.

अज्ञात्वा च यदा ज्ञात्वा यदाद्वारं च तिष्ठतः।
नागरं सर्व देवानां सर्व देवेषु* पूजितः ॥८॥

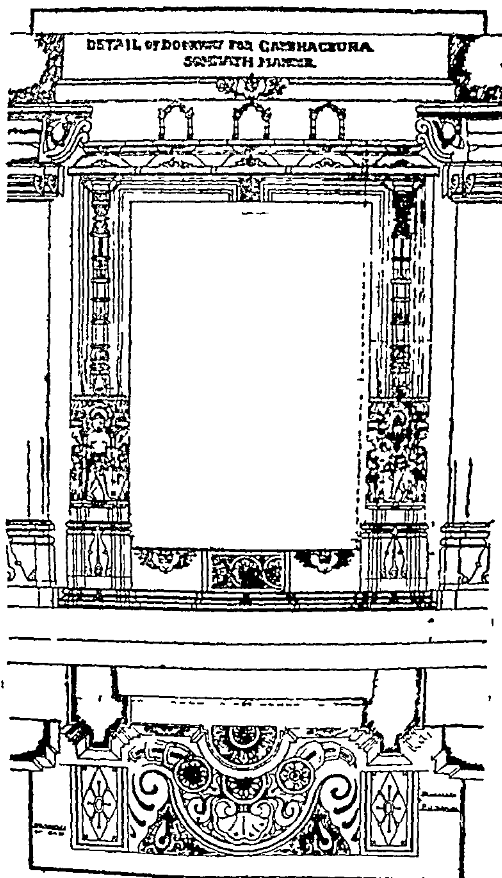
જાણે કે અજાણે કદાચ દ્વારમાનની પહોળાઈ થઈ હોય તો પણ તે સર્વ દેવોને પૂજન યોગ્ય એવું નાગરાદિ દ્વાર માન જાણવું.

जाने या अनजानेमें कदाचित् द्वारमानकी चौडाई हुई हो तो भी उसे सर्व देवोंके लिये पूजन योग्य अैसा नागरादि द्वारमान समझना। ८

इतिश्री विश्वकर्माकृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां नागरादि प्रासाद द्वारमानाधिकारे शताग्रे पंचमोऽध्याय ॥१०५॥ (क्रमांक अ० ७)

ઈતિશ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ નારદે પૂછેલા નાગરાદિ દ્વારમાનનો શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકાનો એક સો પાંચમો અધ્યાય. ૧૦૫. ક્રમાંક અ૦ ૭.

* पाठांतर दुर्लभ



सप्त शाखाका द्वार और अर्धचंद्र

इतिश्री विश्वकर्मा निरचित क्षीरार्णव नारदके सवादरूप नागरादि द्वारमानका शिल्प घिशारद स्थपति श्री प्रभाशकर ओघडभाई सोमपुराकी रची हुई सुप्रभा नामकी भापा टीकाका एकसो पाँचवाँ ज याय ॥१०५॥ (क्माह ७ं० ७)

॥ अथ पीठ थर विभाग ॥

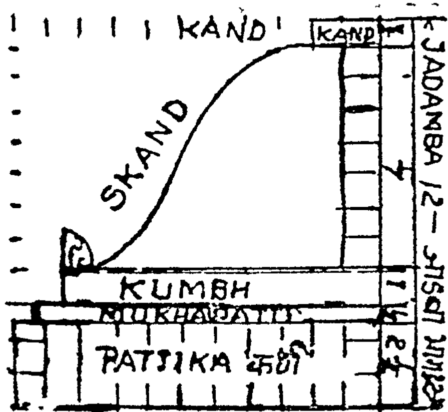
क्षीरार्णव अ० १०६–(क्रमांक अ० ८)

श्री विश्वकर्मा उवाच

पीटोदये भवेत्पूर्वं विभागं च अतः श्रुणु
द्वादश भाग जाड्यकुंभंच अर्धवार्धकारिक ॥ १ ॥
द्वयंचसार्द्ध भवेत्कर्ण भागार्ध मुखपट्टीका ।
भागमेकं भवेत्कुंभं शेपंच कंदमेवच ॥ २ ॥
भागोनं च भवेत्पीठं निर्गमं तत्प्रकीर्तिताः ।
तत्रस्कंध समकुर्यात्कर्णमाली प्रशोभिता ॥ ३ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા નારદજીને કહે છે. પીઠની ઊંચાઈનું પ્રમાણ આગળ (અ. ૧૦૩માં) કહ્યું હવે પીઠના થર વિભાગ સાંભળો પહેલાં બાર ભાગનો જાડંબો તેનો અર્ધ નિકાળો જાડંબા નીચેની પટ્ટી અઢી ભાગની તે પર અરધા ભાગનો કંદ (મુખ પટ્ટી) તે ઉપરથી એક ભાગનો બીજો કંદ અને બાકી ઉપરનો કંદ પણ એક ભાગનો તેના નિકાળા પણ તેટલા જ રાખવાં. સ્કંધ–ગલતો સાત ભાગનો રાખવો. એ રીતે બાર ભાગના જાડંબા પર કર્ણિકાનો શોભતો થર કરવો. ૧–૨–૩.

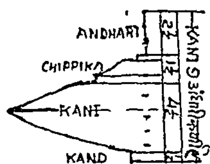
श्री विश्वकर्माने नारदजीको पीठकी उँचाईका प्रमाण अ० १०३ में कहा । अब पीठके स्तर विभागके बारेमें सुनो । प्रथम बारह भागका जाडंबा–उसका अर्ध नीकाला–जाडंबेके नीचेकी पट्टी ढाई भागकी, उसके पर आधे भागका कंद (मुख पट्टी) उसके उपरके एक भागका दूसरा कंद और बाकी उपरका कंद भी एक भागका, उसके नीकाले भी उतने ही रखना । स्कंध–गलता सात भागका रखना । इस तरह बारह भागके जाडवे पर कर्णिकाका शोभायमान स्तर करना । १–२–३.



जाडंवा उदय १२ भाग

नव भागंकुतं पिंड प्रवेशतत्रमेवच ।
पिंडस्य नवधाकृत्य अंतरपत्र द्विभागतः ॥ ४ ॥

चिप्पिका सार्द्धभागंच निर्गमंच त्रिभागतः ।
अधः कंध भवेभागार्द्ध कणि चत्वारि सार्द्धतः ॥ ५ ॥
षड्भागं निर्गमंतत्र कणि कुर्याद्विचक्षण ।
तस्य पदं समकार्यं ग्रासपट्टि च छाद्यके ॥ ६ ॥



(નકશા ૫૭) કણીના થરના નવ ભાગ કરવા તેનો નીકાલો પણ તેટલો કરવો કણીની જાડાઈના નવ ભાગમા ઉપરની અતર પત્ર અઢી ભાગની ચિપ્પિકા દોઢ ભાગની ઊંચી અને તેનો નીકાળો ત્રણ ભાગનો રાખવો કણી સાડા ચાર ભાગની તેની નીચેનો કંદ અર્ધા ભાગનો રાખવો કર્ણિકાનો

कर्णिका अतराल भाग ९

થર છ ભાગ નીકળતો બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ રાખવો એ રીતે કર્ણિકાના થર જેટલાજ નવ ભાગની ગ્રાસપટ્ટી નીચે છાજલી (ત્રણભાગની) કરવી ૪-૫-૬

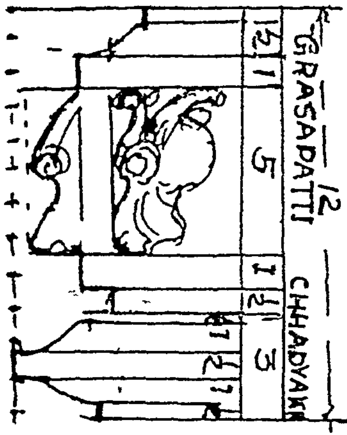
जाडबेके पर कणीसे थरके नौ भाग करना, उसके घाटकी नीर्गम भी उतनी ही करना । कणीके मोटेपनके नो भागमे उपरकी अतरपत्र ढाई भागकी चिप्पिका डेढ भागकी उँची और उसका नीकाला तीन भागका रखना । कणी साडे चार भागकी और उसकी नीचेका कद आधे भागका रखना । कर्णीकाका थर छ भाग निकालता बुद्धिमान शिल्पीको रखना चाहिये । इस तरह कर्णीकाके थरके बराबर नो भागकी ग्रासपट्टी की नीचे छाजली (तीन भागकी) बनाना । ४-५-६

पिंडं कुर्यात् त्रिभागेन निर्गमं त्रिणीमेवच ।
भागार्द्ध मुखपट्टि च पादार्धं भागमेव च ॥ ७ ॥
स्कंध स्कंध भवेन्मेकं छाद्यकी तत्र सिद्धयति ।
उपरि ग्रासपट्टिका पद द्वादशमेनच ॥ ८ ॥
घसिका चार्द्धभागेन भागमेकं तथार्द्धक ।
पंचभाग भवेन्ग्रासं भागैकं उदर भवेत् ॥ ९ ॥
सार्द्ध चिप्पिका कुभं (१) निर्गमं द्वयमेन च ।
नव भाग ग्रासपट्टी सर्वकेवलधीमताम् ॥ १० ॥

इति कामदपीठ १.

છાજલી કેવાળની જાડાઈ ત્રણ ભાગ અને નીકાળો પણ ત્રણ ભાગનો રાખવો. તેની મુખપટ્ટી અર્ધા ભાગની નીચે ઉપરનો કંદ ૫ા ૫ા ભાગનો અને

નીચે ઉપરના સ્કંધ–ગલતી એકેક ભાગની એ રીતે ત્રણ ભાગની છાજલી કેવાળ સિદ્ધ થઈ.



છાંજલી ગ્રાસ પટ્ટી ભાગ ૧૨

કણી ઉપરની આખી ગ્રાસ પટ્ટી બાર ભાગમાં નવભાગની ગ્રાસ પટ્ટીમાં નીચે અર્ધાભાગની ધસી અંધારી ગ્રાસમુખ પાંચમાં ભાગમાં ગ્રાસમુખનો નીકાળો એક ભાગનો તેની નીચે ઉંપની પટ્ટીકા એકેક ભાગની દોઢભાગની ચિપ્પિકા ઊંચી અને બે ભાગ નીકાળો ખરાથી રાખવો એ રીતે ત્રણ ભાગની છાજલી અને નવભાગની ગ્રાસપટ્ટી, સર્વમાં કુશળ એવા બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ ગ્રાસપટ્ટી યુક્ત (કામદ) પીઠની રચના કરવી. ઇતિ કામદપીઠ ૧.

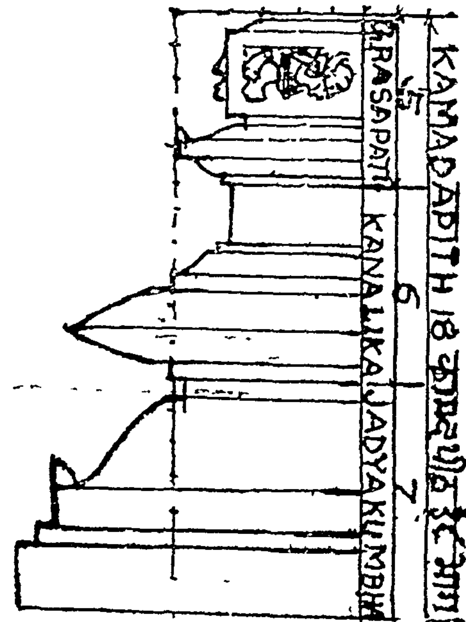
छाजली–केवालका मोटापन तीन भाग और नीकाला भी तीन भागका रखना। उसकी मुखपट्टी आधे भागकी, नीचे उपरका कंद पा पा भागका और नीचे उपरका स्कंध–गलती एक एक भागका, इस तरह तीन भागकी छाजली–केवाल सिद्ध हुई।

कणीके परकी सारी ग्रासपट्टी बारह भागमें नौ भागकी ग्रासपट्टीमें नीचे आधे भागकी धसी–अंधारी, ग्रास मुख पाँच भागमें ग्रास मुखका नीकाला एक भागका उसके नीचे उपरकी पट्टिका एक एक भागकी, डेढ भागकी चिप्पिका ऊँची और दो भाग नीकाला खरासे रखना। इस तरह तीन भागकी छाजली और नौ भागकी ग्रास पट्टी सर्वमें कुशल ऐसे बुद्धिमान शिल्पीको ग्रासपट्टीयुक्त (कामद) पीठकी रचना करना। ७–८–९–१०. इति कामदपीठ १.

सप्तभिजाड्यकुंभं च षडभिस्तु कणालिका।
पंचभिग्रासपीठं च निर्गमं क्रियते बुधैः।
इमांसर्वाणिपीठं च सर्वे देवेषु निर्मितम्॥ ११॥

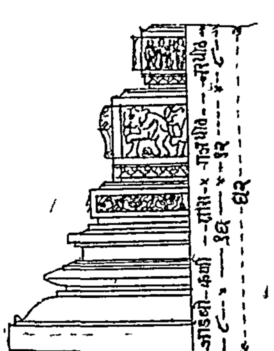
કામદપીઠ વિ.
૭ જાડંબો
૬ કણી
૫ ગ્રાસ૦
૧૮

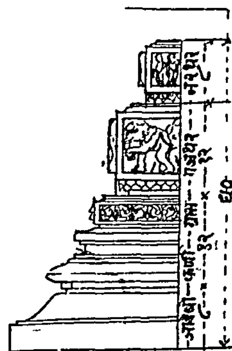
હવે કામદ પીઠનો બીજો પ્રકાર કહે છે. સાત ભાગનો જાડંબો છ ભાગની કણી અને પાંચ ભાગની ગ્રાળ-પટ્ટી અને તેનો નીકાળો શિલ્પી એ બુદ્ધિ પૂર્વક (સ્થાત માન પ્રમાણે) રાખવો. એ રીતના વિભાગના સર્વ પીઠનું સર્વ દેવોના પ્રાસાદને નિર્માણ કરવું. ૧૧ ઇતિ કામદપીઠ ૨.

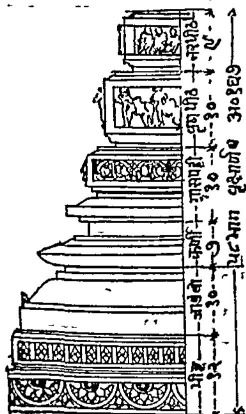


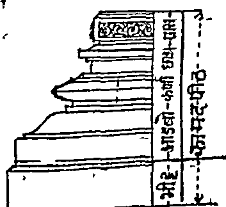
कामदपीठ–भाग १८ प्रकार (२)

अब कामद पीठका दूसरा प्रकार कहते हैं सात भागका जाडबा छ, भागकी कणी और पाँच भागकी ग्रासपट्टी और उसका नीकाला शिल्पीको बुद्धि, पूर्वक स्थान, मानके अनुसार रखना। इस तरहके विभागके सर्वपीठके सर्व देवोंके प्रासादका, निर्माण करना। ११ इति कामदपीठ २

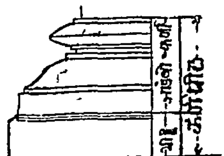






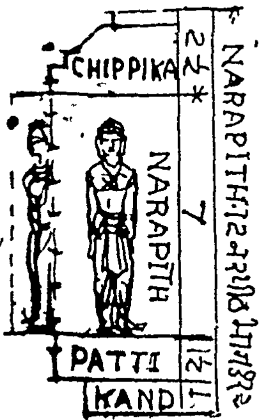


प्रभाशंकर ओ. शिल्पशास्त्री



महापीठ, कामदपीठ और कर्णपीठ

नरपीठ द्वादश भागं सर्वतिमतोपरिद्वय (१)
सार्द्धमधयसंस्थाने द्विसार्द्धश्चमूर्ध्वनः ॥ १२ ॥
सप्तभागे नरंकार्यं मध्य स्थाने मुनीश्वरः ।
अधःकंदभागं च भागमेकं च पट्टिका ॥ १३ ॥
निर्गमं पद सार्द्धं च वायपट्टि च भागतः ।
तत्परि मानवाकार्यो सप्तभाग समन्विता ॥ १४ ॥
इमं आद्यपीठं च सर्वतोन्तर संयुत ।
कर्तव्यं सर्व वर्णानि नित्य कल्याण कारकम् ॥ १५ ॥



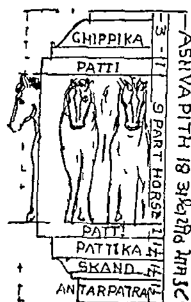
नरपीठ भाग ३२

(કામદ પીઠ કહ્યા પછી હવે મહાપીઠના થરો કહે છે નરપીઠ, બાર ભાગનું પીઠના સર્વથી ઉપરના ભાગમાં કરવું હે મુનીશ્વર, નીચે દોઢ ભાગનો કંદ ઉપર અઢી ભાગની ચિપ્પિકા ઉપર કરવી હે મુનીશ્વર, મધ્યમાં સાત ભાગમાં નર–મનુષ્ય દેવ રૂપો કરવાં. નીચે એક ભાગની કંદ વાય વાય પટ્ટીકા દોઢ ભાગ નીકાળો કરવી. (કુલ બાર ભાગ) એ રીતે સર્વની ઉપર નર આકૃતિ સાથેનું નરપીઠ જાણવું તે સર્વ દેવ વર્ણોને કરવાથી હંમેશાં કલ્યાણકારી જાણવું ૧૩–૧૪–૧૫.

कामदपीठके बाद अब महापाठके थरके बारेमें कहते हैं। नरपीठ बारह भागका पीठके सबसे उपरके भागमें करना। हे मुनीश्वर! नीचे डेढ भागका कंद उपर ढाई भागकीं चिप्पिका करना। हे मुनीश्वर, मध्यमें सात भागमें नर–मनुष्य देवके रूप करना। नीचे एक भागकी कंद वायपट्टीका अंधारी करना। (कुल बारह भाग) देढ भागका नीकाला करना। इस तरह सर्वके उपर नर आकृतिके साथका नरपीठ जानना। वह सर्व देववर्णोको करनेसे हमेशां कल्याण-कारी जानना। १२–१३–१४–१५.

उत्सार्य नरपीठं च वाजिपीठं निवेशितम् ।
अष्टादश भवेत्भागं कर्तव्यं शास्त्र पारगैः ॥ १६ ॥
अधः स्कंध सपादोनं सपादं पट्टिका बुधैः ।
वाजि पट्टि अधोर्ध्व भागे निर्गमं च द्विभागत् ॥ १७ ॥
अधः सार्द्धंतरपत्र उर्ध्व चिप्पिकात्रय ।
नवभागे वाजिरूप एते मश्वपीकम् ॥ १८ ॥

નરપીઠ નીચે અશ્વપીઠ અઢારભાગનું કરવાનું શિલ્પ શાસ્ત્રના પારંગતોએ કહ્યું છે. નીચે સવા ભાગનો સ્કંધ, સવા ભાગની પટ્ટી, અશ્વરૂપ નીચે



अश्वपीठ

ઉપર એકેક ભાગની પટ્ટી તે બે ભાગ નીકળતી કરવી નીચે દોઢ ભાગની અધારી અને ઉપર ત્રણ ભાગની ચિપ્પિકા કરવી નવ ભાગમા અશ્વના સ્વરૂપો જોર મરોડદાર કરવા એ રીતે અઢાર ભાગનુ અશ્વપીઠ જાણવુ ૧૬-૧૭-૧૮

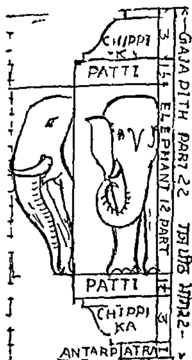
नरपीठके नीचे अश्वपाठ अठारह भागका करनेका शिल्पशास्त्रके पारगतोने कहा है। नीचे सवा भागका स्कंद, सवा भागकी पट्टी, अश्वरूप नीचे उपर एकएक भागकी पट्टीको दो भाग नीकलती करना, नीचे डेढ भागकी अधारी और उपर तीन भागकी चिप्पिका करना। नौ भागमें अश्वके स्वरूप जोर मरोडदार करना। इस तरह अठारह भागका अश्वपीठ जानना १६-१७-१८

મહાપીઠ થર વિભાગ	
જાડબો	૧૨
કણીઅંત	૯
ગ્રાસદળ	૧૨
ગજપીઠ	૨૨
અશ્વપીઠ	૧૮
નરપીઠ	૧૨
કુલ ભાગ	૮૫

कुंजरं द्वाविंश भाग अधोभागं च निर्गमे।
गज चत्वारि निष्काशं पट्टिका त्रिणिमेव च ॥ १९ ॥
पिंडं त्रिभागमुत्सेधं पदमेकं वाय पट्टिका।
(उर्ध्वं चिप्पित्रयं भागार्कोदये गजरूपकम्) ॥ २० ॥
गजपीठोपरंदद्यात नरपीठं च पूर्वत।

અશ્વપીઠથી નીચેના ભાગે નીકળતુ ગજપીઠ બાવીશ ભાગનુ કરવુ ચાર ભાગના નીકળતા હાથીના સ્વરૂપો કરવા તેની નીચે ઉપર ૧॥ + ૧॥ ભાગની એમ ત્રણ ભાગની પટ્ટિકાઓ કરવી નીચે ત્રણ ભાગ ઊંચી ચિપ્પિકા તે તેની એક ભાગની વાયપટ્ટિકા (અંતર પત્ર) કરવી ઉપર ત્રણ ભાગની ચિપ્પિકા કરવી હસ્તિના સ્વરૂપો બાર ભાગ ઉદય-મા કરવા એ રીતે બાવીશ ભાગ ઉદયનુ ગજપીઠ જાણવુ—ગજપીઠ ઉપર સીધુ આગળ કહ્યુ નેવુ પણ મૂકી શકાય ૧૮-૨૦

अश्वपीठसे नीचेके भागमें नीकलता हुआ गजपीठ बाईस भागका करना। चार भागके नीकलते हाथीके स्वरूप करना। उसके नीचे उपर $१\frac{१}{२}$ + $१\frac{१}{२}$ भागकी



गजपीठ विभाग २२

इस तरह तीन भागकी पट्टिकाऐं करना। नीचे तीन भाग ऊँची चिप्पिका, उसके नीचे एक भागकी वायपट्टिका (अंतरपत्र) करना। उपर तीन भागकी चिप्पिका करना। हस्तिके स्वरूप बारह भाग उदयमें करना। इस तरह बाइस भाग उदयका गजपीठ जानना। गजपीठके उपर सीधे पूर्वोक्त नरपीठको भी रखा जाता है। १९–२०.

गजस्य नरमध्यायमश्वपीठं त्रयोदशं (?)॥ २१॥
पक्षान्तरे गजसंस्थाने अधो वा उर्ध्वमेवच।
तत्रांतर हयो कार्य वाजिरूपं च सप्तमिः।
निर्गमं द्वय भागं द्वयं वयमिहोवच॥ २२॥

ગજપીઠ અને નીરપીઠની મધ્યમાં અશ્વપીઠ તેર ભાગનું કરવું. પક્ષાન્તરે ગજપીઠ કોઈમાં ન પણ થાય તેના બદલે અશ્વને નર પીઠ થાય. તે અશ્વપીઠમાં અશ્વના સ્વરૂપો સાત ભાગનાં અને બે ભાગના નીકળતા કરવા ૨૧–૨૨ ઇતિ મહાપીઠ.

गजपीठ और नरपीठके मध्यमें अश्वपीठ तेरह भागका करना। पक्षान्तरसे गजपीठ किसीमें नहीं भी होता है। उसके बदले अश्व और नरपीठ होता है। उस अश्वपीठमें अश्वके स्वरूप सात भागके और दो भागके नीकलते करना २१–२२

इति महापीठ।

विश्वांश ग्रासपीठ मेकादशस्तुकर्णिका।
चतुर्दश जाडचकुंभ नवम भागपीठकम्॥ २३॥

મહાપીઠ થર વિભાગ	
જાડંબો	૧૪
કણી અંતઃ	૧૧
ગ્રાસપટ્ટી	૧૩
ગજપીઠ	૨૨
અશ્વપીઠ	૧૮
નરપીઠ	૧૨
કુલ	૯૦

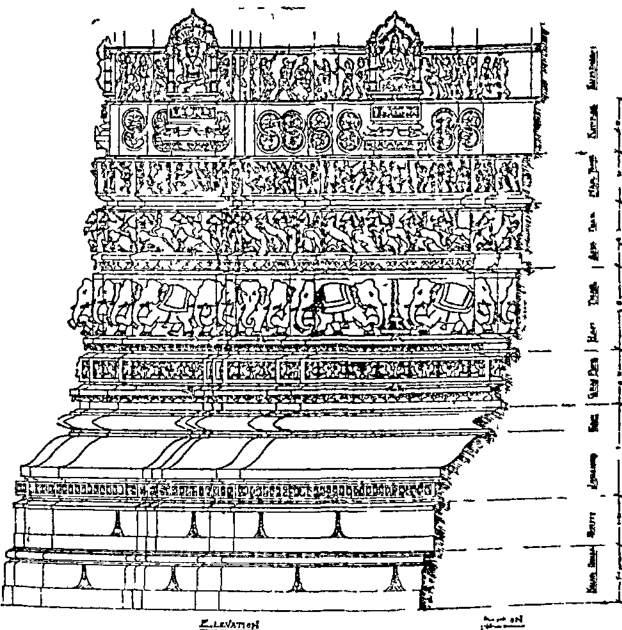
ગ્રાસપીઠ તેર ભાગનું કણી અગીયાર ભાગની અને જાડંબો ચૌદ ભાગનો મળી કુલ ૯૦ ભાગની મહાપીઠ જાણવું. (૧૨ નરપીઠ ૧૮ અશ્વપીઠ ૨૨ ગજપીઠ ૧૩ ગાયપટી ૧૧ કણીકા ૧૪ જાડંબો–કુલ ૯૦ ભાગ) ૨૩.

ग्रासपीठ तेरह भागका–कणी ग्यारह भागकी और जाडंबा चौदह भागका मिलकर कुल ९० भागकी महापीठ जानना। (नरपीठ १२ अश्वपीठ १८ गजपीठ २२ ग्रासपीठ १२ कर्णिका ९१ जाडंबा १४ कुल. ९० भाग)–२३.

हयव्याघ्रं धरापीठ धराधरं हयैर्युत।
पृथ्वीप्रति कर्तव्यं वाजिपीठं च नान्यथा॥ २४॥

પ્રાસાદમાંના સ્થાપિત દેવનું વાહન શિવને વૃષભ સૂર્યને અશ્વ બ્રહ્માને હંસ દેવીને વ્યાઘ્ર કે સિંહ તેમ પીઠમાં કરવા એ રીતે અશ્વ કે વ્યાઘ્રનાં રૂપો

પીઠમા કરવા ગજાને અશ્વયુક્ત પીઠ કરવુ પૃથ્વી પતિ (ચક્રવર્તી) ને અશ્વપીઠ કરવુ બીજા નાના રાજાને બીજુ કાઈ ન કરવુ

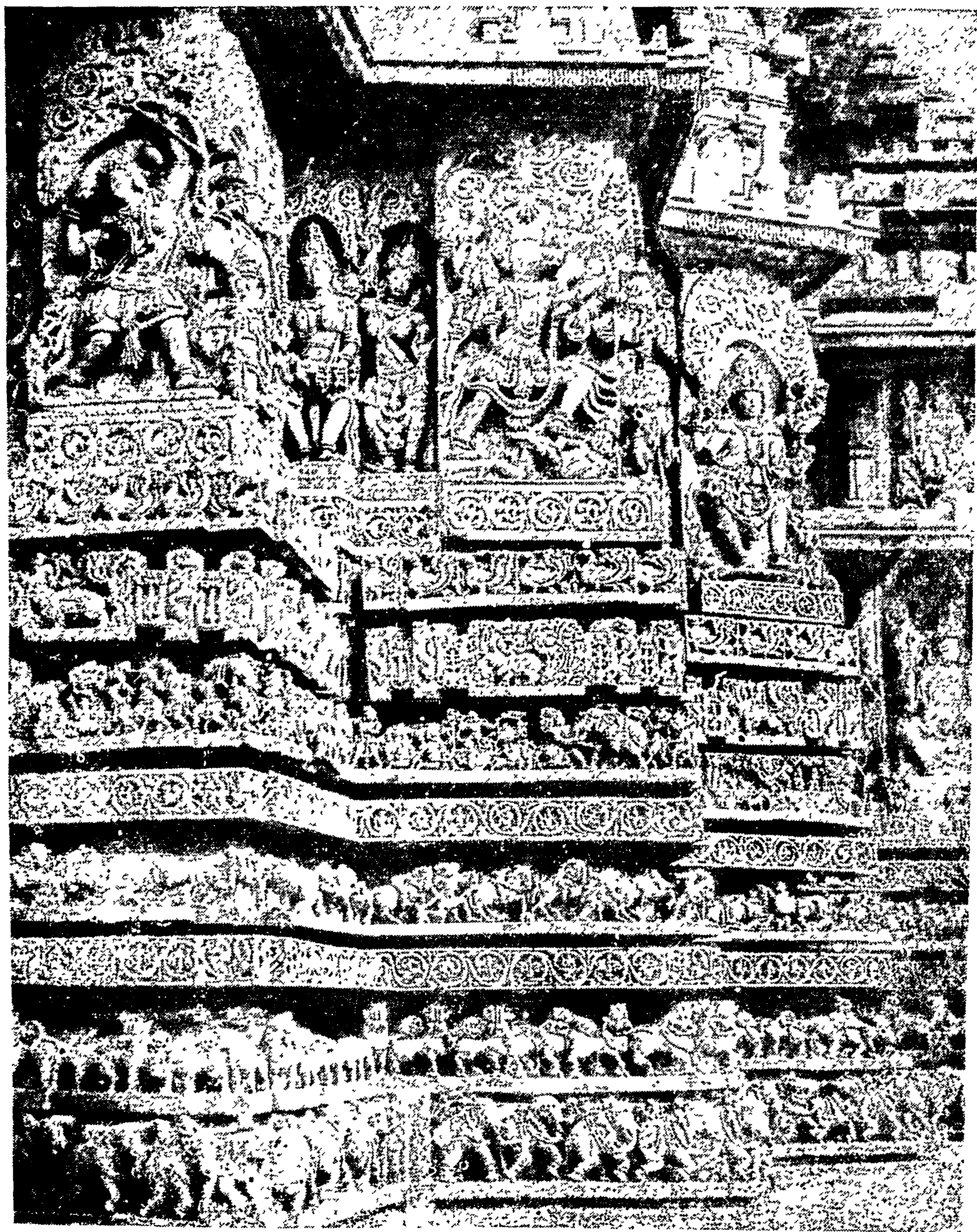


भीट्ट–गज, अश्व, नरपीठ साथका अलङ्कृत महापीठ

प्रासादमे स्थापित देवका वाहन, शिवको वृषभ, सूर्यको अश्व, ब्रह्माको हंस, देवीको व्याघ्र या सिंह पीठमे करना। इस तरह अश्व या व्याघ्र के रूप पीठमे करना। राजाको अश्वयुक्त पीठ करना। पृथ्वीपति (चक्रवर्ती)को अश्वपीठ करना। दूसरे छोटे छोटे राजाको दूसरा कुछ भी नहीं करना।२४ *

इति श्री विश्वकर्माकृते क्षीरार्णवे नारदपृच्छायां पीठथर विभाग नाम शताग्रेऽ षष्ठमोऽध्याय ॥ १०६ ॥ (क्रमांक अ० ८)

* દીપાર્ણવમા પીઠના જુદા જુદા પ્રકારો બહુ સવિસ્તર કહેલા છે અપરાજિત સૂત્ર



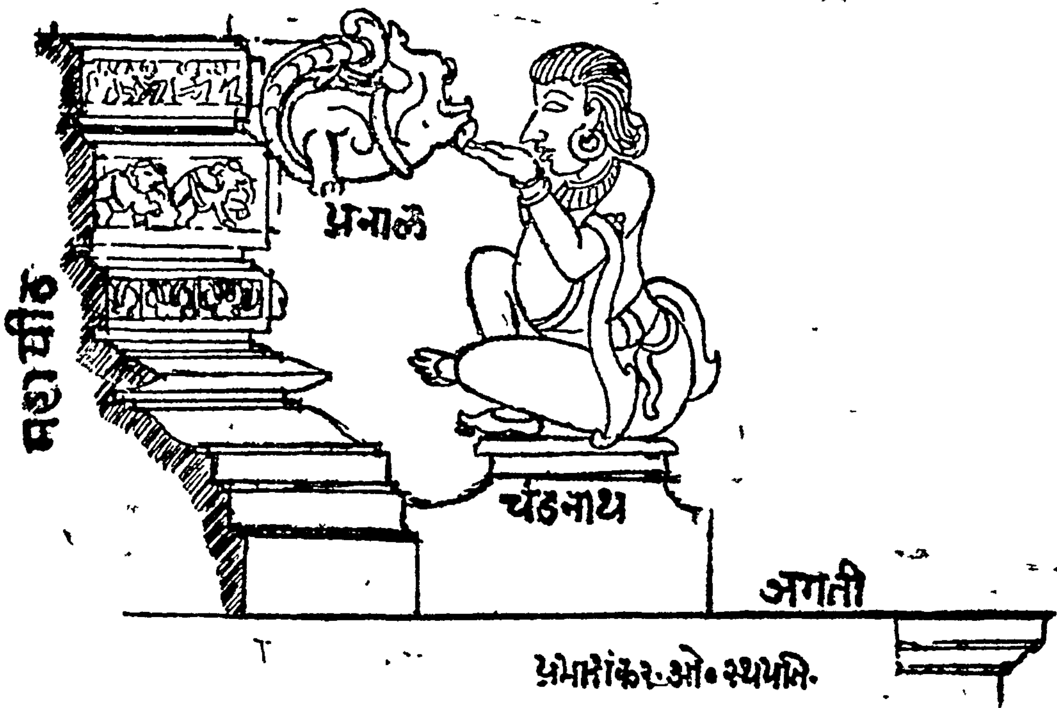
बेलुर के कलापूर्ण मंदिर के हस्त–अश्वगज सिंहयुक्त और देवस्वरुपयुक्त मडोवर की जंघा



सेंच्युरी-रेयोन बीरलाजी कल्याण-मदिरकी चतुष्किकामें मदिर निर्माता श्री प्रभाशकरजी श्रीमती और श्रीमान श्रीगोपाल नेवटीयाजी

ઇતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવે શ્રીનારદ મુનિશ્વરે પૂછેલ પીઠ થર વિભાગ લક્ષણનો શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી ગુર્જર ભાષાની સુપ્રભા નામની ટીકાનો એકસો છ ઠ્ઠો અધ્યાય. ૧૦૬ ક્રમાંક અ૦ ૮.

इतिश्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें नारदमुनिश्वरके संवादरूप पीठ थर विभाग लक्षण का शिल्पविशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुरा रचिता सुप्रभा नामकी भाषाटीका का १०६ वाँ अध्याय ।। (क्रमांक अ० ८)



महापीठ साथप्रमाल और शिवनिर्माल्यका चंडनाथ

સંતાનતાં ફક્ત એક જ મહાપીઠ થર વિભાગનું પીઠ આપેલા છે. वृक्षार्णवમાં પીઠ જુદાં જુદાં કહ્યા છે. પ્રાસાદના પ્રમાણથી પીઠ કરવું જોઈએ તે ખરું પરંતુ કેટલીક વખત સ્થાન માન કે દ્રવ્ય ભાવ જોઈને નાનું પ્રમાણ લેવામાં દોષ કહ્યો નથી. પીઠ માનથી અર્ધું કે ત્રીજે ભાગે કરી શકાય. બાવન જીનાલય સહસ્ત્રલિંગ કે ચોસઠ જોગણીની દેવકુલીકાની પંક્તિમાં તેમ ઓછું પીઠ કરવામાં દોષ નથી. વૃક્ષાર્ણવ अ ૧૪૭ માં प्रासादस्य षडांशेन पीठं कुर्याद्विचक्षण નું પ્રમાણ મળે છે. તે કંઈક આ મતને સમર્થન આપે છે.

(१) दीपार्णवमें पीठके भिन्न भिन्न प्रकार बहुत विस्तार से कहे गए हैं। अपराजित सूत्रसंतानमें सिर्फ एक ही महापीठके थर–विभागका आये हुए है। वृक्षार्णवमें पीठ अलग अलग कहे गए है। प्रासाद के प्रमाणसे पीठ करना चाहिए, यह ठीक है लेकिन कई वार स्थान मान या द्रव्य भाव देखकर छोटा प्रमाण लेनेमें दोष नहीं कहा है। अर्धं भागे त्रिभागे वा पीठंचैव नियोजयेत् स्थान मानाश्रयं ज्ञात्वा तत्रदोषो न दीयते।

आधे या तीसरे भागमें पीठ हो सकती है। बावन जिनालय, सकस्रलिंगा या चौसठ योगिनींकी देवकुलिका की पंक्तिमें कम पीठ करने में दोष नही है। वृक्षार्णव अ० १३७ में प्रासादस्य षडांशेन पीठं कुर्याद्विचक्षण 'का प्रमाण है। यह इस मतको कुछ समर्थन देता है।

॥ अथ मंडोवर थर विभाग ॥

क्षीरार्णव अ० १०७-क्रमांक अ० ९

विश्वकर्मा उवाच —

पूर्वोदयोक्ता अतः प्रवक्ष्यामि मंडोवरम् ।
खुरकः पंच भागस्या द्विंशतिकुंभकस्तथा ॥ १ ॥
कलशाऽष्टौ द्विसार्द्धं तु कर्तव्यमंतरालकम् ।
कपोतिकाष्टौ मंची स्यात् कर्तव्य नवभागिकाः ॥ २ ॥
पंच त्रिंशत्पदा जघा तिर्थ्यंशैरुद्गमो भवेत् ।
वसुभि भरणी कार्या शिरावटी दशांशीका ॥ ३ ॥
अष्टांशोर्ध्वा कपोतालि द्विसार्द्ध मन्तरालकम् ।
छाद्य त्रयोदशांशोच्च दश भार्गेविनिर्गमः ॥ ४ ॥

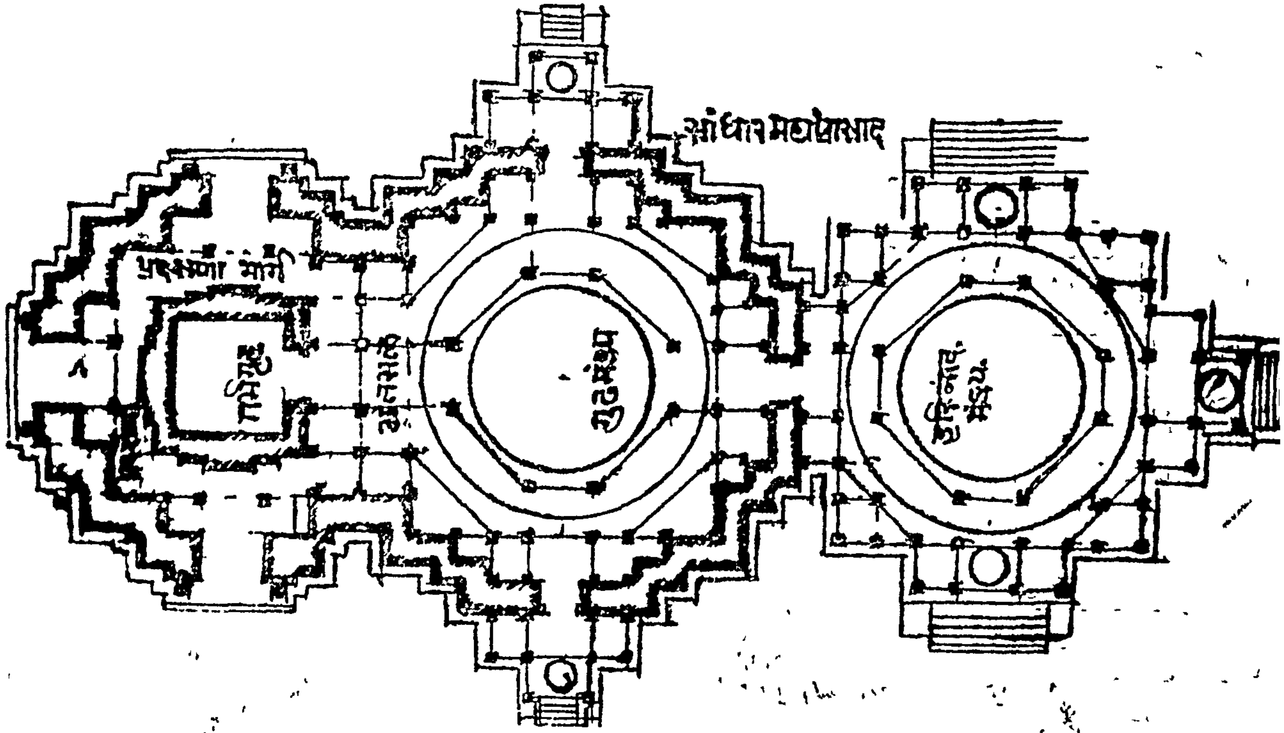
इति नागरादि मंडोवर भाग ॥१४४॥

પ્રાસાદના ઉદયનુ પ્રમાણ આગળ (અ૦ ૧૦૪ મા) કહ્યુ હવે (તે ૧૪૪ ભાગનો નાગરાદિ) મંડોવર કહુ છુ ખરો પાચ ભાગનો, કુંભો વીસ ભાગનો, કળશો આઠ ભાગનો અંધારી અઢી ભાગની, કેવાળ આઠ ભાગનો, માચી નવ ભાગની, જંઘા પાત્રીસ ભાગની દોઢીયા પંદર ભાગની, ભરણી આઠ ભાગની, શિરાવટી દશ ભાગની ઉપરનો મહા કેવાળ આઠ ભાગનો, અઢી ભાગની આતરાળ, અને છજ્જુ તેર ભાગ ઊંચુ અને દશ ભાગ નીકળતુ કરવુ તે રીતે નાગરાદિ મંડોવર ૧૪૪ વિભાગનો જાણવો (હવે સાધાર પ્રાસાદને યોગ્ય બે ત્રણ ભૂમિકાનો મેરૂ મંડોવર કહે છે) ૧ થી ૪

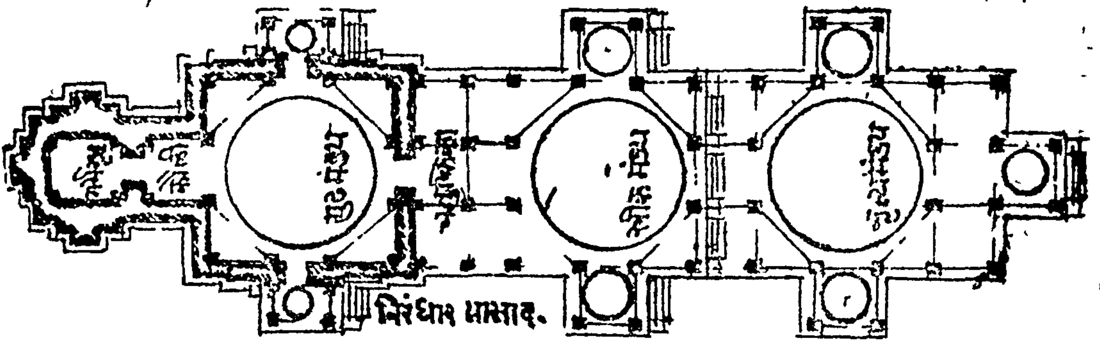
प्रासादके उदयका प्रमाण आगे (अ० १०४ मे) कहा। अब (यह १४४ भागका नागरादि) मडोवर कहता हूँ। खरा पाँच भागका, कुभा वीश भागका, कलशा आठ भागका, अँधारी ढाई भागकी, केवाल आठ भागका, माची नौ भागकी, जघा पैंतीश भागकी, दोढिया पन्द्रह भागका, भरणी आठ भागकी, शिरावटी दस भागकी, ऊपरका महा केवाल आठ भागका, ढाई भागकी अतराल और छज्जा तेरह भागका ऊँचा ओर दस भाग नीकलता करना। इस तरह नागरादि मडोवर १४४ विभागका जानना। (अब साधार प्रासादके योग्य दोतीन भूमिका का मेरुमंडोवर कहते है।) १-२-३-४

इति नागरादि मडोवर भाग ॥१४४॥

सांधार महाप्रासाद तलदर्शन



निरंधारप्रासाद तलदर्शन



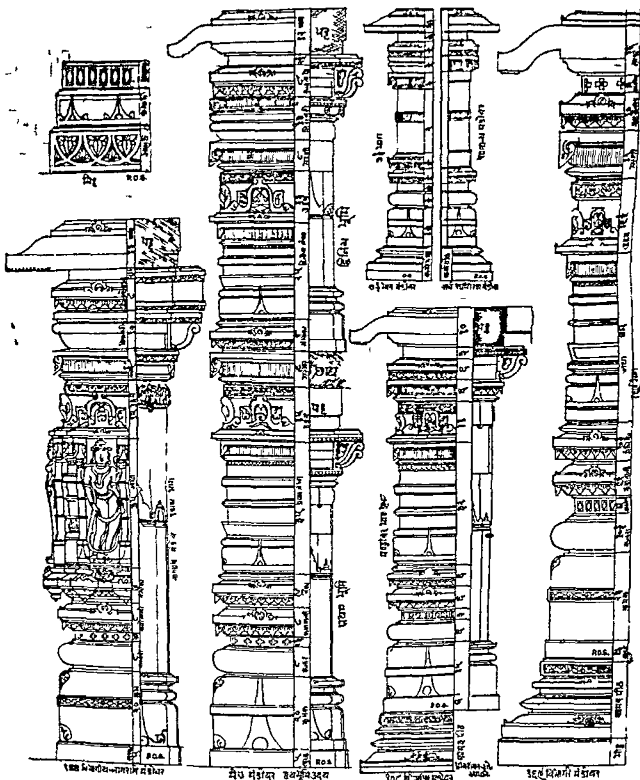
सांधार महाप्रासाद और निरंधार प्रासादका स्वरूप तलदर्शन

मेरूमंडोवरे मंची भरण्यूर्ध्वेऽष्ट भागिका ।
पंच विंशतिका जंघा उद्गमश्च त्रयोदशः ॥ ५ ॥
अष्टांशा भरणी शेषं पूर्ववत्कल्पयेत्सुधीः ।
सप्त भागा भवेन्मंची खुटछाद्यस्य मस्तके ॥ ६ ॥
षोडशांशा पुनर्जंघा भरणी सप्त भागिका ।
शिरावटी चतुर्भागा पट्टः स्यात्पंचभागिकाः ॥ ७ ॥
सूर्यांशै खूटछाद्यं च सर्वकामफलप्रदम् ।

આગળ નાગરાદિ મંડોવર ૧૪૪ ભાગનો કહ્યો. પરંતુ જો બે ત્રણ ભૂમિના મેરૂમંડોવરની રચના કરવી હોય તો આગળ કહેલા. ભરણી સુધીના નવ થરના વિભાગ ૧૧૦॥ ઉપર બીજી ભૂમિના થરવાળા કહે છે. ભરણી ઉપર આઠ ભાગની માચી પચ્ચીસ ભાગની જંઘા, તેર ભાગનો દોઢિયો, આઠ ભાગની ભરણી અને તે ઉપર આગળ શ્લોક ત્રીજાથી કહેલા થરો ફરી ચડાવવા એટલે દશભાર શિરા વટી, આઠ ભાગના મહાકેવાળ અઢી ભાગનો અંતરાળ અને તેર ભાગનું છજું એમ મળી તે ૮૭॥ ભાગ થયા. એટલે ૧૧૦॥ + ૮૭॥ = ૧૯૮ ભાગ બીજી ભૂમિ સુધીની ઉભણી જાણવી.

पृथक पृथक् मडोवर–अदरना–स्तम्भ का समन्वय साथ

भीट्ट साधार प्रसादना मडोवर १०८ भागना मडोवर १६९ भागना मडोवर
मेरु मडोवर ७ भागका मडोवर



१ २ ३ ४
भीट्ट–१ '१४४ भागका मडोवर २ मेरु मडोवर १०८ भागना मडोवर १६९ भागका मडोवर

હવે ત્રીજી ભૂમિના ભાગ મહામંડોવરના કહે છે છજા પર ફરી સાત ભાગની માચી, સોળ ભાગની જંઘા, સાત ભાગની ભરણી, ચાર ભાગની શિરાવટ

તથા પાંચ ભાગનો પટ્ટ તે ઉપર બાર ભાગનું છજુ કરવું. (એવો ત્રણ ભૂમિ-ઉદયનો બે છાદ્યવાળો) મહામંડોવર સર્વ કામનાને ફળદાતા જાણવો; ૫–૬–૭

आगे नागरादि मंडोवर १४४ भागका कहा, लेकिन जो दो-तीन भूमिके मेरू मंडोवर की रचना करनी हो तो आगे कहे हुये भरणी तक के नौ थरके विभाग ११०॥ ऊपर दूसरी भूमिके थरवाले कहते है।

ખરો	૫		
કુંભો	૨૦		
કળશો	૮		
અંતરાળ	૨॥		
કેવાળ	૮		
મંચિકા	૯		
જંઘા	૩૫		
ઉદ્ગમ	૧૫		
ભરણી	૮		
શીરાવટી	૧૦	૧૧૦॥	
મહાકેવાલ	૮	૮	મંચિકા
અંતરાળ	૨॥	૨૫	જંઘા
છજુ	૧૩	૧૩	ઉદ્ગમ
	૧૪૪	૮	ભરણી
		૧૦	શીરાવટી
		૮	મહાકેવાળ
		૨॥	અંતરાળ
		૧૩	છજુ
		૧૯૮	
		૭	માચી
		૧૬	જંઘા
		૭	ભરણી
		૪	શીરાવટ
		૫	પટ્ટ
		૧૨	છજુ
મહામેરૂ મં૦		૨૪૯	

भरणीके पर आठ भागकी माची, पच्चीस भाग की जंघा तेरह भागका दोढिया, आठ भागकी भरणी, और उसके पर आगे श्लोक तीसरसे कहे हुए थर फिर चढ़ाना। अर्थात् दस भाग शिरावटी, आठ भागके महा-केवाल, ढाई भागका अंतराल और तेरह भागका छज्जा–ये मिलकर ८७॥ भाग हुए। इससे ११०॥ + ८७॥ = १९८ भाग हुए। दूसरी भूमि तकका उदय जानना।

अब तीसरी भूमिके भाग महामंडोवर के कहते हैं। छज्जे पर फिर सात भागकी माची, सोलह भागकी जंघा, सात भागकी भरणी, चार भागकी शिरावट तथा पाँच भागके पट्ट, उसके पर बारह भागका छज्जा करना। ऐसे (तीन भूमि उदय के दो छाद्यवाले) महा मंडोवरको सर्वकामना और फलके दाता जानना। ५–६–७.

कुंभकस्य युगांशेन स्थावराणां प्रवेशकं ॥८॥

इति मेरु मंडोवर

મંડોવરના કુંભા આદિ થરો (છજા સિવાયના) ઓળંભે કરવા. તે થરોના ઘાટની ઊંડાઈ ચાર ભાગ સુધી રાખવી. ૮

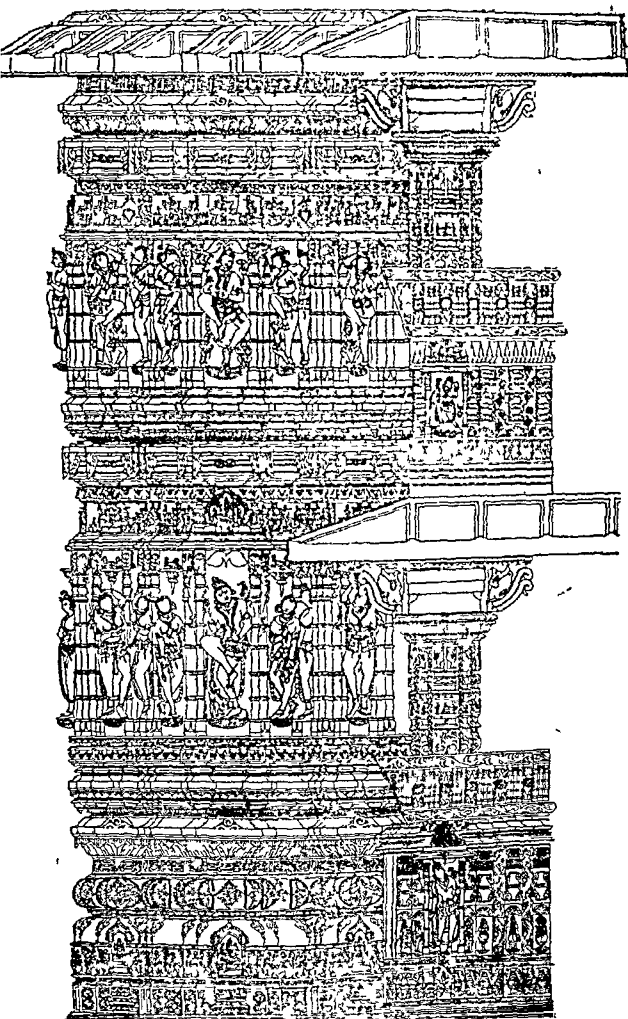
कुंभा आदि थर (छज्जेके सिवा) ओलंभे पर करना। उन थरोंक घाटकी गहराई चार भाग तककी रखना ८.

इति मेरु मंडोवर भाग २४९।

पुनः द्वाभवेत्जंघामंन्चिका स्वमानकधाः।
खुरकं स्थरखुटछाद्य निर्गमं पीठ मध्यतः ॥९॥

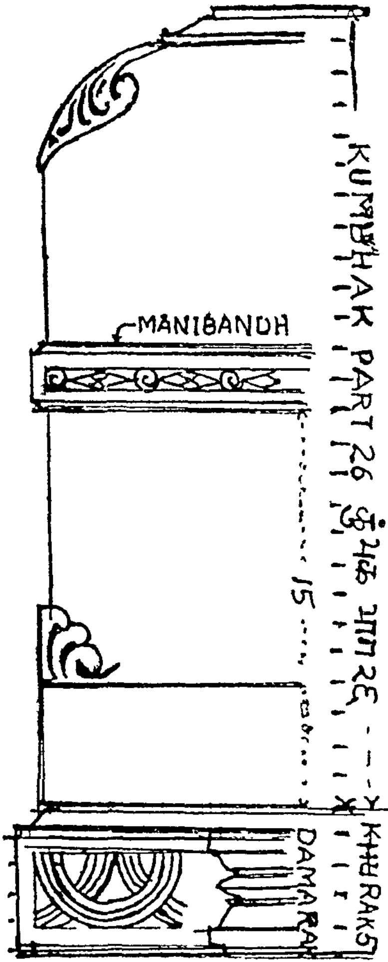
ઉપર ભૂમિ કરવાને ફરી જંઘા ચડાવવાને માચીનો થર પોતાના માનથી ભાગે ચડાવવા. ખરા આદિ થરો ઓળંભે સ્થિર અને ઉપરનું છજુ પીઠથી કાંઈક નીકળતું કરવું. ૯.

ऊपर भूमि करनेके लिये, फिर जंघा चढाने के लिये, माचीका थर अपने मानके भागमें चढाना। खरा आदि थरोंको ओलंभेपर स्थिर रखना और ऊपरका छज्जा पीठसे कुछ निकलता करना। ९.



साधार-महाप्रासाद का दो जघायुक्त अलकृत-मेरमडोवर

अब २०६ भागका मंडोवर कहते है—

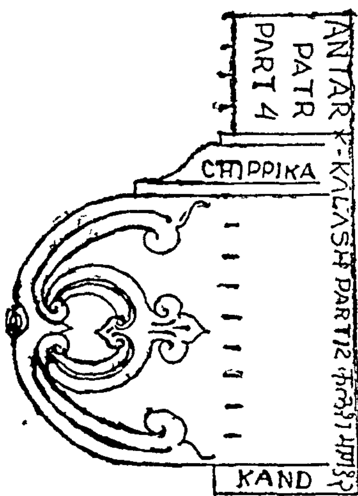


खुरक पाँच भाग
कुंभक भाग २६

खुरकं पंचभागस्यात् कुंभकं षट्विंशतिः ।
मणिबंध प्रकर्तव्या भागस्यादश पंचके ॥१०॥
त्रयोदश्यात्परे भागे विभागंच समो मुनि ।
खुरकंऽमराकारं कुंभांते पल्लवाकृति ॥११॥

હવે અન્ય મંડોવરના થરના ઘાટ સાથેનો ૨૦૬ ભાગનો કહે છે. ખરો પાંચ ભાગનો કુંભો છવ્વીસ ભાગનો તેને મણીબંધ પંદરમે ભાગે કરવા તે હે મુનિ તેર ભાગ ઉપર કરવા (?) ખરામાં ડમરૂની કે મરકત–મોતીની જાલરની આકૃતિ કરવી અને કુંભામાં ખૂણે ખૂણે પાંદડાની સુંદર આકૃતિ કરવી. ૧૦–૧૧.

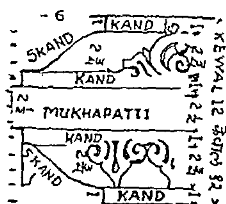
अब अन्य मंडोवर के थरके घाटके साथ २०६ भागका कहते हैं। खरा पाँच भागका, कुंभा छब्वीस भागका, उसको मणिबंध पन्द्रहवें भागमें करना। हे मुनि, तेरह भाग ऊपर करना। खरेमें डमरु की या मरकत की झालर की आकृति करना। और कुंभामें ऊपर कोने कोनेमें पत्र की सुन्दर आकृति करना। १०–३१.



कलशा भाग १२ अंतरपत्र भाग

कलशं च द्वादश भागं अंतरपत्रंतुवेदभिः ।
भागैकं प्रतिकंदश्च अधः कंदंच भागत् ॥१२॥
ग्रेक भागं तु षट्कार्य निर्गमंपट्मेवच ।
द्वादशश्च कपोताली गर्भकर्ण द्विसार्द्धकं ॥१३॥
कंदस्य भागमेकेन अधः चैतत्समं भवेत् ।
मुखपट्टि भवेद्विभिः शेषः स्कंधद्वयं भवेत् ॥१४॥

કળશો બાર ભાગનો, અંતરાળ ચાર ભાગની, કળશાને એક ભાગનો પ્રતિકંદ ઉપર કરવો-અને નીચે એક ભાગનો કંદ કરવો. એક ભાગની ચિપ્પીકા ઉપર કરવી. કળશો નવ ભાગનો (કળશાને મણીબંધ મોતીની કરવી) અને કળશાનો નીકાળો છ ભાગનો (અંતરાળથી) રાખવો.



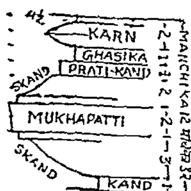
केवाल भाग १२

કેવાળ બાર ભાગનો તેમા વચલી મુખપટ્ટી અટી ભાગની, નીચે-ઉપરનો કદ એકેક ભાગનો, મધ્યની મુખપટ્ટી પાસેના બેઉ કદ એકેક એમ બે ભાગના અને બાકી પોણા ત્રણ પોણા ત્રણ ભાગના બે નીચે ઉપરના સ્કંધ-ગલતા કરવા એ રીતે કેવાળનો બાર ભાગનો ઘાટ જાણવો ૧૨-૧૩-૧૪

कलशा बारह भागका, अतराल चार भागकी, कलशा को एक भागका प्रतिकद ऊपर करना और नीचे एक भागका कद करना। एक भागकी चिप्पिका ऊपर करना। कलशा नौ भागका करना। (कलशेमे मणिबंध मोतीकी करना) और कलशेका निकाला छ भागका (अतरालसे) रखना।

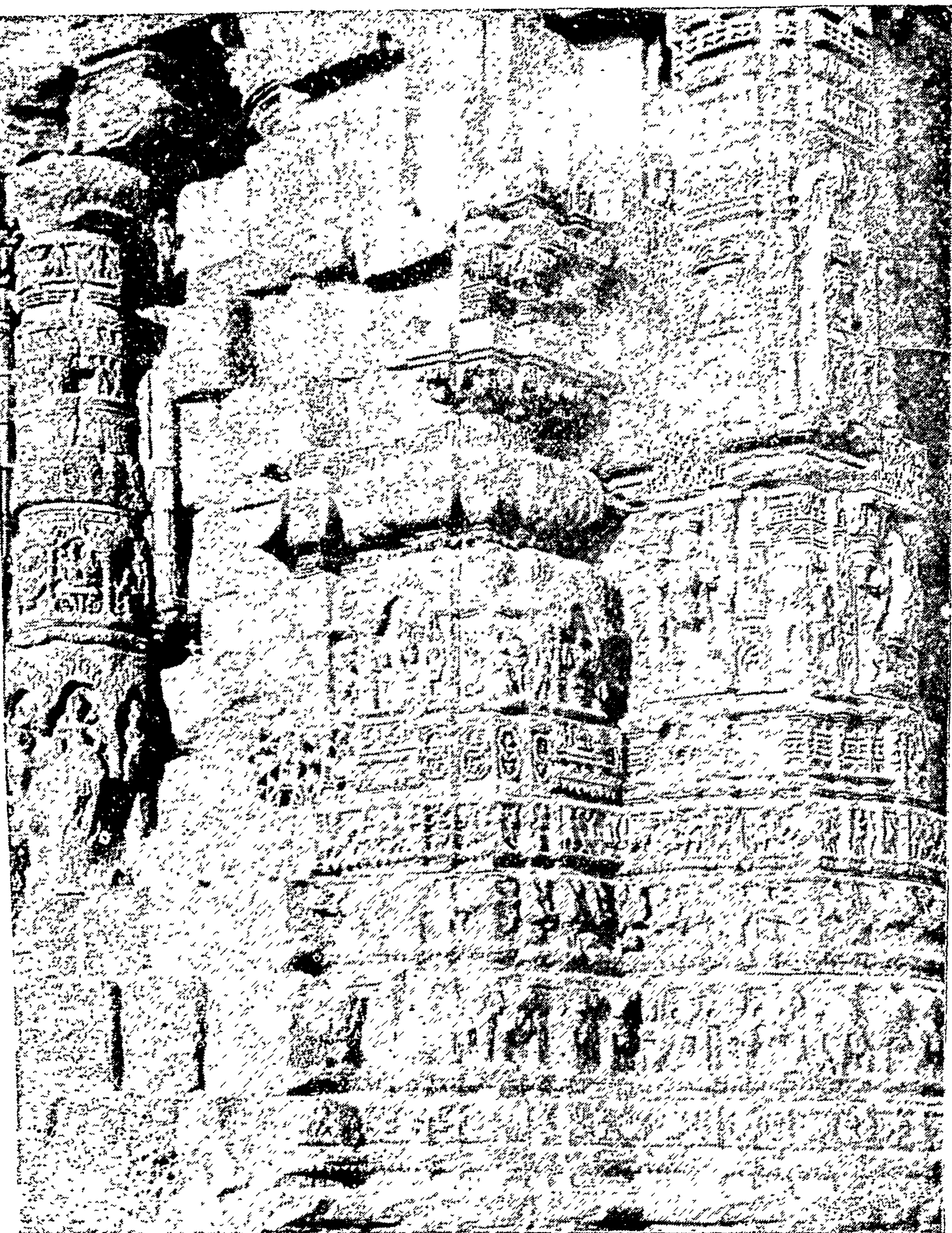
केवाल बारह भागका, उसमें मध्यकी मुखपट्टी ढाई भागकी, नीचे ऊपरका कद एक एक भागका। मध्यकी मुखपट्टी को पासके दोनो कद एक एक भाग ऐसे दो भागके और बाकी पौने तीन भागके दो नीचे ऊपरके स्कंधगलते करना। इस तरह केवालका घाट १२ भागका समझना। १२-१३-१४

अंतरंच द्विभागंच (?) द्वादशमंचिकोत्तमा।
प्रवेशंच सार्द्धश्चतुर्थ स्कंध परिमस्तके ॥१५॥
कर्णं च द्वय भागानि घसिका पदपट्टिका।
तत्समं प्रतिकंधश्च पदभागं च पट्टिका ॥१६॥
कर्णं पट्टी द्वयं भाग मुखपट्टि पदं भवेत्।
अधः कदं भवेद्भाग शेषेच स्कंध द्वयम् ॥१७॥



मचिका १२ भाग

બાર ભાગની માચીના થરમા ઉપર કણીયેથી સાડાચાર ભાગ પ્રવેશ (ઘાટની ઊંડાઈથી) નીકાળો રાખવો કણી બે ભાગની ઘસીકા-કદ પટ્ટી એક ભાગની તેટલો પ્રતિકદ ઉપરનો એક ભાગનો, કર્ણપટ્ટી-મુખપટ્ટી બે ભાગની કરવી મુખપટ્ટીની બાજુમા કદ અરધા અરધા ભાગના કરવા નીચેનો કદ એક ભાગનો બાકીના સાડાપાચ ભાગમા બે સ્કંધ (ગલતા) નીચે ઉપરના કરવા (નીચેનો મોટા



सोमनाथ के प्रवित्र महाप्रासाद उत्तरभद्र महापीठ कक्षासन और स्तंभ



सोमनाथ के प्राचिन भव्यमहाप्रासाद के नर अश्व गज थरयुक्त महापीठ और द्वयनघायुत मडोवर

ઉપરનો નાનો) એ રીતે બાર ભાગના માચીના થરના ઘાટના વિભાગ જાણવા. ૧૫-૧૬-૧૭.



त्रिपुरान्तक शिव जंघामें रूप

बारह भागकी माचीके थरमें ऊपर कणीसे साढे चार भाग प्रवेश (घाट की गहराई से) निकाला रखना। कणी दो भाग की, घसीका-कंदपट्टी एक भागकी, उतना प्रतिकंद ऊपर का एक भागका, कर्णपट्टी-मुखपट्टी दो भागकी करना। मुखपट्टी को बाजुमें कंद आधे आधे भागके करना। नीचेका कंद एक भाग का, बाकी साढे पाँच भागमें दो स्कंध (गलते) नीचे ऊपरके करना। (नीचेका मोटा, ऊपरका छोटा) इस तरह बारह भागके माचीके थरके घाट के विभाग जानना। १५-१३-१७.

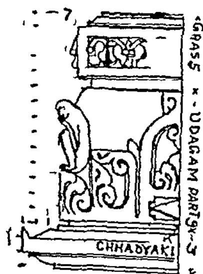
पदषष्टि भवेत्जंघा
लोकपालस्य निर्गतः।
दिग्पाल भ्रमंतस्य ततः
स्थाप्या प्रदक्षणे ॥१८॥

માંચીના ઉપર સાઠ ભાગની જંઘા લોકપાલાદિ રૂપથી નીકળતી કરવી. તેમાં ફરતા પ્રદક્ષિણાએ દિગ્પાલનાં સ્વરૂપો કરવાં. ૧૮.

माचीके ऊपर साठ भागकी जंघा लोकपालादि रूपसे निकलती हुई करना। उसमें फिरते प्रदक्षिणामें दिग्पाल देव स्वरूप करना। १८.

रथउपरथश्चैव कुर्यादेवाङ्गना मुने!।
वारिमार्गे मुनींद्रश्च जटाधारी शिवालये ॥१९॥
सप्त भागयता कुंभि अष्टमध्येच पल्लवः।
डमरकं नव भागं पट्टत्रिशे चतुर्कर्णिकाः ॥२०॥

प्रवेशं सप्त भागानी कर्तव्यं च सदाबुरे ।
भरणीका-च द्वादशभागे चिप्पिका भागमेवच ॥२४॥
कर्णिका सार्द्धभागेन घसिका अर्धमेवच ।
उपर्युपरिकरैः स्यात् सप्तभाग विचक्षण ॥२५॥
कर्णपट्टी द्वयो भाग तदूर्ध्वपल्लवोर्युत ।
अशोक पल्लवाकारा कर्तव्या सर्वकामदाः ॥२६॥



उद्गम भाग १७

જંઘા જાંઘી ઉપર દોઢીયો સત્તર ભાગનો કરવો તેમાથી નીચે છાજલી ત્રણ ભાગની અને ત્રણ ભાગની કળતી તે પર નવ ભાગનો ઊંચો દોઢીયો કરવો તેમા વચ્ચે બહાર નીકળતુ મુખભદ્ર દોઢીયાનુ ફાસનાકારે કરવુ તે ઉપર પાચ ભાગ ઊંચાઈની ગોળાઈમા પટ્ટીમા ત્રણ ભાગમા ગ્રાસ કરવા આ બધા ઘાટની ઊંડાઈ મૂળથી સાત ભાગની બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ રાખવી (ઉદ્‌ગમના ખુણે ખુણે કપિ બેસાડવા) કુલ ૧૭ ભાગ દોઢીયાના જાણવા

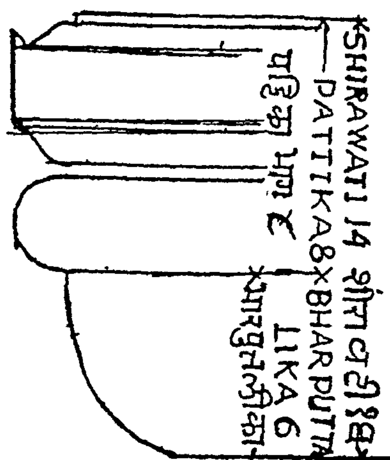
जघा-जघीके पर दोढिया सत्रह भागका करना। उसमेसे नीचे छाजली तीन भागकी और तीन भाग निकलती-उसके पर नौ भागका ऊँचा दोढिया करना। उसमे मध्यमे बाहर निकलता मुख भद्र, दोढियेका फासना कारमे करना। उसके उपर पाँच भाग ऊँचाईके गालाकारमे पट्टीमे तीन भागमे ग्रास करना। ये सब घाटकी गहराई मूलसे सात भागकी बुद्धिमान शिल्पीको करना। (उद्गमके कोने कोनेपर कपिको बिठाना।) कुल १७ भाग दोढियेके जानना। २२-२३



भरणी भाग १२

દોઢીયાપર ભરણી બાર ભાગની કરવી તેમા નીચેથી એક ભાગના કદ સહિત ચિપ્પિકા કરવી તે પર દોઢ ભાગની કર્ણી કરવી અર્ધા ભાગની ઘશી કરવી તે ઉપર પરિકરના જેમ પલ્લવો સાત ભાગમા વિચક્ષણ શિલ્પીએ નીચે કદ અને ઉપરની પટ્ટી નીચે ચીપલી કર્ણી સાથે) રાખવા ઉપરની મુખપટ્ટી બે ભાગની પટ્ટી તે નીચે લટકતા અશોક પલ્લવ પત્રોના આકારના કરવા તેવા સ્વરૂપની બાર ભાગની ભરણીથી સર્વ કામનાનુ ફળ મળે છે ૨૪-૨૫-૨૬

दोढियेके पर भरणी बारह भागकी करना। उसमें नीचेसे एक भागके कंद सहित चिप्पिका करना। उसके पर डेढ भागकी कणी करना। आधे भागकी घसी करना। उसके उपर परिकरकी तरह पल्लवोंको सात भागमें विचक्षण शिल्पी करें (नीचे कंद और उपरकी पट्टीके नीचे चिपली कणीके साथ) रखना। उपरकी मुखपट्टी दो भागकी पट्टी उसके नीचे लटकते अशोक पल्लव-पत्रोंके आकारका करना। वैसे स्वरूपकी बारह भागकी भरणीसे सर्वकामानका फल मिलता है। २४-२५-२६.

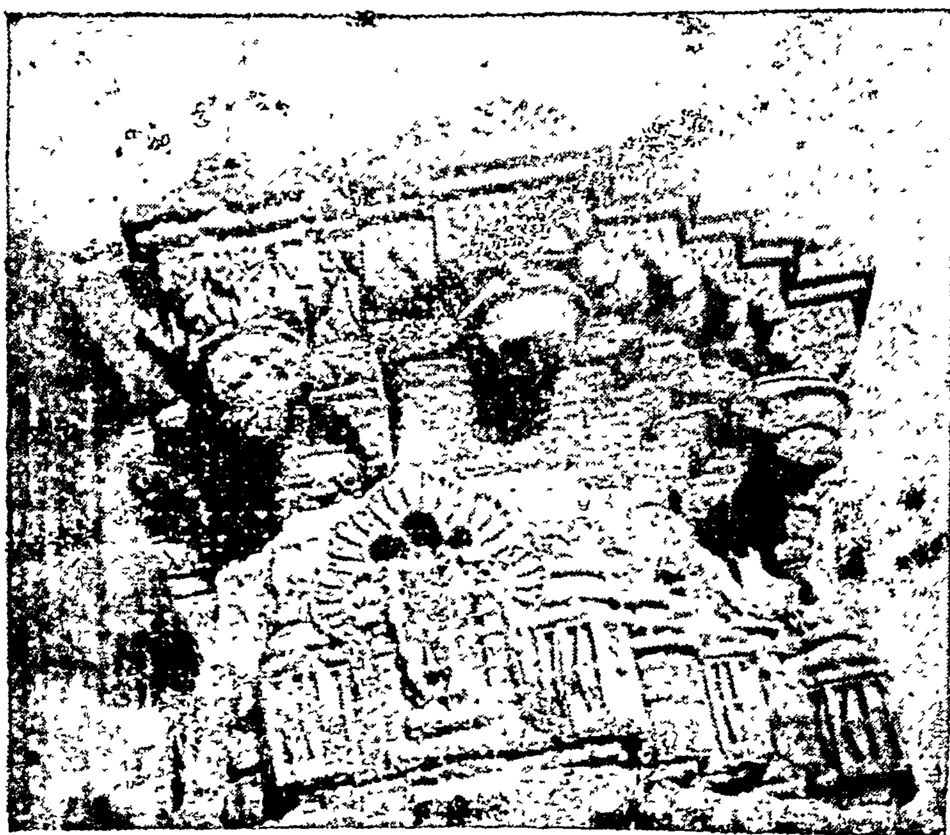


शिरावटी भाग १४

शिरावटि चतुर्दशा भागमुच्छ्र्य उच्यते।
भारपुत्तलि षडांशेन तदर्धे पट्टिका स्तथा ॥२७॥

ભરણી ઉપર ચૌદ ભાગની શિરાવટી ઊંચી કહી છે. તેમાં ૭ ભાગની ભારપુત્તલીકા ઉપર પટ્ટીઓ વગેરે કરવી. ૨૭.

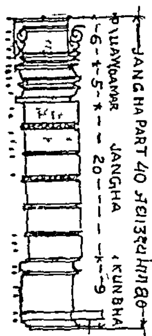
भरणीके उपर चौदह भागकी शिरावटी ऊँची कही है। उसमें छः भागकी भारपुत्तलिका और उपर पट्टियाँ वगैरह करना। २७.



सोमनाथजीका मंडोवरका उद्गम-और भरणी

॥ अथ मेरु मंडोवर ॥

क्षीरार्णव अ० ॥ १०८ ॥ (क्रमाक अ० १०)



जघा भाग ७०

५	खुरो
२१	कुभो
१२	कळशो
४	अ तराळ
१२	केवाळ
१२	मचिका
६०	जघा
१७	उद्गम
१२	भरणी
१६०	
१०	माची
४०	जघा
१५	दोढीयो
१०	भरणी ७५
१४	शीरावटी
१२	केवाळ
४	अ तराळ
१६	छाद्य ४६
१२१	
२८१	

श्री विश्वकर्मा उवाच—

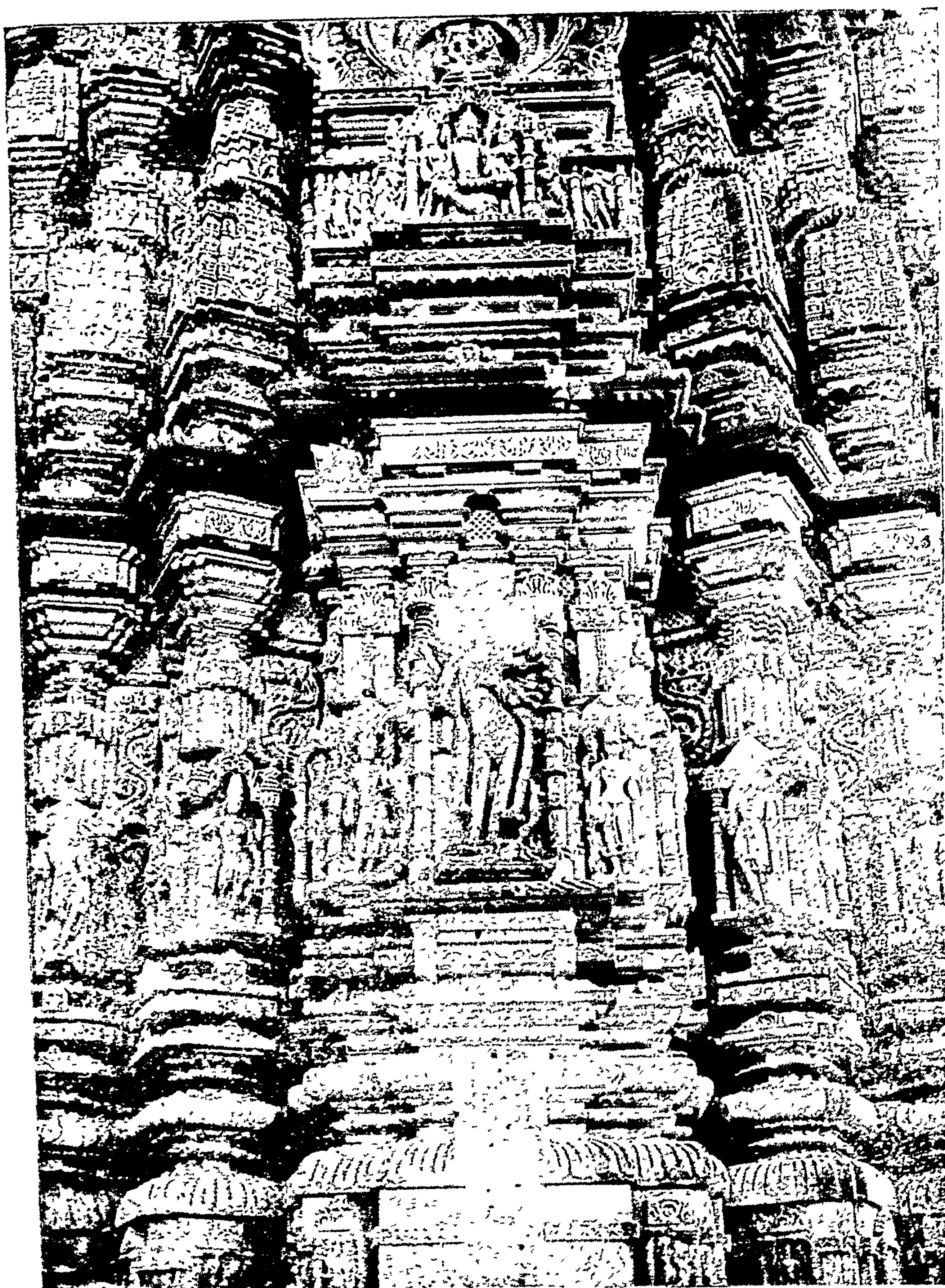
[1]स्तर जवश्रित्पूर्व (?) नागरेमेरुमस्तके ।
[2]मेरो मंडोवरे मंची भरण्योर्ध्वेदश भागत ॥ १ ॥
चत्वारिंश स्थिता जंघा कुंभिका नवभागतः ।
उपरे पल्लवा कार्या भाग षट् विशेष च ॥ २ ॥
डमरक पंचभागानि मध्ये त्रीणि स्वकर्णिका ।
(अर्धांशे न स्तरो पाणी (?) जंघा कुर्यात्प्रदक्षिणं) ॥ ३ ॥
दिग्पालादि सस्थाप्य शेपे देवे च मनोत्तम ।
जलान्तर समस्थाने मुनींद्रा यदि सस्थिता ॥ ४ ॥

श्री विश्वकर्मा कहे छे (आगळना १०७ मा अध्यायमा २०६ भागनो जे नागर म डोवर कह्यो ते पर मेरु म डोवरना थर विभाग कहु छु) मेरु म डोवरमा बार भागनी कहेली भरणी उपर माचीनो थर दश भागनो करवो ते पर जघा चालीश भागनी करवी

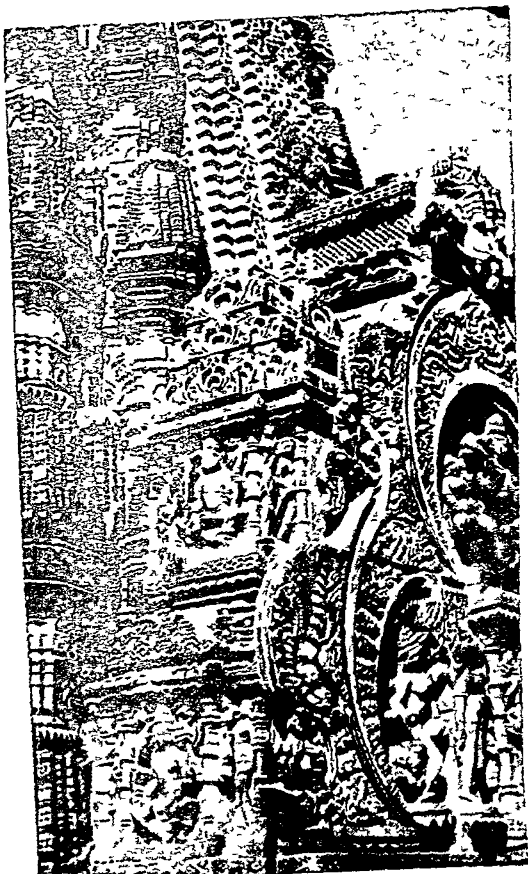
ते जघामा नीचे कुभिका नव भागनी उपर पल्लव = पान छ भागमा ते नीचे डमरु पाच भागमा तेमा वच्चे त्रण कणीओ अने बाधणा पट्टीनो घाट (वळी वीशे भागमा) करवो जघानी चालीश भागनी उचाईना अर्ध भागमा एटले वीश भागमा कणी ब ध अने पट्टी आदि ब धो फरता करवो जघामा फरता दिग्पाल आदि रूपो स्थापन करवा बाकीना उत्तम देवोनी मूर्तिओ करवी पाणीतारमा मुनि तापसनी ऊभी मूर्तिओ करवी १–२–३–४

श्री विश्वकर्मा कहते है (आगेके एकसौ सातवें अध्यायमे) २०६ भागका जो नागर मडोवर कहा है उसके उपर मेरू मडोवरके थर विभाग कहता हूँ । मेरू मडोवरमे वारह भागकी

(१) पाठातर–स्तरजवाश्रितपूर्वे—(२) अध्याय १०७ का श्लोक १० से २०६ विभागका मडोवर कहा है उसमें भरणी तकका विभाग १६० कहा है–अब यहासे मेरु मडोवरका विभाग कहते हैं—



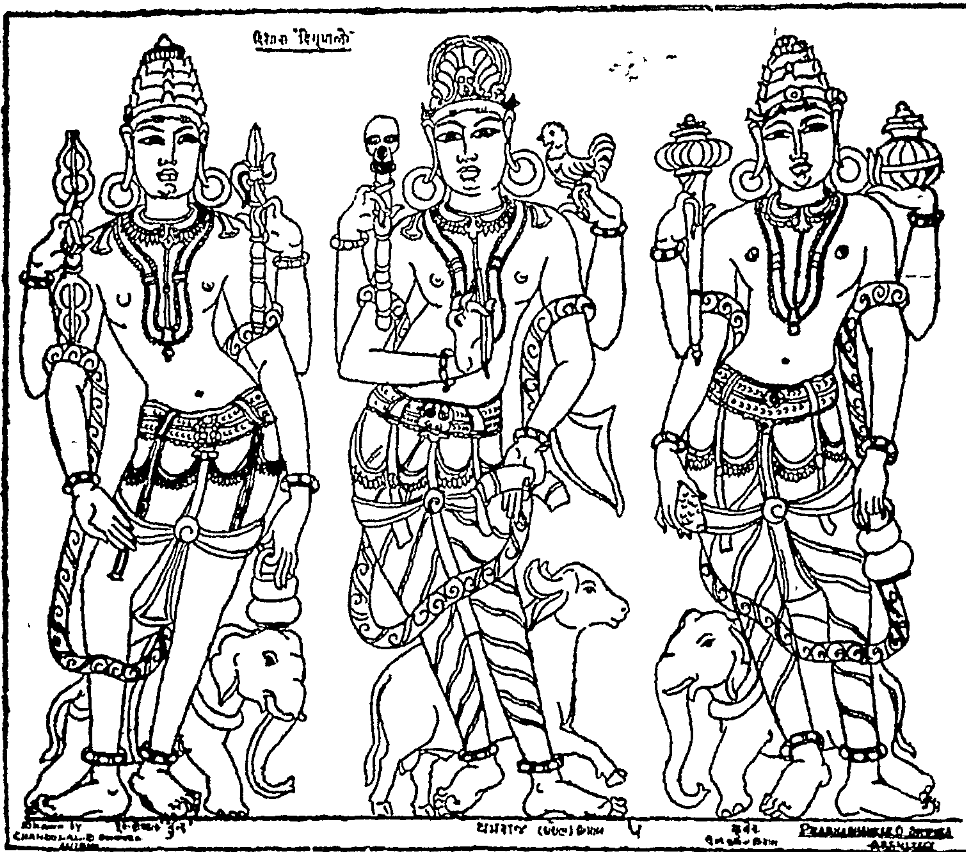
भूमिज शैलिका उदयेश्वरप्रासाद के मंडोवर और शिखर के आद्य भाग (उदयपुर मालवा)



भूमिजप्रासाद के शिखर के शुरसेन (शुकनास) (उदयपुर माल्वा)

कही हुअी भरणीके उपर माची का थर दस भागका करना। उसके उपर जंघा को चालीळ भागकी करना। उस जंघामें नीचे कुंभीका नौ भागकी उपर पल्लव=पाल छः भागमें उसके नीचे डमरू पाँच भागमें, उसमें बीचमें तीन कणियाँ और बंधन पट्टीका घाट करना। जंघाकी चालीस भागकी ऊँचाईके अर्धे भागमें अर्थात् बीस भागनें कणी बंधको और पट्टी आदि बंधोंको फिरते करना। जंघामें फिरते दिग्पाल आदि दे। रूपांको स्थापित करना। बाकीके उत्तम देवोंकी मूर्तियाँ बनाना। पानीतारमें मुनि तापसकी खड़ी मूर्ति करना। १–२–३–४.

तस्योपरि संस्थाप्यं च पंचदशोद्गमोभवेत्।
दशांशा भरणी शेषं पूर्ववत् कलायेत्सुधी ॥ ५ ॥



दीग्पालं–पूर्व इंद्र दक्षिणे यम–धर्मराज उत्तरे कुबेर–सोम

જંઘા ઉપર દોઢીયો પંદર ભાગનો, તે પર દશ ભાગની ભરણી કરવી. બાકીના ભાગો આગળ (અધ્યાય ૧૦૭માં) કહ્યા તે પ્રમાણે એટલે ૧૪ ભાગ શિરાવટી મહાકેવાળ બાર ભાગ, અંધારી ચાર ભાગ અને છજું સોળ ભાગનું કરવું તે પ્રમાણે થરવાળા કરવા. ૫.

जंघाके उपर दोढिया पन्द्रह भागका, उसके पर दस भागकी भरणी करना। बाकीके भाग आगे (अध्याय १०७ में) कहा है इस तरह अर्थात् चौदह भाग शिरावटी, महाकेवाल, बारह भाग, अंधारी चार भाग और छज्जा सोलह भागका करना। इसके अनुसार थरवाले करना। ५.



पश्चिमे वरुणदेव दीगपाळ



पातालका दीगपाल

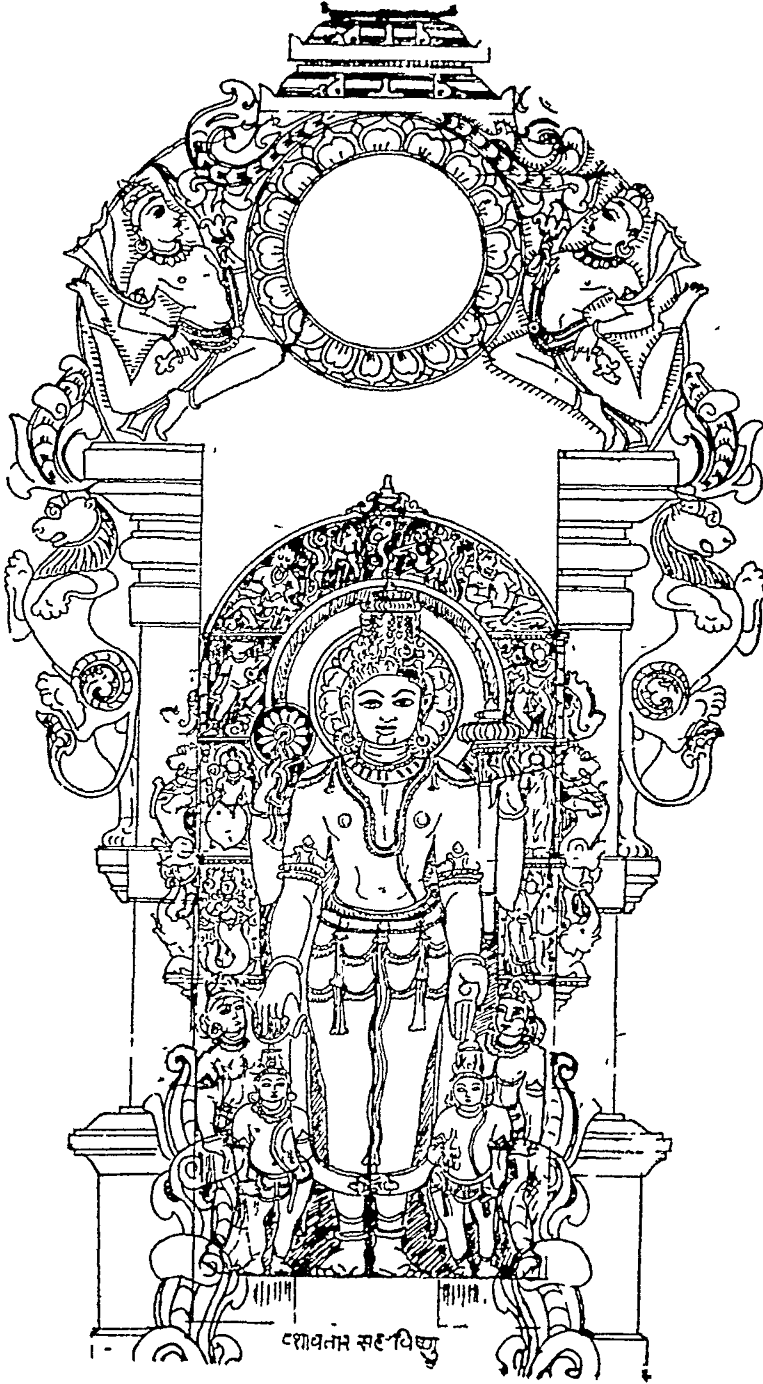


आकाशका ब्रह्म दीगपाल



इशानकोणके ईश अग्निकोणे-अग्नि नैरुत्ये निरुती वायव्ये वायुदेवता

खुट छाद्योमितं स्तेषां प्रहारंच तदूर्ध्वतः। भागमेकोनविंशत्यां तद्विचारमतः शृणु ॥६॥
अधश्चेद्दंतरंकार्यं भागार्धेन समन्वितं । पट्टिका सार्द्ध भागं च कर्णिकापदमेव च ॥७॥



दशावतार साथ विष्णु
उपर गंधर्व–बाजुमे विरालिका

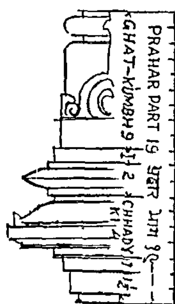
उपरि भाग चत्वारि छाद्यकि सर्वकामदः ।
कर्ण भाग द्वयं कार्य शेषकंद च कंदयो ॥ ८ ॥
(कर्णउता यदा कार्या भागप्रति श्च कर्णयो ?) ।
घटंश नवमे प्रोक्त पल्लवेन समाकूले ॥ ९ ॥

दलस्यष्टमांशेन गर्भेक्र्यात भद्रकं ।
तत यदा व्यक्त वा मंचिका सर्वकामदं ॥१०॥

મેરૂ મડોવરના છજા ઉપર (જો શિખર કરવાનુ હોય તો) પ્રહાર (પહારૂ થર) નો થર ઓગણીશ ભાગ ઉદયનો ચડાવવો. તેના વિભાગ હવે સાભળો નીચે અરધા ભાગની અધારી પટ્ટીકા દોઢ ભાગની કર્ણીકા એક ભાગની તે પર સર્વ કામનાને દેનારી ચાર ભાગની છાજલી કરવી કર્ણી બે ભાગની એક ભાગનો કદ, કર્ણીને નાની પ્રતિકર્ણ કરવી તે પર નવ ભાગનો કુભક પલ્લવ સાથે કરવો (૨) ઉપાગના દલ વિભાગના આઠમા ભાગે મધ્ય ગર્ભે ભદ્ર કરવુ જો આ પ્રહારૂ પર શિખર ન કરવુ હોય અને ઉપર ભૂમિ મજલો કરવો હોય તો આ પ્રહારૂનો થર તજી દેવો અને છજા થર સર્વ કામનાને દેનારી એવી (દશ ભાગની) મચિકાનો થર કરવો ૬-૯

પ્રહાર વિભાગ	
ોા	અધારી
૧ાા	પટ્ટીકા
૧	કર્ણી
૪	છાદકી
૨	કર્ણીકા
૧	કદ
૯	ઘટ-કભો
૧૯	

मेरू मडोवरके छज्जेके उपर (जो शिखर करना हो तो) प्रहार (पहारूथर) का थर उन्नीस भाग उदयका चढाना । उसके विभाग अब सुनो । नीचे आधे भागकी अधारी पट्टीका डेढ भागकी, कर्णीका एक भागकी उसके उपर सर्व कामनाको देनेवाली चार भागकी छाजली करना । कर्ण दो भागका, एक भागका कद-कर्ण और छोटा प्रतिकर्ण करना । उसके पर नौ भागका कुभक पल्लवके साथ करना । उपागके दल विभागके आठवें भागमे मध्य गर्भमे भद्र करना । जो इस प्रहारुके पर शिखर न करना हो और उपर भूमि मजला करना हो तो इस प्रहारुका थर छोड देना और छज्जेके उपर सर्वकामनाको देनेवाली ऐसी (दस भागकी) मचिकाका थर करना ।[२] ६-७-८-९-१०



प्रहारु भाग १९

पूर्वोक्त विभाग च कर्तव्यं सर्वकामदाः ।
द्वठ त्रिशोक्त ता जंघा पूर्वोक्तंदशद्वयोङ्गम् ॥११॥
भरणी यीवत्पूर्वेण कपोताली भवेत्ततः ।
पूर्वोक्तं च यथा छाद्यं भाग एवं च कार्यता ॥१२॥

२ વૃક્ષાર્ણવમા પ્રહારના પૃથક પૃથક ઘાટના ૭ પ્રકાર સુદર કહ્યા છે

२ वृक्षार्णवमे प्रहारके पृथक पृथक घाटके छ प्रकार सुदर कहे है ।

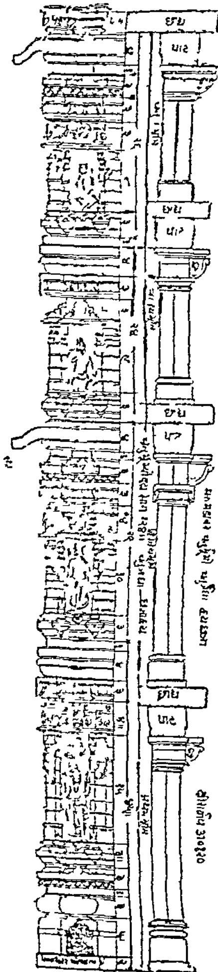
१०	माची
३२	जंघा
१२	उद्गम
१०	भरणी
१२	केवाल
४	अंतराळ
१६	छज्जु
९६	

એ રીતે સર્વ કામનાને દેનારા આગળ કહેલા થર વિભાગ કરવા. બત્રીશ ભાગની (ત્રીજી) જંઘા બાર ભાગનો દોઢીયો, આગળ કહી તેટલા દશ ભાગની ભરણી, કેવાળ બાર ભાગનો અંતરાળ ચાર ભાગનો અને છજું સોળ ભાગનું કરવું. એ પ્રમાણે ત્રણ ભૂમિનો ત્રણ જંઘાયુકત મંડોવર ત્રીશ હાથના સાંધાર પ્રાસાદને કરવો. (પહેલી ભૂમિ ૧૬૦ ભાગ + બીજી ભૂમિ ૧૨૧ + ત્રીજી ભૂમિ ૯૬ = કુલ ૩૭૭ ભાગ). ૧૧–૧૨.

इस तरह सर्व कामनाओंके देनेवाले आगे कहे हुए थर विभाग करना। बत्तीस भागकी (तीसरी) जंघा बारह भागका डेढ़िया, आगे कही है उतने दस भागकी भरणी, केवाल बारह भागका अंतराल चार भागका और छज्जा सोलह भागका करना। इस तरह तीन भूमिका तीन जंघासे युक्त मंडोवर तीस हाथके सांधार प्रासादको करना। (पहली भूमि १६० भाग+दूसरी भूमि १२१+ तीसरी भूमि ९६ = कुल ३७७ भाग)–११–१२

सप्रते तृतीया भूमि त्रिंश हस्तं च यदा भवेत्।
पंच त्रिंशत्भवेद्हस्तं प्रासादं यदि कारयेत्॥१३॥
भूमि चत्वारि दातव्या श्रृणुत्वेकाग्रतो मुनेः।
कपोताली तथा छाद्यं पुनस्त्यक्ता प्रयत्नतः॥१४॥
मंचिका तत्र दातव्यं भरणीर्यावत्मस्तके।
भागहीना भवेद्जंघा भागहीना च उद्गमम्॥१५॥
स्तरशेषं भवेत्पूर्व प्रहारांत यदा भवेत्।
अष्टत्रिंशत्करे यावत्प्रासादं कारयेब्धुधः॥१६॥
सर्वलक्षण संयुक्तं पंचभूमीः प्रदीयते।
छाद्यार्द्धं भवेत्मंची जंघा व्योम युगे भवेत्॥१७॥

હે મુની, હવે પાંત્રીશ હાથનો સાંધાર પ્રાસાદ જો હોય તો તેની ચાર ભૂમિ મજલા કરવા. તે તમો એકાગ્રતાથી સાંભળો. (પ્રત્યેક મજલાના અંતે) ઉપરની ભૂમિ ચડાવવાની હોય તો ત્યારે તે કેવાળ છાદ્યના થરો ફરી ફરી થરો પ્રયત્નથી તજી દઈને ભરણીની ઉપર માચી વગેરે (જંઘા ઉદ્ગમ ભરણી) ચડાવવા. ઉત્તરોત્તર જંઘા અને દોઢીયાના થર વિભાગ જેમ ઉપર જાય તેમ ઓછા ઓછા ભાગના કરતા જવું. ઉપરના મજલાના શેષ થર છજાપટ ઉપર



મહાર (પહારનો થર) ચડાવવો ત્યાથી શિખરનો પ્રારભ કરવો બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ આડત્રીશ હાથના પ્રાસાદને સર્વલક્ષણ સ યુકત એવી પાચ ભૂમિકા કરવી છજા ઉપર ભૂમિ એમ ૪૦ હાથના પ્રાસાદને ચડાવતા જવુ એ રીતે ચડાવતા પહેલા માચીનો થર ચડાવી તે પર જઘા એમ બાર જઘા સુધી ચડાવતા જવુ ૧૩ થી ૧૭

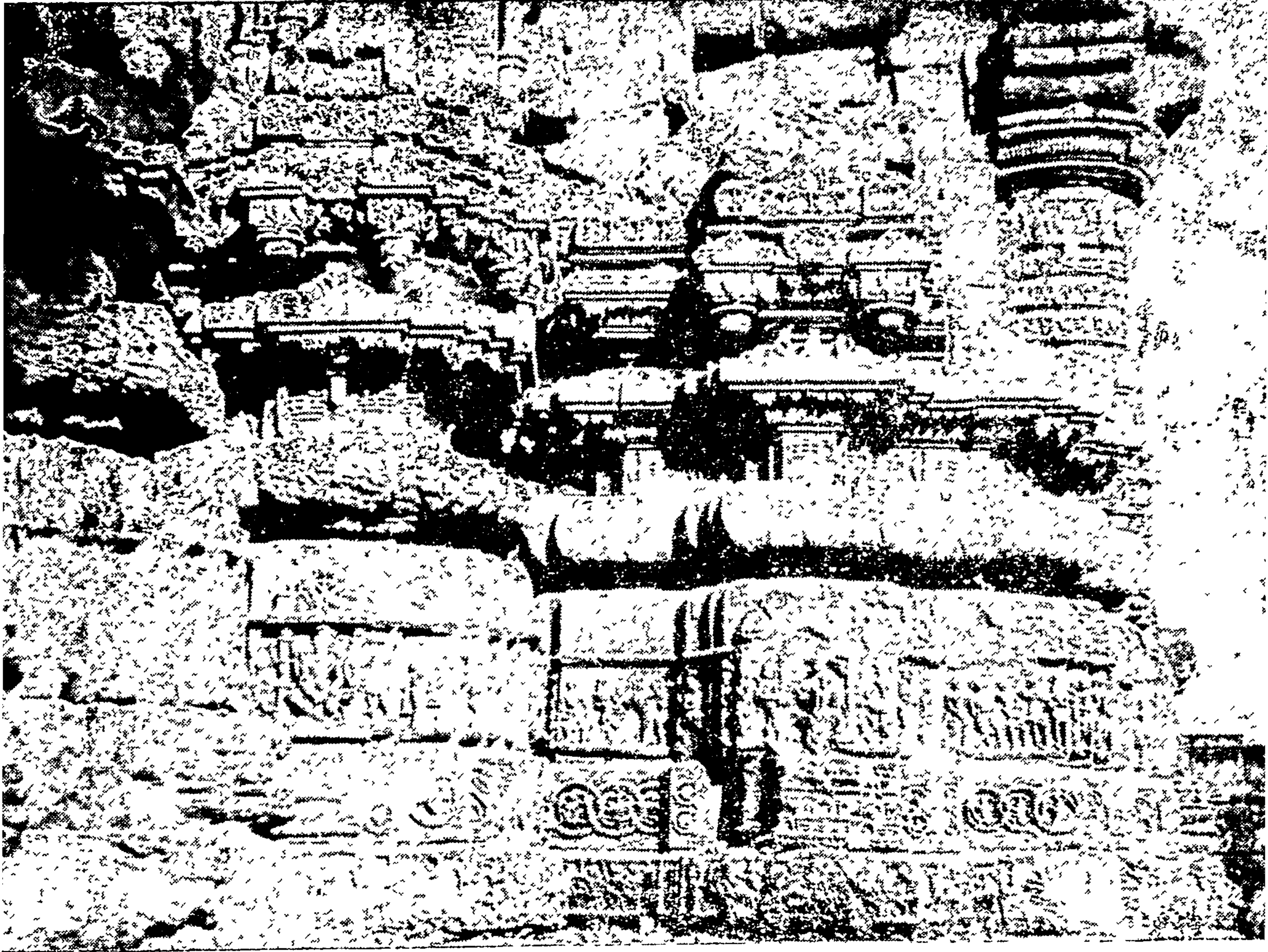
हे मुनी, अब पैंतीस हाथका माधार प्रासाद हो तो उसे चार भूमि मजले करना, यह बात एकाग्रतासे सुनो। (प्रत्येक मजलेके अतमे) केवाल और छाद्य चढाये हो और जो उपरकी भूमि चढानी हो तब उस केवाल और छाद्यके थरोको बार बार छोडकर भरणीके उपर माची वगैरह (जघा उद्गम भरणी) चढाना। उत्तरोत्तर जघा और डेढियेके थर विभाग ज्यों ज्यों उपर जाय त्यों त्यों कम भागके करते जाना। उपरके मजलेके शेष थर छज्जा पर प्रहार (पहारुका थर) का थर चढाना। (वहाँसे शिखरका प्रारभ करना।) 'बुद्धिमान शिल्पीको अडतीस हाथके प्रासादको सर्व लक्षण सयुक्त ऐसी पाँच भूमिकाए बनाना। छज्जेके उपर भूमिको चढानेसे पहले माचीका थर चढाकर उसके पर जघा इस तरह बारह जघा तक चढाते जाना। चालीस हाथ उदयका प्रासादका १४-१५-१६-१७

रंध्रंते भूमिका क्रमात् ॥१८॥
कुभिकादि प्रहारातं विभाग तत्र निश्चलं।[१]
यदि जंघा भवेत्श्चैकं द्विदशयावत् तथा ॥१९॥

← महामडोवर त्रय जघा त्रयभूमिद्वय छज्जा समन्नभाग ३७७

१ सनमघोतर तथा १९॥ पाठान्तर

द्वयोर्जंघा विजानीयात्छाद्या...विराजिते।
तत्रादेय विभागं च :चतुर्विंशति तत्र च ॥२०॥



सोमनाथजीका पुराणा मंडोवर

ચાલીશ હાથના ઉદયના પ્રાસાદને જંઘા.. .. ..ઉપરની ભૂમિકાઓ અનુક્રમે ($\frac{1}{12}$ હીન હીન) કરતાં જવું. કુંભાથી છજા પરના પ્રહાર સુધીના વિભાગો ચોક્કસપણે કરવા. એક જંઘાથી બાર જંઘા સુધી સાંધાર પ્રાસાદને ચડાવવી. એક છજા નીચે બે જંઘા ચડાવવી તે રીતે પ્રાસાદ વિભાગ ચોવીસ હાથ ભૂમિ સુધી જાણવો. સર્વ ભૂમિ મજલા ખૂણ ઘાટ નકશીરૂપથી અલંકૃત કરવાથી તે સર્વ કામનાને ફળ આપનાર જાણવું. ૧૮–૧૯–૨૦.

उपरकी भूमिकाएं अनुक्रमसे (१/१२ हीन हीन) करते जाना। कुंभासे छज्जेके उपरके प्रहारतकके विभागोंको निश्चित रूपसे करना। एक जंघासे बारह जंघा तक सांधार प्रासादको चढाना। एक छज्जाके नीचे दो जंघा चढाना। इस तरह प्रासाद उदय विभाग चौवीस हाथ (भूमि तक जानना) सर्व भूमि

मजले बहुत घाट नकशी और रूपसे अलकृत करनेसे उसको सर्व कामनाओंका फलदाता समझना। १९-२०-२१

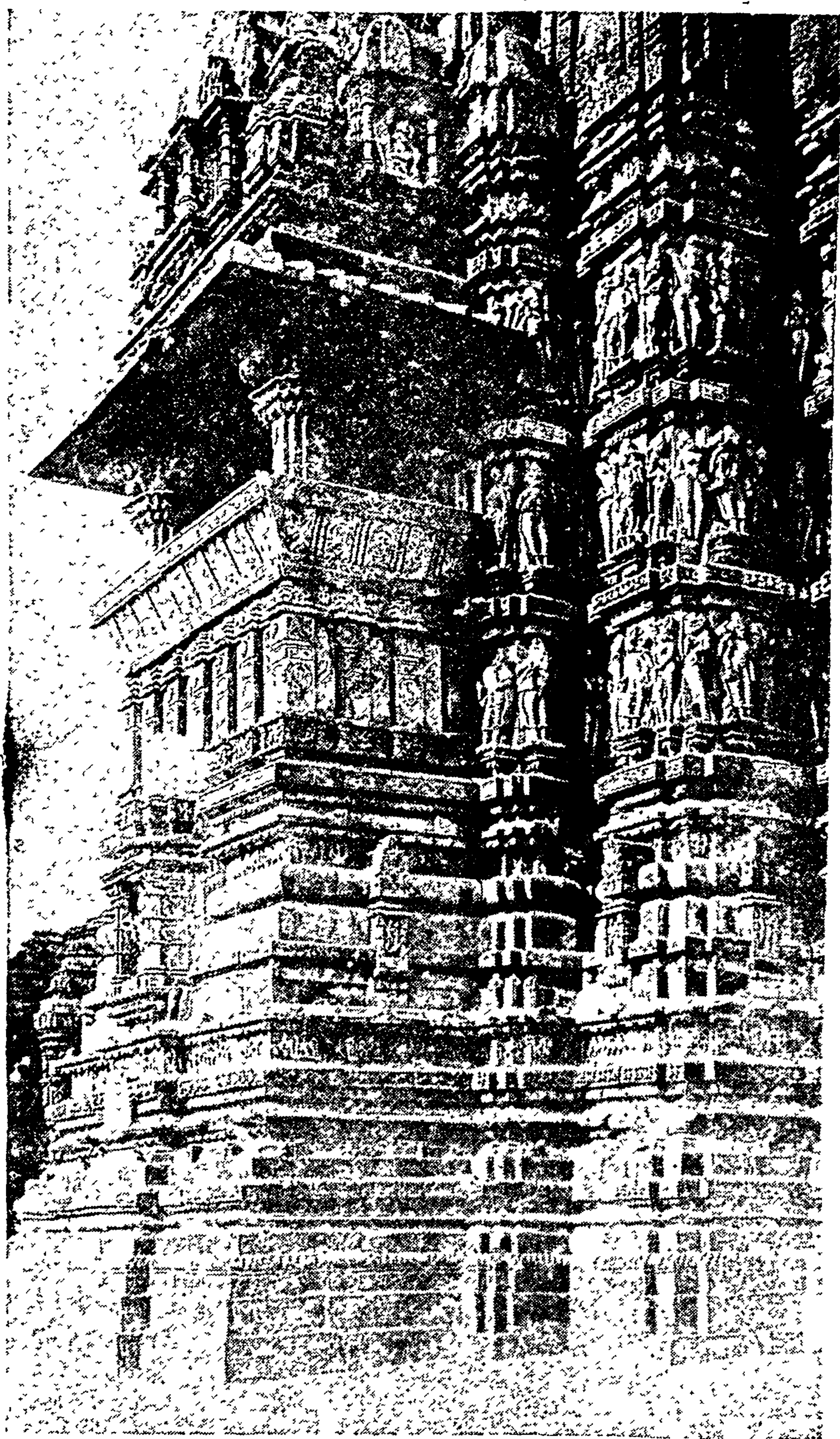
सर्वलंकार संयुतं सर्वकामफलप्रद.।
त्रयोजंघा भवेग्यत्र द्वयो छाद्य विराजिते ॥२२॥
नत्रोदय विभाग च चतुर्विंशति तत्र य'।
(उदय) चतु.र्जंघा द्वयो छाद्यं तत्र भेद अत' शृणु ॥२३॥
प्रथमा पुत्रतीय जंघा द्वितीयं अवनी भवेत्।
उन्ती आमनी चेव पूर्वहीनाच भागत् ॥२४॥
(आदि मध्या नसानेन शनीज्ञान महेतवे।)

अनुक्रमेग समायुक्ता द्वादश जघाउत्तमा ॥२५॥
तेन (भ्रम्य (?) भूम्यं वा द्वादशच मुनीश्वर!
जघाया द्वादशोवर छाद्य चाष्टमेव च।
तत्रैनमभिधासूत्र वहकर्म समाकुल ॥२६॥

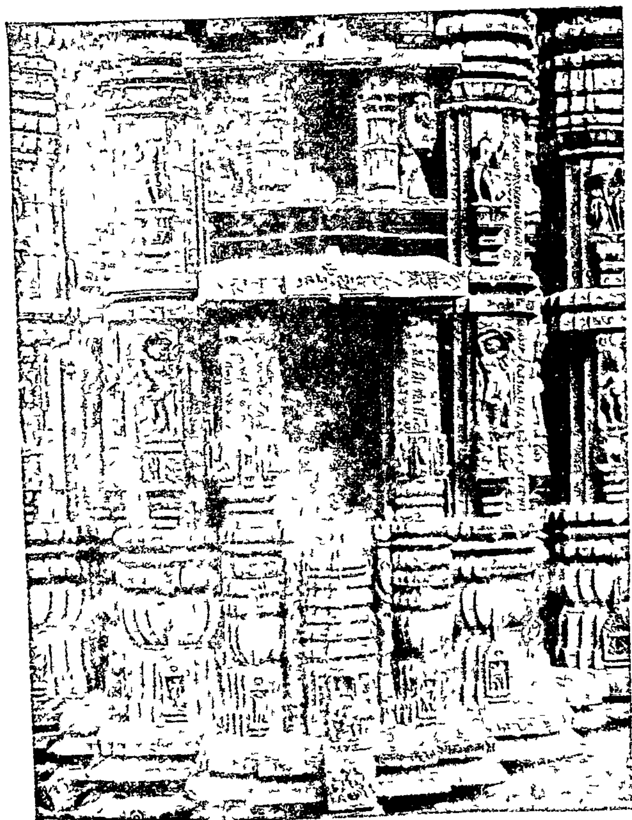
त्रणु जंगी अने बे छजा तेम तेना भूमि उदय विभाग चोवीश हाथ सुधी जाणवा चार जंघा अने बे छजा तेनो भेद हुवे सांभळो पहेली जंघाने पुत्रतीय बीजीने अवनी, अने त्रीजी जंघाने उनती, चोथी आमनी, पांचमी पूर्वहीना, छठ्ठी आदि, सातमी मध्याह्न, आठमी वसान, नवमी शनि क्रो अने दशमी जंघाने ज्ञानम् अगियारमी बारमी एम अनुक्रमे उत्तम।), बार जंघाना नाम ते रीते हे मुनीवर बार भूमि पर जंघाना नाम कह्या -बार बार जंघाने आठ छजा थाय ते रीते जंघाना नामाभिधान ते सर्व कर्मना अनुकुळ सूत्रथी जाणवा २२-२३-२४-२५-२६

तीन जघा और दो छज्जे इस तरह उनके भूमि उदय विभाग चौबीस (हाथ!) तक जानना। चार जघायें और दो छज्जेका भेद अब सुनो। पहली जघाको पुत्रतीय, दूसरीको अवनी, और तीसरी जघाको इनती, चौथीको आसनी, पाँचवींको पूर्वहीना। छठ्ठीको आदि सातवींको मध्याह्न, आठवींको वसान, नौवींको शनि और दसवीं जघाको ज्ञानम् इसी तरह अनुक्रमसे उत्तम बारह भूमिके जघाके नाम हे मुनि, कहे। बारह जघाको आठ छज्जे होवे इसी तरह जघाका नामाभिधान सर्वकर्मके अनुकुल सूत्रसे जानना। २२-२३-२४-२५-२६

प्रासादोदय भवे यत्र इदंमानं तु कथ्यते।
सप्तमे महारिपि उदयं च अतः शृणु ॥२७॥

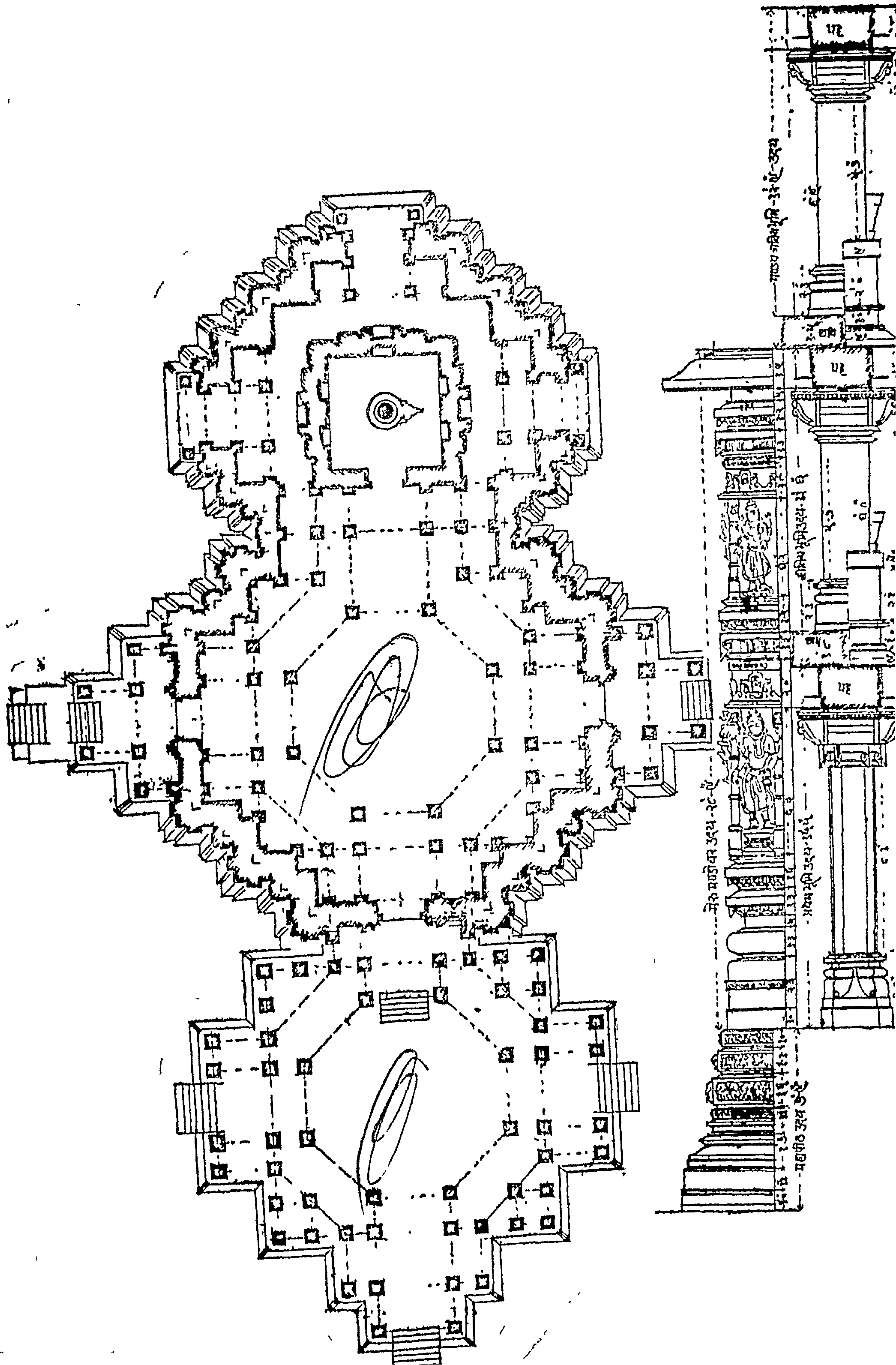


कंडर्यमहादेव (खजुराहो) के पीठ जोर त्रयजंघायुक्त मंडोवर और भद्रके गवाक्ष

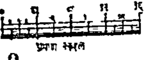


कलिङ्ग ओरिसा के भुवनेश्वरमें राजरार्ण प्रासाद के पृष्ठभद्र के द्रय मंडोवर

कैलास महामेरु प्रासाद—सोमनाथ



श्री द्वारिकाधिश जगत्मदिर–द्वारका



गर्भगृह

कोली

चतुष्किका

चतुष्किका

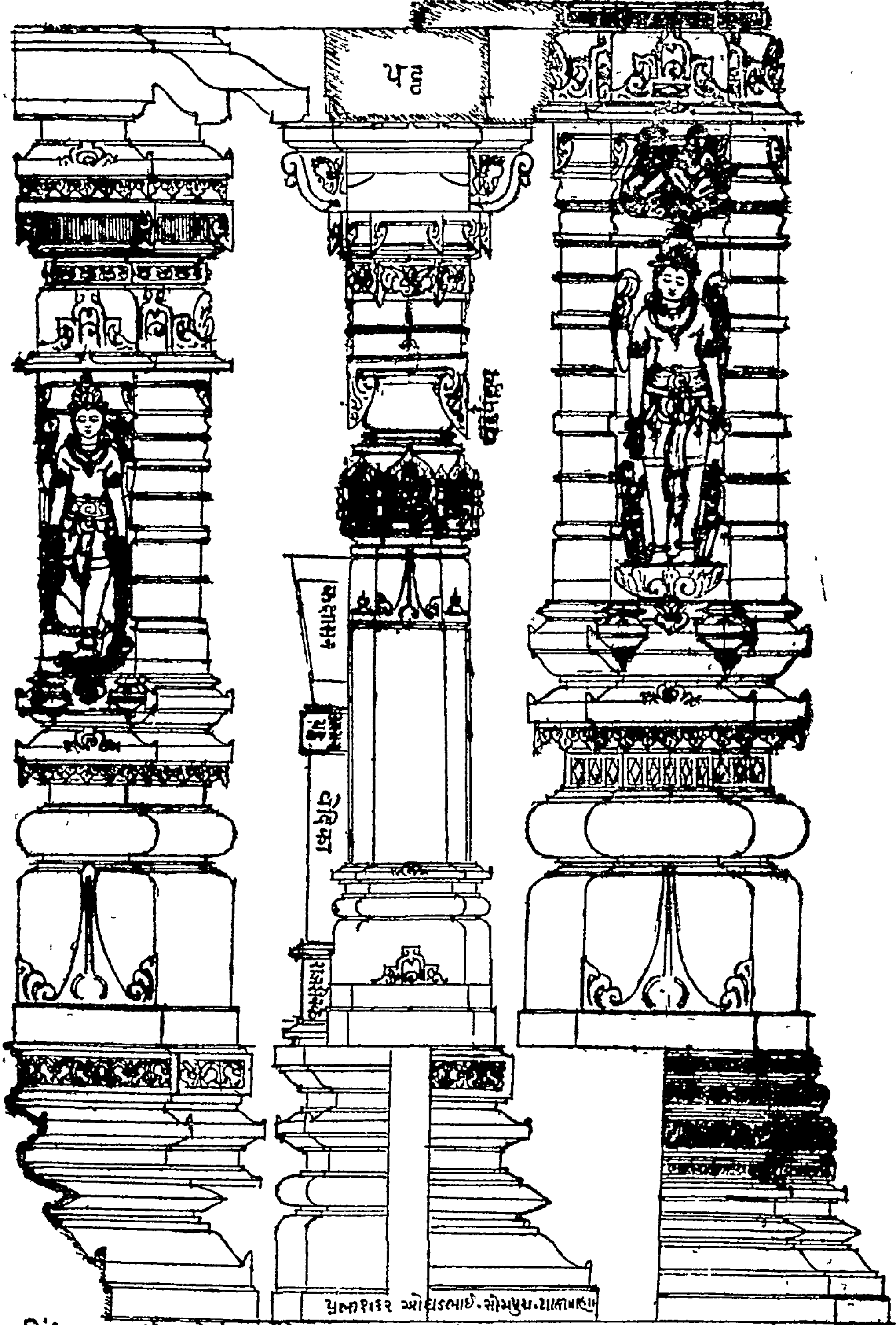
सीक मडप

प्रवेश चतुष्किका

प्रभाशंकर ओ. स्थपति

विस्तार

कुंभि उदंबरांते च स्तंभं शिरं च जंघयोः।
पट्टंच उद्गमांतेन शेषं भूमि विराजिते ॥२८॥
प्रथमं खुटछाद्यं च उद्गमं छाद्यकी समम्।
द्वितिया तृतीया भूमिपट्टवैं छाद्यकी समौ[ध] ॥२९॥



નિરંધાર પ્રાસાદના મંડોવર સાથે સ્તંભના છોડનો સમન્વય   સ્તંભના છોડ સામે સાંધાર પ્રાસાદના મંડોવરના થરવાળા સાથે સમન્વય

सांधार–निरंधार प्रासादका मंडोवरके साथ स्तम्भका छोडका समन्वय
नीचे–कामदपीठ–और महापीठ–खुल्ला मंडपका पीठ प्रकार

પાઠાન્તર—(ધ) પટવેપટ છાદ્યકે.   पाठांतर–(घ) पटवेपट छाद्यके (५) उन (६) मच्चोक्त.

छाद्यांत तेमादि पट्टउद्गमोदर समा।
निर्दोषं तच्चे वास्तु पाट पट्टच छाद्यके॥३०॥

સાધાર પ્રાસાદના ઉદયના મેરૂ મંડોવરના થર માન અને ભૂમિ વિશે કહ્યુ સભ્રમપ્રાસાદના મંડોવરના થર સાથે અદરના સ્તભના છોડના ઉદય મેળ (સમન્વય) હે મહાઋષિ! હવે સાભળો સાધાર પ્રાસાદની કુભી અને ઉબરો સમસૂત્રે અને સ્તભ અને સરનો જઘામા સમાન કરવો પાટડો ઉદ્ગમ દોઢીયામા સમાવવો બાકી ઉપરની ભૂમિ જાણવી પહેલા ખૂટછાદ્યને પાટ દોઢીયાની છાજલીના સમસૂત્રે ગણવા બીજી અને ત્રીજી ભૂમિમા પણ પાટ દોઢીયાની-છાજલીના સમસૂત્રે રાખવા મથાળાના ઉપરના છજા બરોબર પાટ એક સૂત્રમા રાખવો પરંતુ વચલી ભૂમિમા પાટડો દોઢીયાના ઉદરમા સમાવવો બાકી પાટ અને છજુ એક સૂત્રમા કરવા તેવુ વાસ્તુ નિર્દોષ જાણવુ ૨૭-૨૮-૨૯-૩૦

साधारप्रासादके उदयके मेरुमडोवरके थर मान और भूमिके बारेमे कहा। सभ्रम प्रासादके मडोवरके थरके साथ हे महाऋषि, अदरके स्तभके छोडके उदय समन्वयके बारेमे अब सुनो। साधार प्रासादकी कुभी और उबरा समसूत्रमे और स्तभ और सरेका जघामे समास करना। पाट उद्गम-डेढियेमे मिलाना। बाकी उपरकी भूमि जानना। पहले खटछाद्यको पाट डेढियेकी छाजलीके समसूत्रमे रखना। दूसरी और तीसरी भूमिमे भी पाट छाजलीके समसूत्रमे रखना। सिरके उपरके छज्जे बराबर पाट एक सूत्रमे रखना, परतु बिचकी भूमिमे पाट डेढियेके उदरमे मिलाना। बाकी पाट और छज्जा एक सूत्रमे करना ऐसा वास्तु निर्दोष जानना। २७-२८-२९-३०

पुनः छाद्यं तथा छंदे पुनः पट्ट च तत्समं।
यथोक्तं च विद्या छाद्ये पुनः कुर्यात्पटमुत्तमं॥३१॥

ભાવાર્થ—સાધાર પ્રાસાદને પહેલી ભૂમિ છજા વગર છદ પ્રમાણે અદર છાદ્ય ઢાકવુ ફરી જ્યારે ઉપર છજુ પાટ આવે ત્યારે તે પ્રમાણે ઢાકવુ એ રીતે છજા વગર અદર છાદ્ય ઢાકવુ ફરી વળી પટ પર છાદ્ય-ઢાકણ છાતીયા નાખી ઢાકવુ તે ઉત્તમ જાણવુ-૩૧

साधार प्रासादको पहलीभूमि विना छज्जा छदके अनुसार छाद्य ढाँकना। फिर जब छज्जापाट आवे तब उसके अनुसार ढकना। इस तरह छज्जे विना छाद्य ढकना। फिर पाटके उपर छाद्य ढँकना-यह उत्तम जानना। ३१

इतिश्री विश्वकर्माकृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छाया मेरुमण्डोवराधिकारे शताग्रे अष्टमोऽध्याय॥१०८॥ (क्रमाक अ० १०)

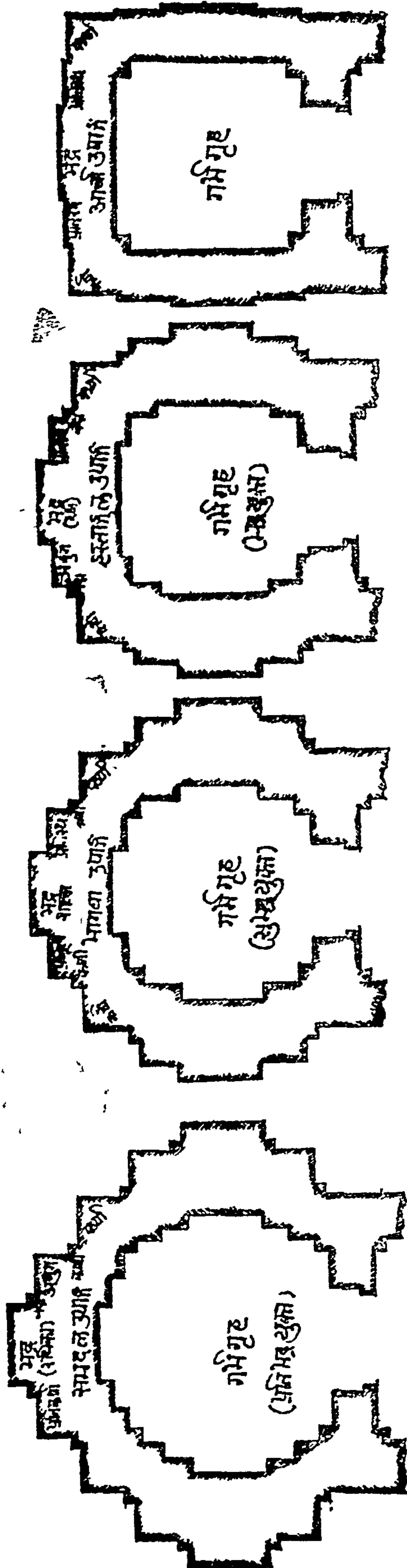
ઈતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ નારદ મુનીશ્વરના સ્વાદરૂપ મેરૂ મંડોવરાધિકારનો શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈએ રચેલ ગુર્જર ભાષાની સુપ્રભા નામની ટીકાનો એકસો આઠમો અધ્યાય-૧૦૮

इतिश्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव-नारदमुनीश्वरके सवादरूप मेरुमडोवराधिकारका शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशकर ओघडभाईकी रची हुई सुप्रभा नामकी भाषा टीकाका एकसो आठवाँ अध्याय। ॥१०८॥ (क्रमाक अ० १०)

॥ अथ गर्भगृहोदय – द्वारशाखा विभाग ॥

क्षीरार्णव अ० १०९–(क्रमांक अ० ११)

श्री विश्वकर्मा उवाच –



गर्भगृह समचोरस वृत्त अष्टाश्रादि पांच प्रकार कहा है तथा सवाया-डेढा भी कहा है ऐसे अन्य ग्रंथोंमें उनका अंदरका चार और बाह्य चार स्वरूप भी कहा है = अंदरका १ चोरस २ भद्रयुक्त ३ सुभद्र ४ प्रतिभद्रयुक्त–ऐसा चार प्रकार–बाह्य अंग निर्गमका चार प्रकार कहा है १ आर्चा २ हस्तांगुलं ३ भागवा ४ समदल उसका विवरण दीपार्णवग्रंथका पृष्ठ ५५–५६ पर दिया गया है।

तस्याग्रे प्रवक्ष्यामि प्रमाणं गर्भगृहोत्तम ।
चतुरस्रमथायतं वृतंवृत्ता याष्टकम् ॥१॥
गर्भव्यास षडांशस्य सपादो सार्द्धमेव च ।
पादार्धे तु यदा चैव जेष्ट मध्यकन्यस ॥२॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે– હવે આગળ હું ઉત્તમ એવા ગર્ભગૃહના પ્રમાણો કહું છું– ગર્ભગૃહ ૧ ચોરસ ૨ લંબ ચોરસ ૩ ગોળ ૪ લંબગોળ અને ૫ અષ્ટાશ્ર એમ પાંચ પ્રકારે થાય તે ઉપરાંત તેની પહોળાઈમાં (૧) છઠ્ઠો ભાગ ઉમેરીને (૨) સવાયો તથા (૩) દોઢો વધારી લાંબો કરવાથી જેષ્ઠ મધ્યમ અને કનિષ્ઠ માન ગભારાનું જાણવું. ૧–૨.

श्री विश्वकर्मा कहते हैं– 'अब आगे मैं उत्तम ऐसे गर्भगृहके' प्रमाण कहता हूँ। गर्भगृह चोरस, लम्बचोरस, गोल, लम्बगोल, और अष्टाश्र इस तरह पाँच प्रकारसे होता है, इसके अतिरिक्त उसकी चौडाईमें (१) छट्ठा भाग मिलाकर या (२) सवाया (३) डेढा ऐसे

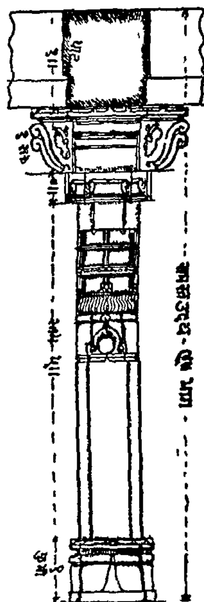
पद भागको वढाके लम्बा करके ज्येष्ठ मध्यम और कनिष्ठ मान गर्भगृहका जानना । १–२

स्ततो उदय अष्ट विभक्तं च भागमेकेन कुंभिका ।
स्तंभ च पंच सार्धेन भागार्द्धं भरणं भवेत् ॥३॥
शिरंच भागमेकेन अयं भाग प्रासादयं ।
भागयर्द्धप्रयत्नेन कर्तव्यं च तथोपरि ॥४॥
पट्टसार्द्धोदयं स्वस्थं एवं च कथितो मया ।

१	કુંભી
પ॥	સ્તંભ
०॥	ભરણું
१	સરૂ
८	
१॥	પાટ
९॥	

ગર્ભગૃહના ઉદયમા (પાટ સિવાય) આઠ ભાગ કરવા તેમા એક ભાગની કુંભી–સાડા પાચ ભાગનો સ્તંભ, અર્ધા ભાગનુ ભરણું અને એક ભાગનુ સરૂ એમ પ્રાસાદના ઉદયમા (પાટ સિવાયના) આઠ ભાગ જાણવા તે ઉપર દોઢ ભાગનો પાટ મે કહ્યો છે (એટલે કુલ સાડા નવ ભાગની ઉભણી થઈ) ૩–૪

गर्भगृहके उदयमे (पाटके सिवा) आठ भाग करना । उसमे एक भागकी कुंभी–साढे पाँच भागका स्तभ और आधे भागका भरना और एक भागका सरा ऐसे प्रासादके (पाटके सिवा) ८ भाग समझना । उसके उपर डेढ भागका पाट मैंने कहा है । (इससे कुल साढे नो भागका उदय हुआ ।) ३–४



गर्भगृहोदय–स्तंभोदय भाग ८ + १॥ पाट = ९॥ भाग ।

बाह्यमान स्ततोरिपि ! पद्मानमन्यथा ॥ ५ ॥
कुम्भे कुमि च ज्ञात्वा[1]वा स्तम्भेचैवोद्गमम् ।
भरणी भरणयुक्ता कपोताली तथा शिरः ॥ ६ ॥
[2]छाद्यं पट्टं सम दैध्य ऊर्ध्वे नैन कारयेत् ।
(सरसाले भवेद् वेधं अधः उर्ध्वे न संशय) ।
प्रासादोदयमे यत्र–इदं मानंतु कथ्यते ॥ ७ ॥

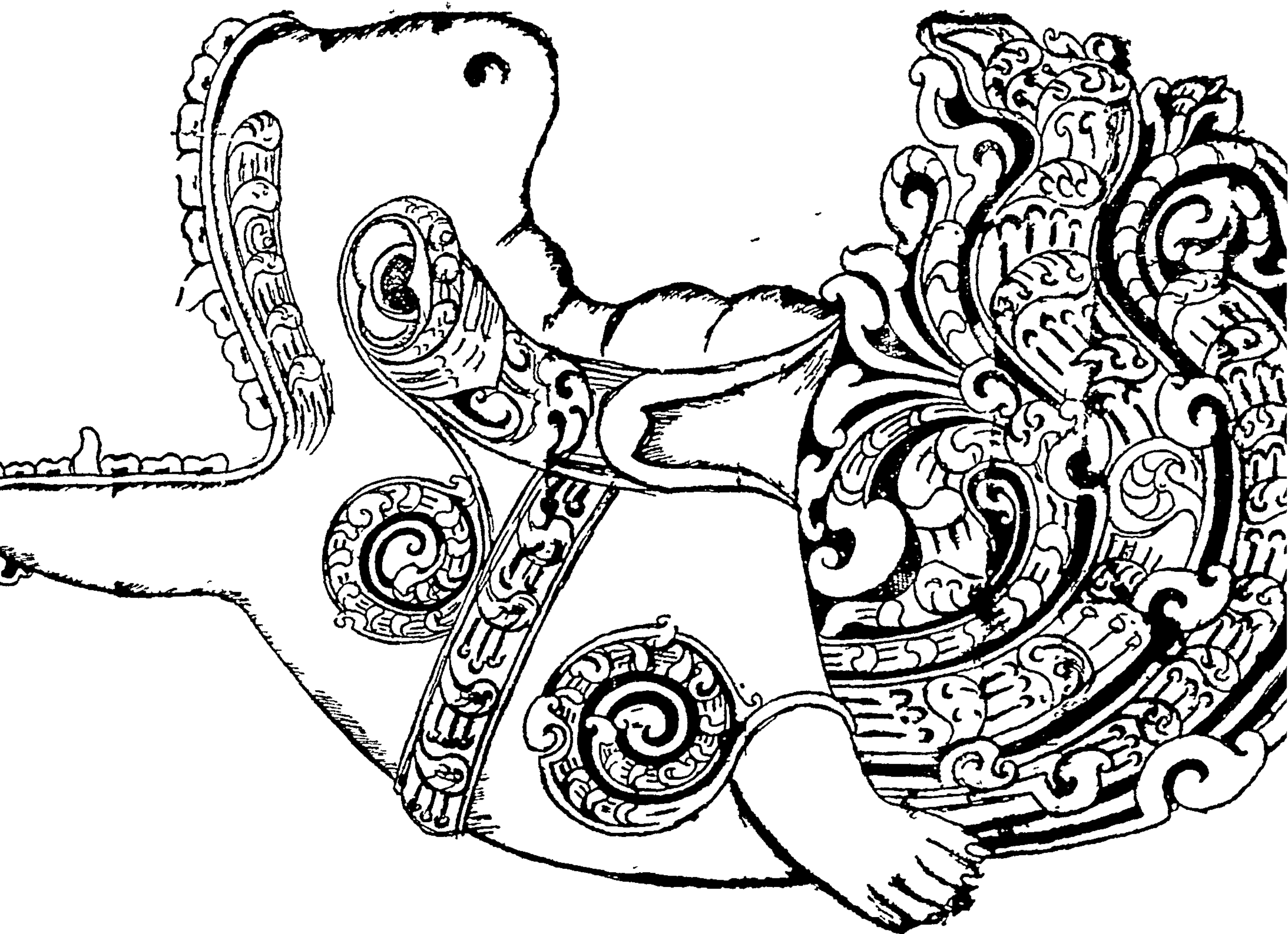
पाठान्तर (१) काया (२) पट्ट तु खुट छायक ।

હે ઋષિ, નિરંધાર પ્રાસાદના બહાર મંડોવરના થરવાળા અને પદના સ્તંભના છોડનો સમન્વય કહું છું. કુંભા, બરાબર કુંભી, સ્તંભ અને દોઢીયાનો થર સમસૂત્રે ભરણી બરાબર ભરણું, કેવાળ અંતરાળ બરાબર, શરૂ અને પાટ બરાબર છજુ એમ સમસૂત્રમાં કરવું તેનાથી ઊંચું નીચું ન કરવું. ઊંચું નીચું થાય તો વેધ જાણવો. તેમાં સંશય નહિ. (સાંધાર પ્રાસાદનું પ્રમાણ અ૦ ૧૦૮ માં શ્લો. ૨૮–૩૦માં આપેલ છે.) ૫–૬–૭

हे ऋषि, निरंधार प्रासादके वाहर मंडोवरके थरवाले और अंदर पंद के स्तंभके छोडका समन्वय कहता हूँ । कुंभा–बराबर कुंभी–स्तंभ और दोढियाका थर समसूत्रमें । भरणा बराबर भरणी और केवाल, अंतराल बराबर सरा और पाटके बराबर छजा इस तरह समसूत्रमें करना । उससे ऊँचा नीचा नहीं करना । ऊँचा नीचा हो तो वेध जानना, उसमें संशय नहीं । (शांधार प्रासादका प्रमाण अ० १० में श्लोक २८–३० में दिया है । ५–६–७.

प्रनाल विचार

पूर्वापरस्य प्रासादे प्रणालशुभमुत्तरे ।
दक्षोत्तर शुभं पूर्वं चतुर्जगतीं मंडपे ॥ ८ ॥



प्रनालका मकरमुख ।

પૂર્વ અને પશ્ચિમ મુખના પ્રાસાદોને પ્રનાળ ઉત્તરે મૂકવી તે શુભ છે અને ઉત્તર દક્ષિણ મુખના પ્રાસાદોને પૂર્વમા પરનાળ-ખાળ ગર્ભગૃહમા મૂકવી જગતી અને મડપને ચારે દિશામા પ્રનાળ મૂકી શકાય-૮

पूर्व और पश्चिम मुखके प्रासादोंको प्रनाल उत्तरमे रखना शुभ है । और उत्तर दक्षिणके मुखके प्रासादोंको पूर्वमे परनाल-गर्भगृहमे रखना । जगती और मडपको चारों दिशाओमे प्रनाल रख सकते है । ८

नवशाखा महेशस्य देवानां सप्तशाखिकम् ।
पंच शाखं सार्व भौमे त्रिशाखं मंडलेश्वरे ॥९॥

શીવ-માહેશ્વરના દેવાલયને નવ શાખા, બીજા સર્વ દેવો સપ્ત શાખા, સાર્વભૌમ-ચક્રવતી રાજાના રાજમહેલમા પચ શાખા અને માડલીક રાજાને ત્રિશાખા કરવી-૯

शीव-माहेश्वरके देवालयको नौ शाखा, दूसरे सर्व देवोंको सप्तशाखा, सार्वभौम-चक्रवर्ती राजाके महलमे पाच शाखा और माडलिक राजोंको त्रिशाखा करना । ९

अथ त्रिशाखा—

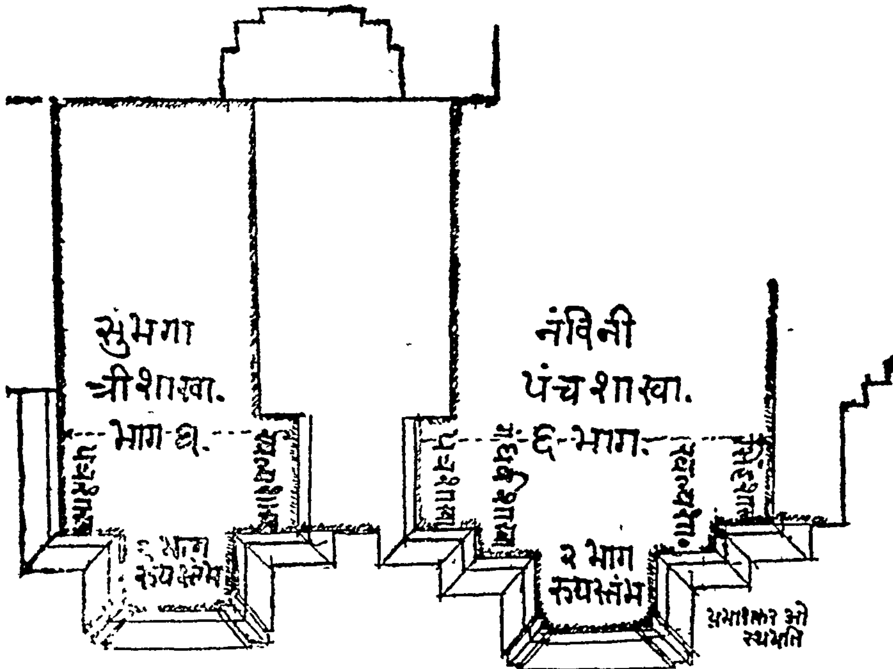
चतुर्भागांकित कृत्वा त्रिशाखो वर्तयेत्तम ।
मध्ये द्विभागिक रूप स्तंभ भागैकनिर्गमं ॥१०॥
पत्र खल्वद्विभाग कोणीका स्तंभ मध्यतः ।
चतुर्थांश सपादेन द्वारपाल कृतोदय ॥११॥

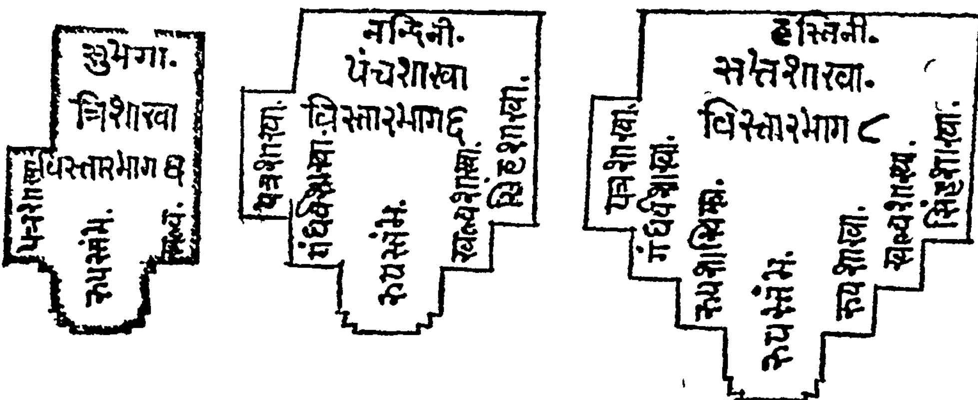
ત્રિશાખાના જાડમા ચાર ભાગ કરવા તેમા વચ્ચે બે ભાગનો રૂપ સ્તભ પહોળો અને એક ભાગ નીકળતો કરવો બાજુમા એકેક ભાગની પત્ર શાખા અને ખલ્વ શાખા (સિંહ શાખા) કરવી (મધ્ય રૂપ સ્તભને શાખા વચ્ચે એકેક ખુણી શોભાને સારુ કરવી) દ્વારની ઊચાઈના ચોથા ભાગે કે તેની સવાઈનો દ્વારપાલ ઊચો કરવો ૧૦-૧૧

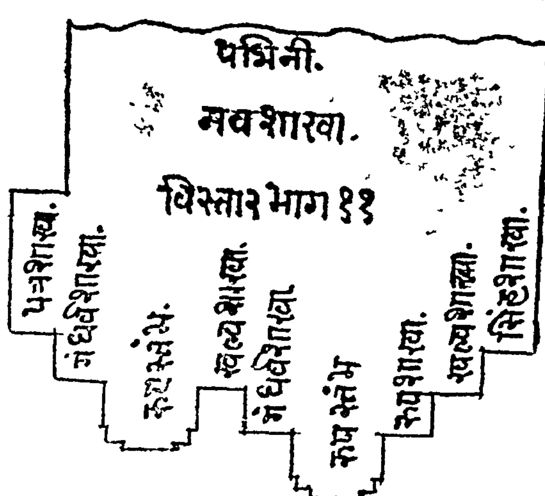
त्रिशाखाके जाडमे चार भाग करना । उसमे विचमे दो भागका रूपस्तभ चौडा और एक भाग निकाला करना । बाजुमे एक एक भागकी पत्र शाखा और खल्वशाखा करना । (मध्यरूप स्तभको शाखाके विचमे एक एक कोना

शोभाके लिये करना ।) द्वारकी ऊँचाईके चौथे भागमें या सवाई ऊँचाईका द्वारपाल ऊँचा करना । १०–११.

अथ पंचशाखा—पंचशाखा च गंधर्वा रूपस्तंभस्तृतियकं ।
पुनः गंधर्व खल्व शाखी पचंशाखा विधीयते ॥१२॥







त्रि पंच सात नव शाखा तल विभाग और शाखाका नाम ।

પચ શાખાની જાડાઈમા છ ભાગ કરવા ૧ પત્ર શાખા ૨ ગધર્વ શાખા ૩ મધ્યમા રૂપ સ્તભ ૪ ફરી ગધર્વ શાખા ૫ ખલ્વ શાખા (સિંહ શાખા) એમ પચ શાખાનો વિધિ જાણવો મધ્યનો રૂપસ્તભ બે ભાગ અને બીજી શાખાઓ એકેક ભાગની જાણવી ૧૨

पँच शाखाके मोटेपनमे छ भाग करना । १ पत्रशाखा २ गधर्वशाखा ३ मध्यमे रूपस्तभ ४ फिर गधर्व शाखा ५ खव शाखा (सिंહ શાખા) इस तरह पँच शाखाका विधि समझना । मध्यका रूपस्तभ दो भाग और दूसरी शाखाओं एक एक भागकी जानना । १२

अथ सप्तशाखा—पत्रशाखा च गंधर्वा रूपशाखास्तृतियकम् ।
स्तंभ शाखो भवेन्मध्यं रूप शाखा तु पंचमी ॥१३॥
षष्टास्या खल्व शाखा च सिंहशाखा च सप्तके ।
प्रासादकर्ण संयुक्ता सिंहशाखाग्र सूत्रतः ॥१४॥

સપ્ત શાખાની જાડાઈમા આઠ ભાગ કરવા ૧ પત્ર શાખા ૨ ગધર્વ શાખા ૩ રૂપ શાખા ૪ મધ્યમા રૂપસ્તભ (બે ભાગનો) ૫ રૂપ શાખા ૬ ખલ્વ શાખા ૭ સિંહ શાખા સાતમી જાણવી પ્રત્યેક શાખા એકેક ભાગની અને મધ્યનો રૂપસ્તભ બે ભાગનો જાણવો પ્રાસાદની રેખા બરાબર સિંહ શાખા અને પત્ર શાખાનુ સૂત્ર એક રાખવુ ૧૩-૧૪

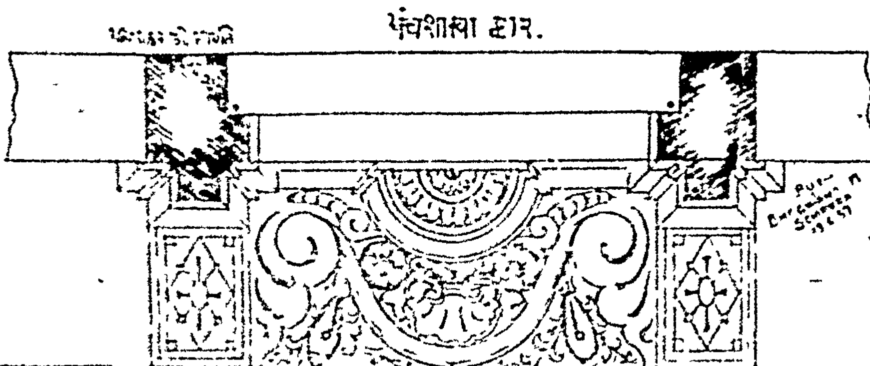
सप्तशाखाके मोटेपनमे आठ भाग करना । १ पत्रशाखा २ गधर्व शाखा ३ रूप शाखा ४ मध्यमे रूप स्तभ (दो भागका) ५ रूपशाखा ६ खल्वशाखा सिंह शाखा जानना । प्रत्येक शाखा एक एक भागकी और मध्यका रूपस्तभ दो भागका जानना । प्रासादकी रेखाके बराबर सिंह शाखा और पत्रशाखाका सूत्र एक रखना । १३-१४.

अथ नवशाखा—पत्रगंधर्व संज्ञा च रूपस्तम्भस्तृतीयकम् ।
चतुर्थी खल्व शाखा च गंधर्वा चैव पंचमी ॥१५॥
रूपस्तम्भ स्तथा षष्ठो रूप शाखा तत परा ।
पत्रशाखा च सिंहस्य मूल कर्णेन संम्मिता ॥१६॥

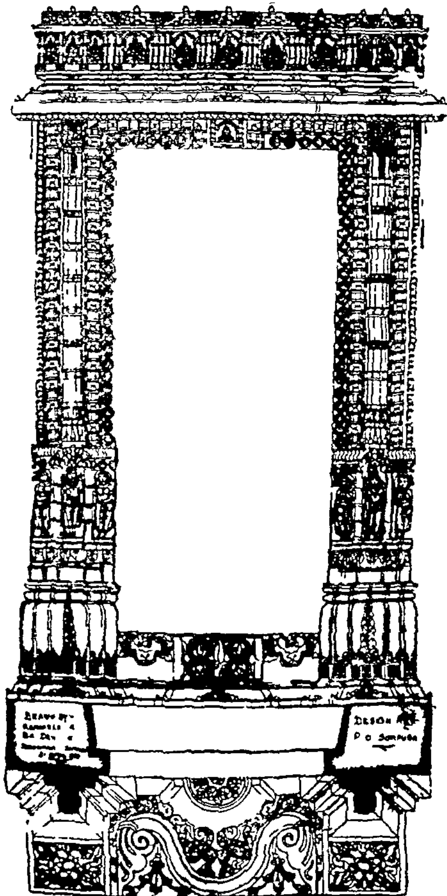
નવ શાખાની જાડાઈમા અગ્યાર ભાગ કરવા તેમા બે રૂપ સ્તભો બબ્બે ભાગના અને બાકીની શાખાઓ એકેક ભાગની રાખવી ૧ પત્ર શાખા ૨ ગધર્વ શાખા ૩ રૂપસ્તભ મધ્ય ૪ ખલ્વ શાખા ૫-ગધર્વ શાખા ૬ બીજો રૂપસ્તભ મધ્ય ૭ રૂપ શાખા ૮ ખલ્વ શાખા અને નવમી સિંહ શાખા જાણવી સિંહ શાખા અને પત્ર શાખા મૂળરેખાની ફરકે સમસૂત્રે રાખવી ૧૫-૧૬

नौ शाखाओंके मोटेपनमें ग्यारह विभाग करना। उसमें दो रूपस्तंभो दो दो भागके-और बाकी शाखाओंको एक एक भागकी रखना। १ पत्र शाखा २ गंधर्व शाखा ३ रूपस्तंभ ४ खल्वशाखा ५ गंधर्व शाखा ६ दूसरा रूपस्तंभ मध्यका ७ रूप शाखा ८ खल्व शाखा ९ सिंह शाखा जानना। सिंह शाखा और पत्र शाखा मूलरेखाके समसूत्रमें रखना। १५-१६.

पंचशाखा द्वार.



त्रिशाखाका द्वार उदम्बर और शंखोद्वार-अर्धचंद्र।



पंच शाखा युक्त अलंकृत द्वार-तथा अर्धचंद्र-उदुम्बर

सप्त शाखा विना खल्वं शाखा त्रिशाखा खल्व संयुतं ।
कर्णीकारंच शाखान्ते नव शाखा सिंहं भवेत् ॥१७॥

સપ્ત શાખાને અંતે ખલ્વ શાખા ન કરવી. ત્રિશાખા અંતે ખલ્વ શાખા યુક્ત કરવી. પંચ શાખા અને નવ શાખા એ સર્વની શાખાને અંતે સિંહ શાખા આવે તે અંતની શાખામાં કર્ણીકા–ગલતનો ઘાટ કરવો–૧૭.

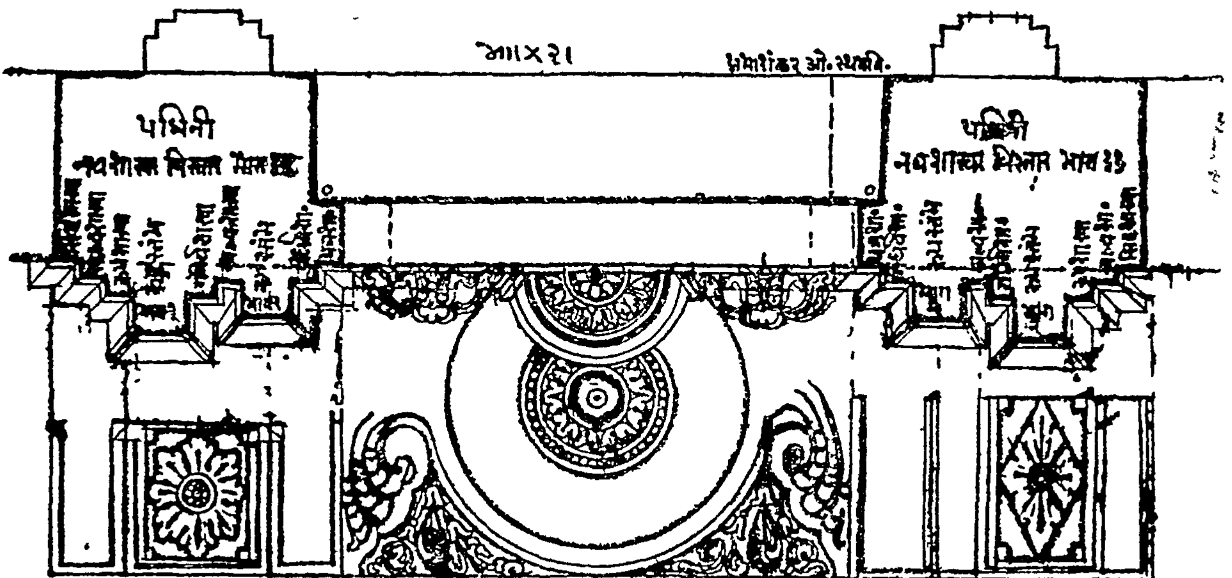
सप्त शाखाके अंतमें खल्व शाखा नहीं करना । त्रिशाखा के अंतमें खल्व शाखासे युक्त करना । पँच शाखा और नौ शाखा अिन सर्व शाखाओंके अंतमें सिंह शाखा आती है । उस अंतकी शाखामें कर्णीका गलत का घाट करना । १७.

मूलकर्णस्य सूत्रेण कुम्भेनोदुम्बरं समम् ।
तदधः पंच रत्नानि स्थापयेत् शिल्पीपूजनात् ॥१८॥

પ્રાસાદની મૂળ રેખાના સમસૂત્ર બરાબર ઉંબરો નીકળતો અને કુંભીની બરાબર ઉંચાઈ એક સૂત્રમાં મુકવો શિલ્પી અને ઉદ્‌મ્બરનું વિધિથી પૂજન કરી નીચે પંચરત્ન સ્થાપન કરવું. ૧૮. અને શિલ્પિ–સ્થપતિનું પૂજન કરવું. ૧૮.

प्रासादकी मूल रेखाकी समसूत्र बराबर उदंबर नीर्गम रखना और कुंभीकी बराबर ऊँचाई एक सूत्रमें रखना । शिल्पी और उदम्बरका विधिसे पूजन कर नीचे पंचरत्न स्थापन करना । उस समय शिल्पिका पूजन करना । १८.

द्वारविस्तार त्रिभागेन वृतमंदारकोस्तथा ।
वृतमंदारकं कुर्यात् मृणालपत्रसंयुतम् ॥१९॥
जाड्य कुंभ कणाली च कीर्तिवक्त्र द्वयंतथा ।
उदुम्बरस्य पार्श्वे च शाखायां स्तलरूपकम् ॥२०॥



द्वार स्तंभ युक्त नव शाखा का तल दर्शन और उदम्बर शंखोद्वार–अर्धचंद्र

ઉદબરને દ્વારની પહોળાઈના ત્રીજા ભાગે વચ્ચે ગોળ મદારક-માણુ કરવુ તે ગોળ માણુ કમળપત્રથી શોભતુ કરવુ માણાની નીચે જાડબો અને કણીનો ઘાટ ઉબરની ઉચાઈના ત્રીજા ભાગે અથવા ચોથે ભાગે જાડો (ઉબરા તથા તલકડાને) કરવો (માણાની બને તરફ એકેક ખુણી કરી) તેની બે બાજુ ગ્રાસ = કીર્તિવક્રના મુખો કરવા ઉબરાની બને બાજુ શાખાઓના તલરૂપ = તલકડા કરવા

उदम्बरको द्वारकी चौडाईके तीसरे भागमे बिचमे गोल मदारक=माणा करना। वह गोल मदारक कमल पत्रसे सुशोभित करना। माणेके नीचे जाडंवा और कर्णीका घाट उम्बरकी ऊँचाईको तीसरे या चोथे भागमे मोटा (उम्बरा तथा तलरूपको करना। थाणेकी दोनो बाजु ग्रासका मुख करना शाखाओंके तलरूप तिलकडा करना। १९-२०

उदवरं ततो वक्ष्ये कुंभतस्योदय भवेत्।
तस्यार्धेन त्रिभागेन पादोनहतोत्तमं ॥२१॥
चतुर्विध तथा स्वस्य कुर्याचैव मुदुंम्बरम्।
उत्तमोत्तम चत्वारो न्यूनाधिकाश्च दोषदा ॥२२॥

હવે ઉબરાની ઊચાઈનુ કહુ છુ ૧ ઉબરની ઊચાઈ કુભા કુભી બરાબર રાખવી ૨ કુભીથી અર્ધ ભાગે, ૩ ત્રીજા ભાગે કે ૪ ચોથા ભાગે ઉબરો નીચે ઉતારવો=ગાળવો એ રીતે ઉબરો ગાળવાના ચાર પ્રમાણો ઉત્તમોત્તમ કહ્યા છે ઓછાથી વધુ ગાળવા તે દોષ કારક છે २१-२२

अब मै उदम्बरकी ऊँचाई कहता हूँ। १ उदम्बरकी ऊचाई कुभा कुभिके बराबर रखना। २ कुभिसे आधे भागमे, ३ तीसरे भागमे या ४ चौथे भागमें उम्बरा नीचे उतारना। जिस तरह उम्बरा उतारनेके चार प्रमाण उत्तमोत्तम कहो हैं। उससे कम या ज्यादा उतारना दोषकारक है। २१-२२

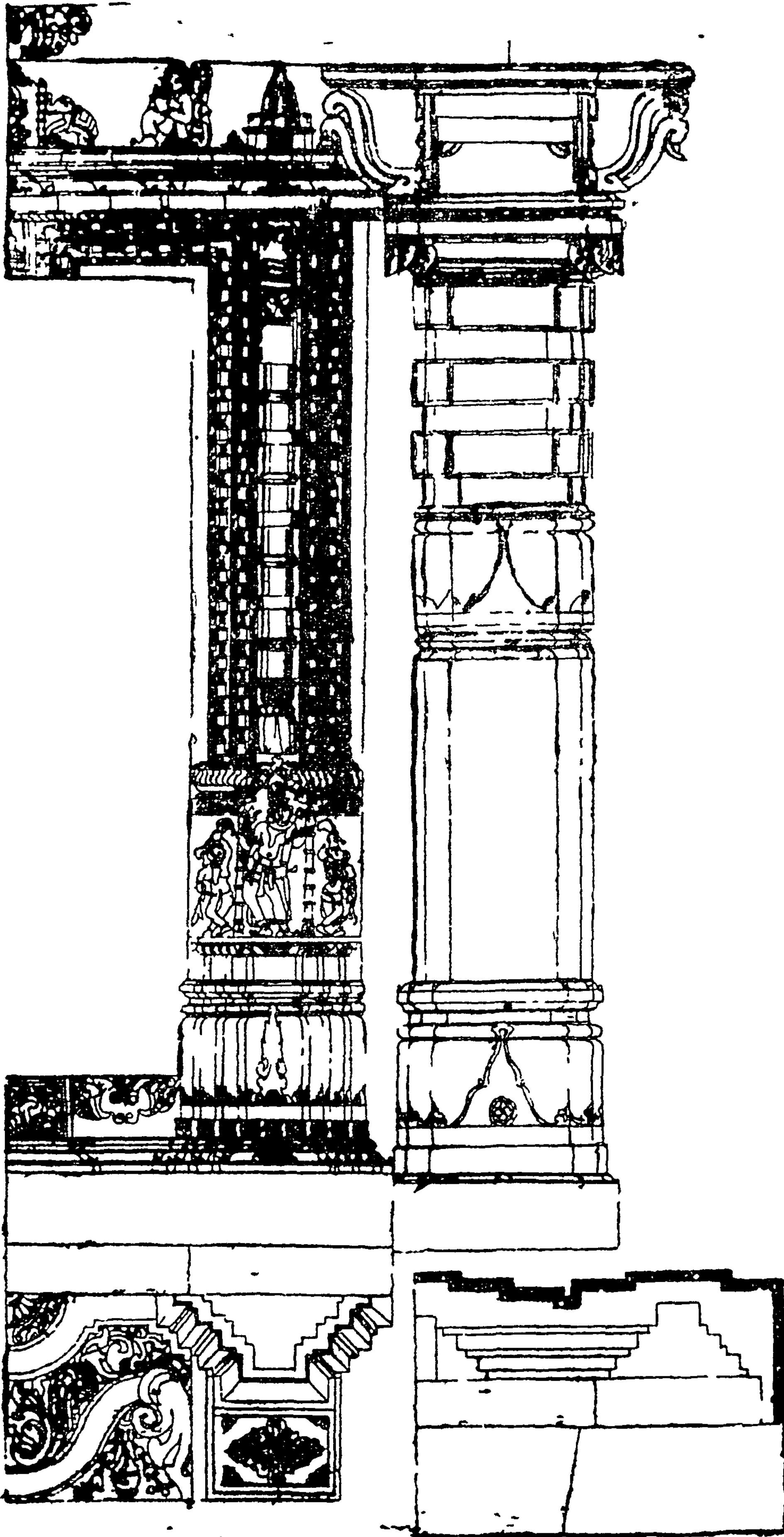
उदंबराते हते कुंभीस्तमच्च पूर्ववत्।
साधारेस्य निरंधारे कुभि कृत्वामुदंम्बरम् ॥२३॥

કુભીથી ઉબરો ગાળવો (હ્રૂત કરવો) પરતુ કુભી અને સ્તભ તો પૂર્વની જેમ જ રાખવા સાધાર અને નિરધાર પ્રાસાદોમા કુભીથી ઉબરો ગાળવો २३

कुभिसे उम्बरा नीचाहृत करना। परतु कुभि और स्तभ तो पूर्वक अनुसार ही रखना। साधार और निराधार प्रासादोंमे कुभिसे उदम्बर हीन करना। २३

(૧) શિલ્પીઓમા કઈ એવી પણ માન્યતા પ્રવર્તે છે કે જો ઉબરો ગાળવામા આવે તો કુભીઓ પણ ગાળવી જોઈએ જો કે બન્ને મતના દૃષ્ટાતો પ્રાચિન મદિરોમા મળે છે

शिल्पीओमे कइ एसी मान्यता है के जब उदवर हूत गालनेका हो तब कुभी भी उतारना दोनु प्रकारका द्रष्टात मील्ता है



सप्त शाखा युक्त अलंकृत द्वार तथा स्तंभ उदंम्बर-अर्धचंद्र

खुरकेन समं कुर्यादर्धचंद्रस्य चोच्छ्रति ।
द्वारव्यास समं दैर्ध्यं निर्गमंच तदर्धत ॥२४॥
द्विभागमर्धचंद्रश्च भागेन द्वौ गगारका ।
शंखपत्र समायुक्तं पद्माकारैरलंकृतम् ॥२५॥



અંબાશંકર ઓ. શીલ્પશાસ્ત્રી

હસ્તિની સપ્તશાખા વિસ્તાર ભાગ ૮

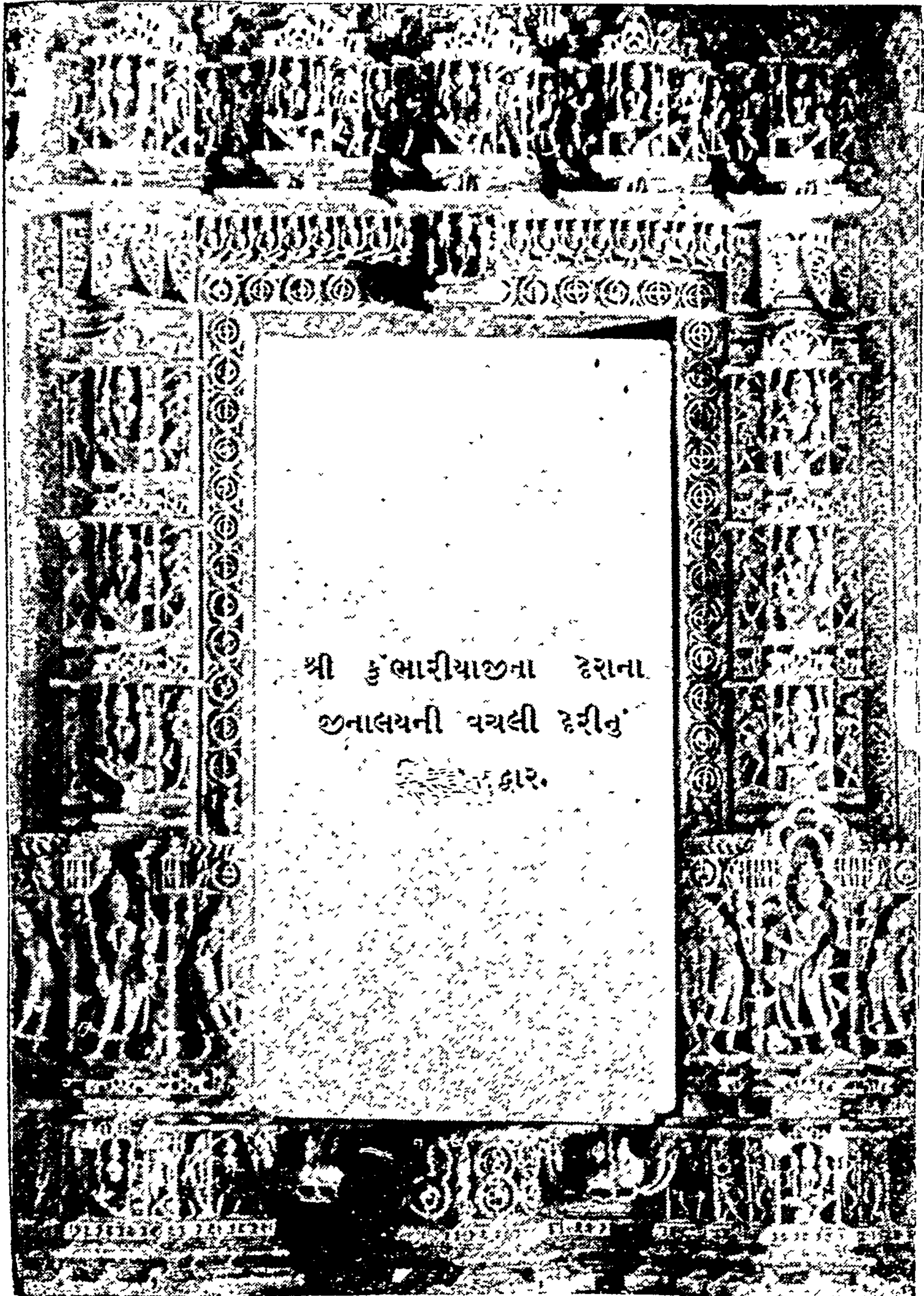
૨ ભાગ

हस्तिनी सप्तशाखा विस्तार भाग ८

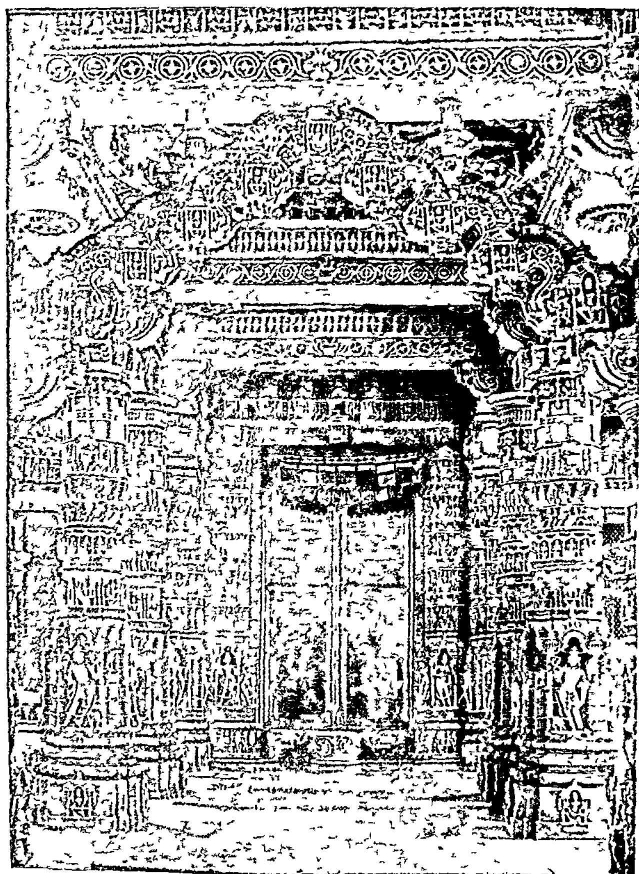
२ भाग

सप्त शाखा १ उदंबर २ तिलकहा ३ शंखोद्धार अर्धचद्र

મંડોવરના ખગના થરાના મથાળાના સૂત્રે અર્ધચંદ્ર (શંખોદ્વાર=શંખાવટ) નો મથાળો રાખવો દ્વારની પહોળાઈ જેટલો લાંબો અને તેનાથી અર્ધ શંખોદ્વાર નીકળતો રાખવો અર્ધ ચંદ્ર ભાગ બે અને તેની બંને તરફ અરધા અરધા ભાગના બે ગગારા કરવા અર્ધ ચંદ્ર અને ગગારાના ગાળામા શંખ અને કમળની આકૃતિ પત્રોથી અલંકૃત શંખોદ્વાર કરવો



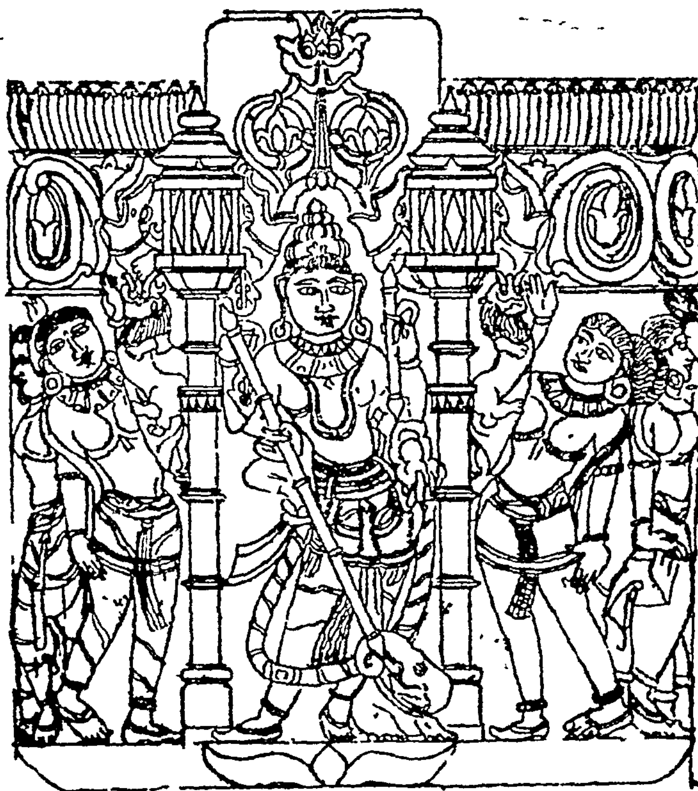
रूपशाखायुक्त पंचशाखा द्वार उदंम्वर उत्तरङ्ग-आरासणा (अंबाजी)



रुपस्तम ईलिका तोरण-रुपशाखायुक्त द्वार, (आबु देलवाडा)

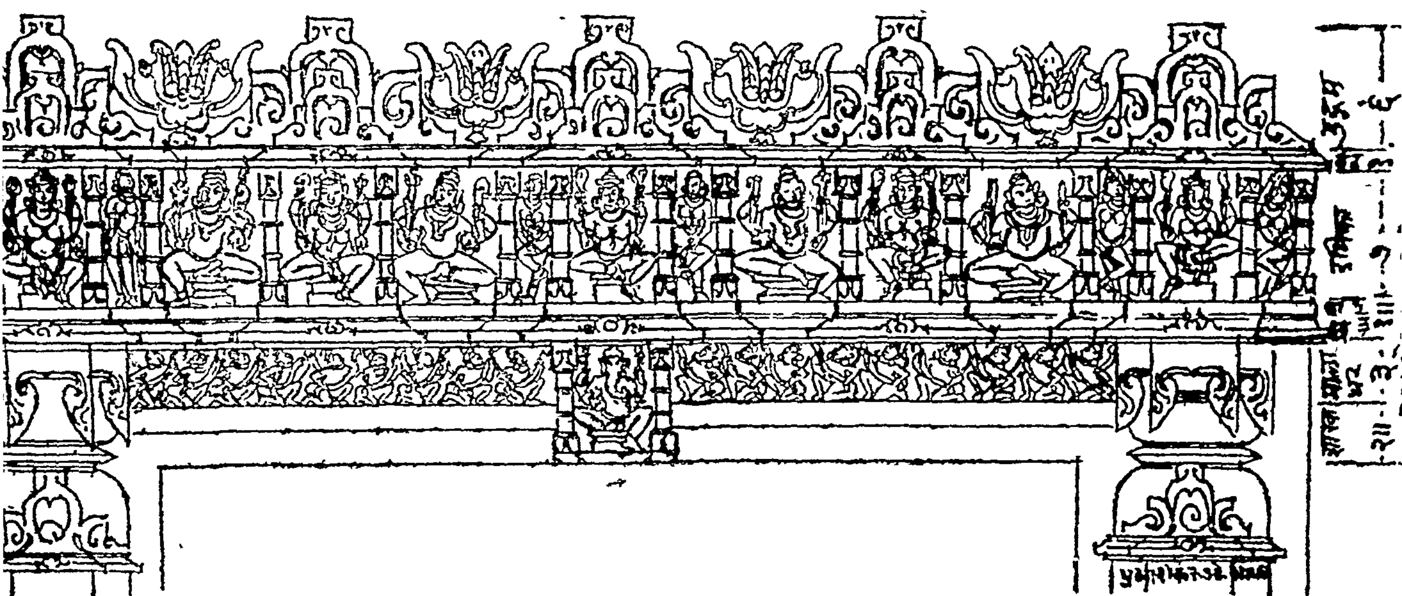
खरेके शीर्पके सूत्रसें अर्धचन्द्र (शंखोद्वार=शंखावट) का शीर्पक रखना। द्वारकी चौडाओीके जितना लम्बा और उससे अर्ध-शंखोद्वार निकलता रखना। अर्धचन्द्र भाग दो और उसकी दोनों तरफ आधे आधे भागके दो गगारक करना। अर्धचन्द्र और गगारकके गालेमें शंख और कमलके आकृति पत्रोंसे अलंकृत शंखोद्वार करना। २४-२५.

यस्य देवस्य या मूर्तिः सैवकार्योत्तरङ्गाके।
परिवारश्च शाखायां गणेशश्चोत्तरङ्गाके ॥२६॥


द्वारशाखाका ठेकामें देवप्रतिहार स्वरुप

દેવાલયમાં જે દેવ પધરાવેલા હોય તેની મૂર્તિ કે સેવક (ગરૂડ) ની મૂર્તિ ઉત્તરંગમાં કરવી અને શાખાઓમાં તે દેવના પરિવારના પંક્તિબદ્ધ સ્વરૂપો કરવાં. ઉત્તરંગમાં વિશેષે કરી ગણેશની મૂર્તિ પણ મધ્યમાં કરે છે. ૨૬.

देवालयमें जो देव पधराये हुए हो उसकी मूर्ति या सेवककी (गरुड) मूर्ति उत्तरंगमें करना। और शाखाओंमें उस देवके परिवारके पंक्तिबद्ध स्वरूपों बनाना। उत्तरंगमें विशेषकर गणेशकी मूर्ति भी मध्यमें करते हैं। २६.


५ गर्भगृह का मुख्य द्वारका उत्तरङ्ग

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारदपृच्छाया गर्भगृह द्वारशाखाधिकार शताग्रे नवमोऽध्याय ॥१०९॥ (क्रमाक अ० ११)

ઇતિશ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ નારદમુની સંવાદરૂપ ગર્ભગૃહ અને દ્વાર શાખા ધિકારનો-શિલ્પ વિશારદ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરા એ રચેલી સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકાનો એકસો નવમો અધ્યાય ॥૧૦૯॥

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षारार्णव नारदमुनिके संवादरूप गर्भगृह और द्वारशाखाधिकारका शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रचिता सुप्रभा नाम्नी भाषाटीकाका एकसौ नौवाँ अध्याय ॥१०९॥ (क्रमाक अ० ११)



महापीठ साथप्रमाल और शिवनिर्माल्यका चडनाथ

॥ अथ प्रतिमा पीठ लिङ्ग मान ॥

क्षीरार्णव अ० ११०—क्रमांक अ० १२

श्री विश्वकर्मा उवाच

[1]देवता मुनिभिर्भाग पीठमान मथोच्यते।
पीटभागमेकेन सार्द्धं भाग मध्यमम् ॥ १ ॥
द्विभागमुत्तमं चैव देवपीठं समुच्छ्रयं।
यदि सम समात्किर्णः प्रतिमा लक्षणान्वितं ॥ २ ॥
महेश्वरस्य विष्णोश्च ब्रह्माचोश्रमं संभवेत्।
इति रेषांतो देवानां कर्तव्यं धिमता ॥ ३ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે. પ્રાસાદના દેવ અને મુનિની મૂર્તિ અને પીઠ માન કહું છું. એક ભાગનું પીઠ કનિષ્ઠામાન, દોઢ ભાગનું પીઠ મધ્યમાન, અને બે ભાગનું દેવપીઠ ઊંચું એ ઉત્તમ માન જાણવું. કદીક પ્રતિમા અને પીઠ સમ ઊંચાઈના લક્ષણના પણ થાય. તે મહેશ્વર વિષ્ણુ અને બ્રહ્મા ઊંચાઈના રેખાસૂત્ર માન પ્રમાણે પીઠ બુદ્ધિમાને જાણવું.[1] ૧–૨–૩.

श्री विश्वकर्मा कहते हैं। प्रासादके देव और मुनिकी मूर्ति और पीठमान कहता हूँ। एक भागका पीठ कनिष्ठमान, डेढ भागका पीठ मध्यमान और दो भागका देवपीठका ऊँचा उत्तममान समझना। कभी प्रतिमा और पीठ समझना ऊँचाईके लक्षणके भी होते है। वह महेश्वर विष्णु ब्रह्मा ऊँचाईके रेखासूत्र मानके अनुसार पीठ बुद्धिमानको समझना।[1] १–२–३.

द्वारमष्ट विभक्तं च त्रिधा भक्तं सप्तभिः
पीठं च भाग मेकं तु शेषं च प्रतिमा मुने ! ॥ ४ ॥

પ્રાસાદના દ્વારની ઊંચાઈના આઠ ભાગ કરી ઉપરનો એક ભાગ તજીને બાકીનાના સાત ભાગ કરી તેમાં ત્રણ ભાગ કરી એક ભાગનું પીઠ અને બાકીના બે ભાગની પ્રતિમા હે મુનિ, કરવી. ૪

प्रासादके द्वारकी ऊँचाईके आठ भागकर उपरका एक भाग तजकर बाकीके

---

(૧) શ્લોક ૧ થી ૩ ની શુદ્ધિ માટે પ્રયાસ કરતાં જે અર્થ નિકળે છે તે આપવા પ્રયાસ કરેલ છે. છતાં પાઠાંતર અન્ય મળે તો ઉત્તમ.

(१) श्लोक एक से तीनकी शुद्धिके लिये प्रयास करते जो अर्थ निकलता है यह देनेके लिये प्रयास किया है फिर भी पाठांतर अन्य मिले तो उत्तम है।

भागके सात भागका तीन भागकर एक भागका पीठ और बाकीके दो भागकी प्रतिमा करना । ४

सप्तभागं भवेद्द्वारं षड्भाग त्रिधाकृतम् ।
द्विभागं प्रतिमामानं शेष पीठस्यमुच्छ्रय ॥ ५ ॥

ગર્ભગૃહના દ્વારની ઊંચાઈના સાત ભાગ કરી ઉપરનો એક ભાગ તજીને બાકીનાના છ ભાગના ત્રણ ભાગ કરવા તેના બે ભાગની પ્રતિમા અને બાકી એક ભાગનુ પીઠ ઊંચુ કહ્યુ છે ૫

गर्भगृहके द्वारकी ऊँचाईके सात भागकर उपरका एक भाग छोडकर बाकीके छ भागके तीन भाग करना । उसके दो भागकी प्रतिमा और बाकी एक भागका पीठ ऊँचा कहा है । ५

द्वार षड् भागिक ज्ञेय त्रिधा पंच[२]प्रकल्पयेत्
पीठे तु भाग मेकेन द्विभागे प्रतिमा भवेत् ॥ ६ ॥

ગર્ભગૃહના દ્વારની ઊંચાઈના છ ભાગ કરી ઉપરનો એક ભાગ તજી બાકીના-ના ત્રણ ભાગ કરી એક ભાગનુ પીઠ ઊંચુ કરવુ અને બે ભાગ ઊંચી પ્રતિમા જાણવી[૨] ૬

गर्भगृहके द्वारकी ऊँचाईके छ भागकर उपरके एक भागको छोडकर बाकीके भाग तीन भागकर एक भागका पीठ ऊँचा करना । और दो भाग ऊँची प्रतिमा जानना ।[२] ६

एवमूर्ध्वे प्रतिमा च अर्द्धे शयनासनं भवेत् ।
पीठमान च नान्यत्र शेष स्थाने च निष्फलम् ॥ ७ ॥
जल शय्या प्रमाणेन द्वार विस्तार साधितम्
अन्यथा च यदा अर्चा विस्तर नैव लङ्घयेत् ॥८॥

આ રીતે ઊભી પ્રતિમાનુ માન જાણવુ શયનાસન પ્રતિમાનુ માન દ્વારોદયના અર્ધ ભાગે રાખવુ જલશય્યાના શેષશાઈના માન પ્રમાણે દ્વારનો વિસ્તાર સાધવો=રાખવો દ્વાર વિસ્તારથી શય્યા મૂર્તિના વિસ્તારનુ લઘન કરવુ નહિ અર્થાત્

(૨) શ્લોક ૬ ના બીજા પદમા ષડ ના સ્થાને અન્ય પ્રતોમા પચ નો પાઠ વધુ મળે છે પરતુ શ્લોક ૪-૫ અને ૬ ના ક્રમથી જોતા ષડ્ પાઠ યોગ્ય છે

(२) श्लोक ६ के दूसरे पदमें षड्के स्थानपर अन्य प्रतोंमे पचका पाठ ज्यादा मिलता है, लेकिन श्लोक ४, ५ और ६ के क्रमसे देखते षड् पाठ योग्य है ।



गवाक्षमें वारह : पक्षमें विरालिका

દ્વાર વિસ્તાર જેટલી શયન પ્રતિમા લાંબી રાખવી. (અપરાજિત સૂત્રમાં આપેલા પ્રમાણથી આ પ્રમાણ નાનું છે.) ૭–૮.

इस प्रकार खडी प्रतिमाका मान जानना। शयनासन प्रतिमाका मान द्वारोदयके आधे भागमें रखना। जलशय्याके मान के अनुसार द्वारका विस्तार रखना द्वार विस्तारसे शय्या मूर्तिके विस्तारका लंघन नहीं करना अर्थात् द्वार विस्तारके बराबर शयन प्रतिमा लम्बी रखना। ७–८ (अपराजित सूत्रके प्रमाणसे यह प्रमाण छोटा है।)

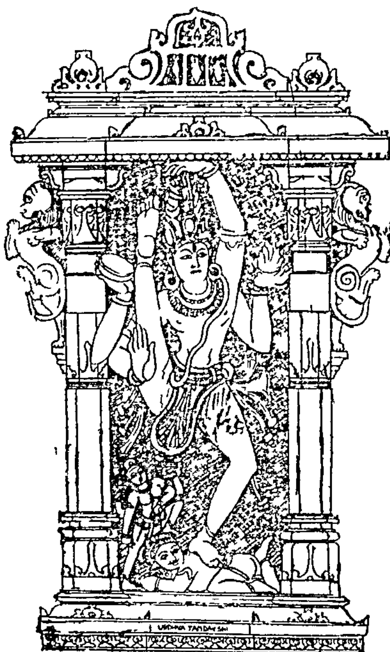
द्वारस्य विस्तरार्द्धेन पादोनेवा विचक्षणं[३]
दलीकृत्य तदस्थाने प्रमाण तु त्रिधा पुनः ॥९॥

ગર્ભના દ્વારની પહોળાઈના (૧) અર્ધ ભાગે (૨) પોણા ભાગે (૩) કે દ્વાર વિસ્તાર જેટલી એમ ત્રણ પ્રકારે પ્રતિમાના વિસ્તારનું પ્રમાણ જાણવું. ૯.

गर्भगृहके द्वारकी चौचाईके (१) आधे भागमें (२) पौने भागमें (३) या द्वार विस्तारके बराबर इस तरह तीन प्रकारसे प्रतिमाके विस्तारका प्रमाण जानना। ९

[३] तृतीयांशेन गर्भस्य प्रासादे प्रतिमोत्तमा।
मध्यमा स्वदशांशेन पंचमांशोना कनीयसी ॥८१॥ दीपार्णव

अथ लिङ्गमान–प्रासाद पंचमाशेन लिङ्गाकूर्यात्प्रयत्नतः
वेदविज्ञादित्पीठं भावाज्ञपीठ मानकम् ॥१०॥



गवाक्षमे उर्ध्व तिल्क गिव–पक्षमे विराल्त्रि

પ્રાસાદના પાચમા ભાગે રાજલિંગની લંબાઈ પ્રયત્ને કરીને રાખવી અને પ્રાસાદના ચોથા ભાગે જળાધારીનો વિસ્તાર રાખવો ૧૦

प्रासादके पाँचवे भागमे राजलिङ्गकी लम्बाई प्रयत्न करके रखना और प्रासादके चौथे भागमे जलधारीका निस्तार रखना । १०

ગર્ભગૃહના ત્રીજા ભાગની પ્રતિમાનું પ્રમાણ ઉત્તમ માન જાણવું તેનો દશમો ભાગ હીન કરે તો મધ્ય માન અને પાચમો ભાગ હીન કરે તો કનિષ્ઠ માન પ્રતિમાનું જાણવું

गर्भगृहके तीसर भागकी प्रतिमाका प्रमाण उत्तम मान जानना । उसका दशवाँ भाग हीन करे तो मध्यम मान और पाँचवा भाग हीन करे तो कनिष्ठ मान प्रतिमाका जानना ।

सप्ताशे गर्भगेहे तु द्वौ भागो परिवर्जयेत् ।
पचमाशो भवेद्देव शयनस्य सुखावह ॥ अपराजित सूत्र

ગર્ભગૃહના સાત ભાગ કરી તેના બે ભાગ તજીને પાચ ભાગના જળશાયી સુતેલી મૂર્તિનું પ્રમાણ રાખવું એ સુખને આપનાર જાણવું તે અપરાજીતનું પ્રમાણ છે

गभगृहके सात भाग कर उसके दो भाग छोडकर पाँच भागके जलशायी सुप्त मूर्तिका प्रमाण रखना, यह सुखदाता है । यह अपराजित ग्रथका प्रमाण है ।

उर्ध्व प्रतिमा मान–एक हस्तेतु प्रासादे मूर्तिरेकादशाङ्गुला ।
दशाङ्गुल ततो वृद्धि॰ यावद् हस्त चतुष्ठयत् ॥६६॥

द्वार विस्तार गृह्य अष्टमांशोनिमध्यत।
ज्येष्ठ मध्याकनिष्ठं चा अर्चामानं चतुर्मुखं ॥११॥

ચાતુર્મુખ પ્રતિમાનું પ્રમાણ કહે છે. દ્વાર વિસ્તારની બરાબર પ્રતિમા રાખવી તે મધ્યમાન, આઠમો ભાગ હીન રાખવી તે કનિષ્ઠ માન અને દ્વાર વિસ્તારથી આઠમો ભાગ વધુ રાખવી તે જ્યેષ્ઠ માન એ રીતે ચાતુર્મુખ પ્રાસાદની પ્રતિમાનું પ્રમાણ જાણવું–૧૧.

द्वयाङ्गुला दश हस्तान्ता शताद्धार्न्ताङ्गुलस्य च।
अतो विंशदशोना मध्यमाऽर्चा कनीयसी ॥६७॥ दीपार्णव

એક હાથના પ્રાસાદને અગિયાર અંગુલની માન જાણવું એ રીતે ચાર હાથ સુધીના પ્રાસાદને ગજે દશ અંગુલની વૃદ્ધિ પ્રત્યેક ગજે કરવી. પાંચથી દશ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક ગજે બબ્બે અંગુલની વૃદ્ધિ કરતા જવું. દશથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક ગજે એકેક અંગુલની વૃદ્ધિ કરવી. તે ઉત્તમ માન જાણવું. તેનો વીશમો ભાગ હીન કરવાથી મધ્યમાન અને દશમો ભાગ હીન કરવાથી કનીષ્ઠ માન જાણવું.

एक हाथके प्रासादको ग्यारह अंगुलकी खड़ी प्रतिमाका मान जानना। इस तरह चार हाथ तकके प्रासादके गज पर दस दस अंगुलकी वृद्धि प्रत्येक गज पर करना। पाँचसे दस हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक गज पर दो दो अंगुलकी वृद्धि करते जाना। दससे पचास हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक गज पर एक एक अंगुलकी वृद्धि करना। यह उत्तम मान जानना। उसके बीसवें भागको हीन करनेसे मध्यमान और दसवे भागको हीन करनेसे कनीष्ठमान जानना।

आसनस्थ प्रतिमामान–हस्तादेर्वेद हस्तांते षड्वृद्धिः स्यात् षडांङ्गुला।
तदूर्ध्वं दश हस्तान्ता त्र्यंङ्गुला वृद्धिरिष्यते ॥६६॥
एकाङ्गुला भवेद् वृद्धि यावत् पंचाशद्धस्तकम्।
विंशत्येकाधिका ज्येष्ठा विंशत्योन कनीयसी ॥६७॥
उर्ध्वस्थिता प्रथमा प्रोक्ता आसनस्था द्वितीयका।

બેઠી પ્રતિમાનું માન કહે છે. એક હાથથી ચાર હાથ ગજસુધીના પ્રાસાદનું પ્રત્યેક હાથે ૭ ૭ આંગળની બેઠી પ્રતિમાનું માન જાણવું. ત્યાર પછી ૭ થી દશ હાથ સુધીના પ્રાસાદનું પ્રત્યેક હાથે ત્રણ ત્રણ આંગળ વધારતા જવું. અગ્યારથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક ગજે એકેક આંગળની વૃદ્ધિ કરતા જવું તે મધ્યમાન આવેલ માનનો વીશમો ભાગ વધારવાથી જ્યેષ્ઠમાન અને વીસનો ભાગ હીન કરવાથી કનિષ્ઠમાન જાણવું. એ રીતે આગળ જે પહેલું ઊભી પ્રતિમાનું માન કહ્યું અને આ બીજું માન બેઠી પ્રતિમાનું જાણવું.

बैठी हुई प्रतिमाका मान कहते हैं। एक हाथसे चार हाथ–गज तकके प्रासादका प्रत्येक हाथमें छः छः अंगुलकी बैठी प्रतिमाका मान जानना। बादमें छः से दस हाथ तकके प्रासादका प्रत्येक तीन तीन अंगुल बढ़ाते जाना। ग्यारहसे पचास हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक गज पर

चातुर्मुख प्रतिमाका प्रमाण कहते हैं। द्वार विस्तारके बराबर प्रतिमा रखना यह मध्यमान, आठवाँ भाग हीन रखना यह कनिष्ठमान, और विस्तारसे आठवाँ

एक एक अंगुलकी वृद्धि करते जाना। यह मध्यमान है। आये हुए मानका बीसवाँ भाग बढानेसे ज्येष्ठमान और बीसवें भागको हीन करनेसे कनिष्ठमान जानना। इस तरह आगे जो पहेला खडी प्रतिमाका मान कहा और यह दूसरा मान बैठी प्रतिमाका जानना।

प्रासाद गज	बैठी प्रतिमा मान अंगुल	खडी प्रतिमा मान अंगुल	प्रासाद गज	बैठी प्रतिमा मान–अंगुल	खडी प्रतिमा मान अंगुल	प्रासाद गज	बैठी प्रतिमा मान अंगुल	खडी प्रतिमा मान अंगुल
१	६	११	६	३०	४५	२०	५२	६७
२	१२	२१	७	३३	४७	३०	६२	७३
३	१८	३१	८	३६	४९	४०	७३	८३
४	२४	४१	९	३९	५१	५०	८२	९३
५	२७	४२	१०	४२	५३			

गर्भे पचांशकेत्र्यंशे ज्येष्ठे लिङ्गं तु मध्यमम्।
नवांशे पंच भागं स्यात्गर्भार्धं कनिष्ठादेय ॥ अ० १३ ॥

ગર્ભગૃહના પાંચ ભાગ કરી ત્રણ ભાગના રાજલિંગની લંબાઈ જ્યેષ્ઠ માનની જાણવી તેના નવ ભાગ કરી પાંચ ભાગની લંબાઈનું લિંગ ઉદય મધ્યમાનનું અને ગર્ભગૃહના અર્ધભાગે રાજલિંગનું ઉદય તે કનિષ્ઠમાન જાણવું

गर्भगृहके पाँच भाग कर तीन भागके राजलिङ्गकी लम्बाई ज्येष्ठमानकी जानना। उसके नौ भाग कर पाँच भागकी लम्बाईके लिङ्ग उदयको मध्यमानका और गर्भगृहके आधे भागमें जो राजलिङ्गका उदय है उसे कनिष्ठमान जानना।

गृहपूजा योग्य प्रतिमामान–आरभ्यादंगुल उर्ध्वं पर्यंते द्वादशाङ्गुलम्।
गृहेषु प्रतिमा पूज्या नाधिके शस्यते बुध ॥

એક આંગળથી બાર આંગળ સુધીની દેવમૂર્તિ ગૃહપૂજાને યોગ્ય જાણવી તેથી અધિક મોટી મૂર્તિ બુદ્ધિમાને ઘરપૂજામાં ન રાખવી (મત્સ્ય પુરાણમાં અંગુઠાના પર્વથી નવ આંગળ સુધીનું પ્રમાણ ગૃહપૂજાને માટે આપેલું છે)

एक अंगुलसे बारह अंगुल तककी देवमूर्तिको गृहपूजाके योग्य जानना। उससे अधिक बडी मूर्तिको बुद्धिमानको घरपूजामें न रखना चाहिये। (मत्स्य पुराणमें अंगुठेके पर्वसे नौ अंगुल तकका प्रमाण गृहपूजाके लिये दिया है।)

भाग ज्यादा रखना, यह ज्येष्ठमान इस तरह चातुर्मुख प्रासादकी प्रतिमाका प्रमाण जानना। ११.

पद्मांशनीषदार्चा द्वारविस्तार भापितम्।
वितराग यदा लक्ष्मी नीकुलीश बुध मेव च ॥१२॥

ગર્ભગૃહના પદના વિભાગે કે દ્વારના વિસ્તાર પ્રમાણથી વિતરાગ=જીન લક્ષ્મીજી કે નકુલીશ કે બુદ્ધની પ્રતિમા રાખવી–૧૨.

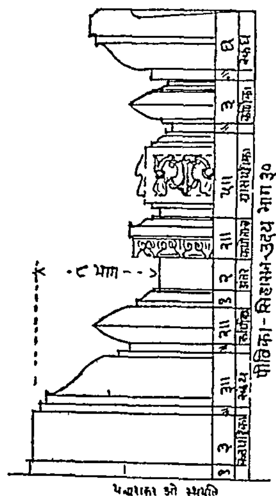
गर्भगृहके पदके विभागमें या द्वारके विस्तार प्रमाणसे वितराग–जीन लक्ष्मीजी या नकुलीश या बुद्धकी प्रतिमा रखना। १२.

उच्छ्रये यत्र पीठस्य त्रिंशता परिभाजिते।
एकोशं भूगतं कार्यं त्रिभागः कण्ठपीठिका ॥१३॥
भागार्द्धं मुखपट्टं च स्कन्ध सार्द्धत्रयोन्नतः।
स्कन्धस्य पट्टिकावैस्याद् भागैकं चान्तरपत्रिका ॥१४॥
कर्ण सार्द्धं द्वयं वैस्याद् भागैकं चिप्पिका मता।
द्विभागं चान्तः पत्रकं कपोताली द्विसार्द्धिका ॥१५॥
सार्द्ध पंच ग्रासपट्टिः कर्तव्या विधिपूर्वकम्।
अर्धे मुखपट्टिकाख्या त्रिभागं कर्णशोभनम् ॥१६॥
अर्धः स्कन्धपट्टिः कार्या चतुर्भागश्च स्कन्धकः।
क्षोभणाश्चष्टभागैः कर्तव्यं तदशंकितैः ॥१७॥

પીઠ વિભાગ.	
૧	જમીનમાં
૩	કંઠપટ્ટી
૦॥	મુખપટ્ટી
૩॥	સ્કંધ જાડંબો
૦॥	અંધારી
૨॥	કર્ણીકા
૧	ચીપ્પીકા
૨	અંતરપત્ર
૨॥	કેવાળ
૫॥	ગ્રાસપટ્ટી
૦॥	મુખપટ્ટી
૩	કર્ણીકા
૦॥	સ્કંધપટ્ટિ
૪	સ્કંધ
૩૦	

દેવસ્થાપન નીચેની પીઠિકા=પબાસણ–સિંહાસનની ઊંચાઈ (જે ભાગે આવતી હોય તેના) ના ત્રીસ ભાગ કરવા. તેમાં એક ભાગ ભૂમિમાં–ત્રણ ભાગ કંઠપટ્ટી અર્ધા ભાગની મુખપટ્ટી, સાડાત્રણ ભાગનો સ્કંધ (ગલતો, જાડંબો) કરવો (તેમાંથી અરધા ભાગનો કંદ કાઢવો) તે પર અરધા ભાગની અંધારી–તે પર કર્ણી અઢી ભાગની–તે પર એક ભાગની ચીપ્પીકા કરવી–તે પર બે ભાગનું અંતરપત્ર–કેવાળ અઢી ભાગનો–તેના પર ગ્રાસપટ્ટી સાડાપાંચ ભાગની વિધિથી કરવી. અરધા ભાગની મુખપટ્ટી–અંધારી કરવી, ત્રણ ભાગની કર્ણી કરવી. તે પર અરધા ભાગની સ્કંધપટ્ટી=કંદ અને સૌથી ઉપર સ્કંધક. ગલતો ચાર ભાગનો કરવો. આ બધા થરોમાં અંતરપત્રથી કંઠપટ્ટીનો ઘાટ આઠ ભાગ ઊંડો

બેસાડવો એ રીતે સિંહાસન અંકિત કરવું ૧૩-૧૪-૧૫-૧૬-૧૭.



देव सिंहासन पीठ–उदय विभाग

देवस्थापनकी नीचेकी पीठिका–सिंहासनकी ऊंचाई (जिस भागमें आवे उसके) के तीस भाग करना। इनमें एक भाग भूमिमें–तीन भाग कण्ठपट्टी, आधे भागकी मुखपट्टी, साढे तीन भागका स्कंध (गलता–जाडता) करना (उसमेंसे आधे भागका कद निकालना।) उसके पर आधे भागकी अधारी, उसके पर कर्णी ढाई भागकी, उसके पर एक भागकी चिप्पिका करना। उसके पर दो भागका अंतरपत्र–करना केवाल ढाई भागका, उसके पर ग्रासपट्टी साढे पाँच भागकी विधिसे करना। आधे भागकी मुखपट्टी अधारी करना। तीन भागकी कर्णी करना, उसके पर आधे भागकी स्कंधपट्टी–कद और सबसे उपर स्कंधक गलता चार भागका करना। इन सब स्तरोंमे अंतरपत्रसे कंठपट्टीके घाटको आठ भाग गहरा बिठाना इसीतरह सिंहासनको अंकित करना। १३–१४–१५–१६–१७

इति श्री विश्वकर्मा कृते क्षीरार्णवे नारद पृच्छीया प्रतिमा लिङ्गपीठ मानधिकारे शताग्रे दशमोऽध्याय ॥११०॥ क्रमांक अ० १२

ઈતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવે નારદમુનિના સંવાદરૂપ પ્રતિમા, લિંગ અને પીઠના માનનો અધિકાર શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકાનો એકસો દશમો અધ્યાય–૧૧૦ ક્રમાંક અ૦ ૧૨

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें नारदमुनिके सवादरूप प्रतिमा, लिङ्ग और पीठके मानका अधिकार शिल्पविशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रची हुई सुप्रभा नामकी भाषा टीका का अेकसौ दसवाँ अध्याय। ॥११०॥ (क्रमांक अ० १२)

॥ अथ देवता दृष्टिपद स्थापन ॥

क्षीरार्णव अ० १११–क्रमांक अ० १३

उच्छ्रयं द्वांत्रिशत् भागं द्वार मान विशेषतः
(अधःतै अष्ट भागं च शिवस्थानं च निश्चलं ॥ १ ॥)
हरश्चदशमे भागे द्वादशे जलशायिते ।
मातरस्य द्वयाधिक्यै यक्ष षोडशान्विते ॥ २ ॥
अष्टादशैव कर्तव्यं उमारुद्राश्रिया हरिं ।
विंशमे ब्रह्मयुग्मंच तत्र दुर्गाअगस्तादय ॥ ३ ॥
एवं विधेयप्रकर्तव्या नारदादि मुनीश्वराः ।

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે. ગર્ભગૃહના દ્વારની ઊંચાઈના બત્રીશ ભાગ કરવા. નીચેના આઠ ભાગ શિવસ્થાનના જાણવા નીચેથી આઠ ભાગમાં શિવલિઙ્ગ બેસાડવા, દશમે ભાગે, હરઃ શીવઃ, બારમા ભાગે શેષ શાયિની દૃષ્ટિ રાખવી; ચૌદમા ભાગે માતૃકાઓની; સોળમા ભાગે યક્ષની દૃષ્ટિ રાખવી. અઢારમા ભાગે–ઉમા રૂદ્ર–લક્ષ્મી અને વિષ્ણુની અને બ્રહ્મા–સાવિત્રીનું વીશમા ભાગે તેમજ દુર્ગા અગસ્તાદય નારદ આદિ મુનિની દૃષ્ટિએ વિધિથી એટલે વીશમે ભાગે રાખવી. ૧–૨–૩–૪.

विश्वकर्मा कहते हैं–गर्भगृहके द्वारकी ऊँचाईके बत्तीस भाग करना। नीचे का आठ भाग शिवलिङ्ग का स्थान का समझना उम्बरेसे दस भाग हर शिव बारहवें भागमें शेषशायीकी दृष्टि रखना। चौदहवें भागमें मातृकाओंकी। सोलहवें भागमें यक्षकी दृष्टि रखना। अठारहवें भागमें उमारूद्र–लक्ष्मी और विष्णु की। ब्रह्मा और सावित्रीका वीसवें भागमें और दुर्गा अगस्त्यादय नारद आदि मुनिकी दृष्टि इस विधिसे अर्थात् वीसवें भागमें रखना। १–२–३–४.

एकविंशे भवेक्लक्ष्मीश्चतुर्विंशे सरस्वती ॥ ४ ॥
पंच विंशे जिनस्थानं षड्विंशेचंद्रमेव च ।
ब्रह्मा विष्णुस्तथारुद्रः सूर्यश्च सप्तविंशतिः ॥ ५ ॥
भैरवश्चंडिकाश्चैव एकोनत्रिंशदेशके ।
तत्पदंच परेशून्यं भूतप्रेतादि राक्षसा ॥ ६ ॥

---

૧ કોઈ પ્રતોમાં ત્રિશત્–ત્રીશ ભાગ કહ્યા છે. પણ તે કદાચ અશુદ્ધ હોય–ત્રિશત્ भाग कोइ प्रतमें कहा हे मगर वो अशुद्ध प्रत होगी

એકવીશમા ભાગે લક્ષ્મીની દૃષ્ટિ, ચોવીશમા ભાગે સરસ્વતી (અને ગણેશની) પચ્ચીશમા ભાગે જિન તીર્થંકર, છવ્વીસમા ભાગે ચંદ્રની, સત્તાવીશમા ભાગે બ્રહ્મા વિષ્ણુ અને રૂદ્રની અને સૂર્યની મૂર્તિની, ઓગણત્રીસમા ભાગે ભૈરવ અને ચંડિકાની દૃષ્ટિ રાખવી તે ઉપરના ત્રણ શૂન્ય ભાગમા ભૂત પ્રેત અને રાક્ષસની દૃષ્ટિ રાખવી

इक्कीसवे भागमे लक्ष्मीकी दृष्टि, चोवीसवें भागमे सरस्वती (और गणेश की) पच्चीसवें भागमे जिन तीर्थंकर, छव्वीसवे भागमे चंद्रकी सत्तावीशवे भागमे ब्रह्मा विष्णु और रूद्रकी और सूर्यकी मूर्तिकी और उनतीसवे भागमे भैरव और चंडिकाकी दृष्टि रखना । उसके उपरके तीन शून्य भागमे भूत प्रेत और राक्षसकी दृष्टि रखना । ४–५–६

द्वारोच्छ्रयोऽष्टधाभक्तं ऊर्ध्वभागं परित्यजेत् ।
सप्तमा सप्तमे भागे तस्मिन् दृष्टिस्तु शोभना ॥७॥

દ્વારની ઊંચાઈના આઠ ભાગ કરી ઉપરનો આઠમો ભાગ તજી દેવો અને સાતમા ભાગના ફરી આઠ ભાગ કરી તેના સાતમા ભાગે દેવોની દૃષ્ટિ રાખવી તે શુભ છે

द्वारकी ऊँचाईके आठ भागकर उपरके आठवे भागको छोड देना । और सातवें भागके फिर आठ भागकर उसके सातवे भागमे देवोंकी दृष्टि रखना, यह शुभ है । ७

ક્ષીરાર્ણવની કેટલીક પ્રતોમા "उच्छ्रय त्रिंशतद्वार" આવો ત્રિશ ભાગનો પાઠ મળે છે પરંતુ એક જૂની આધારભૂત પ્રતમા શુદ્ધપાઠ અને વટના બે પદોની ત્રુટિ પણ મળી આવી–'उच्छ्रय द्वात्रिंशत् भाग' નો સાચો પાઠ મળ્યો તે પહેલા શ્લોકના પાછલા બે પદો जयस्ते अष्ट भाग च शिव स्थान च निश्चरु ॥१॥ દીપાર્ણવ ગ્રંથના દૃષ્ટિપદ વિભાગ આ ગ્રંથના થોડા થોડા ફેરફાર સાથે મળે છે પરંતુ તે ફેરફાર વધુ ભાગે અશુદ્ધિના આભારી હોય। ૧૮ ભાગે બ્રહ્મા યુગ્મને લઈ ૧૯મા ભાગે બુધ ચિત્ર લેપને ૨૦મા ભાગે દુર્ગા નારદાદિ મુનિ દીપાર્ણવમા કહ્યા છે જિન તીર્થંકર ૨૧મા ભાગે લક્ષ્મી સાથે લીધેલ છે જ્યારે આ ગ્રંથમા ૨૫મા ભાગે જિનનુ સ્વતંત્ર દૃષ્ટિ સ્થાન કહ્યુ છે ક્ષીરાર્ણવની કેટલીક પ્રતોમા 'पचविंशे घनस्थान'નો અશુદ્ધ પાઠ મળે છે પરંતુ ઉપરોક્ત આધારભૂત પ્રતમાથી घनस्थानने बदले जिनस्थाननो પાઠ મળી આવ્યો છે તે જ સાચો પાઠ છે

દૃષ્ટિસૂત્ર વિષયમા અપરાજિત સૂત્ર સંતાન, ઠક્કુરફેરૂ વાસ્તુસાર, અને આ૦ વસુનંદી કૃત પ્રતિષ્ઠાસાર સાથે રત્નકોષ દેવતામૂર્તિ પ્રકરણમા મતાંતરો છે अपराजित सूत्र १३७મા ચોસઠ ભાગ દ્વારોચ્છ્યના કહ્યા છે તેમા નિચે ૧૮ ભાગ સુધીમા, ૨૭મા ભાગે જળશાયિન ૩૭ ઉમારુદ્ર, ૪૯ ગણેશ સરસ્વતી અને ૫૫મા ભાગે બ્રહ્મા વિષ્ણુ રુદ્ર અને જિનની દૃષ્ટિ રાખવાનુ કહ્યુ છે ઠક્કુર ફેરુ વાસ્તુસારમા દ્વારના ઉદયના દશભાગ કરી પહેલા ભાગમા

उर्ध्वदृष्टि विनाशाय अधो च भोग हानि च ।
सुखदा सर्वकालेषु समदृष्टि न संशयः ॥८॥

દૃષ્ટિ સ્થાનથી જો ઊંચી દૃષ્ટિ રાખે તો વિનાશ થાય અને નીચી દૃષ્ટિ રાખે તો સમૃદ્ધિનો નાશ થાય માટે સમસૂત્રમાં સરખી, વિભાગે સૂત્રે દૃષ્ટિ રાખવાથી સર્વ કાળમાં સુખ જ રહે તેમાં સંશય ન જાણવો. ૮.

दृष्टि स्थानसे जो ऊँची दृष्टि रखें तो विनाश होता है, और नीची दृष्टि रखें तो समृद्धिका नाश होता है । इसलिये समसूत्रमें समान विभागमें सूत्रमें दृष्टि रखनेसे सर्वकालमें सुखही रहे उसमें जरा भी संशय न जानना । ८.

શિવલિંગ ત્રીજામાં શેષ શાયી, સાતમામાં શાસનદેવ (યક્ષયક્ષણી)ની રાખવી. હવે તે ૭ અને સાતમા ભાગ વચ્ચે દશભાગ કરી સાતમા ભાગે જિન તીર્થંકરની દૃષ્ટિ રાખવાનું કહે છે. આઠમા ભાગે ચંડી ભૈરવ અને નવમા ભાગે છત્ર ચામર ધારી ઈંદ્રાદિ દેવો, દીપાર્ણવ અને ક્ષીરાર્ણવના દૃષ્ટિ વિષયના પાઠોમાં નજીવો ફેરફાર છે. ઠક્કુર ફેરૂ વાસ્તુસારં દશભાગ કરી જિનદૃષ્ટિ સાતમાં ભાગથી પણ નીચે રાખવાનું કહે છે. તેના વિભાગ કોષ્ટકમાં આપેલ છે. દિગંબરાચાર્ય વસુનંદીકૃત પ્રતિષ્ઠાસારમાં કહે છે.

विभज्य नवधा द्वारं तत् षड्भागानधस्त्जेत् ।
ऊर्ध्वं द्वौ सप्तमं तद्वद् विभज्य स्थापयेद् दशाम् ॥

દ્વારની ઊંચાઈના નવ ભાગ કરી નીચેના ૭ ભાગ અને ઉપરના બે ભાગ છોડી દેવા, બાકીનો સાતમો ભાગ રહ્યા તેના નવ ભાગ કરી તેના સાતમે ભાગે જીન પ્રતિમાની દૃષ્ટિ રાખવી. આમ બેઉ જૈન મત પણ દૃષ્ટિ વિષયમાં એકમત નથી. મતભેદ છે. આ મત મતાંતર જોતાં એક દૃષ્ટાંત રૂપે જો ૨ ગજ ૧૭ આંગળના દ્વારની ઉંચાઈ લઈ જિનદેવની દૃષ્ટિ દૃષ્ટાંત રૂપે ગણતાં—અપરાજિત સૂત્રની દૃષ્ટિ ઉત્તરંગથી ૯ આંગળ ૧। દો. નીચી

ઠક્કુર ફેરવાસ્તુસારના મતે	૧૮	–	૦	,,
આ૦ વસુનંદીના મતે	૧૬	–	૦॥	,,
દીપાર્ણવ	૨૨	–	૨॥।	,,

આ રીતે કોઈ જૂના સ્થળે દૃષ્ટિ નીચી જણાતી હોય તો દોષ જોતાં પહેલાં શાસ્ત્રોક્ત નિર્ણય કરવો. સર્વ સામાન્ય મત આઠમા ભાગના સાતમા ભાગના આઠ ભાગ કરી સાતમા ભાગનું દૃષ્ટિ સૂત્ર અપરાજિત સૂત્ર સંતાનના ૬૪ ભાગના મતને મળતું છે. અને તે વર્તમાનમાં વિશેષ વ્યવહારમાં છે. બીજો એક મતભેદ વર્તમાનમાં વિદ્વાનોમાં પ્રવર્તે છે.

દૃષ્ટિ સૂત્ર જે આવ્યું હોય તેના ખસરે જ આંખની કીકીના મધ્યનું સૂત્ર એકસૂત્ર માં રાખવું જોઈએ. અને તેને શિલ્પી વર્ગ અનુસરે છે. હમણાં જૈન વિદ્વાનો સપ્તમાસપ્તમે નો અર્થ સાતમામાં એટલે સાતમાની અંદર નીચે એવો અર્થ કરે છે, જ્યારે શિલ્પીઓ સાતમાના સાતમે જ જે વિભાગ આપ્યો ત્યાં જ દૃષ્ટિ રાખવાનું માને છે. જૈન વિદ્વાનો તેના સિંહધ્વજગજાયે દૃષ્ટિ રાખવા નીચે ઉતારવાનું કહે છે—પરંતુ તે આયમેળ મંડન સૂત્ર-

अष्टाविंशतिर्भागानि गर्भगृहार्धं भागतः।
प्रथमे च शिवस्थाप्यं किंचिद्विशानमाश्रितम् ॥ ९ ॥
कर्णपिप्पलिकासूत्रं भुजगर्भेतु संस्थितम्।
पादगुल्फ गर्भसूत्रे पदगर्भेपु देवता ॥१०॥

ધાર સિવાયના કોઈ જૂના ગ્રંથમાં આયમેળે દ્રષ્ટિ ગણવાનુ કહેતા નથી ક્ષીરાર્ણવ अ० ११७ મા દ્રષ્ટિસૂત્ર એક વાળાગ્રપણ ન લોપવાનુ કહે છે જો તે સૂત્ર ચાળવે તો દોષ કહ્યો છે

કાર્યસિદ્ધિ સમયે શિલ્પીઓએ આવા મતમતાન્તરના વિતંડાવાદમાં ન ઉતરતા જૈન વિદ્વાનો પોતાના મતનો આગ્રહ મેવે ત્યારે તેમ કરવુ

१ क्षीरार्णवकी कई प्रतोंमे 'उच्छ्रय त्रिंशत् द्वार' ऐसा तीस भागका पाठ मिलता है। परतु एक पुरानी आधारभुत प्रतमें शुद्धपाठ और कम दो पदाकी त्रुटी भी मिली है। उच्छ्रय द्वात्रिंशत् भाग–यह सच्चा पाठ मिला, उसके पहले श्लोकके पिछले दो पदा अधस्तै अष्टभाग च शिवस्थान च निश्चल ॥१॥

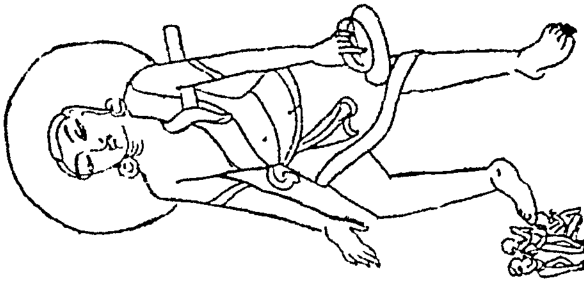
दीपार्णव ग्रथके दृष्टिपद विभाग इस ग्रथके बहुत थोडे तफावतके साथ मिलता है परतु वह तफावत ज्यादा भागमें अशुद्धिके आभारी है। १८ वे भागमें ब्रह्मा कुम्भके कारण १९ वे भागमें बुध, चित्रलोपको बीसवें भागमें दुर्गाको नारदादि मुनि दीपार्णवमे कहे हैं। जिन तीर्थकर २१ वे भागमे लक्ष्मीके साथमें लिये हुए हैं। इस ग्रथमें २५ वे भागमे जिनका स्वतत्र दृष्टि स्थान कहा है। क्षीराणवकी कई प्रतोंमें "**पंचविंश धनस्थान**"का अशुद्ध पाठ मिलता है। परतु उपरोक्त आधारभत प्रतमेमे धनस्थानके बदले 'जिन स्थान'का शुद्ध पाठ मिला है। यह पाठ सच्चा है।

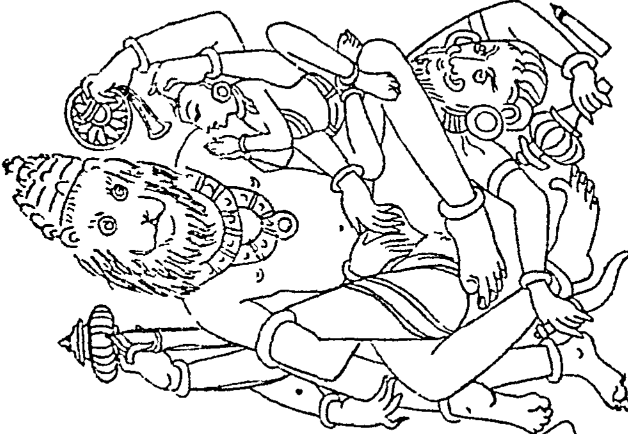
दृष्टि सूत्र विषयमें अपराजित, सूत्र सतान, ठक्कुरफेरू वास्तुसार, आ० वसुनदी कृत प्रतिष्ठासार, ज्ञानरत्नकोश, देवता मूर्ति प्रकरणमें मतमतातर है। अपराजित सूत्र १३७ म द्वारोदयके चौसठ भाग कहे हैं। उसमें लिङ्ग अठारह (१८) भाग तक २७ वें भागमें जलशायिन, ३७ उमारुद्र, ४१ गणेश सरस्वती और ५५ वे भागमें ब्रह्मा विष्णु, रुद्र और जिनकी दृष्टि रखनके लिये कहा गया है।

ठक्कुर फेरु वास्तुसारमें द्वारके उदयके दस भाग कर, पहले भागमें शिव लिङ्ग तीसरेमें शेप शायी सातवेमें शासदेव = (यक्षयक्षिणी) की रखना। अब वह छ और सातवे भागके बिच दस भागकर सातवे भागमे जिन तीर्थकरकी दृष्टि रखनेका कहा है। आठवें भागमें चडी भैरव और नौवे भागमें छत्र चामरधारी इन्द्रादि देवो दीपार्णव और क्षीरार्णवके दृष्टि विषयके पाठोंमें नहिवत् तफावत है।

ठक्कुर फेर वास्तुसारमें दस भागकर जिन दृष्टिको सातव भागसे भी नीचे रखनेको कहते हैं। उसके विभाग कोष्टकमें दिये हुए हैं। दीगम्बराचार्य वसुनदी कृत प्रतिष्ठासारमें कहत हैं।—

"द्वारकी ऊँचाईके नौ भाग कर, नीचेके छ भाग और उपरके दो भाग छोड देना। बाकीका सातवाँ भाग जो रहा, उसके नो भाग कर उसके सातवें भागमें प्रतिमाकी दृष्टि रखना।" इस तरह दोना जैन मत भी दृष्टि विषयमें एक सूत्रमें नहीं है, मतभेद हैं।


५ वामन


४ नृसिंह


३ वराह


२ कच्छ


१ मत्स्य

विष्णु—दशावतार—१

ગર્ભગૃહમાં દેવ સ્થાપન કરવાના વિભાગ કહે છે. પ્રાસાદના ગર્ભગૃહના બે ભાગ કરી દ્વાર તરફનો ભાગ છોડી મધ્ય-ગર્ભથી પાછળ ભિંત સુધીના અર્ધ ભાગમાં અઠ્ઠાવીશ ભાગ કરવા. તેમાં મધ્ય ગર્ભના પ્રથમ ભાગમાં શિવલિંગ મધ્યે સ્થાપન કરવા. પરંતુ તે કંઈક ઈશાન તરફ (પા–અર્ધો દોરા જેટલા) સ્થાપન્ કરવા અન્ય મૂર્તિઓને કાનના મધ્ય ગર્ભે કે બાહુના ગર્ભે કે પગની ઘુંટીના ગર્ભે એમ કહેલા પદના ગર્ભે દેવોની સ્થાપના કરવી. ૯–૧૦.

गर्भगृहमें देवस्थापन करनेके विभाग कहते हैं। प्रासादके गर्भगृहके दो भाग कर द्वारकी तरफके भागको छोड़कर मध्य-गर्भसे पीछे दिवार तकके अर्ध भागमें अठ्ठाईस भाग करना। उसमें मध्यगर्भके प्रथम भागमें शिवलिङ्गको मध्यमें स्थापन करना। लेकिन उसे कुछ इशानकी तरफ (पा, आधे धागेके बराबर) स्थापन करना। अन्य मूर्तियोंको—कानके मध्यगर्भमें या बाहुके गर्भमें या पाँवकी घुंटीके गर्भमें इस तरह बताये हुए गर्भमें देवोंकी स्थापना करना। ९–१०.

यह मतमतांतर देखते, एक दृष्टांत रूपमें जो २–गज १७-आंगुलके द्वारकी ऊँचाई लेकर, जिनदेवकी दृष्टिको दृष्टांत रूपमें गिनते—

द्वितीये हेमगर्भस्तु नकुलीशस्तृतीयके ।
चतुर्थे चैव सावित्री रूद्रः स्यात् पंचमे पदे ॥११॥

षष्टि स्यात् षड्वक्त्रस्तु सप्तमे च पितामहः ।
अष्टमे वसुदेवश्च नवमे च जनार्दनः ॥१२॥

दशमे विश्वरूपस्तु अग्निदेवं एकादशे ।
द्वादशे भास्करश्चैव दुर्गास्याश्च त्रयोदशे ॥१३॥

चतुर्दशे विघ्नराजो ग्रहाणां दशपंचके ।
षोडश मातरो देवि गणसप्तदशै तथा ॥१४॥

भैरवं च तदग्रे च क्षेत्रपाल तथापरे ।
विंशति यक्षराज च हनुमंत पदाधिके ॥१५॥

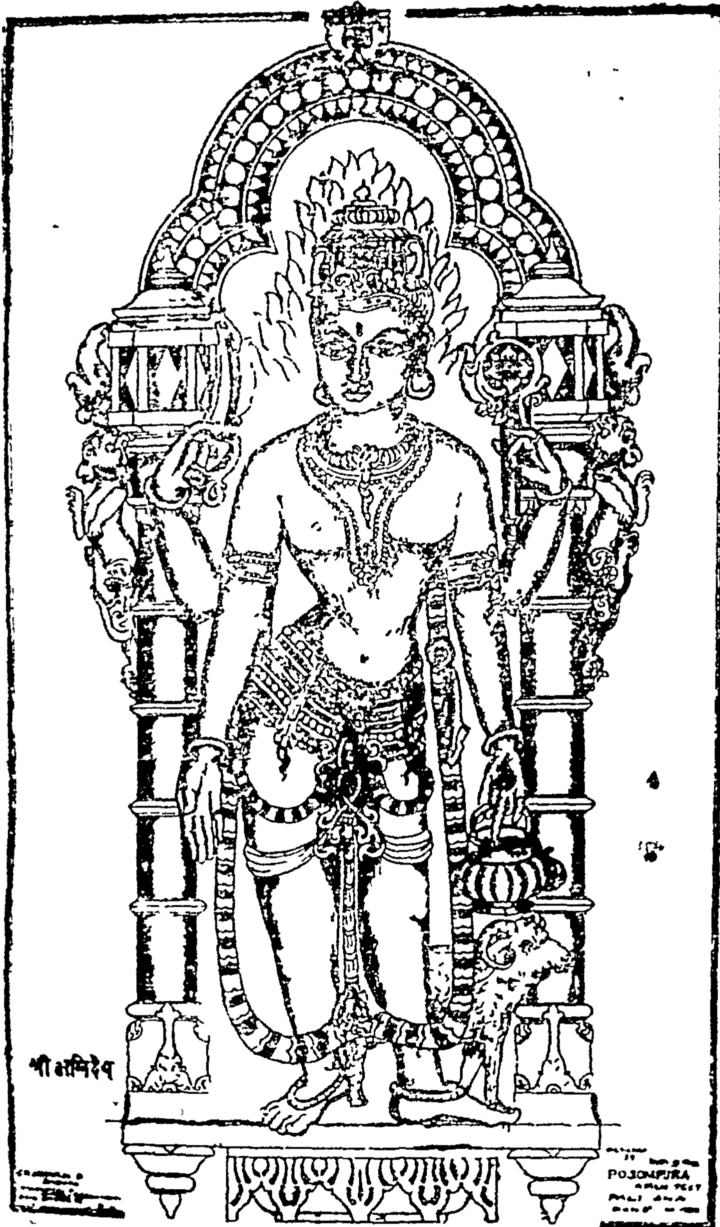
द्वाविंशे मृगधोरिंद्र ईश्वरं च पदाधिके ।
[चतुर्विंशे भवेत् दैत्यो राक्षसश्च पदाधिके] ॥१६॥
[पिशाचश्चैव षड्विंशे भूतश्चैव तथा परे] ।
तस्याग्रे पदं शून्यं क्रमेण स्थित देवता ॥१७॥

બીજા ભાગે બ્રહ્મા શાલિગ્રામ, ત્રીજા ભાગે નકુલીશ (પાશુપત શૈવ) ચોથા ભાગે સાવિત્રી, પાચમા ભાગે રૂદ્ર, છઠ્ઠા ભાગે કાર્તિક સ્વામી, સાતમા ભાગે બ્રહ્મા, આઠમા ભાગે વસુદેવ, નવમા ભાગે જનાર્દન, દશમા ભાગે વિશ્વરૂપ (એમ આઠથી દશ ભાગમા વિષ્ણુ સ્વરૂપ) અગ્યારમા ભાગે અગ્નિદેવ, બારમે સૂર્ય, તેરમે ભાગે દુર્ગા, ચૌદમે ગણપતિ, પદરમે ગ્રહો, સોળમે ભાગે માતૃકાદેવીઓ, સત્તરમે ભાગે ગણો—અઢારમા ભૈરવ, ઓગણીશમા ભાગે ક્ષેત્રપાળ, વીશમા ભાગે યક્ષરાજ એકવીશમા ભાગે મૃગઘોરેન્દ્ર, ત્રેવીશમા ભાગે અઘોર શિવ, ચોવીશમા ભાગે દૈત્ય, પચ્ચીસમે રાક્ષસ, છવ્વીસમે પિશાચ, સત્તાવીશમે ભાગે ભૂતની

	अगुल	धागा	नीची
अपराजित सूत्रकी दृष्टि उत्तरगसे	९	॥	,,
ठक्कुरफेर वास्तुसारके मतसे	१८	०	,,
आ० वासुनदीके मतसे	१६	॥	,,
दीपार्णव प्रथका मतसे	२२	२॥	,,

इस तरह कोई पुराने स्थल पर दृष्टि नीची दिखती हो तो दोष देखनेसे पहले शास्त्रोक्त निर्णय करना। सर्वसामान्य मत—आठवें भागका—सातवे भागके मतको मिलता जुलता है। और वह वर्तमानमें विशेष व्यवहारमे हैं।

મૂર્તિની સ્થાપના કરવી. એથી બીજા પદો શુન્ય જાણવા. આ રીતે ગર્ભગૃહના અઠ્ઠાવીશ ભાગના મંડળોમાં મૂર્તિ સ્થાપનાનો ક્રમ જાણવો. ૧૧ થી ૧૭. [ ] માં દીધેલ ૧૬મો શ્લોક એક શુદ્ધ પ્રતિમાં જ ફક્ત આપેલ છે બીજી પ્રતોમાં નથી.



तोरण-गर्जसिंह विरालिका युक्त अग्निदेव ।

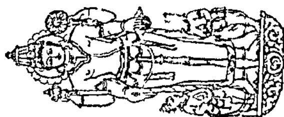
दूसरे भागमें ब्रह्मा, शालीग्राम, तीसरे भागमें नकुलीश (पाशुपत शव) चोथे भागमें सावित्री, पाँचवें भागमें रूद्र, छट्ठे भागमें कार्तिक स्वामी, सातवें भागमें ब्रह्मा, आठवें भागमें वासुदेव नवमें भागमें जनार्दन विष्णु स्वरूप, दशमा भागे विश्वरूप. ग्यारहवें भागमें अग्निदेव, बारहवें भागमें सूर्य, तेरहमें देवियाँ, चौदवें गणेश, पंदरमें ग्रहो, सोलहवें मातृकादेवी, सत्रहवें भागमें गणों, अठारहवें भागमें भैरव, उन्नीसवें भागमें क्षेत्रपाल, बीसवें भागमें यक्षराज, इक्कीसवें भागमें हनुमानजी, बाईसवें भागमें मृगघोरेन्द्र, तेईसवें भागमें अघोरशिव, चौवीसवें भागमें दैत्य, पच्चिशवें राक्षस, छव्वीसवें पिशाच, सत्तावीसवें भागमें भूतकी मूर्तिकी स्थापना करना। इससे दूसरे पदोंको शून्य जानना। इस तरह गर्भगृहके अठ्ठाईश भागके मंडलोंमें मूर्तिस्थापनाका क्रम जानना। ११ से १७ [ ] कौसमें दीया हुआ १६ वे श्लोक शुद्ध प्रतिमें फक्त है।

वर्तमान विद्वानोंमें एक मतभेद प्रवर्तता है, दृष्टिसूत्र जो आया हो उसके खसरेज आँखकी किकीके मध्यका सूत्र एक सूत्रमें रखना चाहिये। और उसे शिल्पी वर्ग अनुसरता है। अभी जैन विद्वानो "**सप्तमा सप्तमें**"का अर्थ सातवेंमें अर्थात् सातवेंकी अंदर नीचे ऐसा अर्थ करते है। जब शिल्पियों सातवेंका सा वें ही जो विभाग आया हो वहां ही दृष्टि रखनेका मानते हैं। जैन विद्वानों उसमें ध्वज, गज, सिंह आय मीलानेकी व्यर्थ कोशिश करते हैं और दृष्टि निचा उतारनेके लिये कहते हैं। परंतु यह आयमेल मण्डन सूत्रधारके सिवा कीसी भी पुराने ग्रंथमें आय मीलानेका कहा नहीं है। वृक्षार्णव अ० १४७ में दृष्टिसूत्रको एक वालाग्र भी न लोपरेके लिये कहते हैं। जो उसका लोप करे तो दोष कहा है।

कार्य सिद्धिके समय शिल्पियोंको ऐसे मत मतान्तरके वितंडावादमें न उतरके जैसे विद्वानों अपना मतका आग्रह करे तब वैसा करना।

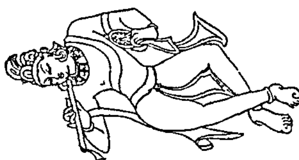
(पेज १२९ की टीका चालु)

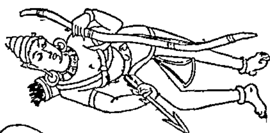
विष्णुदशावतार २

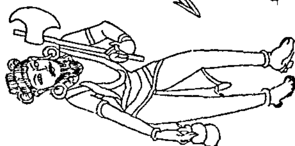












(કોસમા આપેલા અને ૧૬ મા શ્લોકનો ઉત્તરાર્ધ અને ૧૭ મા શ્લોકનો પૂર્વાર્ધ ક્ષીરાર્ણવની કેટલીક પ્રતોમા નથી)

દેવ પ્રતિમા સ્થાપન પદ વિભાગ – સબધમા ક્ષીરાર્ણવ દીપાર્ણવ, જ્ઞાન રત્નકોશ, અને સૂત્ર સતાન્ અપરાજિત–આ સર્વ ગ્રથમા એક મતે અઠ્ઠાવીશ ભાગનો મત સ્વીકારે છે પરતુ वास्तुराज ગર્ભગૃહના દશ ભાગ કહે છે, ઠક્કુર ફેરૂ वास्तुसार પાચ ભાગ કહે છે देवतामूर्ति प्रकरणम् અને मयमतम् ४९ ભાગ કહે છે समराङ्गण सूत्रधार દશ અને ७ ભાગ કહે છે અને सूत्रधार નિરપાલ विरचित प्रासाद तिलक પણ પાચ ભાગ કહે છે

દેવના મૂર્તિ પ્રકરણમા– ગર્ભગૃહાર્ધના ઓગણ પચાસ ભાગ કરવા તેમા ગર્ભથી પહેલો ભાગ બ્રહ્માશ–નવ ભાગ દેવાશ, તે પછીના સોળ ભાગ માનુષાશ અને તે પછીના ચોવીશ ભાગ પિશાચપદ (મળી કુલ ૪૯ ભાગ થયા) બ્રહ્માશમા લિગ સ્થાપના કરવી, બ્રહ્મા વિષ્ણુ સ્થાપન કરવા, મનુષાશમા સર્વ દેવ અને પિશાચકમા માતર, યક્ષ, ગધર્વ રાક્ષસ, ભૂત આદિની સ્થાપના કરવી આ ઓગણ પચાસ વિભાગનુ દેવતાપદ સ્થાપન દ્રવિડ ગ્રથ मयमतम् મા પણ આપેલ છે

समराङ्गण सूत्रधार અ० ७० મા મહારાજા ભોજદેવ કહે છે કે

विष्णुस्थाने उमादेवी ब्रह्मस्थाने सरस्वती ।
सांवित्री मध्यदेशे तु लक्ष्मी सर्वत्र दापयेत् ।।१८।।

भक्ते प्रासादगर्भार्धे दशधा पृष्ठ भागतः
पिशाच रक्षोदनुजाः स्थाव्यागंधर्वगुह्यकाः
आदित्यश्चंडिका विष्णु ब्रह्मेशानाः पदक्रमात् ।

समराङ्गण सूत्रधार

પ્રાસાદના ગર્ભગૃહના અર્ધમાં પછીત તરફના અર્ધ ભાગમાં દશ ભાગ કરવા તેની પછીતથી પહેલા ભાગમાં પિશાચ, બીજામાં રાક્ષસ, ત્રીજામાં દૈત્ય, ચોથામાં ગંધર્વ પાંચમા યક્ષ છઠ્ઠામાં સૂર્ય, સાતમામાં ચંડી દેવી, આઠમામાં વિષ્ણુ, નવમામાં બ્રહ્મા અને દશમામાં મધ્યે શિવલિંગની સ્થાપના કરવી એમ અનુક્રમે પદ સ્થાપના જાણવી. સૂત્રધાર રાજસિંહ કૃત વાસ્તુરાજ પણ દશભાગગ જુદી રીતે કહે છે.

गर्भार्द्ध दशभि र्भक्ते मध्येलिङ्गंन्यसेत्ततः
विधि हरिमुंमा सूर्यं बुधं शक्रं जिनं तथा ॥
मातृगणेश गंधर्वान् यक्षान् क्षेत्रेशदानवान्
रक्षोग्रहान् क्रमान्मातृः पिशाचं र्भित्तिकावधि ॥ वास्तुराज

ગર્ભગૃહના પાછળના અર્ધભાગના દશ ભાગ કરવા. તેમાં મધ્યે ગર્ભે શિવલિંગની સ્થાપના કરવી. ૧. બ્રહ્મા. ૨. વિષ્ણુ ૩. ઉમા ૪. સૂર્ય. ૫. બુધ. ૬ ઈન્દ્ર ૭ જિન ૮ માત્ર ગણેશ ૯ ગંધર્વ યક્ષ અને ક્ષેત્રપાળ અને ૧૦ દસમા ભાગમાં દાનવ રાક્ષસ ગ્રહ ચંડી અને પિશાચની મૂર્તિઓની સ્થાપના અનુક્રમે કરવી. શ્રી જિનદત્ત સૂરિજીના નીતિશાસ્ત્રના ગ્રંથ વિવેક વિલાસ માં નીચે પ્રમાણે પાંચ ભાગ કહે છે.

प्रासादगर्भगेहार्धे भित्तितः पंचधाकृते
यक्षाद्याः प्रथमे भागे देव्यः सर्वे द्वितीयके ॥१॥
जिनार्क स्कंद कृष्णानां प्रतिमाः स्युस्तृतीयके
ब्रह्मा चतुर्थ भागे स्यार्लिगमीशस्य पंचमे ॥२॥

:विवेकविलास

પ્રાસાદના ગર્ભગૃહના અર્ધ ભાગના ભીત તરફના અર્ધમાં પાંચ ભાગ કરી પહેલામાં યક્ષ, બીજામાં સર્વ દેવદેવીઓ, ત્રીજામાં જિન, સૂર્ય, કાર્તિક સ્વામી અને કૃષ્ણ ચોથામાં બ્રહ્મા અને પાંચમા ભાગમાં બ્રહ્મા અને મધ્ય ગર્ભમાં શિવલિંગની સ્થાપના કરવી.

આ પ્રમાણે સમશગ્રણના બીજા મતે પ્રાસાદ તિલક અને વિવેકવિલાસના મતે આસન એટલે પબાગણ એવો અર્થ શિલ્પી વર્ગમાં પ્રવર્તે છે. પરંતુ ક્ષીરાર્ણવ દીપાર્ણવ અને અપરાજિત અને જ્ઞાનરત્નકોશ જેવા પ્રાચીન ગ્રંથો-પ્રતિમા સ્થાપનના વિભાગ કહે છે. તે દેવ પ્રતિમાનાં કાનના ગર્ભે, બાહુના ગર્ભે કે પગના ગર્ભે સ્થાપન કરવાનું સ્પષ્ટ કહે છે. બ્રહ્મા અને વિષ્ણુની મૂર્તિઓની સ્થાપના પ્રાચીન મંદિરોમાં તે રીતે જોઈએ છીએ તેમાં મૂર્તિ ફરતી ગર્ભગૃહમાં પણ પ્રદક્ષિણા ફરે તેટલી જગ્યા પાછળ રહે છે. પરંતુ જિન

वितरागो विघ्नराजे ये उकता जिनशासने ।
मातृमंडलमध्ये तु देवीना समस्तके ॥१९॥
पर्यंकासनोर्ध्वार्चा स्थान विष्णुरूपाणि यानिच ।
विष्णुस्थाने जलशायी वराहस्तत्पदेस्थितः ॥२०॥

પ્રતિમા પાછળ આવી જગ્યા હજુ જોવામા આવી નથી જિન પ્રભુને આ સૂત્ર બંધ-બેસતુ કદાચ ન હોય, તેમ પરંતુ પંક્તિબદ્ધ જિનાયતનમા કે નાના ગર્ભગૃહમા જો અર્ધના પાચમા ભાગના પાચમા ભાગના ત્રીજા ભાગે પ્રતિમાજી પધરાવવામા આવે તો પૂજકોને હરવા ફરવાની જગ્યાની મુશ્કેલી ઉભી થાય આથી શિલ્પી વર્ગ જૈન પ્રતિમા સ્થાપન માટે મંડન સૂત્રધારનો નીચેનો મત વધુ સ્વીકારે છે

पदाधो यक्षभूताद्या पट्टाग्रे सर्वदेवता ।
तदग्रेवैष्णवं ब्रह्मा मध्येलिङ्गा शिवस्य च ॥७॥

प्रासाद मंडन ॥ अ० ६॥

ગર્ભગૃહના પાછલા પાટ ભારવટ નીચે યક્ષ ભૂતાદિ દેવો બેસાડવા પાટ છોડીને આગળ બીજા દેવો બેસાડવા તેનાથી આગળ બ્રહ્મા અને વિષ્ણુ અને મધ્યગર્ભે શિવલિંગની સ્થાપના કરવી પાટ છોડીને જૈન પ્રતિમા પધરાવવાના સૂત્રને શિલ્પી વર્ગ વધુ પ્રામાણિક માને છે અર્ધના પાચ ભાગ કરી ત્રીજા ભાગે સિહાસન પબાસણ કરવાનુ પ્રમાણ માની તેમ કરે છે જો કે મહારાજ ભોજદેવ સમરાંગણ સૂત્રધારમા કહે છે કે ગર્ભના ૭ ભાગ કરી પાછલી ભીંત તરફનો છઠ્ઠો ભાગ છોડી પાચમા ભાગમા સર્વ દેવતાઓની સ્થાપના કરવાનુ સ્થૂળ પ્રમાણ આપે છે તે કંઈક મંડનના મતને મળતુ આવે વ્યવહારમા પ્રાસાદમંડનનો મત શિલ્પી વર્ગમા પ્રચલિત છે પાટ નીચે પ્રતિમાજીની અર્ધ ચોટી રાખી બીજો ભાગ પાટથી બહાર રાખવાની પ્રથાને આચાર્ય દેવ શ્રી વિજયનેમિ સુરીશ્વરજી અનુસરવાને જણાવતા

देव प्रतिमा स्थापन पर विभागके ग्रन्थमें क्षारार्णव, दीपार्णव-ज्ञानरत्नकोश और सूत्र-सतान अपराजित इन सब ग्रंथोंमें अठाईस भागके मतको स्वीकार है। परंतु वास्तुराज गर्भगृहके दस भाग करता है। ठक्कुर फेरु वास्तुसार विवेक विलास पाँच भाग कहता है। देवता मूर्ति प्रकरण और मयमतम् ४९ भाग कहत हैं। समराङ्गण सूत्रधार दस और छ भाग कहता है। और सूत्रधार विरपाल विरचित प्रासादतिल्क भी पाँच भाग कहता है।

देवता मूर्ति प्रकरणम-गर्भगृहार्धके उनचास भाग करना। उसमे गर्भसे प्रथम भाग ब्रह्माश उसमे नौ भाग दैवाश बादके सोल्ह भाग मनुषाश और उसके बादके उपर चौबीस भाग पिशाचक (मिलकर कुछ ४९ हुए) ब्रह्माशमे, लिङ्ग स्थापना करना। दैवाशमे ब्रह्मा विष्णुका स्थापन करना। मानुषाशमें सर्व देव ओर पिशाचकमे मातर यक्ष, गधर्व, राक्षस, भूत आदिकी स्थापना करना। इन उनचास विभागका देवता पद स्थापन द्रविड ग्रंथ 'मयमतम्'में भी दिया हुआ है। "प्रासादके गर्भगृहकी दिवारके तरफके अर्ध भागमे दस भाग करना। उसकी दिवारसे पहले भागमे पिशाच, दूसरेमें राक्षस, तीसरेमे दैत्य, चौथेमे गधर्व, पाँचवेंमे यक्ष, छट्ठेमें सूर्य, सातवेंमें चंडी देवी, आठवेंमे विष्णु, नौवेंमे ब्रह्मा और दसवेंमे अर्थात् मध्यमे शिवलिङ्गकी स्थापना करना। इस तरह अनुक्रमसे पद स्थापनाका जानना" (समराङ्गण सूत्रधार) सूत्रधार

विष्णुरूपाणि सर्वाणि मत्स्यादि नवमेपदे ।
हरि शंकरे वराह मूर्ति-विष्णुस्थाने प्रदीयते ॥२१॥
अर्धनारीश्वरं देवं रुद्रस्थाने प्रकल्पयेत् ।
सप्तमे ब्रह्मसंस्थाने मिश्रमूर्ति संस्थापयेत् ॥२२॥

વિષ્ણુના ભાગે ઉમાદેવી. બ્રહ્માના ભાગે સરસ્વતી ને સાવિત્રીદેવી. બ્રહ્માના મધ્ય

राजसिंह कृत 'वास्तुराज' भी दस भागका अलग रीतसे कहता है। "गर्भगृहके पीछे के अर्ध भागके दस भाग करना। उसमें मध्यमें, गर्भमें शिवलिङ्गकी स्थापना करना। पहेले ब्रह्मा, २ विष्णुजी ३ उमा ४ सूर्य ५ बुध ६ इन्द्र ७ जिन ८ गणेश ९ गंधर्व यक्ष और क्षेत्रपाल और दसवे भागमें दानव राक्षस ग्रह चंडी और पिशाचकी मूर्तियोंकी स्थापना अनुक्रमसे करना।" ('वास्तुराज')

श्री जिनदत्त सूरिजीके नीतिशास्त्रके ग्रंथ 'विवेकविलास'में इस तरह पाँच भाग कहे हैं। "प्रासादके गर्भगृहके अर्ध भागकी दिवारकी तरफ अर्धमें पाँच भागकर पहलेमें यक्ष, दूसरेमें सर्व देव-देवियों, तीसरेमें जिन, सूर्य, कार्तिक स्वामी और कृष्ण, चौथेमें ब्रह्मा, और पाँचवे भागमें ब्रह्मा और मध्यगर्भमें शिवलिङ्गकी स्थापना करना।" (विवेक विलास)

इस तरह समराङ्गणके दूसरे मतमें प्रासाद तिलक और विवेकविलासके मतमें आसन अर्थात् पबागण ऐसा अर्थ शिल्पी वर्गमें प्रवर्तता है, परंतु क्षीरार्णव, दीपार्णव और अपराजित और ज्ञानरत्नकोश जैसे प्राचीन ग्रंथों प्रतिमा स्थापनके विभाग कहते हैं। इस देव प्रतिमाके कानके गर्भमें, बाहुके गर्भमें, या पाँवके गर्भमें स्थापन करनेके लिये स्पष्ट कहा गया है। ब्रह्मा और विष्णुकी मूर्तियोंकी स्थापना प्राचीन मंदिरोंमें उसी तरह देखते हैं। उसमें मूर्तिके फिरते गर्भ गृहमें भी प्रदक्षिणा करे इतनी जगह पीछे रहती है। परंतु जैन प्रतिमाके पीछे ऐसी जगह अभी देखनेमें नहीं आती है। जिन प्रभुको यह सूत्र लागु हो या न भी हो, लेकिन पंक्ति वद्ध जिनायतनमें या छोटे गर्भगृहमें जो अर्धके पाँच भाघके तीसरे भागमें प्रतिमाजीको विठाया जाय तो पूजकोंको चलने फिरनेकी जगहकी मुश्किल होती है। इससे शिल्पी वर्ग जैन प्रतिमा स्थापनके लिये मंडन सूत्रधार नीचेका मत ज्यादा स्वीकारता है।

"गर्भगृहके पीछले पाट-भारवटके नीचे यक्ष भूतादि उग्र देवोंको बिठाना। पाटको छोड़ कर आगे दूसरे देवोंको बिठाना। उससे आगे ब्रह्मा और विष्णु और मध्य गर्भमें शिवलिङ्गकी स्थापना करना। (७ प्रासाद मंडन ॥ अ० ६ ॥)"

पाटको छोड़कर जैन प्रतिमाको बिठानेके सूत्रको शिल्पी वर्ग ज्यादा प्रामाणिक मानता है। अर्धके पाँच भाघकर तीसरे भागमें सिंहासन-पवासण करनेका प्रमाण वैसा-शिल्पी वर्ग करता है। यद्यपि महाराज भोजदेव समराङ्गण सूत्रधारमें कहते है कि "गर्भगृहके छः भागकर पीछले दिवारकी तरफके छठे भागको छोड़कर पाँचवे भागमें सर्व देवताओंकी स्थापना करनेका स्थूल प्रमाण देते है।" वह कुछ मंडनके मतसे मिलता जुलता है।

व्यवहारमें प्रासाद मंडनका मत शिल्पी वर्गमें प्रचलित है। पाटके नीचे प्रतिमाजीकी अर्ध चोटी रखकर दूसरे भागका पाटसे वाहर रखनेकी प्रथाको आचार्य देवश्री विजय नेमि-सूरीश्वरजी अनुसरनेके लिये कहते थे।

ભાગે અને લક્ષ્મીજી (વિષ્ણુના) કોઈપણ ભાગે સ્થાપન કરી શકાય જિન તીર્થંકર વીતરાગ અને જિન શાસનના દેવ દેવીઓ (યક્ષ યક્ષણી)ને વિઘ્નરાજ–ગણેશના સ્થાને ચૌદમા ભાગે સ્થાપન કરવા બધી દેવીઓની મૂર્તિઓ માતૃકા મ ડળમા સ્થાપવી વિષ્ણુની પદ્માસને કે ઊભી કે શેષશાયી અને વરાહાદિ, મત્સ્યાદિ દશાવતારની મૂર્તિઓ વિષ્ણુના નવમા ભાગમા સ્થાપવી વિષ્ણુ શ કર ઉમાની યુગ્મમૂર્તિઓ વિષ્ણુના સ્થાને સ્થાપવી અર્ધનારીશ્વરની મૂર્તિ રૂદ્રના સ્થાને પધરાવવી બ્રહ્માના સાતમા ભાગમા મિશ્રમૂર્તિ, ત્રિમૂર્તિ, યુગ્મમૂર્તિ (હરિહર, આદિ બ્રહ્મા વિષ્ણુ કે શિવની મિશ્રમૂર્તિઓ)ની સ્થાપના કરવી ૧૮ થી ૨૨

विष्णुके भाग पर उमादेवी, ब्रह्माके भाग पर सरस्वती, सावित्री (ब्रह्माके) मध्य भाग पर और लक्ष्मीजी (विष्णुके) कोई भी भाग पर स्थापन हो सकते है। जिन तीर्थकर वितराग और जिन शासनके देव देवीओं (यक्षयक्षणी) को विघ्नराज–गणेशके स्थान पर चौदहवे भाग पर स्थापन करना। सब देवियोंकी मूर्तियां मातृकामडलमे स्थापना। विष्णुकी पद्मासनमे या खडी या शेपशायी और वराहादि मत्स्यादि दशावतारकी मूर्तियाँ विष्णुके नौवें भागमे स्थापना। विष्णु, शकर, उमाकी युग्ममूर्तियाँ विष्णुके स्थान पर स्थापना। अर्धनारीश्वरकी मूर्ति रूद्रके स्थान पर पधराना। ब्रह्माके सातवें भागमे मिश्रमूर्ति, त्रिमूर्ति, युग्ममूर्ति (हरिहर आदि ब्रह्मा विष्णु या शिवकी मिश्र मूर्तियों) की स्थापना करना। १८ से २२

त्रिदेव स्थानके चैव हरिहरपितामह।
पितामहंच चंद्रार्कौ स्थापयेत्पद भास्करे।
वेदाश्च ब्रह्म संस्थाने ऋषिणां पद भास्करे ॥२३॥

હરિહર, પિતામહની ત્રિદેવની મૂર્તિ બ્રહ્માના પદે સ્થાપન કરવી પિતામહ–બ્રહ્મા ચદ્ર ને સૂર્ય અને ઋષિઓની મૂર્તિને અને વેદ મૂર્તિઓને બ્રહ્માની સાથે પધરાવવી ૨૩

हरिहर, पितामहकी त्रिदेवकी मूर्ति, ब्रह्माके पद पर स्थापन करना। पितामह–ब्रह्मा चद्र और ऋषियोंकी मूर्तिको और वेदमूर्तिओंको ब्रह्माके साथ पधराना। २३

इति श्री विश्वकर्मा कृताया क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां देवता द्रष्टिपद स्थापनाधिकारे शताग्रेमेकादशमोऽध्याय ॥१११॥ क्रमांक अ० १३

ઈતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવે નારદજીએ પુછેલ દેવતા દૃષ્ટિપદ સ્થાપનાધિકારનો શિલ્પવિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશકર ઓઘડભાઈએ રચેલી ગુર્જર ભાષાની સુપ્રભા નામની ટીકાનો એકસો અગિયારમો અધ્યાય ૧૧૧

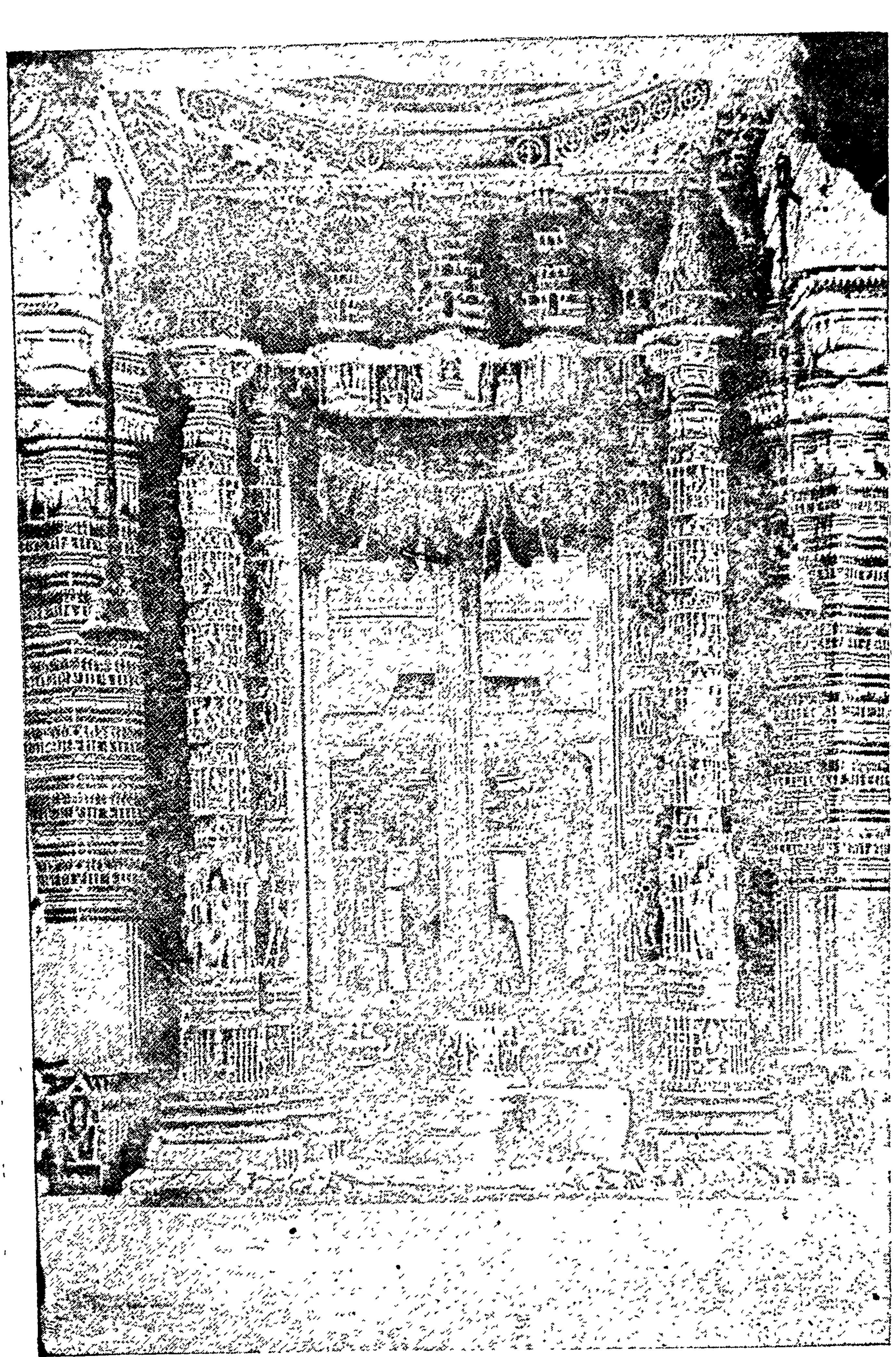
इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नरदजीके सवादरूप देवता दृष्टि पद स्थापनाधिकारका शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशकर औघडभाई सोमपुरा रचित सुप्रभा नामका भाषा टीकाका अध्याय ॥१११॥ (क्रमाक अ० १३)

विविध ग्रंथमते देवता दृष्टिस्थान विभाग दर्शावतुं कोष्टक

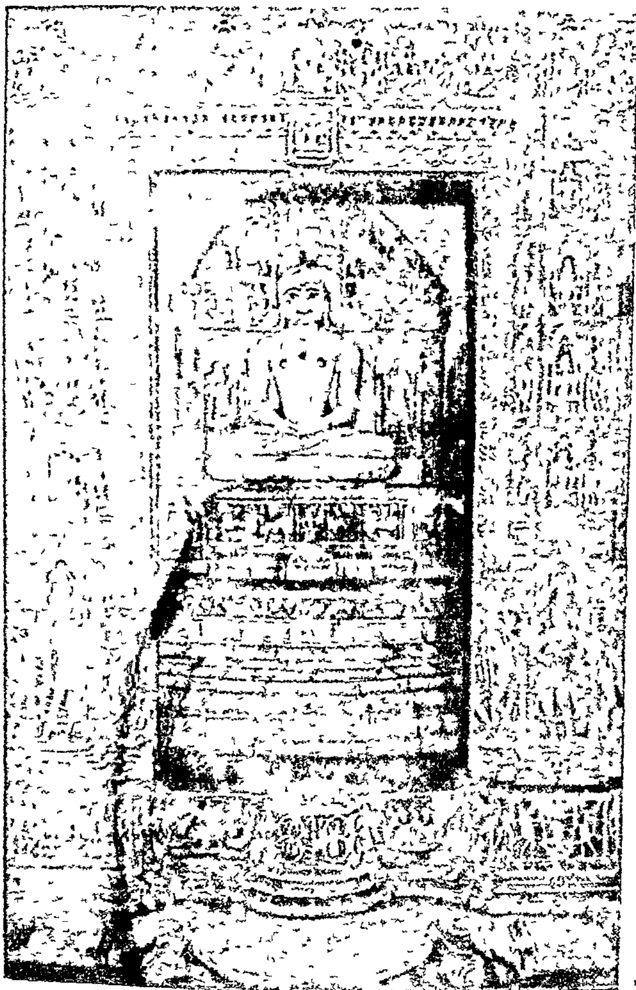
क्षीरार्णव दीपार्णव मत	क्षीरार्णव दीपार्णव द्वारोदयका ३२ विभागे दृष्टिस्थान	सूत्रसंतान अपराजित देवतामूर्ति प्रकरणका मत	देवतामूर्ति प्रकरणम् तथा अपराजित-सूत्रसन्तान का मते द्वारोदयका ६४ विभागे दृष्टिस्थान	ठक्कुरफेरु वास्तुसार मत	ठक्कुर फेरु वास्तुसार मते द्वारोदयका दश भागके सातमा भागे दश भाग करके इसके सातवा भागे जिनदृष्टिमान
३२ ०		६४–०		१०– ०	
३१ भूतप्रेत राक्षस		६३–वैताल			
३० ०		६१–भैरव			
२९ भैरव चण्डि		५९ चण्डि		९–छत्र चामरधारी देवो	
२८ ०		५७–अघोर रुद्र			
२७ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सूर्य		५५–ब्रह्मा-विष्णु, रुद्र-जिन			
२६ चन्द्र		५३–हरसिद्ध			
२५ जिन		५१–पद्मासन त्रिमूर्ति		८–चण्डिका	
२४ सरस्वती		४९–गणेश–शारदा			
२३ ०		४७ ब्रह्मा			
२२ ०		४५–लक्ष्मी नारायण		७–शासनदेव देवियाँ	
२१ लक्ष्मी		४३–ऋषिमुनि नारद		दश भाग –जिन प्रभु	
२० दुर्गा-नारदादि ऋषि ब्रह्मयुग्म		४१–ब्रह्मा सावित्री		दश भागमें सातवें भागे	
१९ ०		३९–बुद्ध		६–चित्रलेप प्रतिमा	
१८ उमा, रुद्र, विष्णु, लक्ष्मी		३७ उमा रुद्र			
१७ ०		३५–भृंगवराह			
१६ यक्षराज		३३–यक्ष कुबेर		६–वराह	
१५ ०		३१–मातर			
१४ मातृकाओ		२९–गरुड			
१३ ०		२७–शेषाशयिन		४–लक्ष्मी नारायण	
१२ शेषशयिन		२५–शेष नाग			
११ ०		२३–व्यक्तशिव			
१० हर मूर्ति		२१–व्यक्ताव्यक्त लिङ्ग			
९ ०		१९–अव्यक्त लिङ्ग		३ शेषशायिन	
८ ↑		१७– ↑			
७		१५–			
६		१३–		२-शिवशक्ति	
५		११–			
४ शिवलिङ्ग		९– शिवलिङ्ग			
३		७–		१-शिवलिंग	
२		५–			
१ ↓		३–			
		१– ↓			

देवता पद स्थापन विभाग पृथक् पृथक् ग्रंथो का मतमतान्तर का कोष्टक

क्रम भाग	१ क्षीरार्णव २ दीपार्णव ३ ज्ञानरत्नकोश ४ अपराजित	समराङ्गण सूत्रधार का मत भातसे दश भाग		प्रासादतिलक वस्तुसार विवेक विलास भीतसे भाग	पाच भाग	देवमामूर्ति प्रकरण मयमतम ४९ भाग
२८	०	१	०			४ ब्रह्माद्य—×—२४ भाग मानुष्याद्य—×—२१ पिशाचांत; ब्रह्मा विष्णु स्थापन | सर्वदेव स्थापन | मातृका यक्ष गन्धर्व राक्षस भूतादि
२७	पिशाच					
२६	भूत वैताल					
२५	राक्षस	२	राक्षस	१	यक्षगन्धर्व क्षेत्रपाल	
२४	दैत्य					
२३	अघोर					
२२	मृग घोर	३	दैत्य			
२१	हनुमन					
२०	यक्षराज					
१९	क्षेत्रपाल	४	गधर्व	२	देव और देविकों	
१८	भैरव					
१७	गण					
१६	मातृका लक्ष्मी सर्व देवीआ	५	यज			
१५	ग्रहो					
१४	गणेश लक्ष्मी वितराग जिन					
१३	दुर्गा लक्ष्मी	६	सूर्य	३	कृष्ण जीन सूर्य कार्तिक	
१२	सूर्य					
११	अग्नि					
१०	विश्वरूप, उमा, लक्ष्मी	७	चण्डि			
९	जनार्दन पद्मासन की ऊभी विष्णु मूर्ति					
८	वासुदेव शेषशायी दशावतार शंकर उमा	८	विष्णु	४	ब्रह्मा	
७	ब्रह्मा, सरस्वती, सावित्री हिरण्यगर्भ, मिश्र युग्ममूर्ति	९	ब्रह्मा			
६	कार्तिक स्वामी					
५	रुद्र अर्ध नारिश्वर	१०	शिवलोक मध्यमें	५	शिवलिंग मध्यमें	
४	सावित्री					
३	नकुलीश					
२	हेमगर्भ शालिग्राम ब्रह्मा					
१	शिवलिंग मध्यमे मध्यमें					



समदल रुपस्तंभ–रुपशाखायुक्त कलामयद्वार. उदंम्बर–उत्तरंङ्ग लुणींग वसही–देलवाडा–आवुं



रूपशाखायुक्त द्वार उदम्बर–उत्तरंग–मध्यमें परिकर साथ प्रतिमा देलवाडा आबु

॥ अथ शिखर भद्र नासिकादि सरवेधादि ॥

क्षीरार्णव अ० ११२—क्रमांक अ० १४

विश्वकर्मा उवाच—

अतः परं प्रवक्ष्यामि भद्रार्ध शिखरं तथा ।
भद्रार्धे च ततो रिषि ज्ञातव्यं मूलनासीके ॥ १ ॥
भद्रार्धं च त्रिंशति भागं च कर्तव्य च विचक्षणैः ।
मूल नाशिकं द्विभागं च द्विभागं द्वितीयके ॥ २ ॥
वेदभाग तृतीया तु चतुर्दशभद्रमेव च ।
पंचमी फालना कार्या उपागसद्दशा भवेत् ॥ ३ ॥

—इति पंचनाशिक

શ્રી વિશ્વકર્મા શિખરના ભદ્રના પંચનાશક હવે કહે છે. હે ઋષિ, શિખરના ભદ્રના ભદ્રના ખુણા સુધીના ત્રીશ ભાગ વિચક્ષણ શિલ્પીએ કરવા. મૂળ નાશિક બે ભાગ, બીજી ફાલના પણ બે ભાગ ત્રીજી ફાલના ચાર ભાગ અને આખું ભદ્ર ચૌદ ભાગનું જાણવું. પાંચમી ફાલના ઉપાંગ પ્રમાણે કરવી. ૧–૨–૩.

श्री विश्वकर्मा शिखरके भद्रके पाँच नासक कहते हैं । हे ऋषि, शिखरके भद्रके भद्रके कोने तकके तीस भाग विचक्षण शिल्पीको करना चाहिये । मूल नाशिक दो भाग, दूसरी फालना भी दो भाग, तीसरी फालना चार भाग और सारा भद्र चौद भागका जानना । पाँचवीं फालना उपांगके अनुसार करना । १–२–३.

यावद्धस्त प्रमाणेन विस्तृता क्रियते कटिः ।
*तावदंगुल पादेन फालनानां च निर्गमम् ॥ ४ ॥

પ્રાસાદ જેટલા હાથનો પહોળો રેખાયે હોય તેના પ્રત્યેક હાથે પાપા આંગળની ફાલનાના નીકાલા રાખવા. ૪.

जितने हाथका चौडा प्रासाद रखा गया हो उसके प्रत्येक हाथ पर १/४ अंगुलकी फालनाके निकाले रखना । ४.

---

* तावदङ्गुलमानेन पाठान्तरे ।

૧. શિખરના ભદ્રમાં આવી ફાલનાઓનું વિધાન રત્નકોશ અને દીપાર્ણવ તથા ક્ષીરાર્ણવમાં આપેલ છે. અવરાવિતસૂત્રમાં આ પાઠો નથી. પંચ સપ્ત અને નવનાશિક જૂના પ્રાસાદોમાં કરેલા જોવામાં આવે છે. કેટલાક છજાપરથી ભદ્રમાં આવાં નાશિક ફોડે

चतुर्थं बाण भागं तु पंचमं वसु संयुतम् ।
षष्ठं बाम पिभागं तु सप्तमे रस संयुतम् ॥८॥
अष्टमं नवमं चैव फालना नाम नामतः ।
अथ न लोपयेद् यस्तु न चार्त्यं शिल्पिबुद्धिमान् ॥९॥

હવે હુ શિખરના ભદ્રના નવ નાશિક કહુ છુ રેખાથી અર્ધાભદ્રના એકત્રીશ ભાગ કરવા તેમા પહેલી ફાલના એક ભાગ, બીજી બે ભાગ, ત્રીજી ચાર ભાગ, ચોથી ફાલના પાચ ભાગ, પાચમી ફાલના આઠ ભાગ, છઠ્ઠી ફાલના પાચ ભાગ, સાતમી ફાલના ભદ્રાર્ધ છ ભાગની જાણવી, આઠમી અને નવમી ફાલના નામ માત્રની કરવી (રેખાયે જેટલા હાથ હોય તેમા પાયા આગળના ફાલનાના નીર્ગમ રાખવા) આ પ્રમાણે બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ ફાલનાઓના ભાગ લોપવા નહિ ૭-૮-૯

अब मे शिखरके भद्रके नौ नाशक कहता हूँ । रेखासे आधे, भद्रके इक्कीस भाग करना । उसमे पहली फालना एक भाग, दूसरी दो भाग, तीसरी चार भाग, चौथी फालना पाँच भाग, सातवीं फालना, भद्रार्ध छ भागकी जानना । आठवीं और नौवीं फालना नाम मात्रकी करना । (रेखाके पर जितने हाथ हो उनमे ¼, ¼ अगुलके फालनाके निकाले रखना ।) इस तरह बुद्धिमान शिल्पीको चाहिये कि वे फालनाओंके भागको न लोपें । ७-८-९

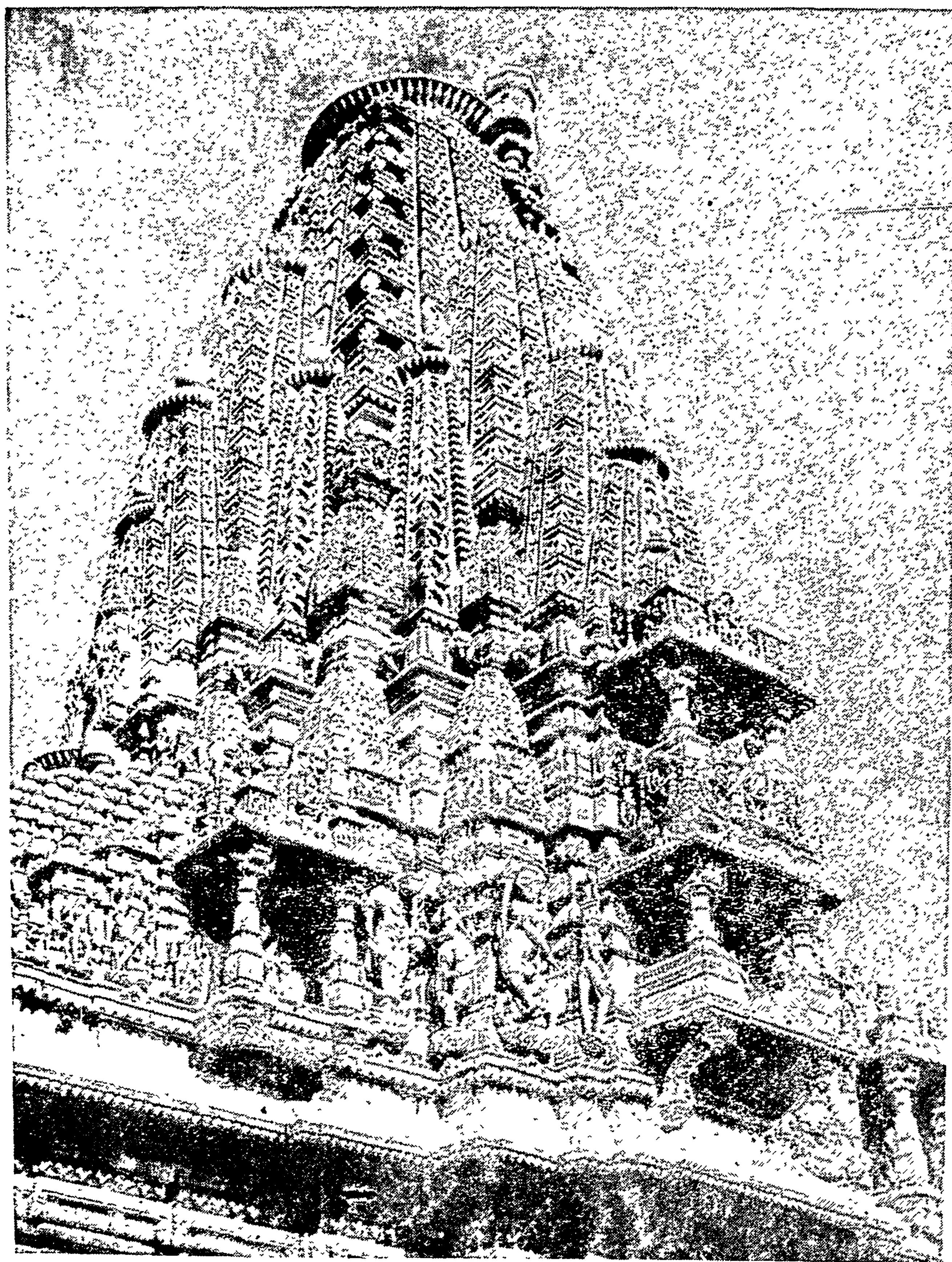
रेखा विस्तारमानेन सपादेतदुन्त्र्यः ।
त्रिभाग सहितं श्चैव सार्द्धवा तु विचक्षणः ॥१०॥

છજાપર કહેલ શિખરીઓ ચડાવી મૂળ રેખાથી (૧) સવાયુ શિખર બાધણે કરવુ (૨) ૧⅓ કે (૩) દોઢુ ઊચુ શિખર એમ ત્રણ પ્રકારે બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ કરવુ ૧૦

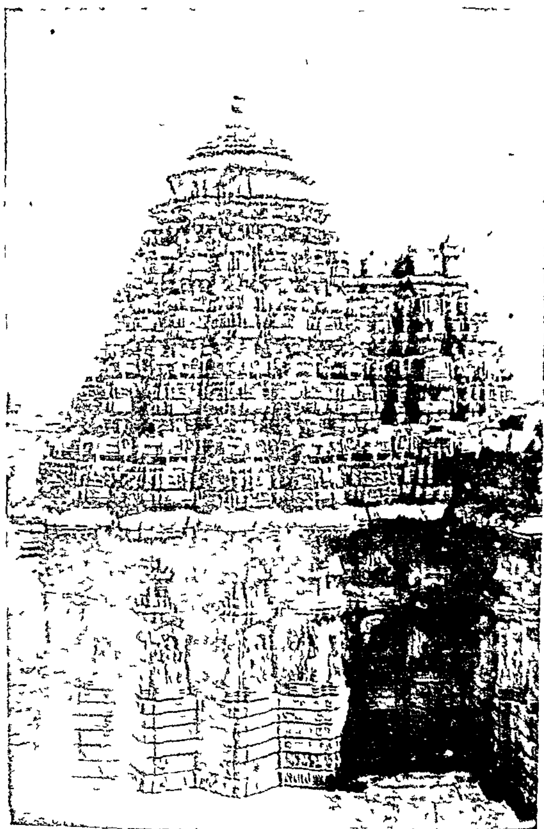
छज्जे पर कही हुई शिखरियोंको चढ़ाना । मूलरेखासे सवा गुना ऊँचा शिखर स्कंधे पर करना । १⅓ या डेढ गुना ऊँचा शिखर तीन प्रकार बुद्धिवान शिल्पीको करना । १०

दशधा मूले पृथुत्वे षड्भागः स्कंध उच्यते ।
षड्बाह्ये दोषदः प्रोक्तः पंचाधश्च न सस्यते ॥११॥

મૂળ શિખરના પાયચે દશ ભાગ કરી ઉપર બાધણે છ ભાગ રાખવાનું



नागर शैलीका अलंकृत शिखर. तेरवीं शताब्दी की प्रतिकृती. पंचासरा पाटण.



बेलुर-हलेबिड (मैसूरराज्य)के कलामय प्रासाद के महापीठ मंडोवर और शिखर

કહ્યું છે. ૭ ભાગથી વધુ રાખવું દોષકારક કહ્યું છે. અને પાંચ ભાગથી ઓછું ન કરવું. (એટલે સાડા પાંચ ભાગ ભાંધણે રાખવાથી તે શોભે છે.)

मूल शिखरके पायचे दश भाग कर उपर स्कंधके पर छः भाग रखनेके लिये कहा है। छः भागसे अधिक रखना दोषकारक है। और पाँच भागसे कम न करना। (अर्थात् साढ़े पाँच स्कंधके पर रखनेसे वह शोभता है।)

ग्रंथान्तर—रेखाविस्तार यन्मानं दशभाग विधीयते।
द्विभागकोण मित्युक्तं भद्र भागत्रयं भवेत् ॥१२॥
प्रतिरथः सार्द्ध भागं तु उभयो परिपक्षयोः।
स्कंधनवांशे सार्द्धद्वौ रथकोणो द्विभद्रकम् ॥१३॥

શિખરના પાયચે રેખા વિસ્તારનું જે માન હોય તેના દશ ભાગ કરવા. બે ભાગ રેખા, આખુંભદ્ર ત્રણ ભાગનું અને વચ્ચે પઢરો દોઢ ભાગનો બેઉ તરફનો કરવો (તે રીતે કુલ દશ ભાગ) તે રીતે નીચે દશ ભાગ અને ઉપર નવ ભાગ બાંધણે સ્કંધે કરવા તેના બે ભાગની રેખા. દોઢ ભાગનો પઢરો અને આખુંભદ્ર બે ભાગનું મળી કુલ નવ ભાગ જાણવા. ૧૨–૧૩.

शिखरके पायचे पर रेखा विस्तारका जो मान हो उसके दस भाग करना। दो भाग रेखा, सारा भद्र तीन भागका, और विचमें पढ़रा–डेढ भागका, दोनों तरफका करना। (उस तरह कुल दस भाग) इस तरह नीचे दस भाग और उपर नौ भाग स्कंधके पर करना। उसके दो दो भागकी रेखा डेढ डेढ भागका पढ़रा और सारा भद्र दो भागका मिलकर कुल नौ भाग जानना। १२–१३.

[1]शरवेध प्रवक्ष्यामि जायते मूलनाशके।
कक्षान्तरे प्रभेदेच महा शेष (च) राजयेत्[2] ॥१४॥
[3]प्रथमेत्रयक्षूद्राणां गृहेपक्षेचुगानि[4] च।
[5]द्वौ सा शक्ति सतुचाष्टोच षाडेश्यमतुपंचमी ॥१५॥
[6]जंधिसशम त्रयोदश क्षाणिषण्टेलनभधेते स्तराः।
सरवेधे यदि चैव हन्यते पशुबाधवाः ॥१६॥
सानुकूलषयं (कृत) मबले हन्यते शत्रु।
.........[7]स्वरवेधं न कारयेत् ॥१७॥

(१) सरवेध स्वरवेध? पाठान्तर (२) मेरु शेषं च राजयेत् (३) प्रथमं त्रय रुद्राणां (४) गुणानिच (५) शिवशक्ति शिवाष्टोच (६) जंधिपद्म त्रयोदश (७) कल्पते षड् मासिका.

पद्मासे भवेन्मृत्यु राजदंडस्तथैव च ।
अथवा त्रीणि मरणं जं पद्मासेन सशयः ॥१८॥
स्वरवेध यदा चैव क्रियते पड्भागिता ।
तत्र नारी महाव्याधि राष्ट्रभंग प्रजायते ॥१९॥
दुर्भिक्षश्चापि रुद्रं (स) राजमृत्यायने यथा ।
यम शमाता निष्फलं यांति शिल्पीन मृयते ध्रुवा ॥२०॥
अन्यथाकरणे कर्तुर्मोक्षोनास्ति युगान्तरे ।
पूजाया न लभतेदेव सुमकीर्ति राक्षस॰ ॥२१॥
शोकस्य यदातस्य विरोध॰ स्यात्परस्परम् ।
गौ प्राणपीडास्यात् आतासगनिष्टरागर्भगृहावपुभवेत् ॥२२॥
कीं अपोपांच राजनीक्य कुर्वातीम्यस्ते ।
केटिरोघस्तत्र वराहा अकाले मृत्यु फलकम् ॥२३॥
अहमद फलं याति कुकस्तलोकपीड तु ।
॥२४॥
प्रासादस्य न सांगायं विस्तारोग्रे स्तथैव च ।
पड मध्येपु दातव्यो पोत्रिकाद्यं प्रदक्षिणे ॥२५॥
मूलनाशक त्रिसार्द्ध कर्तव्यंच तदाग्रतः ।
नन नागिक भवेतंश्च सार्द्धते भद्रसन्निधैः ॥२६॥

• • •

इतिश्री विश्वकर्माकृताया क्षीरार्णवे नारद पृच्छते धिकारे शताग्रे द्वादशमोऽध्याय ॥ ११२ ॥ (क्रमाक अ० १४)

ઇતિશ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ નારદજીએ પૂછેલ અધિકારનો શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી ગુર્જરભાષામાં સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકાનો એકસો બારમો અધ્યાય ૧૧૨ ક્રમાંક અ० ૧૪

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारदजीके सवादरूप अधिकार का शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशकर ओघडभाई सोमपुरा रचि हुवी सुप्रभा नामकी भाषाटीका का ११२ एकसोबारहवाँ अध्याय । ११२ (क्रमाक अ० १४)

॥ अथ शिखराधिकार ॥

क्षीरार्णव अ० ॥ ११३ ॥ (क्रमांक अ० १५)

श्री नारदोउवाच—

प्रणपत्यमिदं वक्षयनिर्भ्यं धरणीमतः ।
कथयामि न संदेहो शिखरं सर्वकामदं ॥ १ ॥
कस्मिनाकार समुत्पन्ना प्रासाद् शिखरोत्तमे ।
किं दलविभकते च कींमाश्रृंगे विभागते ॥ २ ॥
किमे अष्टविभक्तं च स्तैषां स्कंधकीतो भवेत् ।
दशधा स्कंध रेखा च स्कंध मानोक्तताभवेत् ॥ ३ ॥
ममवालजरं श्रृत्वा सरतरंके न हेतवे ।
कं विभागमृतो तन्ना कथितो मम सांप्रतम् ॥ ४ ॥

મહર્ષિ નારદજી શ્રી વિશ્વકર્માને પૂછે છે કે—

સર્વકામનાને આપનારી એવી શિખરની વિધિ સંદેહ વગરની કહો, પ્રાસાદના શિખરો કેવી રીતે ઉત્પન્ન થાય, તેના ભાગ વિભાગ અને શ્રૃંગ આદિના વિભાગ કેવી રીતે કરવા? વળી આઠ ભાગ કેમ કરવા? શિખરનું સ્કંધ બાંધણું કેટલા ભાગે રાખવું દશ ભાગ નીચે રેખા અને બાંધણે કેમ કરવું? મને વાલંજરની વિધિ તેમાં ભાગ.......કેટલા ભાગે ઊંચાઈમાં કેમ કરવું તે મને હમણાં કહો. ૧–૨–૩–૪.

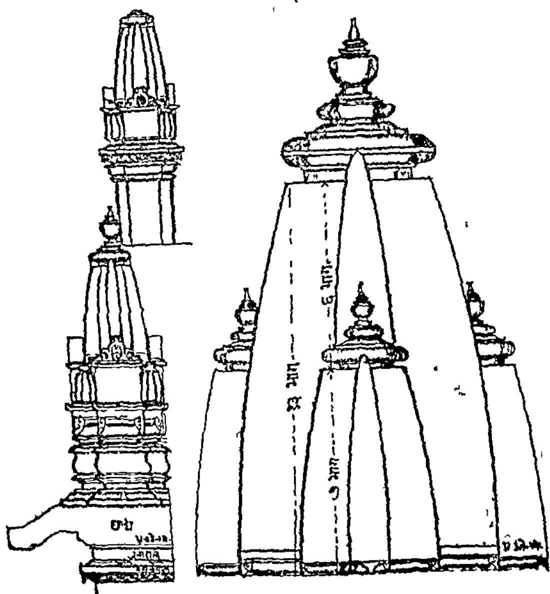
महर्षि नारदजी श्री विश्वकर्माको पूछते हैं कि—

सर्वकामनाको देनेवाली ऐसी शिखरकी विधि संदेहके बिना बताओ। प्रासादके शिखरों कैसे उत्पन्न होते हैं, उनके भाग, विभाग, शृंग आदिके विभाग कसे करें? और आठ भाग कैसे कैसे करे? शिखरका स्कंध कितने भागपर रखना? दस भागके नीचे रेखा और स्कंधके पर किस तरह करें? मुझे वालंजरकी विधि, उसके भाग और कितने भागमें ऊँचाईसें कैसे करना यह अभी कहो। १–२–३–४.

विश्वकर्मा उवाच —

यत्त्वया पृच्छते चैव श्रृणुत्वेकाग्रतो मुनिः ।
शिखराश्च विविधाकारा मनेकाकार मुद्रिता ॥ ५ ॥

एकस्यापि तलस्योर्ध्वे शिखराणि बहून्यपि ।
नामानि जातयस्तेषा मूर्ध्वमार्गानुसारतः ॥ ६ ॥



शिखरमें श्रृङ्गोर्ध्व श्रृङ्ग श्लोक ७-८ ऊरु श्रृङ्गोर्ध्वऊरुश्रृङ्ग रखनेका विभाग श्लोक २१

श्री विश्वकर्मा कहे छे के मुनि, तमे पूछो छो तो एकमनथी सांभळो शिखरो विधविध अने अनेक आकारना थाय एक ज तळ उपर घणा प्रकारना-शिखरो चडे ते शिखरना उपरना मार्गथी प्रासादनी जाति अने ओळखाय छे ५-६

श्री विश्वकर्मा कहते हैं-हे मुनि, यदि तुम पूछते हो तो एकाग्र होकर सुनो। शिखरों विविध और अनेक प्रकारके होते हैं। एक ही तलके पर बहुत प्रकारके शिखरे चढते हैं। उनके उपरके मार्गसे प्रासादकी जाति और नाम पहचाने जाते हैं। ५-६

छाद्योर्ध्वे प्रहारः स्यात् शृंगे शृंगे तथैवच ।
प्रहारांश पुनर्दद्यात् पुनः शृंगाणि कारयेत् ॥ ७ ॥

समस्ताना मधो भागे कुर्याच्छाद्यं विभूषितम् ।
अधः श्रृगार्ध्दे भागेन उर्ध्वे श्रृंगोवरोद्गमः ॥ ८ ॥

પ્રાસાદના છજા પર પ્રહાર પહારૂનો થર કરી તે પર ઉપરા પર શ્રૃંગો ઉપર બીજું શ્રૃંગ અર્ધભાગે ચડાવવાં પ્રત્યેક શ્રૃંગ નીચે કરી પહારૂનો થર કરી શ્રૃંગ ચડાવવા પ્રત્યેક શ્રૃંગના નીચેનો ભાગ છાજલીથી વિભૂષિ કરવો. વળી નીચેના શ્રૃંગના અર્ધભાગે ઉપરનું શ્રૃંગ ચડાવતા જવું અને દોઢીયા કરવા. [१]

प्रासादके छज्जे पर प्रहार–पहारुका थर कर उसकेपर उपरापर श्रृंगोंकेपर दूसरे श्रृंगको अर्ध भागमें चढ़ाना। प्रत्येक श्रृंगके नीचे फिर पहारुका थर करके श्रृंग चढ़ाना। प्रत्येक श्रृंगका नीचेका भाग छाजली से विभूषित करना। नीचेके श्रृंगके आधे भागके उपरके श्रृंङ्गको चढ़ाते जाना और दोढिये करना।[१] ७–८.

मूलकर्णरथादौच एक द्वित्रिक्रमेन्यसेत् ।
नीरंधारेमूलभित्तौ सांधा भ्रमभित्तिषु ॥ ९ ॥

પ્રાસાદની મૂળ રેખા અને પ્રતિરથ આદિ ઉપાંગો પર એક બે ત્રણ એમ કહેલા ક્રમ પ્રમાણે શ્રૃંગો ચડાવવા. પરંતુ નિરંધાર પ્રાસાદની મૂળ ભીંત ઉપર (ગભારાની અંદરની ફરકથી કંઈક વધુ) અને સાંધાર પ્રાસાદને ભ્રમની ભીંતે શિખરનો પાયચો રાખવો. (ગળવા ન દેવો.)

प्रासादकी मूल रेखा और प्रतिरथ आदि उपांगोंके पर एक दो तीन इस तरह कहे हुए क्रमके अनुसार श्रृंगोंको चढ़ाना। परंतु निरंधार प्रासादकी मूल दिवारके पर (गर्भगृहके अंदरके फर्कसे कुछ ज्यादा) और सांधार प्रासादको भ्रमकी दिवारके पर शिखरका पायचा रखना। (गलने नहीं देना।) ९.

(१) છજા પર પહારૂનો થર કરી શ્રૃંગ ચડાવવા. આધુનિક કાળમાં મંડપનો ઘુમટ ઉંચો કરે છે. તેથી શુકનાશ મેળવવા છજા પર જાંગી બે ત્રણ કે ચાર ફૂટની ચઢાવે છે. પ્રહારૂની વિશેષ પ્રથા રાજસ્થાની સોમપુરા ભાઈઓમાં વધુ છે. પ્રહારૂ અને મોરલી પાર એમ તેઓ કહે છે. વૃક્ષાર્ણવ ગ્રંથમાં પ્રહારના છ પ્રકાર કહ્યા છે. તેના પૃથક્ પૃથક્ ઘાટ કહ્યા છે. પહારૂના થરના ઘાટને ગુજરાતમાં "પાલ" કહે છે.

(१) छज्जेके पर पहारुके थर करके श्रृंग चढ़ाना। आधुनिक कालमें–मण्डपका गुंबज ऊँचा किया जाता है, इससे शुकनास मिलाने के लिये छज्जेके पर जांगी दो तीन या चार फूटकी चढ़ाते हैं। पहारुके विशेष प्रथा राजस्थानी सोमपुरा भाइयोंमें विशेष है। पहारु और मुरलीपार, ऐसा वे लोग कहते हैं। वृक्षार्णव ग्रंथमें प्रहारके छः प्रकार कहे हैं। उनके पृथक् पृथक् घाट कहे है। प्रहारके थरके घाटको गुजरातमे **"पाल"** कहते हैं।

²रेखा विस्तारमानेन सपादेनतदुच्छ्रयः ।
त्रिभाग सहितश्चैव सार्द्धं कृत्वा विचक्षणैः ॥१०॥

શિખરની મૂળ રેખા પાયચો જેટલો વિસ્તાર હોય તેનાથી (૧) સવાયુ ઉંચુ શિખર (બાધણે) કરવુ (૨) મૂળ પાયચાથી તેના ત્રીજા ભાગ સહિતની ઊંચાઈ કરવી (૩) મૂળ પાયચાના વિસ્તારથી દોઢુ ઊંચુ શિખર વિચક્ષણ શિલ્પીએ કરવુ આ ત્રણ રીત શિખરની ઊંચાઈની (નાગરાદિ જાતિમા) જાણવી (૨) ૧૦

शिखरकी मूलरेखा-पायचाके बराबर विस्तार हो तो उससे (१) सवा गुना ऊँचा शिखर स्कंधके पर करना । (२) मूल पायचेसे उसके तीसरे भागके सहितकी ऊँचाई करना । (३) मूल पायचेके विस्तारसे डेढ गुना ऊँचा शिखर विचक्षण शिल्पीको बनाना । इन तीन रीतियोंको शिखरकी ऊँचाईके लिये जानना । (नागरादि जातिमे) १० (२)

उरुश्रृङ्गाणि भद्रेस्तु ह्येकादि ग्रहसंख्यया ।
त्रयोदश समुच्छ्रेऽधो लुप्तं सप्तोरुश्रृङ्गकै ॥११॥

શિખરના ભદ્રે ઉરુશૃંગો ચડાવવાનુ વિધાન કહે છે ભદ્ર ઉપરથી એકથી નવ સુધી (કહેલા-ક્રમ પ્રમાણે) ઉરુશૃંગ ચડાવવા તેમા ઉપરના ઉરશૃંગના બાધણાથી નીચે પાયચાની ઉંચાઇના તેર ભાગ કરી નીચેના ઉરુશૃંગના બાધણે સાતભાગ રાખી લુપ્ત દબાતુ મોટુ ઉરુશૃંગ કરવુ એમ ક્રમે ચડાવવા (આમ ૭ ભાગ ઉપરને સાત ભાગ નીચે એમ બાધણાથી બાધણા સુધીના જાણવા) ૧૧

शिखरके भद्रके पर उरुश्रृंगोको चढानेका विधान कहते है । भद्रके उपरसे एक से नौ तक क्रमके अनुसार उरुश्रृंगको चढाना । उसमे उरुश्रृंगके स्कंधसे नीचे पायचेकी ऊँचाईके तेरह भागकर नीचेके उरुश्रृंगका स्कंधके पर सात भाग रखकर लुप्त दबाता हुआ बडा उरुश्रृंग करना । इस तरह क्रमके अनुसार

(૨) નાગરાદિ જાતિમા આ ત્રણ પ્રકારે શિખરની ઊંચાઈના કહ્યા છે પુરાણોમા શિલ્પનો વિષય સમાવિષ્ટ કરેલ છે તેમા શિખર બમણુ ઊંચુ કરવાનુ કહ્યુ છે ઉત્તર ભારતમા તેવા શિખરો જોવા મળે છે ભારતના એક પ્રદેશમા અઢીગણી ઉંચાઈના શિખરો શાસ્ત્રોક્ત વિધિના અમે જોયા છે તે પ્રાસાદની ચૌદ જાતિમાની એક જાતિ હશે

(२) नागरादि जातिमे इन तीन प्रकारसे ऊँचाइ बतायी है । पुराणोंमे शिल्पका विषय समाविष्ट किया हुआ है । उसमे शिखरको दूगुना ऊँचा करनेके लिये कहा है । उत्तर भारतमे वैसे शिखर देखनेमे आते है । भारतके एक प्रदेशमे ढाइ गुनी ऊँचाईके शिखर शास्त्रोक्त विधिसे हमने देखें हैं । यह प्रासादकी चौदह जातियोंमेसे एक जाति होगी ।

चढ़ाना । (इस तरह छः भाग उपर और सात भाग नीचे, इस तरह स्कंधसे स्कंध तकके जानना ।) ११.

शृंगोरूशृंग प्रत्यङ्गारंडकान गणयेत्सुधी ।
तवङ्गा तिलकं कर्णे कूर्याद् प्रासाद् भूषणाम् ॥१२॥

શિખરના શ્રૃંગ–ખીખરીઓ ઉરુશ્રૃગ અને પ્રત્યંગ (ચોથ ગરાશિયા) તે અંડકની ગણત્રીમાં લેવષા બાકી તવંગ તિલક કૂર ઘંટા જે રેખા કે પઢરા આદિ અંગો પર ચડાવેલા હોય તે પ્રાસાદના આભૂષણ રૂપ જાણવા. તે ગણત્રીમાં ન લેવા.

शिखरके श्रृंगको, उरुश्रृंगको और प्रत्यंगको (चोथ गराशिया) अंडककी गिनतीमें लेना । वाकी तवंग तिलक कूट घंटा जो रेखा या पढरा आदि अंगोंके पर चढ़ाये हुए हो उनको प्रासादके आभूषण रूप जानना । उनको गिनतीमें नहीं लेना । १२.

रेखामूलस्य दिग्भागे कुर्यादग्रे षडांशकाः ।
षड्बाह्ये दोषदं प्रोक्तं पंचमध्ये न शोभनम् ॥१३॥

શિખરની મૂળ રેખા–પાયચાના વિસ્તારના દશ ભાગ કરી ઉપર બાંધણે–સ્કંધે છ ભાગ પહોળું રાખવું. છ ભાગથી વધુ રાખવાથી દોષ કહ્યો છે. અને પાંચ ભાગથી ઓછું શોભતું નથી. (તેથી સાડા પાંચ ભાગ બાંધણે રાખતું.) ૧૩

शिखरकी मूल रेखा = पायचेके विस्तारके दस भागकर उपर स्कंधके उपर छ भाग चौडा रखना । छः भागसे ज्यादा रखनेसे दोष कहा है, और पाँच भागसे कम शोभायमान नहीं होता है । इससे साढ़े पाँच भाग स्कंधके पर रखना ।) १३

रेखामूलस्य विस्तारात् पद्मकोश समालिखेत् ।
चतुर्गुणेन सूत्रेण सपाद शिखरोदयः ॥१४॥

સવાયા શિખરને પાયચામા વિસ્તારથી ચારગણું વૃત સૂત્ર ફેરવવાથી વગર ખીલેલા કમળ પુષ્પના આકારના જેવી શિખરની નમણ રેખા થશે.[3] ૧૪

सवागुने शिखरको पायचेके विस्तारसे चार गुना घृत सूत्र फिरानेसे अविकसित कमलपुष्पके आकारके जैसी शिखरकी नमण रेखा होगी ।[3] १४

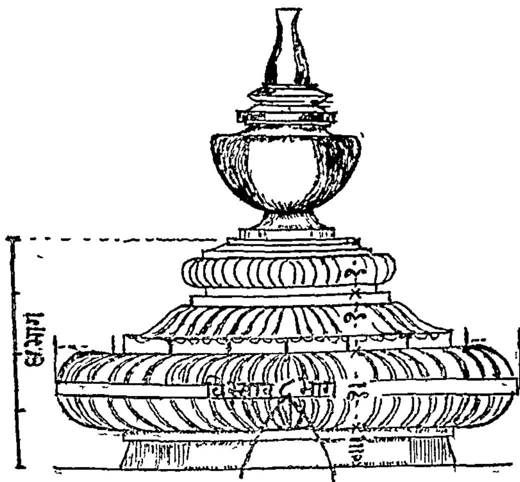
---

(૩) ૧¾ શિખરોદયના પાયચાથી સાડાચાર ગણું સૂત્રથી વૃત રેખા દોરવી અને દોઢા ઉદયવાળા શિખરના પાયચા વિસ્તારથી પાંચગણું સૂત્ર વૃત રેખા દોરવાથી બાંધણે સાડા પાંચ ભાગના હિસાબે બરાબર મળી રહે છે. આ સ્થૂળ સામાન્ય નીયમ કહ્યો.

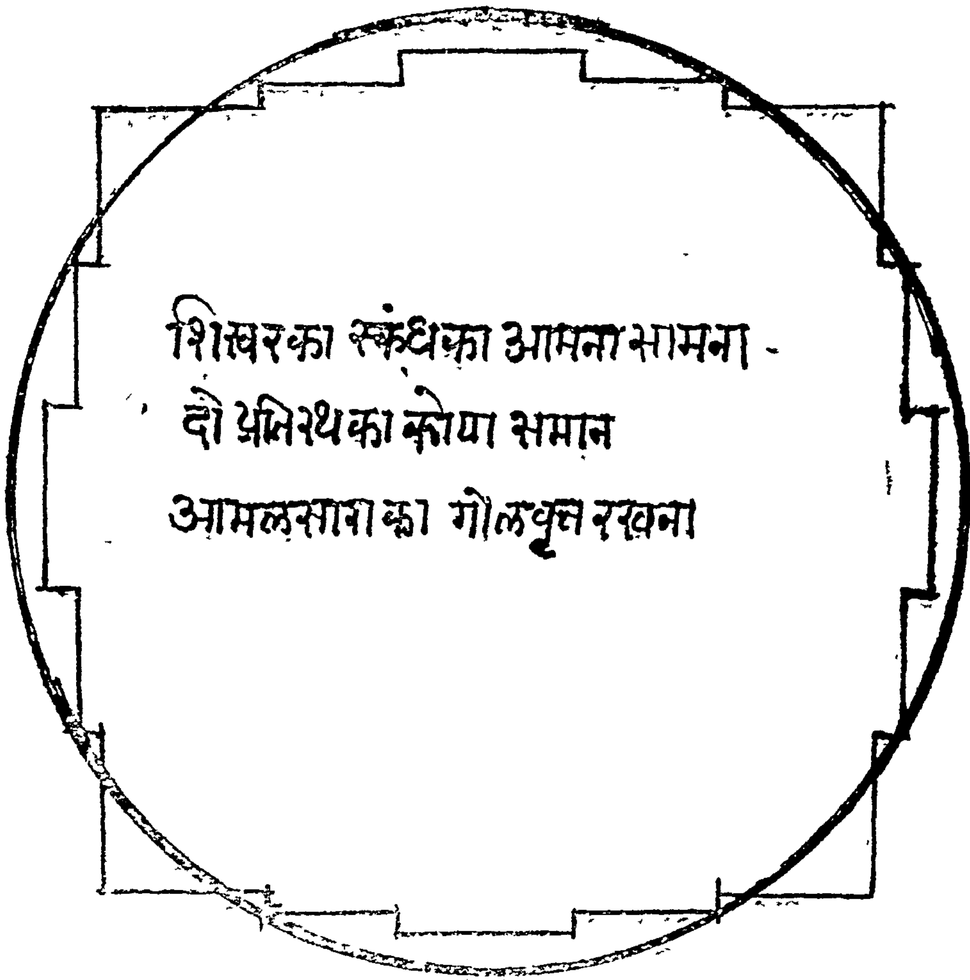
રેખા દોરવાના અનેક પ્રકાર–ભેદો પ્રાસાદ શિલ્પગ્રંથોમાં કહ્યાં છે. તેમાં પ્રાસાદની જાતિ છંદ પ્રમાણે મુખ્ય ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. ૧ શિખાંત ૨ ઘંટાત ૩ સ્કંધાત ૧ શિખાંત

दशधातलरेखा च दिग्भाग द्वौ कर्ण विस्तर ।
रथ सार्द्ध विस्तार भद्रार्धं तत्र निर्यम् ॥१५॥
हस्तमानार्धाङ्गुलेन फालनानिर्गविचक्षण ।
दशागा शिखरे मूले चाग्रे तत्रनवांशकाः ॥१६॥
सार्द्धांशकौ रथौ कोणो द्वौ शेषंभद्र मिष्यते ।
द्वौ प्रतिरथौ मध्ये वृत्तमामल सारकम् ॥१७॥

શિખરના નીચે મૂળ રેખા–પાયચે દશ ભાગ કરવા તેમા બે ભાગની રેખા –દોઢ દોઢ ભાગનો પઢગ અને બાકી અર્ધું ભદ્ર પણ તેટલુ જ એટલે દોઢ ભાગનુ આ ફાલનાઓના નિકાળા–પાયચે જેટલા ગજ હોય તેના ગજે રાખવા જેમ દશ ભાગ નીચે કહ્યા તેની ઉપર સ્કધ બાધણે નવ ભાગ કરવા તેમા બે ભાગની રેખા અને દોઢ દોઢ ભાગના પઢરા અને બાકી આખુ ભદ્ર બે ભાગનુ કરવુ (કુલ નવભાગ) આ સ્કધના ખુણાખુણ પ્રતિરથની મધ્યમા ગોળ આમલ સારો પહોળો રાખવો ૧૫-૧૬-૧૭



એટલે નીચે પાયાચાથી ઠેઠ કળશ સુધીની સળગ વૃત રેખા દોરાય તે તેમા બાધણુ અને આમલસારા સાકડા થાય ૨ ૧ટાત–નીચે પાયચાથી આમલસાર સુધી વૃત રેખા દોરાય તે



शिखरमें नीचे मूलरेखाके पर-पायचेके पर दस भाग करना। उनमें दो भागकी रेखा-डेढ़ डेढ़ भागका पढरा और बाकी आधा भद्र भी उतना ही अर्थात् डेढ़ भागका-इन फालनाओंके निकाले-पायचेके बराबर जितने गज हो उसके आधे अंगुल गजके पर रखना। जिस तरह दस भाग नीचे कहे उस तरह स्कंधके पर नौ भाग करना। उनमें दो भागकी रेखा और डेढ़ भागके पढ़रे और बाकी पूरा भद्र दो भागका करना। (कुल नौ भाग) इस स्कंधके कोनेके सामने कोनेमें प्रतिरथकी मध्यमें गोल आमल सारा चौडा रखना। १५-१६-१७.

આ પ્રકાર વિરાટ ભૂમિજ અને વલ્લભી જાતિના પ્રાસાદ માટે છે. (૩) સ્કંધાત એટલે નીચે પાયચાથી બાંધણા સુધી ગોળ વૃત રેખા છુટે (ઉપર આમલસારો તેનાથી બહાર રહી જાય છે તે સ્કંધાંત રેખાવાળુ શિખર નાગરાદિ જાતિના છંદના સાંધાર કે નિરંધાર પ્રાસાદને પ્રશસ્ત કહ્યું છે.

(३) १⅓ शिखरोदयके पायचेसे साढ़ेचार गुने सूत्रसे व्रत रेखा दोरना और डेढ़ गुने उदयवाले शिखरके पायचेके विस्तारसे पाँच गुनी सूत्र व्रत रेखा दोरनेसे स्कंध के पर साढ़ेपाँच भागके हिसाबसे बराबर मिल रहता है।

रेखा दोरनेके अनेक प्रकार भेदों प्रासाद शिल्प ग्रंथोंमें कहे है। उसमें प्रासादकी जाति छंदके अनुसार मुख्य तीन प्रकार कहे है। १ शिखांतर २ घंटांत ३ स्कंधांत

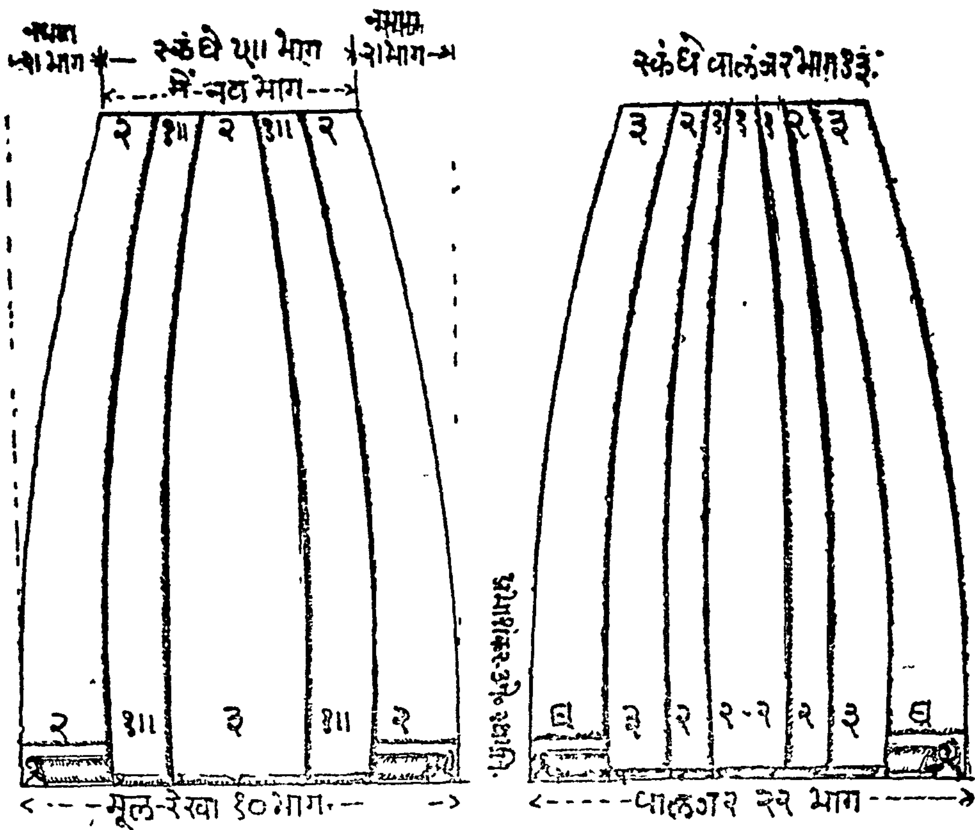
अथवालंजर–तथा वालंजर प्राज्ञ भागभेद विशेषतः ।
द्वाविंशश्च पदं कार्यं चतुर्भिमूलनासिकं ॥१८॥
प्रतिरथेत्रयं भागं द्वितीये द्वयमेव च ।
द्विभागाचैव भद्रार्द्धभागभागश्च निर्गमम् ॥१९॥
त्रयादेशांश स्कंधोर्ध्वे कर्तव्यं च प्रयत्नतः ।
त्रिधाकर्ण विभक्तं च द्विभागउर्ध्वकर्णक' ॥२०॥
तथारथप्रभेदेन शेषं भद्रं प्रकीतितेम् ।
वालंजरे च विज्ञेया रेखा भेदस्यकस्तथा ॥२१॥

હે સુજ્ઞ પુરુષ, હવે (સાધાર પ્રાસાદના) શિખરના વાલજરના ભાગના ભેદ વિશેષ કરીને કહુ છુ શિખરના પાયચે બાવીશ ભાગ કરવા તેમા રેખા ચાર ભાગની, પ્રતિરથ ત્રણ ભાગનો બીજો ઉપરથ બે ભાગનો અને અરધુ ભદ્ર બે ભાગનુ તેના નિકાળા ભાગ ભાગના રાખવા હવે તેના ઉપર સ્કધ બાધણે તેર ભાગ કરવા ત્રણ ભાગની રેખા-કર્ણ બે ભાગના પ્રતિરથ, એક ભાગનો રથ અને બાકી અર્ધું ભદ્ર, અરધા ભાગનુ એમ કુલ તેર ભાગ સાધાર પ્રાસાદના શિખરના બાધણે જાણવા એ રીતે શિખરની રેખાના વાલજરના ભેદ જાણવા [૪] ૧૮ ૧૯-૨૦-૨૧

हे सुज्ञपुरुष, अव (सांधारप्रासादके) शिखरके वालजरके भागके भेद विशेषतया मैं कहता हूँ । शिखरके पायचे पर बाईस भाग करना । उसमें रेखा चार भागकी प्रतिरथ तीन भागका दूसरा उपरथ दो भागका और आधा भद्र दो भागका, उनके निकाले भाग भागके रखना । अब उसके उपर स्कधके पर तेरह भाग करना । तीन भागकी–रेखा–कर्ण दो भागका दूसरा प्रतिरथ, एक भागका रथ और बाकी आधा भद्र आधे भागका, इस तरह कुल तेरह भाग साधार प्रासादके शिखरके स्कध पर जानना । इस तरह शिखरकी रेखाके वालजरके भेद जानना ।[४] १८–१९–२०–२१

(१) शिखात अर्थात् नीचे पायचेसे कलशतककी सलग वृतरेखा आँकी जाती है वह, उसमें स्कध और आमलसारे सँकरे होते हैं । (२) घटात–नीचे पायचेसे आमलसारा तक वृतरेखा आँकी जाती है वह, ये प्रकार विराट भूमिज और वल्भी जातिके प्रासादके लिये हैं । (३) स्कधात अर्थात् नीचे पायचेसे स्कध तक गोल वृतरेखा छुटे (उपर आमलसारा उससे बाहर रह जाता हे वह) स्कधात रेखावाला शिखर नागरादि जातिके छदके साधार या निरधार प्रासादको प्रशस्त है ।

(૪) આગળ શ્લોક ૧૫થી૨૭મા શિખરના ઉપાગોના ભાગ કહ્યા છે તે નિરધાર



निरंधार—और सांधार प्रासादका मूल शखरका उपाङ्ग—वालंजर वालपंजर

स्कंधहीनं न कर्तव्यं नाधिकं किंच कारयेत् ।
स्कंध हीने कुलोच्छेदो मृत्यरोग भयावहम् ।।२२।।
आयुरारोग्य सौभाग्यं लभते नात्र संशयः ।
मूलकन्द प्रविष्टे तु स्कंधवेध इति स्मृतः ।।२३।।
शिल्पी स्वामी नौ हन्यते स्कंधवेधेन संशयः ।
निर्गमे हस्त संख्यैर्वार्धांगुलैरुपमादितः ।।२४।।

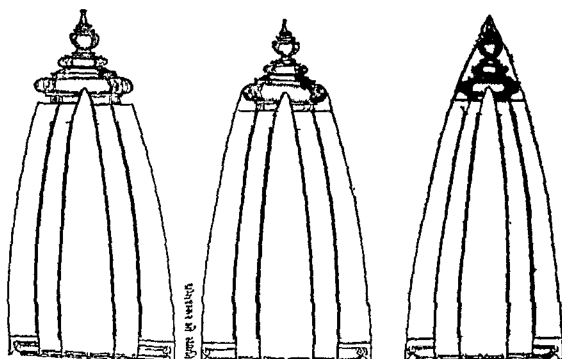
માન પ્રમાણથી ઓછા સ્કંધવાળું કે અધિક માનના સ્કંધવાળું શિખર ન કરવું. શિખર સ્કંધ: બાંધણે માપથી ઓછું થાય તો કુળનો નાશ મૃત્યુ અને રોગનો ભય ઉપજે. માન પ્રમાણે કરવાથી આયુષ્ય આરોગ્યને સૌભાગ્યની પ્રાપ્તિ થાય છે. તેમાં જરા પણ શંકા ન કરવી. જો સ્કંધના મૂળમાં (ધ્વજાદંડ) પ્રવિષ્ટ થાય તો તે સ્કંધવેધ જાણવો. તે વેધથી શિલ્પી અને સ્વામીનો નાશ થાય તે

પ્રાસાદને યોગ્ય છે અને શ્લોક ૧૮થી૨૧ના વાલંજર કહ્યા તે સાંધાર પ્રાસાદના શિખરના છે સાંધારામાં બે પ્રતિરથ કહ્યા છે વાલંજરને સમરાંગણ સૂત્રધારમાં બાલપંજર કહેલ છે.

(४) आगे श्लोक १५ से १७ मे शिखरके उपागोंके भाग कहे थे निरंधार प्रासादके शिखरके योग्य है। और श्लोक १८ से २१ -मे वालंजर कहे है सांधार प्रासादके शिखरके लिये कहे है । सांधारमें दो प्रतिरथ कहा है। वालंजरको समराङ्गण सूत्रधार में वाल पंजर कहा है।

સશય વગર જાણવુ બાધણે વાલજરના સર્વ નાશિકના મિકાળા જેટલા ગજે પાયચો કે બાધણુ હોય તેટલા ગજે અર્ધા આગળ પ્રમાણે રાખવા

मान प्रमाणसे कम स्कंधवाला या अधिक मानके स्कधवाला शिखर नहीं करना। शिखर जो स्कधके मापसे कम हो तो कुलका नाश, मृत्यु और रोगका भय उत्पन्न होता हैं। मानके अनुसार करनेसे आयुष्य आरोग्य और सौभाग्यकी प्राप्ति होती है। उसमे जरा भी शंका न रखना। जो स्कधके मूलमे (ध्वजादड) प्रविष्ट हो तो उसे स्कध वेध समझना। इस वेधसे शिल्पी और स्वामिका नाश होता है। यह बात नि संशन जानना। स्कधके पर वालजरके सर्व नासिकके निकाल जितने गज पर पायचा या स्कध हो उतने गज पर आधे आगुल प्रमाणमें रखना। २२–२३–२४



स्कधान्त रेखा (नागरी) घण्टान्त रेखा ----विराट वल्भी---- शिखान्त रेखा

रेखाका सामान्य स्वरुप—१ स्कधांत (नागरी)—२ घण्टान्त—३ शिखान्त रेखा (विराट वल्भी)

अन्योन्ये कथिताश्चैव शुकनाशः मतः शृणु।
छाद्योर्ध्वे स्कध पर्यंतं मेकविंशति भाजितम् ॥२५॥
नंद त्रयोदश मध्ये प्रमाणं पंचधामतं।
कुमारं कपिरुद्रंच निर्घंटा हि निशाचर ॥२६॥
चद्रघोपश्च विज्ञेयं शुकनाशपचधामत।
पणमेकं कुमारं च त्रिपणंकपिरुद्रकम् ॥२७॥

શિખરનુ અન્યો અન્ય કહ્યુ હવે શુકનાસના લક્ષણુ સાભળો છજા ઉપરથી

શિખરના સ્કંધ બંધારણા સુધીની ઊંચાઈના એકવીસ ભાગ કરી. તેમાંના નવ દશ અગ્યાર બાર અને તેર ભાગે શુકનાસની ઊંચાઈના પાંચ પ્રકારે સ્થાન વિભાગ કહ્યા. કુમાર કપિરૂદ્ર, નિર્ધન્ટ નિશાચર અને ચંદ્રઘોષ એમ પાંચ નામો અનુક્રમે શુકનાશના જાણવા. ૨૫–૨૬–૨૭

शिखरका अन्योअन्य कहा । अब शुकनासके लक्षण सुनो । छज्जेके उपरसे शिखरके स्कंध तक ऊँचाईके इकीस भागकर उनके नव, दस, ग्यारह, बारह और तेरह भाग पर शुकनासकी ऊँचाईके पाँच प्रकार कहे । कुमार, कपिरूद्र, निर्धंट, निशाचर और चंद्रघोष इस तरह पाँच नामों अनुक्रमसे शुकनासके जानना । २५-२६-२७

पंचसप्त नवश्चैव द्विषणांतं प्रकीर्तितं ।
विमानाकार वर्तते कक्षेमुर्ध्वे च नासिकम् ॥२८॥

---

(५) શિખરના શુકનાસ બરાબર મંડપની ઘંટા સમાન રાખવી. તેવું વિધાન છે. પણ शुकनासे समाघंटाः न न्यूना न ततोऽधिका એવું अपराजितसूत्र १८५માં કહેલું છે. વળી दीपार्णव અને અન્ય શિલ્પગ્રંથો તેમજ अपराजितમાં બીજે સ્થળે तदूर्ध्वेन प्रकर्तव्यं अधः स्थं नैवदूषयत्" આમ પણ કહેલ છે. તેથી શુકનાશથી મંડપની ઘંટા નીચે રાખવી. તેમાં દોષ નથી. शुकनासे समाघंटा કહે છે. પણ આમલસારો મંડપ પરનો કહ્યો નથી. તેનું કારણ તેરમી ચૌદમી સદીમાં મંડપ પર ઘુમટ નહીં પરંતુ શામરણ કરતા અને તેની સર્વોપરિ मूलघंटा આવે તેથી ઘંટા કહેલ છે. સંવરણા પાછલા કાળમાં ઓછી થવા માંડી તેથી ઘુમટ કરી ચંદ્રસ મુકી આમલસારા પર કળશ મુકવાની પ્રથા શરૂ થઈ.

(५) शिखरके शुकनासके बराबर मंडपकी घंटाको समान रखना, वैसा विधान है । लेकिन "शुकनासे समाघंटा नन्यूना न तत्तोऽधिका" ऐसा "अपराजित सूत्र" १८५ में कहा है, और दीपार्णव ओर अन्य शिल्प ग्रंथों और अपराजितमें दूसरे स्थल पर" तदूर्ध्वे न प्रकर्तव्यं अधः स्थे नैव दूषयेत्" ऐसा भी कहा है । इससे शुकनाससे मंडपकी घंटाको नीची रखना, इसमें दोष नही है । शुकनास समाघंटा कहते हैं, लेकिन आमलसारा मंडपके उपरका नहीं कहा है । इसका कारण तेरहवीं सदीमें मंडपके पर घुमट गुँवज नहीं लेकिन शामरण करते थे और उसकी सर्वोपरि मूलघंटा आवे इसीलिये घंटा कहा है । संवरणां पीछले कालमें कम होने लगी इससे गुँवजकर चंद्रस रखकर आमलसारा के पर कलश रखनेकी प्रथा शुरू हुई ।

(६) શ્લોક ૨૭થી૩૧નાં મૂળપાઠ જ અમે મુકેલ છે. તેની અશુદ્ધિના કારણે અનુવાદ કરવામાં ગેરસમજના ભયે અમે તેમ કર્યું નથી. શુકનાસમાં એક ત્રણ પાંચ કે સાત ઉપરા-પર દોઢિયા કરી ઉપર સિંહ સ્થાપન થાય છે.

(६) श्लोक २७ से ३१ के मूल पाठ ही हमने रखे हैं । उनकी अशुद्धिके कारण अनुवाद करनेमें गैरसमज के संभवसे हमने वैसा रखा है । शुकनासमें एक तीन पाँच या सात उपरापर दोढिये बनाकर उपर सिंहका स्थापन होता है ।

२०

अष्टधादश चैवोक्त नष्टकर्णी विशेपत ?
नष्टकर्णी यदामूर्ध्वे निर्गद परिभूमिकै ॥२९॥
सर्वेसिंह समायुक्ता कलशाग्रे विशेपत ।
तथा भद्र विचारेण शृंगस्य शुकमेव च ॥३०॥
शृङ्गाद्वयं प्रयत्नेन शृंगमेके विचक्षण
॥३१॥

ભાવાર્થ—એક ખડ કુમાર, ત્રણ ખડ કપિરૂદ્ર, પાચ ખડ નિઘટુ, સાત ખડ નિશાચર અને નવખડ ચદ્રઘોપ એમ ઉત્તરોત્તર બબ્બે ખડના અતે વિમાનકારનુ શુકનાસ કરવો તે પર બાજુ અને ઉપર નાસિકા કરવી અઠ્ઠાઇ કે દશાઈ ખુણી વગરના વિશેષ કરી ઉપર કળશના આગળ સિહો કરવા
२७–२८–२९–३९–३१

एक खड कुमार, तीन खट कपिल्द्र, पाँच खड निघट्ठु, सात खड निशाचर और नौ खड चँद्रघोप इस तरह उत्तरोत्तर दो दो खडके अतमे विमाना-कारका शुकनास करना । उसके पर बाजु और उपर नासिका करना । अट्ठाईस या दसाई कोनेके विना विशेप कर उपर कलशके आगे सिंहो करना
२७–२८–२९–३०–३१

अथ कोकिला लक्षण—⁷अथात सम्प्रवक्ष्यामि कोकिला लक्षणंपरम् ।
स्थान प्रमाणमे तेपा शुभं वा यदिवाऽशुभम् ॥३१॥
कोण विस्तार विस्तीर्णा कोकिला शुभलक्षणम् ।
उभयो पार्श्वयोरेव एकैका च प्रशस्यते ॥३२॥
कोणार्द्धं च यमदंष्ट्रा भित्तिश्चैव शुभप्रदा ।
सर्वलक्षणसंयुक्ता कोकिला सुफलप्रदा ॥३३॥

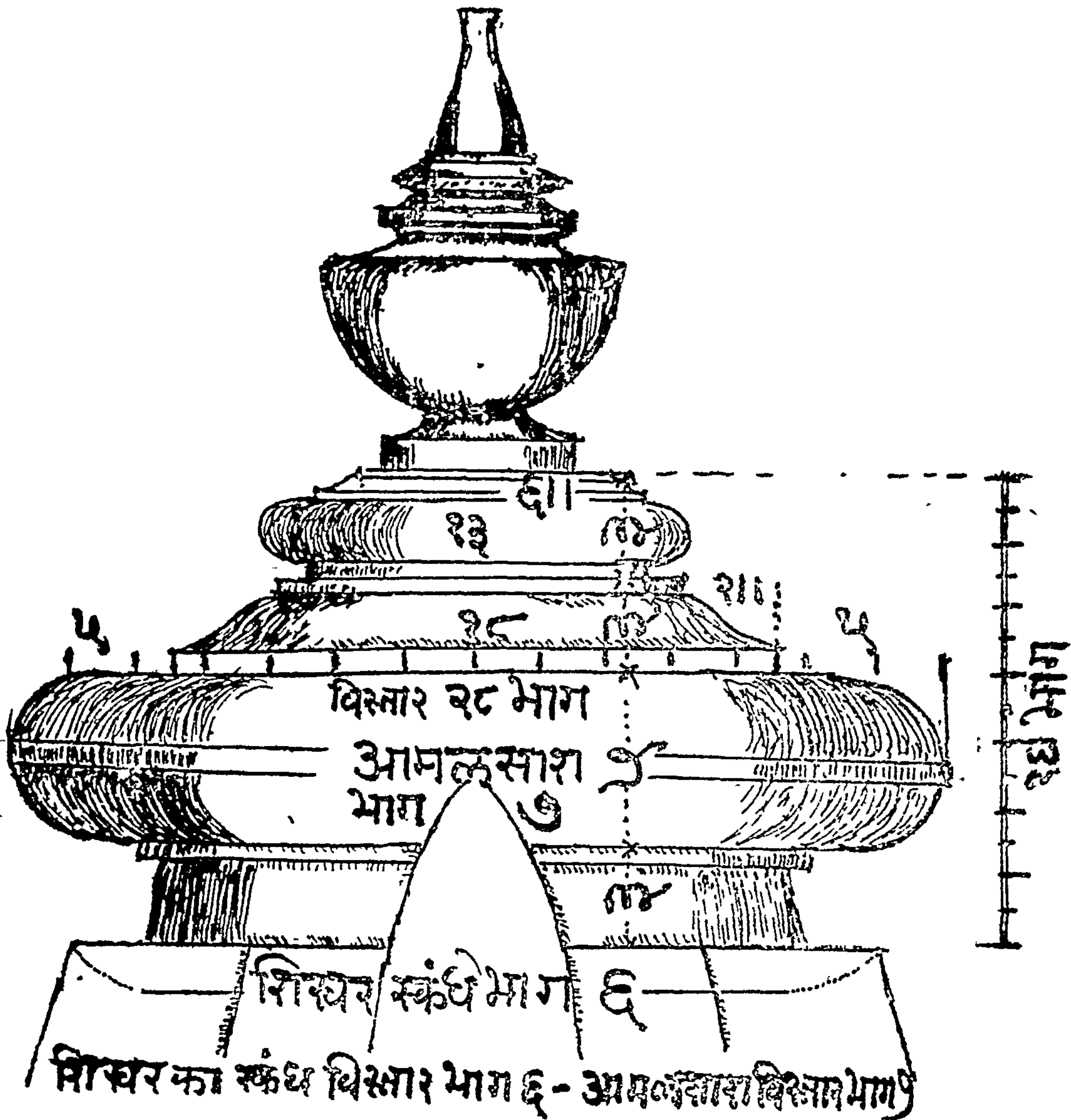
હવે હુ કોકિલાના સ્થાન પ્રમાણુ અને શુભાશુભ લક્ષણો કહુ છુ પ્રાસાદની રેખા કોણુ જેટલી પહોળી કોકીલા કરવી તે શુભ લક્ષણુ જાણુવુ કોલીના બેઉ પડખે એકેક કોકીલા—પ્રાસાદપુત્ર કરવા તે પ્રશસનીય છે રેખા જેટલા ભાગની હોય તેનાથી ઓછી કે અર્ધા ભાગની કોકિલા કરે તે યમ દષ્ટા વેધરૂપ જાણુવી પણુ તે પ્રાસાદની ભિતની જાડાઈ જેટલી કોકિલા શુભ કહી છે સર્વ લક્ષણુ યુક્ત કોકિલા (પ્રાસાદપુત્ર) કરવાથી શુભ ફળને આપે છે ૩૧–૩૨–૩૩

अब मैं कोकिलाके स्थान प्रमाण और शुभ अशुभ लक्षणोंके बारेमे कहता

७ કોકિલા લક્ષણુના પાઠ કેટલીક ગ્રથોમા નથી તેથી આ પ્રથા પાછળથી પ્રવિષ્ટ થઈ હોય
७ कोकिला लक्षणके पाठ कई ग्रथोंमें नहीं है, सभव है उसका प्रचार पीछेसे हुआ हो ।

हूँ । प्रासादकी रेखाके कोनेके बराबर चौडी कोकिला । यह शुभ लक्षण समझना । कोलीका दोनों तरफ एक एक कोकिला (प्रासादपुत्र) बनाना, यह प्रशंसनीय है । रेखासे कम भागकी कोकिलाकी जाय, यह यमदंष्ट्रावेधरूप जानना । लेकिन वह प्रासादकी दिवारके मोटेपनके बराबर कोकिला शुभ कही है । सर्व लक्षण युक्त कोकिला (प्रासादपुत्र) करनेसे शुभफलको देती है । ३१-३२-३३.

षड्भागैस्कंध विस्तारं सप्तभिः आमलसारकं ।
अर्धोदयं कर्तव्यं तदूर्ध्वे कलशोत्तमा ॥३४॥
तथामलसारि च विस्तारं च अतःश्रृणु ।
सप्तभागमध्ये च चतुषष्टि विभाजितम् ॥३५॥
द्वांत्रिंशोदयं कार्यं ग्रीवा भागं षडंमवेत् ।
अंडकं भास्करं विद्यात्-अष्ट चंद्रा विलोकित ॥३६॥



आलमसारा विभाग २८ × १४

આમલસારા વિસ્તારનુ બીજુ પ્રમાણ કહે છે સ્કધ-બાધણે છ ભાગ હોય તો આમલસારો સાત ભાગ વિસ્તારનો કરવો અને તેનુ અર્ધ ઊચો કરી તે પર ઉત્તમ એવો કળશ (ઈંડુ) મૂકવો, હવે આમલસારાની પહોળાઈના ભાગ કહુ છુ છ ભાગ બાધણે અને સાત ભાગ આમલસારો વિસ્તારમા કહ્યો તે સાત ભાગમા ચોસઠ ભાગ પહોળાઈના અને બત્રીશ ભાગ ઊંચાઈના કરવા ગળુ છ ભાગ-અડક (મોટો ગોળો) બાર ભાગનો, તે પર ચદ્રસ આઠ ભાગનો અને ઉપર જાજરી (ગોળો) છ ભાગનો કરવો એ રીતે ઊંચાઈના બત્રીશ ભાગ જાણવા હવે તેના નિકાળાના ભાગ સાભળો ૩૪-૩૫-૩૬

आमलसारा विस्तारका दूसरा प्रमाण कहते हैं । स्कध छ. भाग हो तो आमलसारा सात भाग विस्तारका करना । और उसका अर्ध ऊँचा करके उसके पर उत्तम ऐसा कलश (अण्डा रखना । अब आमलसारकी चोडाईके भाग कहता हूँ । छ भाग स्कधपर और सात भाग जो आमलसारा जो विस्तारमे कहा वह सात भागमे चोसठ भाग चोडाईमे और छत्तीस भाग ऊँचाईमे करना । गला छ भाग-अडक (बडा गोला) बारह भागका, उसकेपर चद्रस आठ भागका और उपर की जाजरी (गोला) छ. भागकी करना । इस तरह ऊँचाईमें बत्तीस भाग जानना । अब उसके निकालेके भागको सुनो । ३४-३५-३६

षड्भाग ह्यामलसारि च निष्कास च अत श्रृणु ।
अंडकं द्वादशं भागं च सप्तमि चंद्रकोधिकम् ॥३७॥
षड्भिः रामलसारि च चतुर्दशोर्ध्वकलशासनम् ।
तपसा स्कंध सस्थाने अंडकौपर्यकादिषु ॥३८॥

હવે આમલસારાના વિસ્તાર-પહોળાઈના ભાગ કહે છે અડક નીકાળો (ચદ્રસની પટ્ટીથી) બાર ભાગનો ચદ્રસનો નિકાળો (જાજરીના ગોળાના પેટાથી) સાત ભાગનો, અને જાજરીનો નીકળો તેના કદથી છ ભાગનો ગણવો કળશાસન કળશને સ્થાપન કરવાની પહોળાઈના ચૌદ ભાગ ગણવા એ રીતે કુલ ચોસઠ ભાગ વિસ્તારના જાણવા સ્કધના બાધણાના કોણે તાપસના રૂપ કરવા અને અડકમા પ્રાસાદનો સુવર્ણ પુરુષ પર્યક-ઢોલીયો સાથે પધરાવવો (૯) ૩૭-૩૮

(૮) આમલસારાના પૃથક્ પૃથક્ વિભાગ જુદા જુદા ગ્રથોમા કહ્યા છે દીપાર્ણવમા ચૌદ ભાગ ઉચાઈમા ગળુ ત્રણ ભાગ અડક પાચ ભાગ ચદ્રસ અને જાજરી ત્રણ ત્રણ ભાગની એમ કુલ ચૌદ ભાગ ઉદય અને અઠ્ઠાવીશ ભાગ વિસ્તાર બીજા પ્રકારે ઉચાઈમા ચાર ભાગ કરી પોણા ભાગનુ ગળુ સવા ભાગનો અડક ચદ્રક અને જાજરી એકેક ભાગની કરી કુલ ૮ ભાગ વિસ્તારમાન જાણવુ

(૯) पाठान्तरे नवचन्द्राविलोकिन ।

अब आमलसाराके विस्तार-चौडाईके भाग कहते हैं। अंडक निकाला (चंद्रसकी पट्टीसे) बारह भागका निकाला (जांजरीके गोलेके पेटेसे) सात भागका, और जांजरीका निकाला उसके कंदसे छः भाग का रखना। कलशासन-कलशको स्थापन करनेकी चौडाईके चौदह भाग रखना। इस तरह कुल चौसठ भाग विस्तारके जानना। स्कंध के कोणेंपर तापसके रूप करना और अंडकमें प्रासादके सुवर्णपुरुष पर्यंकके साथ पधराना। ३७-३८

शिवेचेश्वररुपं तु ध्यानमूर्ति विचक्षणः।
शिखरकर्णे प्रस्थाप्यं जिनेकुर्याज्जिनेश्वरः ॥ ३९॥

શિખરના સ્કંધે–બાંધણાના ખુણે આમલસારાના ગળામાં શિવ-ઈશ્વરનું ધ્યાનમગ્ન સ્વરૂપ વિચક્ષણ શિલ્પી એ કરવું. પરંતુ જો જૈન પ્રાસાદ હોય તો જિનેશ્વરની બેઠી મૂર્તિ કરી મૂકવી.[૯] ૩૯.

शिखरके स्कंधपर बांधणेके कोनेपर आमलसाराके गलेमें शिव–ईश्वरका ध्यान मग्न स्वरूप विचक्षण शिल्पीको करना। लेकिन जो जैन प्रासाद हो तो जीनेश्वरकी बैठी मूर्ति कर रखना।[६] ३९

ध्वजादंडकास्थान-प्रासादपृष्ठि देशे तु दक्षिणे प्रतिरथके।
ध्वजाधारस्तुकर्तव्य ईशाने नैरुतेऽथवा ॥ ४० ॥

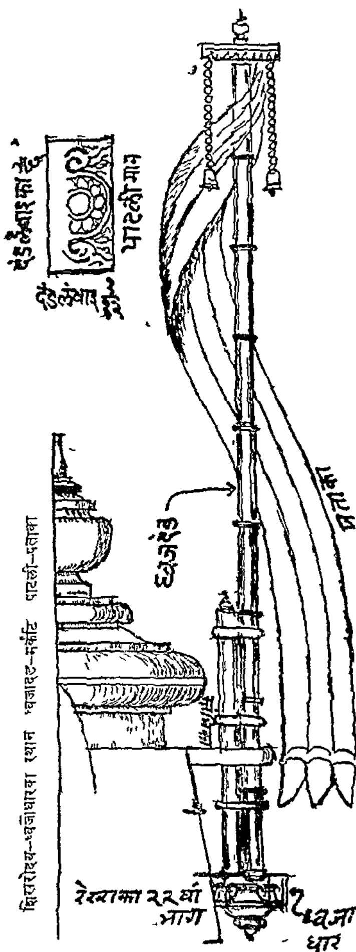
---

८. आमलसाराके पुथक् पृथक् विभाग भिन्न भिन्न ग्रंथोंमें है। दीपार्णव में चौदह भाग ऊँचाईमें गला तीन भाग, अँडक पाँच भाग, चन्द्रस और जांजरी तीन तीन भागकी इस तरह कुल चौदह भाग उदय और अठ्ठाईस भाग विस्तार, दूसरे प्रकारसे–ऊँचाई में चार भाग कर पौने भागका गला, सवा भागका अंडक चन्द्रस और जांजरी एक एक भागकी करना। उस तरह ८ विस्तारमान हैं।

(૯) મૂળ શિખરના આમલસારાના મધ્યગર્ભે જીભીરૂપે (કુંડ્યતોથી અલંકૃત કરેલી હોય છે.) પરંતુ પાછલા કાળમાં આમલસારના ચારે ગર્ભે યોગિનીના મુખો અને સ્કંધ પર ખુણે તાપસનાં રૂપો કરવાની પ્રથા પ્રવિષ્ટ થઈ હોય તેમ લાગે છે. ભદ્રે યોગિની મુખ કરવાનો કોઈ ગ્રંથમાં પાઠ નથી. ભારતના અન્ય પ્રદેશોના શિખરોમાં જીભીના સ્થાને જુના કામોમાં રૂપની આકૃતિ કરેલ જોવામાં આવે છે. ઉડીયા પ્રદેશમાં ઉભડક પગે બેઠેલ હાથ જોડતો પુરુષ જોવામાં આવે છે.

બીજી એક પ્રથા શિખરના બાંધણામાં છ આઠ દશ આંગુલનો બાંધણાનો પટ્ટો બહાર કાઢવાની પ્રથા શિલ્પીઓમાં બસોક વર્ષથી નવીન પેઠી છે. જૂના કોઈપણ કામમાં બાંધણાનો ઉપડતો પટ્ટો જોવામાં આવતો નથી. બારમી સદીના સોમનાથજીના પ્રાચીન મંદિરના શિખરને આવો પટ્ટાનો થર નરથર જેવો તેના અવશેષોમાં જોવા મળે છે.

९. मूल शिखरके आमलसाराके मध्य गर्भमें जीभी के रूपमें (कुडचलोसे अलंकृत की हुई होती है) परन्तु पीछले कालमें आमलसाराके चारों गर्भोंमें योगिनीके मुखों और स्कम्ध के पर



પ્રાસાદના શિખરને ધ્વજાદંડ રોપવાનુ સ્થાન–પાછલા ભાગમા જમણી તરફના પઢરે ધ્વજાધાર પૂર્વમુખના પ્રાસાદને નૈઋત્ય ખુણે કે પશ્ચિમ મુખના પ્રાસાદને ઈશાનકોણે રાખવો ૪૦

प्रासादके शिखरको ध्वजादंड रखनेका स्थान पिछले भागमे दाहिनी तरफ के पढरेपर ध्वजाधार पूर्वमुखके प्रासादको नैऋत्य कोनेमे या पश्चिम मुखके प्रासादको ईशानकोनेमे रखना । ४०

ध्वजाधार—स्तंभवेध स्थान प्रमाण—

रेखोर्ध्वे षष्टके भागे
सूत्रांशपाद वर्जितम् ।
ध्वजाधारस्तु कर्तव्या
दक्षिणे च प्रतिरथे ॥४१॥

પ્રાસાદના શિખરની મૂળ રેખાના ઉદય પાયચાથી બાધણા સુધીની ઊચાઈના છ ભાગ કરી તેમા ઉપરના છઠ્ઠા ભાગમા ચોથો ભાગ હીન કરી તેટલામા ભાગે બાધણાથી નીચે ધ્વજાધાર (મોટુ લાંબસુ કલાબો) શિખરની પાછળ જમણી તરફના પ્રતિરથમા કરવો આ ધ્વજા ધારને=સ્તંભવેધ–પણ કહે છે (પાછલા બસોક વર્ષમા ત્યા ધ્વજાપુરુષની મૂર્તિ કરવાની પ્રથા ગુજરાતમાં ચાલુ થઈ છે

शिखरोदय का ध्वजाका स्थान ध्वजादंड—मर्कटी=पाटली और पताका

પરંતુ ત્યાં લામસા જેવો ધ્વજાધર કરવો ૪૧.

प्रासादके शिखरकी मूलरेखाके उदय-पायचेसे स्कंध तककी ऊँचाईके छः भागकर उसमें उपरके छट्ठे भागमें चौथे भागको हीनकर, उतनेही भागमें स्कंधसे नीचे ध्वजा धार (बडा लामसा, कलाबा) शिखरके पीछे दाहिनी तरफके प्रतिरथमें करना। यह ध्वजाधारको=स्तम्भबेध भी कहते हैं। (पीछले करीब दोसौ बर्षमें यहाँ ध्वज/पुरुषकी मूर्ति करनेकी प्रथा गुजरातमें चालु हुई है, परंतु वहाँ लामसाके जैसा ध्वजाधार करना। ४१

प्रासादस्य पृष्ठभागे दक्षिणादिशिं चानुगे।
स्तंभवेधस्तु कर्तव्यों भित्तिश्च षष्टकांशकः॥४२॥
ध्वजावती स्तंभिका च चाष्टांश्रवा वृत्तास्तथा।
तदूर्ध्वेकलशं कुर्यात् वंश बंध प्रतिहस्तके॥४३॥

પ્રાસાદના શિખરના પાછલા ભાગમાં જમણા પ્રતિરથમાં સ્તંભવેધ (ધ્વજા દંડને ઉભા રાખવાનો લામસા જેવો કલાબો) કરવો તે પ્રાસાદની ભીતની જાડાઈના છઠ્ઠા ભાગ જેટલો કરવો. ધ્વજાદંડ સાથે ઉભી કરવાની સ્તંભિકા (ધ્વજાધારથી તે આમલસારના મથાળા સુધીની ઉંચાઈની) કરવી તે સ્તંભિકા અઠાંશ અથવા ગોળ (ધ્વજાદંડથી થોડી પાતળી) કરી તે ઉપર કળશ કરવો ધ્વજાદંડઅને તે સ્તંભિકાને મજબુત (ત્રાંબાના પાટાના) બંધો ગજે ગજે જડવા.[१०] ૪૨-૪૩.

कोनेमें तापसके रूपों करने की प्रथा प्रविष्ट हुई हो ऐसा लगता है। भद्रमें मुख करने का किंसी ग्रंथमें पाठ नहीं है।

भारतके अन्य प्रदेशोंके शिखरोंमें जीभीके स्थानपर पुराने कामोंसे रूपकी आकृति की हुई दिखती है। उडीया प्रदेशमें खड़े पाँव पर बैठा हुआ हाथ जोडना पुरुष देखनेमें आता है।

दूसरी एक प्रथा शिखरके स्कंधमें छः आठ दस अँगुलके स्कंधके पट्टेको बाहर निकालनेकी प्रथा शिल्पियोंमें करीव दोसों वर्षोसे प्रविष्ठ हुई है। पुराने कोई भी काममें स्कंधका उठता पट्टा दिखता नहीं है। बारहवीं सदीके सोमनाथजीके प्राचीन मंदिरके शिखरको ऐसा पट्टा-थर नरथर जैसा उसके अवशेषोंसे देखनेको मिलता है।

(૧૦) ધ્વજાદંડ સ્થાપનની પ્રાચીન પ્રથા શ્લોક ૪૧ થી ૪૩માં બતાવ્યા પ્રમાણે સ્કંધ બાંધણા નીચે ધ્વજાધાર સ્તંભવેધ કે કલાબા કરી ત્યાંથી ધ્વજાદંડ ઊભો કરવામાં આવે છે. વળી બાંધણાના ભાગમાં પણ પાષાણનો નિકાળો રાખી તેમાં કાણું-(હોલ) પાડી ધ્વજાદંડને પરોવી સ્થિર મજબૂત કરવામાં આવે છે તે સ્તંભવેધ કલાબામાં આંગળ અરધા આંગુલ જેટલું નીચે દંડ ઉતારી સ્થિર કરવો. અને દંડ સાથે સ્તંભિકા જરા પાતળી આમલસારા જેટલી ઊંચી બાંધવી.

બસોક વર્ષોથી ગુજરાતની વર્તમાન પ્રથા આમલસારામાં સાલ ખોદી ત્યાંથી ધ્વજાદંડ ઊભો કરવાથી ધ્વજાદંડની લંબાઈના માનથી એ સાલ જેટલો દંડનો ભાગ વધુ રાખવો

प्रासादके शिखरके पीछले भागमे दाहिने प्रतिरथमे स्तम्भवेध, (ध्वजा दडको खडा रखनेका लामसा जेसा कलापा) करना। उसको प्रासादकी दिवारके मोटेपनके छट्ठे भागके बराबर करना। ध्वजादडके साथ खडी करनेकी स्तभिका (ध्वजाधारसे आमलसाराके शीर्षक तककी ऊंचाईकी) करना। उसको अठास अथवा गोल (ध्वजादडसे थोडी पतली) कर उसके उपर कलश करना। ध्वजदड और स्तम्भिकाको मजबूत (ताँबेके पाटेकी बध गज गज पर जड देना।[१०] ४२-४३

પડે છે અને તે ઉચો જણાય છે પ્રાચીન પ્રથા બાધણાથી બહાર અને બાધણાથી નીચે ધ્વજાધાર કરીને તે પર દડ ઊભો કરવાથી તે પ્રમાણસર દડ ઉંચો દેખાય છે રાજસ્થાનના સોમપુરા શિલ્પીઓ ઘણાખરા આ જૂની પ્રથાને અનુસરે છે

આમલસારામા ધ્વજાદડને દાખલ કરવો તે વેધ છે

ઉપર કહ્યો તે ધ્વજાધારને બદલે ધ્વજા ધારણ કરતો પુરુષ શિખરની પાછળ કરવામા આવે છે આ પ્રથા માટે મતભેદ છે કેટલાક જૂના કામમા જોવામા આવે છે પરતુ શાસ્ત્ર પાઠ ધ્વજાધાર લામસાનો અર્થ વધુ બધ બેસે છે

ધ્વજાદડ સાથે ઊભી કરવામા આવતી દડીકા માટે વાદવિવાદ છે શાસ્ત્રાધારને વધુ માન આપવુ તે યોગ્ય છે

(१०) ध्वजादड स्थापनकी प्राचीन प्रथा श्लोक ४१ से ४३ मे जो बताया है। उसी अनुसार स्कधके नीचे ध्वजाधार स्तभवेध या कलाबा करके वहाँसे ध्वजादण्डको खडा किया जाता है, और स्कधके भागमें भी पाषाणका निकाला रखकर उसमें छिद्र रखके ध्वजा दडको पिरोकर स्थिर-मजबूत किया जाता है, वह स्तभवेध-कलावेमें अगुल अर्ध अगुल जितना नीचे उतारकर दडको स्थिर करना। और दडके साथ स्तभिका जरा पतली आमलसाराके बराबर ऊची बाँधना।

करीब दो सौ वर्षासे गुजरातकी वर्तमान प्रथा आमलसारेमे सालको गाडकर वहाँसे ध्वजा दडको खड़ा करनेसे ध्वजा दडकी लम्बाईके मानसे उस सालके बराबर दडका भाग ज्यादा रखना पडता हैं। और वह ऊँचा दिखता है। प्राचीन प्रथा स्कधसे बाहर और स्कधसे नीचे ध्वजाधार कर उसके उपर खड़ा करनेसे वह प्रमाणसर ऊँचा दिखता है। राजस्थानके सोमपुरा शिल्पीयो बहुत करके पुरानी प्रथाको अनुसरते हैं।

आमलसारेमे ध्वजादडको दाखिल करना यह वेध है।

उपरोक्त ध्वजाधारके बदले ध्वजाधारी पुरुष शिखरके पीछे किया जाता है। इस प्रथाके लिये मतभेद है। कई पुराने काममे दिखाता है। परतु शास्त्र पाठ ध्वजाधार लामसाका अर्थ ज्यादा बैठता है।

ध्वजा दंडके साथ खडी की जाती दडिकाके लिये वाद विवाद है। शास्त्राधारको ज्यादा मान देना चाहिये।

अथकलश–यथाकलशस्य यत् द्रव्यं प्रासादाष्टमांशकम्[११] ।
विस्तारंकृते प्राज्ञ उदयं च सार्द्ध संगुणम् ॥४४॥
ततो नवधा विभक्तं च पडघीभागमेवच ।
अण्डकं च त्रयो भाग ग्रीवायां भागएवच ॥४५॥
पनडी कंकणीयुक्तं भागमेकं च कारयेत् ।
अंडकोच्च त्रयो भागे भागैकं मस्तको परि ॥४६॥

જે દ્રવ્યનો પ્રાસાદ હોય તે દ્રવ્ય (પાષાણ કે ધાતુ કે કાષ્ટ)નો કળશ, પ્રાસાદ જેટલો રેખાયે હોય તેના આઠમા ભાગે પહોળો કરવો અને પહોળાઇથી દોઢો ઉંચો ડાહ્યા શિલ્પીએ કરવો નીચેની પડઘી પીઠ એક ભાગની; અંડક ત્રણ ભાગનો; ગળું છજીને કણી એકેક કુલ બે ભાગની અને દોડલો=બીજપુર ત્રણ ભાગ ઉંચો અને તે મથાળે એક ભાગનો પહોળો ડોડલો કરવો એ રીતે નવ ભાગ ઉંચાઇના જાણવા. ૪૪–૪૫–૪૬.

जिस द्रव्यका प्रासाद हो उस द्रव्य (पाषाण या धातु या काष्ट)' का कलश, प्रासादको वह जितना रेखाके पर हो उसके आठवें भागमें चौडा करना । और चौडाईसे डेढ़गुना ऊँचा करना । नीचेकी पडदा पीठ एक भागकी, अंडक तीन भागका, गला, छजी और कणी एक एक कुल दो भागकी और दोडला = वीजपुर, तीन भाग ऊँचा और उस शीर्षकपर एक भागका चौडा दोडला करना । इस तरह नौ भाग ऊँचाईके जानना । ४४–४५–४६

---

(૧૧)પ્રાસાદની રેખાના અષ્ટમાંશ કળશ એ કનિષ્ઠમાન કહેલ છે. તેનો સોળમો ભાગ વધારવાથી શ્રેષ્ઠમાન અને બત્રીશમો ભાગ વધારવાથી મધ્યમાન કળશની પહોળાઇના જાણવા.

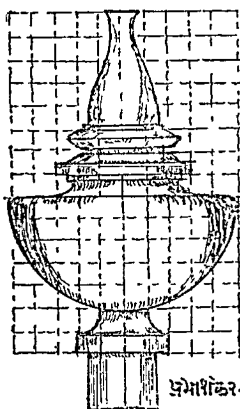
વૈરાટ, દ્રાવિડ, ભૂમિજ, વિમાન અને વલ્લભાદિ જાતિના પ્રાસાદોને પ્રાસાદના છટ્ઠા ભાગે વિસ્તારનો કળશ કહ્યો છે.

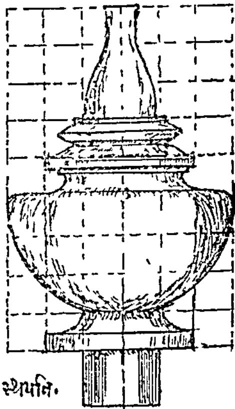
કળશનાં બીજા બે પ્રમાણો કહ્યાં છે. શિખરના પાયચાની પહોળાઇના પાંચમા ભાગે કળશ પહોળો કરવાનું કહ્યું છે તેમજ આમલસારાના સોળ ભાગ કરી તેના પાંચમા ભાગે કળશ પહોળો રાખવાનું ત્રીજું પ્રમાણ છે.

(११) प्रासादको रेखाके अष्टमांश कलश यह कनिष्ठमान कहा है । उसकें सोलहवे भागका बढ़ानेसे श्रेष्ठमान और बत्तीसवाँ भाग बढ़ानेसे मध्यमान कलशकी चौडाईके जानना ।

वैराट, द्रविड, भूमिज, विमान और वल्लभादि जातिके प्रासादोंको प्रासादके छठ्ठे भागमें विस्तारका कलश कहा है । कलशके दूसरे दो प्रमाण कहे हैं । शिखरके पायचेकी चौडाईके पाँचवे भागमें कलशको चौडा रखनेके लिये कहा है । और आमलसारेके विस्तारके सोलह भाग कर उसके पाँचवे भागमें कलशको चौड़ा रखनेका तीसरा प्रमाण है ।

ग्रीवायाश्चोभयेत्प्राज्ञ· द्विभागं च विचक्षणम् ।
पद्मअंडकं पनडी चैव चतुर्भागानि मध्यत· ॥४७॥
अग्रेकांगमूले द्वौ चहग्री वेदांश कर्णिके ।
श्रेष्ठ च सव श्रेष्ठाना सुवर्णकलशं ध्वजम् ॥४८॥





विभाग १५ × १०   विभाग ९ × ६

હવે કળશના વિસ્તાર ભાગ કહે છે નીચેની પડઘી પીઠ ચાર ભાગ પહોળી તેનુ ગળુ બે ભાગનુ વિચક્ષણ રીતે ડાહ્યા શિલ્પીએ કરવા મોટો અડક છ ભાગ પહોળો છાજલી ચાર ભાગની અને કણી ત્રણ ભાગ વિસ્તારની બીજપુર ડોડલો અગ્રે એક ભાગ અને નીચે મૂળમા બે ભાગ કણી ત્રણ ભાગ અને છાજલી ચાર ભાગની કરવી શ્રેષ્ઠમા શ્રેષ્ઠ અને સર્વશ્રેષ્ઠ સુવર્ણનો કળશ ધ્વજદંડ પ્રાસાદને જાણવો ૪૭-૪૮

अब कलशके विस्तार भाग कहते हैं । नीचेकी पीठ चार भाग चौडी उसका गला दो भागका विचक्षण रीतसे सयाने शिल्पीको करना । बडा अडक छ भाग चौडा-छाजली चार भागकी और कणी तीन भाग विस्तारकी-बीजपुर डोडला अग्रे एक भाग और नीचे मूलमें दो भाग-कणी तीन भाग और छाजली चार भागकी करना । श्रेष्ठमें श्रेष्ठ और सर्वश्रेष्ठ सुवर्णके कलशको ध्वजदंड प्रासादको जानना । ४७-४८

अथ प्रासादपुरुषः—अथातः संप्रवक्ष्यामि पुरुषस्य प्रवेशनम् ।
न्यसेद् देवालयप्येवं जीव स्थान फलं भवेत् ॥ ४९ ॥
स्कंधोर्ध्वं तत स्थाप्य ताम्र पर्यंक संस्थिताम् ।
शयनं चापि निर्दिष्टं पद्मं वै दक्षिण करे ॥ ५० ॥
त्रिपताक[12] करं वामे कार्ये हृदि संस्थितम् ।
धृतपात्रं स्यो परि पर्यंके सुवर्णपुरुषे ॥ ५१ ॥
प्रमाणं तस्य वक्ष्यामि अर्द्धांगुले चैक हस्तकम् ।
अर्धाङ्गुला भवेद् वृद्धि र्यावत्पंचाश हस्तकम् ॥ ५२ ॥

હવે હું સુવર્ણના પ્રાસાદ પુરુષ જે જીવ સ્થાન રૂપ છે તે આમલ સારામાં પધરાવવાનો વિધિ જે ફળ રૂપ છે તે કહું છું. બાંધણાના મથાળે આમલસારામાં ત્રાંબાકે ચાંદીને ઢોલીયો (રેશમના દોરાની પાટી કરી) ગાદલી ઓશીકું રેશમનું કરી તે પર સુવર્ણનો પ્રાસાદ પુરૂષ જેના જમણા હાથમાં કમળ અને ડાબો હાથ ત્રણ શિખાવાળી પતાકા ધારણ કરેલ હાથ હૃદયે છાતીએ રાખેલો હોય તેવી આકૃતિવાળી પધરાવવી (સુવરાવવી.) આમલસારમાં ત્રાંબાનો ઘી ભરેલ કળશ પાત્ર ઉપર ઢોલીઓ મૂકી તે પર સુવર્ણની પ્રાસાદ પુરુષની મૂર્તિ સંપૂટ રૂપે રાખી સુવરાવવી. તેનું પ્રમાણ કહું છું. પ્રત્યેક ગજે અર્ધા અર્ધા આંગળની તેમ પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદનું પ્રમાણ પ્રાસાદ પુરુષનું જાણવું.[13] ૪૯-૫૦-૫૧-૫૨.

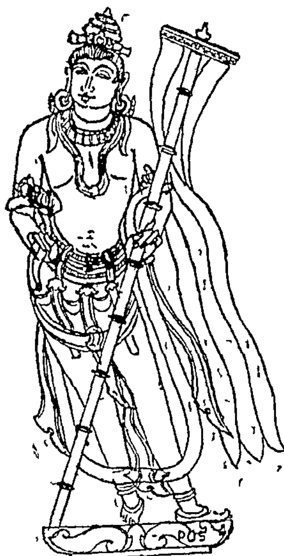
---

(૧૨) સુવર્ણ પ્રાસાદ પુરુષના ડાબા હાથમાં ત્રણ શીર્ષકવાળી પતાકા દેવાનું કહ્યું છે અને તે પ્રથા શિખરમાં ધ્વજાપુરુષનું પણ કરે છે. ત્રિપતાકનો અર્થ તેવી ધ્વજાને બદલે હસ્તમુદ્રા એમ કેટલાક માને છે. ધ્વજાને બદલે ત્રિપતાક હસ્તમુદ્રા કરવાનું કહે છે.

(१२) सुवर्ण प्रासाद पुरुषके बायें हाथमें तीन शीर्षकवाली पताका देनेके लिये कहा है। और यह प्रथा शिखरमें ध्वजा पुरुष भी करते है। त्रिपताकका अर्थ वैसी ध्वजाके बदले हस्तमुद्रा कई लोग करते हैं। ध्वजाके बदले त्रिपताक हस्तमुद्रा कहते है।

(૧૩) આમલસારમાં મધ્યમાં ઉંડું ગોળ સાલ ખોદી તેમાં પ્રથમ ગાયનું ઘી ભરેલ શેર સવાશેરના કળશ ઢાંકણું બંધ કરી કપડું બાંધી મૂકવો તે પર પાતળું આરસનું પાટિયું ઢાંકી તેના પર સુવર્ણ પુરૂષની ગાદીવાળો ઢોલીઓ ચાંદીનો મૂકી તેમાં પ્રાસાદ પુરુષની મૂર્તિ સુવરાવવી તે પર બે ત્રણ કે ચાર આંગળ જેટલી ખાલી જગ્યા રહે તેમ આરસનું પાતળું પાટિયું સંપૂટની જેમ ઢાંકી દેવું. તે પછી પ્રતિષ્ઠા સમયે કળશ સ્થાપન કરવાને કળશના સાલ જેટલી ઉંડાઈ રાખી આમલસારાનું વચલું સાલ વધારાનું પૂરી દેવું. સુવર્ણનો પ્રાસાદ પુરુષ દબાય નહીં તેમ ઢાંકવું સંપૂટની જેમ ખાલી જગ્યા રાખી સુવર્ણના પ્રાસાદ પુરુષને પધરાવવો સુવર્ણપુરૂષને પ્રાસાદમાં છાતીયા ઉપર શિખરીના થરોમાં કે શુકનાશ ઉપર પધરાવી શકાય એમ કહ્યું છે.

अब मैं सुवर्णके-प्रासादपुरुष जीवस्थानरूप आमलसारेमे पधरानेका विधि जो फलरूप है, वह कहता हूँ। स्कधके शीर्षकपर आमलसारेमे तावे या रूपेके पर्यंकपर (रेशमके धागेकी पाटी करना।) बिछौना और तकिया कर सुवर्णका प्रासाद-पुरुष जिसके दाहिने हाथमे कमल और बायाँ हाथ तीन शिखावाली पताका लिया हुआ हाथ हृदयपर रखा हुआ हो, वैसी आकृतिको पधराकर सपुट रूप रखके (सुलाकर) आमलसारेमे त्रावेके घीके भरे हुए कलश पात्रके उपर पर्यंकको रखकर उसके उपर सुवर्णकी, प्रासाद पुरुषकी मूर्ति को सपूट जैसे रखके सुलाना। उसका प्रमाण कहता हूँ। प्रत्येक गजपर आधे आधे अगुलका और पचास हाथ तकका प्रासादका प्रमाण-प्रासाद पुरुपका जानना।[१३]



प्रासाद सुवर्णपुरुष

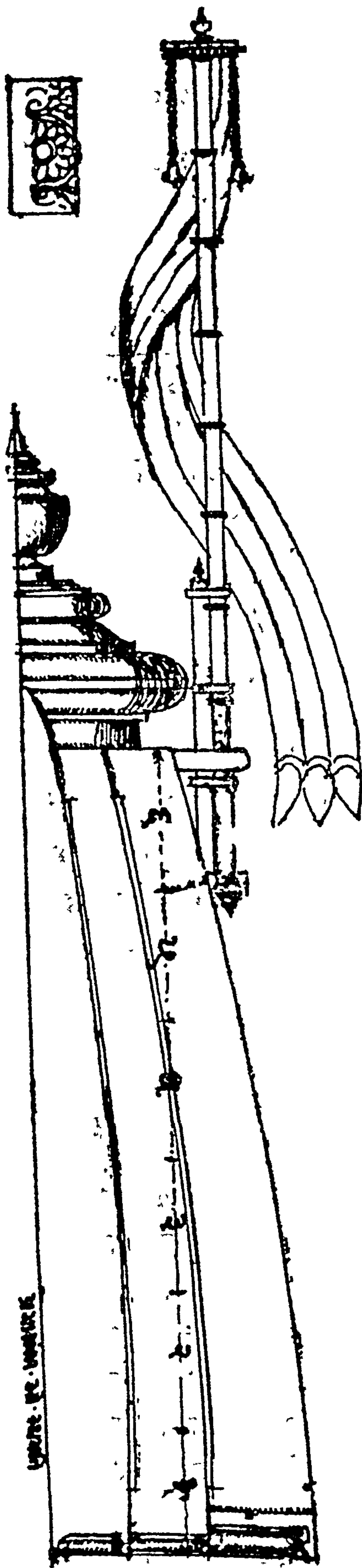
सुवण प्रासाद पुरुष

अथध्वजदंड—

तथाचानन्तरं वक्ष्ये दंडमान अत' श्रृणु।
एक हस्ते तु प्रासादे दंडपादुन
मंद्दगुलं ॥५३॥
अर्धाङ्गुल भवेद् वृद्धि पंचविंशति हस्तके।
अतोर्धपादवृद्धिप्रयत्नेन शतार्द्धमानके॥५४॥

હવે હુ દંડમાન કહુ છુ તે સાભળો. એક હાથના પ્રાસાદને પોણુ આગળનો જાડો ધ્વજદંડ કરવો, એથી પચ્ચીસ હાથ સુધીનાને પ્રત્યેક હાથે અર્ધા

(१३) आमलसारेमे मध्यमे गहरा, गोलमालको गढकर उसमे पथम गायके घीसे भरे हुए शेर शवाशेरके कलश ढकना बधकर कपडा बाँधकर रखना। उसके पर पतली आरसकी पट्टी ढँककर उसके पर सुवर्ण पुरुषकी गद्दीवाला चाँदीका पर्यंक रखकर उसमे प्रासाद पुरुषकी मूर्ति को सुलाना। उसकेउपर दो तीन या चार अगुल जितनी खाली जगह रहे इस तरह आरसकी पतली पट्टी सपूटकी तरह ढँकना। उसके बाद प्रतिष्ठाके समय कलश स्थापन करनेके लिये कलशके सालके बराबर गहराई रखकर आमलसारके निचके सालको पूर देना। सुवर्णका प्रासाद पुरुष दब न जाय इस तरह ढँकना। सपूटकी तरह खाली जगह रखना। सुवर्णके प्रासाद पुरुषको पधरानेके स्थान प्रासादमे छतीयाके उपर शिखरी के घरोमे शुकनासके उपर ऐसा भी कहा है


शिखरपर ध्वजादंड स्थापनका विभाग ओर ध्वजादंड मर्कटी= पाटली ओर पताका-ध्वजा

અર્ધા આંગુલની વૃદ્ધિ કરવી. તેથી વધુ પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક ગજે પાપા ¼ આંગળની વૃદ્ધિ કરતા જવી. હે ઋષિરાજ, એ રીતે ધ્વજાદંડની જાડાઇ કહી. હવે ધ્વજાદંડની લંબાઇનું ઉંચાઇનું માન સાંભળો. ૫૩–૫૪.

अब मैं दंडमान कहता हूँ, उसे सुनो । एक हाथके प्रासादको पौने अंगुलका मोटा ध्वजदण्ड करना । दोसे पच्चीस हाथ तकके प्रत्येक हाथपर आधे आधे अंगुलकी वृद्धि करना । उससे ज्यादा पचास हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक गजपर पा पा ¼ अंगुलकी वृद्धि करते जाना । हे ऋपिराज, इस तरह ध्वजा-दण्डका मोटापन कहा । अब ध्वजादण्डकी लम्बाईका-ऊँचाई का मान सुनो । ५३–५४

पीडंच कथितं वत्स उदयंच अतः शृणु ।
प्रासादकोण मर्यादा सप्त हस्ता न मध्यतः ॥५५॥
गर्भमाने च कर्तव्यं हस्तस्यात्पंच विंशतिः ।
रेखामानं च कर्तव्यं यावत्पंचाश हस्तकम् ॥५६॥

હવે ધ્વજાદંડની લંબાઇનું માન પ્રમાણ કહું છું. એકથી સાત સુધીના પ્રાસાદને બહાર રેખાયે હોય તેટલો દંડ લાંબો રાખવો. આઠથી પચ્ચીશ હાથના પ્રાસાદોને ગભારાના માન જેટલો અને છવ્વીશથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદોને શિખરની રેખા= પાયચાના વિસ્તાર જેટલો ધ્વજદંડ લાંબો રાખવો. ૫૫–૫૬.

अव ध्वजादण्डकी लम्वाईका मान प्रमाण कहता हूँ । एकसे सात हाथ तकके प्रासादको बाहर रेखापर हो उतना दण्ड लम्बा रखना । आठसे पच्चीस हाथके प्रासादोंको गर्भगृहके मानके बरावर और छव्वीससे पचास हाथ तकके प्रासादोंको शिखरकी रेखा-पायचे विस्तारके बरावर ध्वजदण्ड लम्बा रखना । ५५–५६

अष्टमाशयदाहीनं कन्यसं शुभ लक्षणम् ।
ज्येष्ठ तत्प्रायेत् दंड अष्टमाश तथाधिकम् ॥५७॥

આવેલ માનથી આઠમો ભાગ હીન કરવાથી શુભ એવુ કનિષ્ઠમાન જાણુવુ અને જે આઠમો ભાગ વધારવાથી જ્યેષ્ઠમાન દડનુ જાણુવુ [૧૪]

आये हुए मानसे आठवॉ भाग हीन करनेसे शुभ ऐसा कनिष्ठमान जानना। और जो आठवॉ भाग वढाया जाय तो ज्येष्ठमान दण्डका जानना।[१४] ५७

(૧૪) દીપાર્ણવ મા ધ્વજાદડના પાચ જુદા જુદા પ્રમાણો આપેલા છે ધ્વજાદડની લબાઈના વિવિધ પ્રમાણો કહે છે ૧ પ્રાસાદની જઘાએ વિસ્તાર જેટલો ૨ ચોકીના પદના બે સ્તભના વિસ્તારના ગાળા જેટલો ૩ ગભગૃહ જેટલો ૪ રેખાયે હોય તેટલો ૫ પ્રાસાદના શિખરના પાયચાના જેટલો ધ્વજદડ લાબો કરવો એ પાચ પ્રકારના જુદા જુદા મત મતાતરો મે (વિશ્વકર્માએ) કહ્યા છે

प्रासादकटिविस्तार चतुष्कि स्तम्भ विस्तरात् ।
गर्भभित्ति सम दैर्घ्य क्वचित् कर्णस्य विस्तरम् ॥९२॥
विभक्तं चैव प्रासादे शिखर विस्तृते समम् ।
ध्वजवशस्य दीर्घत्व मया प्रोक्त मतान्तरे ॥९३॥

१४ ध्वजादण्डकी लम्बाईके भिन्न भिन्न प्रमाण-दीपार्णवमें ध्वजादण्ड के कहे है। १ प्रासादकी जघाके पर विस्तारके बरावर २ चोकीके पदके दो स्तम्भ के विस्तारके अतरके बरावर गर्भगृहके बरावर ४ रेखाके पर जितना हो उतना ५ प्रासाद के शिखरके पायचेके बरावर ध्वजदण्ड लम्बा करना। ये पाच प्रकारके भिन्न भिन्न मतमतातर मैने (विश्वकर्माने) कहा हैं।

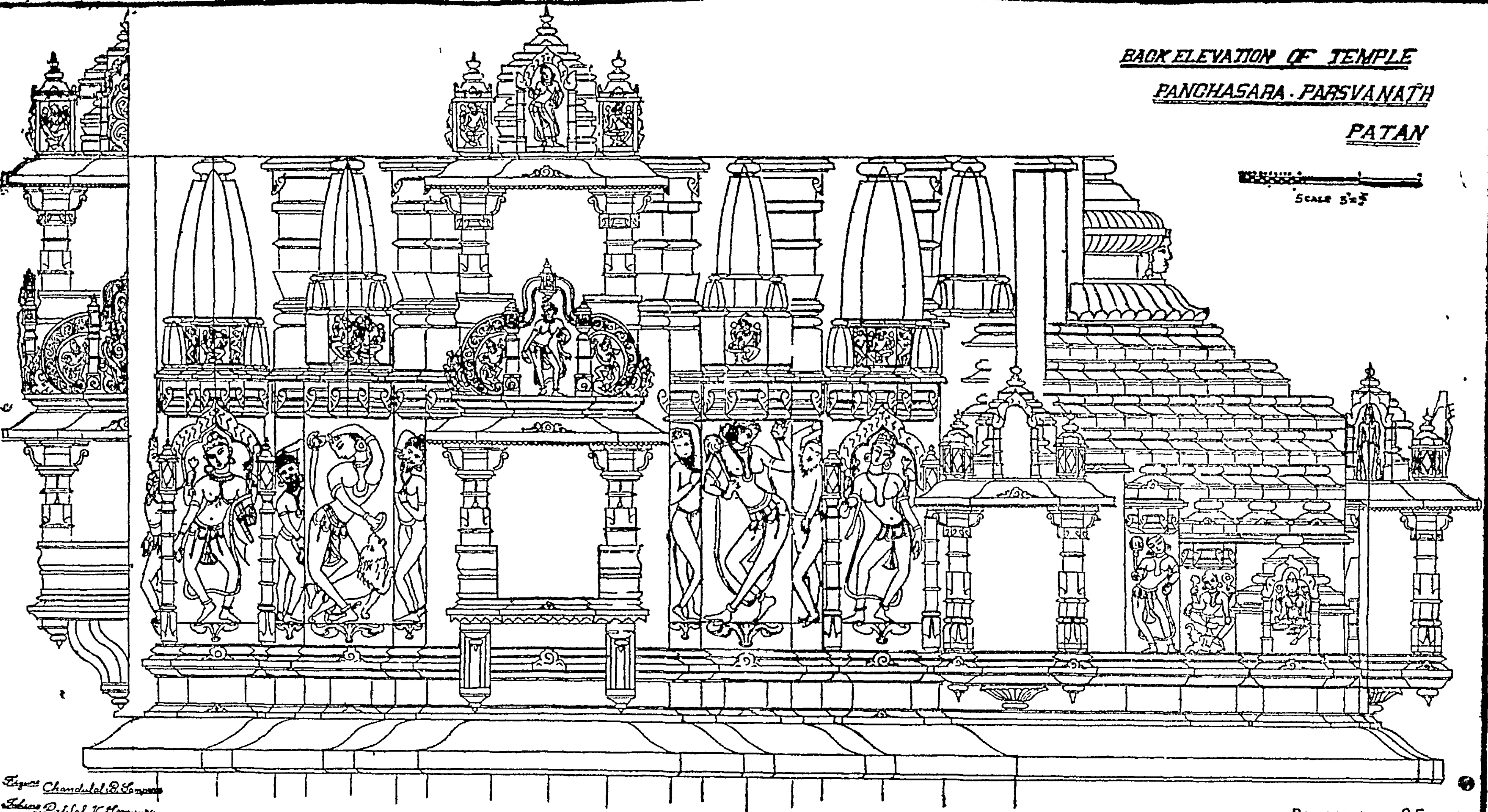
दडकार्यस्तृतीयाशे शिलान्त कलशान्तकम् ।
मध्यश्चाष्टाशहीनोऽसौ ज्येष्ठ पादोन कन्यस ॥ अपराजित सूत्र

નીચે ખરાથી ઈંડા-કળશ સુધીની ઊચાઈના ત્રીજા ભાગના જેટલો લાબો ધ્વજદડ જ્યેષ્ઠ માનનો જાણુવો તેમાથી આઠમો ભાગ હીન કરે તો મધ્યમાન અને ચોથો ભાગ હીન કરે તો કનિષ્ઠમાન દડનુ જાણુવુ બીજા પણુ પ્રમાણો જુદા જુદા ગ્રથોમા કહ્યા છે

नीचे खरसे अण्डे (कलश) तककी ऊँचाई के तीसरे भाग के बरावर लम्बा ध्वजादण्ड ज्येष्ठमानका जानना। उसमेसे आठवाँ भाग हीन करे तो मध्यमान और चौथा भाग हीन करे तो कनिष्ठमान दण्डका जानना। दूसरे भी प्रमाण भिन्न भिन्न ग्रथोमे है। १ प्रासादरेखा के पर हो इतना ध्वजादण्ड लम्बा, वह ज्येष्ठमान उसका दसवाँ भाग हीन करे तो मध्यमान और जो पाँचवा भाग हीन करे तो कनिष्ठमान जानना। (२) शिखरको पायचेके बरावर ध्वजादड कनिष्ठमान का जानना। उसमे बारहवाँ भाग वढानेसे मध्यमान और छठ्ठा भाग बढानेसे ज्येष्ठमान जानना।

(૧) પ્રાસાદ રેખાયે હોય તેટલો ધ્વજાદડ લાબો તે જ્યેષ્ઠમાન-તેનો દશમો ભાગ હીન કરે તો મધ્યમાન અને જે પાચમો ભાગ હીન કરે તો કનિષ્ઠ માન જાણુવુ

(૨) શિખરના પાયચા જેટલો ધ્વજાદડ કનીષ્ઠ માનનો જાણવો તેમા બારમો ભાગ વધારવાથી મધ્યમાન અને છઠ્ઠો ભાગ વધારવાથી જ્યેષ્ઠ માન જાણુવુ



छाद्योर्ध्व शिखर जंघा देवस्वरुप और भद्रमें अलंकृत गवाक्ष सन्मुख और पक्षदर्शन गवाक्ष और संवरणा

तथा पंचप्रमाण तु शृणुत्वेकाग्रतो मुनि ।
समपर्वे यदादड तत्र शक्तिमय प्रभु ॥५८॥
समं च विपमं प्रोक्तं शुभतेद्भवनेद्वयं ॥

હે મુનિ ! હવે તમે પાચ પ્રમાણુ એકાગ્રતાથી સાભળો બેકી પર્વ (ગાળા) વાળો ધ્વજાદંડ તેમ શક્તિ દેવી ઉમીયા અને શિવને કરવો એકી અને બેકી પર્વના એમ બેઉ પ્રકારના દંડો રાજભવનને વિશે કરવાનુ કહ્યું છે ૫૮

हेमुनि, अब तुम पाँच प्रमाण एकाग्रतासे सुनो । बेकी पर्व (गाला) वाला ध्वजादण्ड तन्त्र शक्ति देवी उमिया और शिवको करना । सम और विपमपर्वके इस तरहके दोनों प्रकारके दण्ड राजभवनके बारेमे करनेके लिये कहा है । ५९

वैक्षोवाच—कथंदंड समुत्पन्ना कथ पर्वप्रमाणत ।
कथ शिवोमया प्रोक्ता कथं शक्ति विनिर्दिशेत् ॥५९॥

वैक्ष्य કહે છે–દંડ કેવી રીતે ઉત્પન્ન થયો તેના પર્વનુ પ્રમાણુ શિવે ઉમિયાજીને કહેલું તે શક્તિના દંડના પર્વનુ મને કહો ૫૯

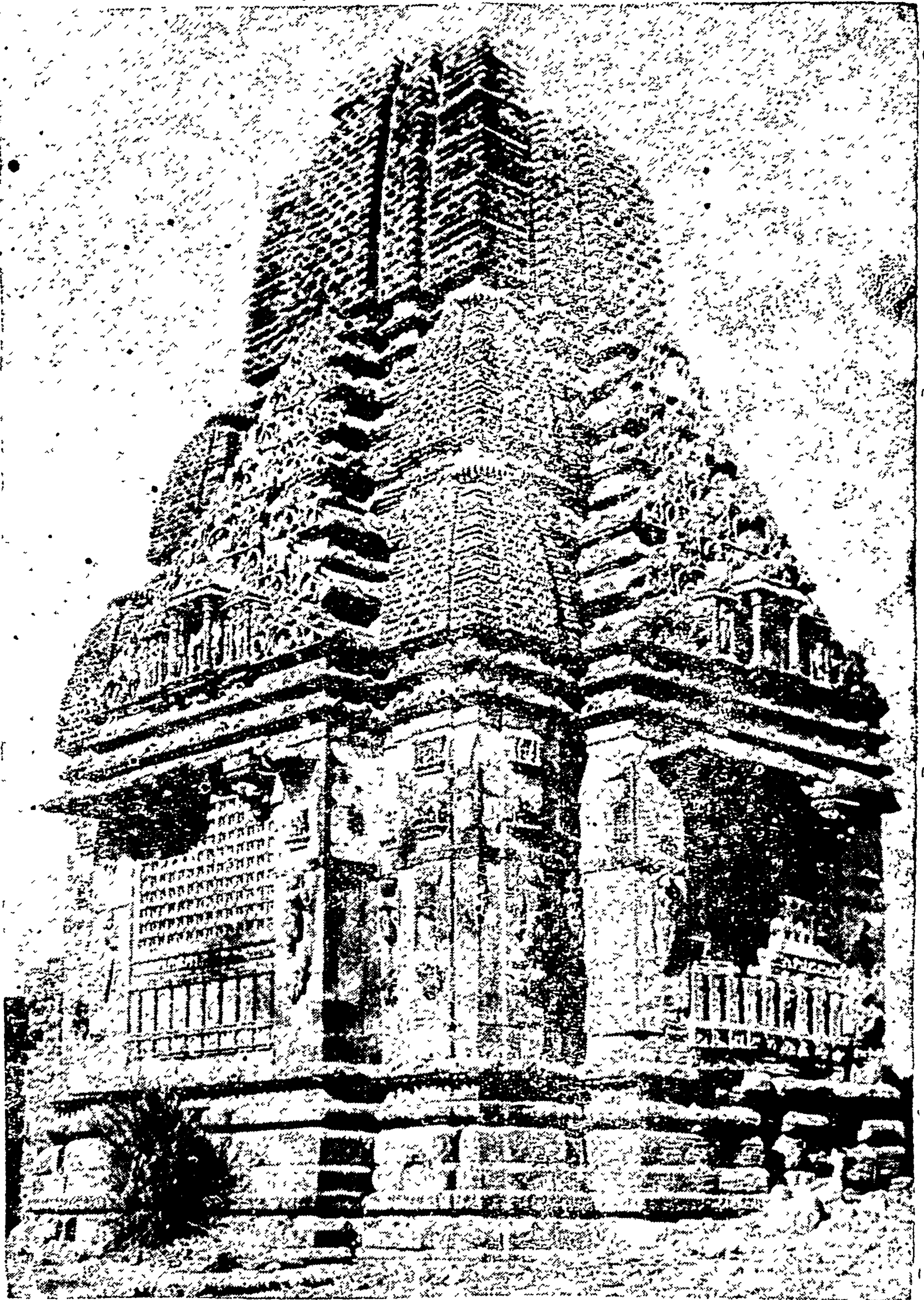
वैद्य कहते है । दंड कैसे उत्पन्न हुआ ? उसके पर्वका प्रमाण शिवने उमियाजीको कहा था वह शक्तिके दंडका पर्वका प्रमाण मुझे कहो । ५९

श्री विश्वकर्मा उवाच—

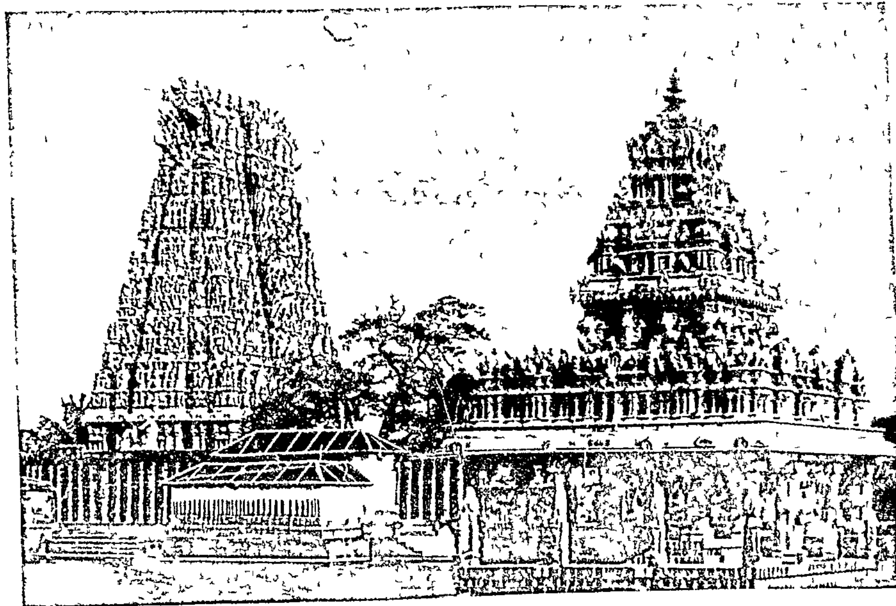
कृत्वा योगेश्वरी पूजा दंड दारव संश्रये ।
महामहोत्सवार्थेन शिवशक्ति समागतः ॥६०॥
चतुपष्टि योगिन्या दंड हस्ते समागत् ।
नकुलिशाद्यो च योगिन्यां दडकलशमुत्तमम् ॥६१॥
कृत्वा प्रासादमयी पूजा दडकलशं दीयते ।
पुनयगिरि समुत्पन्नो दंड वंशमयोत्तमा ॥६२॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે દેવદારુવનમા આવીને રહેલા શિવ શક્તિની જોગેશ્વરી પૂજા કરવા મહામહોત્સાહ કરવા માટે ચોસઠ ચોગિનીઓ હાથમા દંડ લઈને તથા નકુલેશાદિ દેવો અને ચોગિન્યાદિ ઉત્તમ દંડ કળશ લઈને આવ્યા પ્રાસાદની અર્ચના કરી ને દંડ અને કળશ ચડાવ્યા પુનયગિરિમા ઉત્પન્ન થયેલા વાસમાંથી બનાવેલ ઉત્તમ એવા દંડની ઉત્પત્તિ થઈ ૬૦–૬૧–૬૨

श्री विश्वकर्मा कहते है । देवदारुवनमे आकर बसे हुए शिवशक्तिकी जोगेश्वरी पूजा करनेके लिये, महामहोत्साह करनेके लिये चौसठ योगिनियाँ हाथमे दण्ड लेकर तथा नकुलेशादि देवों और योगिन्यादि उत्तम दण्ड कलश लेकर



नवमी–दशमी शताव्दीका छजा विहीन (कच्छ) केशकोटा का सर्वतोभद्र शिवप्रासाद



द्रविड शिखरों के दो प्रकार–गोपुरम् और शिखर

आये । प्रासादकी रचना कर दण्ड और कलश चढ़ाये । पुनयगिरिमें उत्पन्न हुये बाँसमें बनाये हुए उत्तम ऐसे दण्डकी उत्पत्ति हुई । ६०-६१-६२

तस्यार्धे पर्वमादाय विषमक्रमानोत्तमा ।
अधोमुख शिवदंड सन्मुखं शक्तिमेव च ॥ ६३ ॥
मध्यपर्व भवेज्ज़ेष्ठं अधःउर्ध्वं च कन्यस ।
वंशा न क्रम भवैर्त च समपर्व शक्तिमार्चित ॥ ६४ ॥

ભાવાર્થ—પહેલા બે પદનો ત્રણ પ્રકારે અર્થ ઘટાવી શકાય. (૧) તેનાથી અર્ધમાં પર્વ દંડમાં ક્રમથી વિષમ કરવા તે જ્યેષ્ઠ (૨) તેના ઉપરના પર્વ જો વિષમક્રમથી હોય તો જ્યેષ્ઠ (૩) તેમાંથી અર્ધા વિષમ પર્વને ક્રમમી ગ્રહણુ કરવા તે ઉત્તમ જ્યેષ્ઠ શક્તિની સામે શિવદંડ અધોમુખ ઊભો કરવો તે અધો મુખ એટલે વૃક્ષનું થડ મૂળ ઉપર અને ટોચનો ભાગ નીચે રાખી ઊભો કરવો. શક્તિનો દંડ તેથી ઊલટી રીતે વૃક્ષકાષ્ટનો દંડ ઊભો કરવો એટલે વૃક્ષકાષ્ટનું થડમૂળ નીચે અને ટોચનો ભાગ ઊંચો રાખવો (વાંસને પર્વ અને ગાંઠો હોય છે તેનાં પર્વ સરખા નથી હોતાં વાંસને નીચેનાં પર્વ નાનાં હોય છે અને ઉપરનાં પર્વ મોટાં હોય છે આ અપેક્ષા એ કાષ્ટના દંડને અધોઉર્ધ્વ કહ્યું) ૬૩.

(દંડની ઊંચાઇના ત્રણ ભાગમાં) મધ્યમાં પર્વ કરવાં તે જ્યેષ્ઠ માન અને નીચે ઉપર કનિષ્ઠ માન દંડના વંશના પર્વક્રમથી શક્તિને સમપર્વનો દંડ એટલે વચ્ચે કાંકણી=ગ્રંથીવાળો તેવો દંડ પૂજાય છે. ૬૪

भावार्थ–प्रथम दो पदोंके अर्थ तीन प्रकारसे हो सकते हैं । (१) उससे अर्धमें पर्वदण्डमें क्रमसे विषम करना यह ज्येष्ठ (२) उसके उपरके पर्व जो विषम क्रमसे हो तो ज्येष्ठ (३) उसमेंसे आधे विषमपर्वके क्रमसे ग्रहण करना, यह उत्तम ज्येष्ठ । शक्तिके सामने शिवदण्ड अधोमुख खडा करना । वह अधो-मुख अर्थात् वृक्षके खम्भेको मूलके उपर और टोचके भागको नीचे रखकर खडा करना । शक्तिका दण्ड इससे उतरी तरह वृक्षकाष्टका दण्ड खडा करना अर्थात् वृक्षकाष्टका थडमूल नीचे और टोचका भाग ऊँचा रखना (बाँसको पर्व और गाँठ होते हैं । उसके पर्व समान नहीं होते हैं । बाँसको नीचेके पर्व छोटे होते हैं । और उपरके पर्व बडे होते हैं । इस अपेक्षासे काष्ठके दण्डको अधोउर्ध्व करना) । ६३

(दण्डकी ऊँचाईके तीन भागमें) मध्यमें पर्व करना यह ज्येष्ठमान और नीचे उपर कनिष्ठ मान दण्डके पर्वक्रमसे शक्तिको समपर्वका दण्ड अर्थात् बिचमें कांकणी=ग्रंथीवाला वैसा दण्ड पूजा जाता है । ६४

समपर्वे यदादडं मध्यं कुर्यात्तु किंकिणि।
ज्येष्ठ पर्वे च मूर्ध्वे वा अध'उर्ध्वे न कन्यम ॥६५॥
विपम पर्वे ज्येष्ठ दंड मध्य पर्वेसु ज्येष्ठकं।
अंकान क्रमतो यानि ग्रभूपक्षे न कन्यस ॥६६॥

ભાવાર્થ-જ્યેષ્ઠ પર્વ ઉપર હોય અથવા નીચે ઉપર કનિષ્ઠ પર્વ વિષમ પર્વના જ્યેષ્ઠ દંડને મધ્યનુ પર્વ જ્યેષ્ઠ કરવુ આ અંકના ક્રમ હોવાથી બેઉ બાજુ એટલે ઉપર નીચે કનિષ્ઠ ન કરવા ૬૫-૬૬

भावार्थ-ज्येष्ठपर्व उपर होता है अथवा नीचे उपर कनिष्ठपर्व विपमपर्व के ज्येष्ठ दण्डको मध्यका पर्व ज्येष्ठ करना। ये अकके क्रम होनेसे दोनो तरफ अर्थात उपर नीचे कनिष्ठ न करना। ६५-६६

द्वित्रिमेके च रुपे च चतुष्कंच द्वितीयकं।
पटमप्तम कूर्यात चतुर्थेरष्ट नंदके ॥६७॥
एवमादि क्रमात्युक्तिः पदवै सर्वकामदम्।
तथा च मुकुटमानं ॥६८॥

હવે દંડનો મુકુટ અને પાટલીનુ માન કહુ છુ ૬૭-૬૮

अब दण्डका मुकुट और पाटलीका मान कहता हूॅ। ६७-६८

मर्कटीमान-दंडदीर्घपष्टमांशेन तदर्धं विस्तरैं मर्कटि।
विस्तरस्य तृतीयांशेन पींडं कूर्याद्विचक्षण ॥६९॥
त्रिभागं भागमित्युक्तं ततो वृत्तं च भूपित।
शङ्ख चक्र करोक्त च कमलाना मत' भृणु ॥७०॥
मध्ये कलशं च कर्तव्यं दंडोदयात् पोडश।
प्राशकं तृतीयाशेन उभयो वामदक्षिणे ॥७१॥

ધ્વજાદંડની લંબાઈના છઠ્ઠાભાગની મર્કટી = પાટલી લાબી કરવી લંબાઈના અર્ધ પહોળી અને પહોળાઈના ત્રીજા ભાગે જાડી પાટલી કરવી ૬૯ પાટલીના નીચે ત્રીજા ભાગે ગોળ વૃત કરી (બે બાજુ ગગાગની આકૃતિ કરવી) વિષ્ણુના મંદિરના દંડની પાટલી પર શંખ અને ચક્ર કમળ કરવા (શીવ હોય તો ડમરૂ ત્રિશૂલ) પાટલી ઉપર ધ્વજદંડની ઉંચાઈના સોળમા ભાગે ઉંચો કળશ કરવો તે

કળશના ત્રીજા ભાગે ઉંચા ભાલા (પક્ષી ન બેસે તેવા) પાટલીના કળશની બે બાજુએ કરવા.

ध्वजदण्डकी लम्बाईके छट्ठेभागकी मर्कटी=पाटली लम्बी करना । लम्बाईसे आधी चौडी और चौडाईके तीसरे भाग पर मोटी पाटली करना । ६९

पाटलीके नीचे तीसरे भागपर गोलवृत्त करके (दो तरफ गगारेको आकृति करना) विष्णुके मंदिरके दंडकी पाटलीके उपर शंख और चक्र कमल करना । (शिव हो तो डमरू त्रिशूल) पाटलीके उपर ध्वजादंडकी ऊँचाईके सोलहवें भाग पर ऊँचा कलश करना । उस कलशके तीसरे भाग पर ऊँचे भाले (पक्षी वैठ न सके वैसे) पाटलीके कलशकी दो बाजुपर करना । ७०–७१

वंशमयोऽपि कर्तव्यो दृढदारुमयोऽपि च ।
शिशपः खदिर श्चैव अर्जुनो मधुकस्तथा ॥ ७२ ॥
सुवृतः सारदारुश्च ग्रंथीकोटिरवर्जितः ।
पंचदंड–ऊर्ध्वोरुश्रृंगे तूर्यं शिखरोर्ध्व पंचदंडकम् ॥ ७३ ॥

ધ્વજદંડ વાસ–મજબુત કાષ્ટનો શીશમ ખેર મહુડાના સારા કઠણને મજબૂત જેમાં ગાંઠો–કોતર કે કાણા વગરના કાષ્ટના ધ્વજદંડ માટે લેવો. પંચદંડ=ચતુર્મુખ, જિન, શિવ કે બ્રહ્માના મહાપ્રાસાદને શિખરના ઉપલા ઉરુશૃંગ ચારેમાં ધ્વજાદંડ સ્થાપન કરી એક મધ્યનો ઉપરનો મળી પાંચ ધ્વજ-દંડ સ્થાપન કરવા. ૭૨–૭૩

ध्वजदण्ड बाँस मजबूत काष्टका शीशम खेर महुडेका अच्छा पक्का कठिन और मजबूत जिसमें गाँठे कोतर या छिद्रके बिनाके काष्टके ध्वजादण्डके लिये योग्य जानना । पंचदण्ड–चतुर्मुख–जिन शिव या ब्रह्माके महाप्रासादको शिखर के उपरके उरुशृंग चारोंमें ध्वजादण्ड स्थापनकर करके मध्यका उपरका मिलकर पाँच ध्वजदण्ड स्थापन करना । ७२–७३

अथ पताकाप्रमाण–ध्वजदंडप्रमाणेन विस्तरे मर्कटिसमम् ।
त्रिपंचाग्र शीर्षमा च मणिबंध च शोभितम् ॥ ७४ ॥
स्वर्णरेखा यदाकारं सूर्यरश्मिनि रक्षत ।
प्रलयंति सर्वपापानि यत्रै लोकेच मध्यतां ॥ ७५ ॥

ધ્વજાદંડની જેટલી લાંબી અને પાટલીની પહોળાઈ જેટલી પતાકા–ધ્વજા પહોળી કરવી. ધ્વજા ત્રણ પાંચ સાત શિખાગ્ર છેડા પર કરી તેને મણિબંધથી શોભતી કરવી. તેવી ધ્વજાપતાકાથી સૂર્યના કિરણોમાં સુવર્ણરેખા જેવી તે દૃશ્ય-

ભાન થાય આવી પતાકા ચડાવવાથી આ લોકમા જ સર્વ પાપોનો નાશ થાય છે [१५] ૭૪-૭૫

ध्वजादण्डके बराबर लम्बी और पाटलीके बराबर पताका-ध्वजा चौडी करना । ध्वजा तीन पाँच सात शिखाग्र छेडेके पर करके उसे मणिनघसे शोभायमान करना । ऐसी ध्वजा पताकासे सूर्यकी किरनोंमे सुवर्णरेखा जैसी वह दृश्यमान होती है । ऐसी पताका चढानेसे इस लोकमे ही सर्व पापोंका नाश होता है । [१५]

निष्पन्नं शिखरं द्रष्ट्वा ध्वजहीन न कारयेत् ।
असुरावासमिच्छन्ति ध्वजहीने सुरालये ॥७६॥

તૈયાર કરેલા શિખરને ધ્વજા વગર રાખવુ નહિ કારણ કે ધ્વજારહિત શિખરને (છમાસ) જોઈને ભૂતાદિ રાક્ષસો તેમા વાસ કરવા ઇચ્છે તેથી દેવાલય ધ્વજારહિત રાખવુ નહિ ૭૬

तैयार किये हुए शिखरको ध्वजाके बिना नहीं रखना । क्योंकि ध्वजा-रहित शिखरको (छ' मास तक) देखकर भूतादि राक्षसों उसमे वास करनेकी इच्छा करते हैं । इससे देवालयको ध्वजारहित नहीं रखना । ७६

---

૧૫ ધ્વજા અને પતાકાનો કેટલાક પૃથક્ પૃથક્ અર્થ કરે છે પ્રાસાદની પતાકા લબ ચોરસ કરવાનુ શિલ્પગ્રથોમા છે ત્રિકોણ પતાકા કરવાનો કેટલાક યજમાનો આગ્રહ સેવે છે પરતુ શિલ્પગ્રથોમા ત્રિકોણ પતાકાનુ કોઈ પ્રમાણ હજુ સુધી જોવામા આવેલ નથી બ્રાહ્મણ ગ્રથોમા જે તેમ કહે છે પણ તે ક્રિયા કાડના ગ્રથોમા યજ્ઞયાગ પ્રતિષ્ઠા વિધિ વિધાનમા પતાકા વિષે ચર્ચા છે તેમા ત્રિકોણ પતાકાનુ કહ્યુ છે ખરુ પરતુ તે તો યજ્ઞ યાગના મડપોમા ફરતી પતાકા-ધ્વજાઓના વર્ણનમા છે આમ છતા ત્રિકોણ પતાકાના વિષે વધુ ચર્ચા કરવાને અને તે વિષયનુ સાહિત્ય જોવાને ઉત્સુકતા છે

જો ત્રિકોણ પતાકા કરવાનુ પ્રમાણ હોય તો શિલ્પગ્રથ લબચોરસ પતાકા કરી તેને ત્રિપચશિખાગ્રનુ શુ કરવા કહેત ?

(१५) ध्वजा और पताका का अर्थ कई लोग पृथक् पृथक् करते हैं । प्रासादकी पताका लब चोरस करनेका शिल्प ग्रथोंमें है । त्रिकोण पताका करनेका आग्रह कई यजमानों करते हैं । परतु शिल्प ग्रथोंमे त्रिकोण पताकाका कोई प्रमाण अबतक देखनेमे आया नहीं है । ब्राह्मण ग्रथोंमे है वैसा कहते हैं । मगर क्रियाकाडके ग्रथोंमें यज्ञ याग प्रतिष्ठा विधि विधानमे पताकाके बारेमे चर्चा है, उसमे त्रिकोण पताकाके लिये कहा है, यह सही लेकिन यह तो यज्ञयागके मडपोंमे फिरती पताका-ध्वजाओंके वर्णनमे है । ऐसा होते हुए भी त्रिकोण पताकाके बारेमे ज्यादा चर्चा करनेके लिये और उस विषयका साहित्य देखनेके लिये उत्सुकता है । जो त्रिकोण पताका करनेका प्रमाण हो तो शिल्प ग्रंथ लबचोरस पताका कर उसे त्रिपच शिखाग्रका किस लिये कहते ?

इदृशं कुरुतेयश्च लभते चाक्षयंपदम् ।
दिव्यदेहो भवेत्तस्य सूरेः सहस्रैः क्रीडति ॥ ७७ ॥

ઉપર પ્રમાણે ધ્વજાયુક્ત પ્રાસાદ કરાવનારને અક્ષય સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે. તેમ જ દિવ્ય દેહ ધારણ કરી હજારો વર્ષો દેવોની સાથે ક્રીડા કરે છે. ૭૭

उपरके अनुसार ध्वजायुक्त प्रासादको बनानेवालेको अक्षय सुखकी प्राप्ति होती है । और दिव्य देह धारणकर हजारों वर्षो तक वह देवोंके साथ क्रीडा करता है । ७७

पुण्यं प्रासादजं स्वामी प्रार्थयेत् सूत्रधारतः ।
सूत्रधारो वदेत् स्वामिन् अक्षय भवतात् तव ॥ ७८ ॥

દેવાલય બંધાવનાર સ્વામિ સ્થપતિ સૂત્રધાર પાસે પ્રાસાદ બંધાવવાના પુણ્યની પ્રાર્થના કરી આશિર્વચન માગવા. ત્યારે સ્થપતિ સૂત્રધારે આશિર્વાદ આપવો કે હે સ્વાંમિન્! મંદિર બંધાવવાનું તમારૂં પુણ્ય અક્ષય થાયો. ૭૮

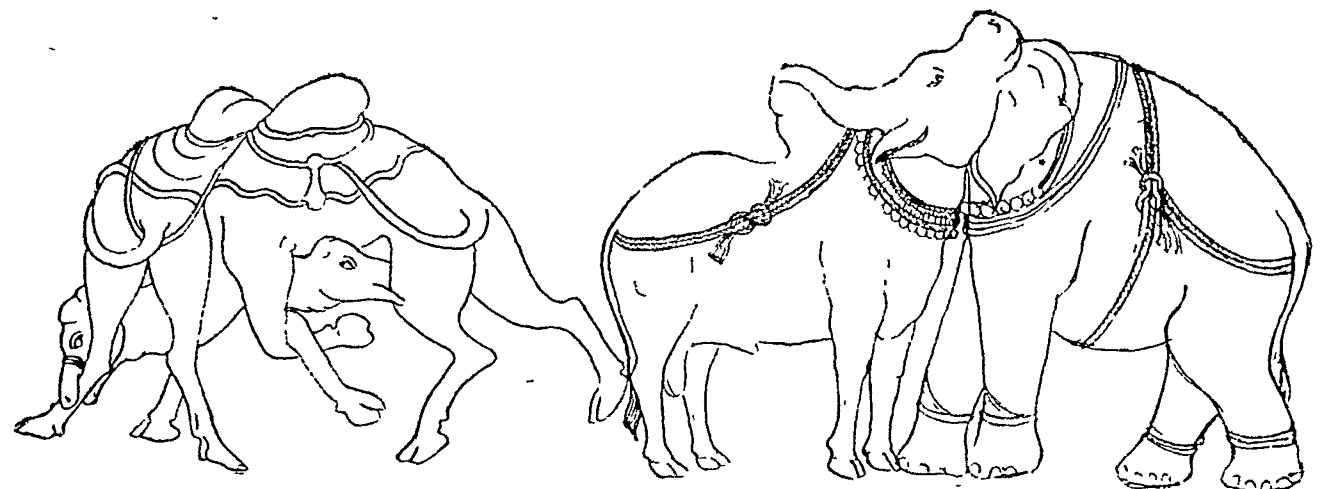
मंदिर बंबानेवाला स्वामी–स्थपतिको पुण्यकी प्रार्थना और आशिर्वाद मांगना जब स्थपति आशिर्वचन देना स्वामिन्! मंदिर बंधानेका आपका पुण्य अक्षय हो । ७८

इति श्री विश्वकर्मा कृतायां क्षीरार्णवे नारदपृच्छाया शिखराधिकारे शताग्रेत्रयो दश अध्याय ॥ ११३ ॥ (क्रमांक अ० १५)

ઇતિશ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ નારદજીએ પૂછેલ શિખરાધિકારનો શિલ્પ વિશારદ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી સુપ્રભા નામની ટીકાનો એકસો તેરમો અધ્યાય. ૧૧૩.

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव नारदजीके संवादरूप शिखराधिकारका–शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाईकी रची हुई सुप्रभा नामकी भाषा टीकाका एकसौ तेरहवाँ अध्याय ॥ ११३ ॥ (क्रमांक अ० १५)

कुतूहल



दो सांढ युद्ध   वृषभ और हस्तियुद्ध एकमें दूसरे का मुख प्रदर्शित होता है।

॥ अथ रेखाविचार ॥

क्षीरार्णव अ० ११४–क्रमाक अ० १६

श्री विश्वकर्मा उवाच

तथा रेखा विचारेण रिपिराज शृणोत्तमा ।
पंचखडादौ खंडवृध्या एकोनत्रिंशकाविधि ॥१॥
खंडचारि कलाज्ञात्वा अंकवृद्धि क्रमेणतु ।
एकद्वित्री चतुः पंच षड् सप्ताष्ट क्रमोद्भता ॥२॥
अनेन क्रमयोगेन एकोनत्रिंशकावधि ।
पंचखंडे कलाश्चैव खंडख्य या दशपंच च ॥३॥
एकोनत्रिंशे पंचत्रिंशदुत्तरे चतुशतम् ।
कला रेखा' समाख्याताः सर्वकामफलप्रदाः ॥४॥

—इति कलाभेदोद्भवा रेखा ।

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે

હે ઋષિરાજ, હવે શિખરની રેખાનો વિચાર સાભળો પાચ ખડથી એકેક ખડ વૃદ્ધિ ઓગણત્રીશ ખડ સુધીની એ ખડ ચારી અનુક્રમે અક વૃદ્ધિથી કરી કળા રેખા જાણવી એક બે ત્રણ ચાર પાચ છ સાત અને આઠ એમ ક્રમના યોગથી ઓગણત્રીશ સુધી વૃદ્ધિ કરતા જવુ પાચ ખડની કળા દશખડ એમ ઓગણત્રીશ ખડ સુધીની ચારસો પાત્રીશ કળા ભેદની રેખા સધાય તે સર્વ કામને ફળદાતા જાણવી. ૧–૨–૩–૪

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—ऋषिराज, अब शिखरकी रेखाका विचार सुनो। पाँच खडसे एक एक खडकी वृद्धि, उनतीस खडतककी वह खडचारी अनुक्रमसे अकवृद्धिसे कर कला रेखा जानना। एक दो तीन चार पाँच छ सात और आठ इस तरह क्रमके योगसे उनतीस तककी वृद्धि करते जाना। पाँच खडकी कला दस खड इस तरह उनतीस खड तककी चारसो पैतीस कला भेदकी रेखा सधाती हो उसे सर्वकार्यकी फलदाता जानना। १–२–३–४

तथा रेखा द्वयं गृह्यं त्रय सार्द्ध गुणकृतं ।
ततो वृत्तं च भ्रामयेन रेखा सर्वकामाय ॥५॥
वृपस्थ (स्वष्ट) विमुच्यते रथमध्ये (भद्रे) च भ्रामितं ।

શિખરના પાયચાની બે રેખા વચ્ચેના અતરથી સાડાત્રણ ગણી કામડી કરી ફેરવવાથી સર્વ કામનાને દેનારી એવી રેખા થશે ૫

शिखरके पायचेकी दो रेखाके बिचके अंतरसे साढ़े तीन गुनी कामडी कर फेरनेसे सर्वकामना को देनेवाली ऐसी रेखा होगी। ५.

दशधा तल रेखायां द्विभाग कर्ण विस्तरं ॥६॥
रथसार्द्धं च विस्तारा भद्रत्रय निर्गमं।
निर्गमं हस्तमानेन अंगुलैकं विचक्षणं ॥७॥

શિખરના પાયચે રેખાયે દશભાગ કરી તેમાં બે ભાગની રેખા પહોળી દોઢ ભાગનો પઢરો, અને ભદ્રાર્ધ પણ દોઢ ભાગનું (આખું ભદ્ર ત્રણ ભાગનું) જાણવું તેનો નિકાળો ગજે આંગળના હિસાબે ચતુર શિલ્પીએ રાખવો. ૬–૭.

शिखरके पायचेपर रेखाकेपर दस भागकर उसमें दो भागकी रेखा चौडी डेढ़ भागका पढ़रा, और भद्रार्धे भी डेढ़ भागका (सारा भद्र तीन भागका)–जानना। उसका निकाला गजपर अंगुलके हिसाबसे चतुर शिल्पीको रखना। ६–७.

षट भाग स्कंध विस्तारे सप्तभिरामलसारकं।
अर्धोदयं च कर्तव्यं तदुर्ध्वे कलशोपमा ॥८॥

શિખરના સ્કંધ બાંધણે છ ભાગ કરી સાત ભાગનો આમલસારો વિસ્તાર રાખી તેનું અર્ધ ઊંચો કરી તે પર શોભતો કળશ સ્થાપન કરવો. ૮

शिखरके स्कंधकेपर छः भागकर सात भागका आमल सारा विस्तार रखकर उसका अर्ध भाग ऊँचा कर उसकेपर शोभायमान कलश स्थापन करना। ८.

स्कंधार्धे नवभागेन कर्णभाग चतुर्भवेत्।
प्रतिरथ त्रयं कार्य शेष भद्रे निष्कलं ॥९॥

શિખરના બાંધણે નવભાગ કરી બે રેખા બબ્બે ભાગની અને બે પઢરા દોઢ દોઢ ભાગના બાકીનું આખું ભદ્ર બે ભાગનું કરવું. તેનો નીકાળો આગળ કહ્યો (તેમ ગજે આંગળ) રાખવો. ૯

शिखरके स्कंधपर नौ भागकर दो रेखायें दो दो भागकी और दो पढ़रे डेढ डेढ भागके, बाकीका सारा भद्र दो भागका करना। उसका निकाला, आगे कहा। (इस तरह गजपर अंगुल) ९.

अजिता इतिरङ्गा च संहिता च सागरा तथा।
कालिका कुंडलिकाश्च स्वरुपा रुपसुंदरी ॥१०॥
चित्रा विचित्रा चैव स्यात्तारुण तरुणी स्तथा।
निशाचरा सर्वरेषा शरच्चंद्राचिंताउलि ॥११॥

मंजिरा वर्धिरा दुर्गा रिद्धिदा सिद्धिदायका ।
धनदा च वरदा मोक्षदा पंचविंशति ।।१२।।

પચ્ચીશ રેખાના નામ કહે છે ૧ અજિતા ૨ ઈતિરંગા ૩ સહિતા ૪ સાગરા ૫ કાલિકા ૬ કુંડલિકા ૭ સ્વરૂપ ૮ રૂપસુંદરી ૯ ચિત્રા ૧૦ વિચિત્રા ૧૧ તારૂણી ૧૨ તરૂણી, ૧૩ નિશાચરા, ૧૪ સર્વરેખા, ૧૫ શરચંદ્રા, ૧૬ ચર્ચિતા ૧૭ ઉલી, ૧૮ મંજરી, ૧૯ વર્ધિગ, ૨૦ દુર્ગા, ૨૧ રિદ્ધિદા, ૨૨ સિદ્ધિદાયકા, ૨૩ ધનદા ૨૪ વરદા અને ૨૫ મોક્ષદા એ પચ્ચીશના નામો વૃત્તિકાકારથી ૨૯ ખડો રેખાના જાણવા તેના સ્વરૂપો હવે કહે છે ૧૦ થી ૧૨

पच्चीस रेखाके नाम कहते हैं । १ अजिता २ इतिरङ्गा ३ सहिता ४ सागरा ५ कलिका ६ कुडलिका ७ स्वरूपा ८ रूपसुंदरी ९ चित्रा १० विचित्रा ११ तारूणी १२ तरुणी १३ निशाचरा १४ सर्वरेखा १५ शरच्चँद्रा १६ चर्चिता १७ उली १८ मजरी १९ वर्धिरा २० दुर्गा २१ रिद्धिदा २२ सिद्धि दायका २३ धनदा २४ वरदा २५ मोक्षदा–ये पच्चीशके नाम घृत्तिकाकार से २९ खडों रेखाके जानना । उसके स्वरूप अब कहते हैं । १० से १२

अजिता वृत्तिकाकारा त्रिखंडा इतिरंगिणी ।
संहिता चतुः खंडा पाखंडा चैव सागरा ।।१३।।
खंडे खंडे भवेन्नाम उच्छ्या युक्त संकुला ।
संयुक्ता स्कध संकीर्णा संख्याय पंचविंशति ।।१४।।

અજિતા ગોળાકારે, ઇતિરંગા ત્રિખંડા, સહિતા ચતુખંડા, સાગરા પંચખંડા એમ ખંડે ખંડે પચ્ચીશ નામો જાણવા તે ઉભણી ઊંચાઈમાં તેમ બાંધણાના નમણમાં એમ પચ્ચીશ ભેદો જાણવા ૧૩–૧૪

अजिता गोलाकारे, इतिरंगा त्रिखंडा, सहिता चतुःखंडा, सागरा पच खडा इस तरह खडे खडे पच्चीश नाम जानना । वह ऊँचाईमे उस तरह स्कधकी स्कंधकी नमणके पच्चीश भेद जानना । १३–१४

त्रिखंडे तु कलाअष्ट चतु खंडेदक स्तथा ।
तिथिकला पचखंडे षड्खडै विंशति ।।१५।।
तथामये प्रकारेण तत्रभेद अतः शृणु ।
त्रिखंडादिकृत पूर्व अर्ध भाग वतादिकं ।।१६।।
त्रिखडे न चतु सार्द्ध चतुखंडे प्रति स्तथा ।

पंचखंडे द्विभागे च पटेसिद्धे त्रयोदशे ॥ १७॥
तथा ते (त्रि) प्रकारेण आदि मध्यवसानके।
तद्विचार प्रयत्नेन संख्या या पंचविंशति ॥ १८ ॥

પહેલા ત્રિખંડની કલા આઠ, ચતુર્ખંડની દશ–પંચખંડની પંદરકળા ષટ્‌ખંડની એકવીશ કલા (૧૫) એ પ્રકારે તેના ભેદ સાંભળો, ત્રિખંડાથી આગળ કરવા........(૧૬) ત્રિખંડે સાડાચાર, ચતુર્ખંડ....પંચખંડ બે........તેર એમ ૧૭ એમ ત્રણ પ્રકારે આદિ મધ્ય અને અંત એ વિચારના પ્રયત્નથી પચ્ચીશ ભેદ જાણવા. ૧૮ (૧૫ થી ૧૮)

पहले त्रिखंडकी कला आठ चतुखंडकी......पंचखंडकी पंद्रह कला, षड्खंडकी एकवीश कला (१५) इस प्रकार उसके भेद सुनो। त्रिखंडासे आगे करना। त्रिखंडकेपर साढ़ेचार, चतुखंड पर......पंचखंड पर दो......तेरह इस तरह तीन प्रकारसे आदि मध्य और अंत इस विचारके प्रयत्नसे पच्चीस भेद जानना। (१५ से १८)

पुनः स्तेनाविभक्तेनं नामनाश्रृणुतोऋषि।
जयो विजय येकैकं नाम पूर्वं त्रि भाषित ॥ १९ ॥
जय अजितादिपूर्व इतिरङ्गा विजयः स्मृता।
जय संहिता त्रतिया च चतुर्था विजय सागरा ॥ २० ॥
जय विजय प्रकारेण संख्यायां पंचविंशति।

ફરી તે વિભક્તિના નામો હે ઋષિ! સાંભળો. જય વિજયના એકેક નામો આગળ કહ્યા છે. જય અજિતાદિ પૂર્વ અને વિજય–ઈતિરઙ્ગા પૂર્વે, ત્રીજુંજય સંહિતા, ચોથું વિજય સાગરા એમ જય વિજયના પ્રકારેથી પચ્ચીશ સંખ્યા ના નામો ખંડની રેખાના જાણવા. ૧૯–૨૦.

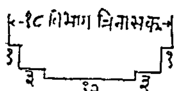
फिर उस विभक्तिके नाम हे ऋषि, सुनो। जय विजयके एक एक नाम आगे कहते हैं। जय–अजितादि पूर्व और विजय–इतिरङ्ग पूर्वे–तीसरा जय–संहिता, चौथा विजय–सागरा इस तरह जय विजयके प्रकारसे पच्चीस संख्याके नाम खंडकी रेखाके जानना। १९–२०.

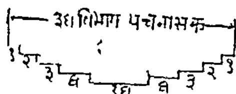
... ...

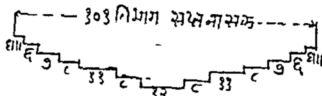
त्रिनासंपंचकं प्रोक्तं सप्तांनं च अतः श्रृणु ॥ २१ ॥
अष्टमांशेन नवमांश दशमांशे विशेषत्।
कृत्वा त्रिनाशकं रिषि चतुर्थांशे च निर्गमं ॥ २२ ॥

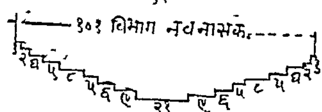
આગળ ત્રિનાસક પચનાસક કહ્યા હવે સપ્તનાસક કહુ છુ તે સાભળો (૨૧) તે નાસકો આઠમા, નવમા કે દશમા ભાગે નીકળતા વિશેષ કરીને કરવા હે ઋષિ, ત્રિનાસકનો નીકાળો ચતુર્થાંશ રાખવો (૨૨) એક શ્રૃગના ઉપર બે માન હવે સાભળો ૨૧–૨૨

अब त्रिनासक-पचनासक कहा और सप्तनासक कहता हूँ वह सुनो। २१ उन नासकोंको आठवें नौवें या दसवें भागपर निकलते विशेषकर करना। हे ऋषि, त्रिनासकका निकाला चतुर्थांश रखना। (२२) एक शृंगके उपर दो मान अब सुनो। २१–२२









त्रि-पच-सप्त-ओर नवनासक

शृङ्गमेकं च तदूर्ध्वं च
द्वयोमानं अतः शृणु।
द्वात्रिंशपदंकृत्वा द्विभागं
मूलनासकं ॥२३॥
त्रिभागं द्वितीयंश्चैव तृतीय
युग संख्यया।
शेष भद्रस्य विस्तारं निर्गमं
च पदार्धत ॥२४॥
उरु ङ्ग द्विधाकाय
रथिकामध्यदाययेत्।
तथा सर्वप्रमाणं च विभागं
च अतः शृणु ॥२५॥

પચનાશકના બત્રીશ ભાગ કરવા મૂળ નાસક બે ભાગ–બીજી ત્રણ ભાગ ત્રીજી ચાર ભાગ અને બાકી ચૌદ ભાગનુ ભદ્ર પહોળુ જાણવુ તેનો નીકાળો અર્ધા ભાગનો રાખવો ૨૩ ૨૪

त्रिनासकके बत्तीस भाग करना। मूलनासक दो भाग–दूसरी तीन भाग तीसरी चार भाग और बाकी चौदा भागका भद्र चोडा जानना। उसका निकाला आधे भागका रखना। २३–२४

द्वयालिशं च भागानि द्विभागं मूलनासकं।
त्रिभाग द्वितीय चैव तृतीयं द्वयमेव च ॥२६॥

चतुर्थं त्रिभागानि पंचमं चतुमेव च।
शेषंभद्रस्य विस्तार निर्गमं च पदार्धतः ॥२७॥
सिद्धति सप्तनाशिन ऊरु स्त्रीणि मस्तके।

રથિકા = ભદ્રની મધ્યમાં ઉરુશ્રૃંગ બે પ્રકારે કરવા. સર્વ પ્રમાણના વિભાગ સાંભળો. સપ્તનાસકના બેતાળીશ ભાગમાં બે ભાગનું મૂળનાસક, બીજું ત્રણ ભાગનું, ત્રીજું બે ભાગ, ચોથું ત્રણ ભાગ, પાંચમું ચાર ભાગ. બાકી ભદ્ર ચૌદ ભાગ પહોળું જાણવું. તે સર્વના નીકાળા અર્ધા ભાગના રાખવા તે રીતે સપ્તનાશક સિદ્ધ થયું જાણવું તે ઉરુશ્રૃંગ ઉપર.... ૨૫-૨૬-૨૭.

रथिका–भद्रकी मध्यमें उरुशृंग दो प्रकारसे करना। सर्व प्रमाणके–विभाग सुनो। सप्त नासकके बेतालीश भागमें दो भागका मूलनासक, दूसरा तीन भागका, तीसरा दो भाग, चौथा तीन भाग, पाँचवा चार भाग, बाकी भद्र चौद भाग चौडा जानना। उन सर्वके निकाले अर्ध भागके रखना, इस तरह सप्तनासक सिद्ध हुआ समझना। उस उरु शृंगके उपर......२५–२६–२७.

तथैव सरतर ज्ञात्वा छंदभंगोन विद्यते ॥२८॥
उपर श्रृङ्गकूटं च मेकछन्दं मुनिश्वरः।
फलस्थाने ततो श्रृङ्ग तिलक कस्यमेलय ॥२९॥
पत्रेमयूरे तथाकूटं वृतसूत्रं मुनिश्वरं।
जगतीपीठकं ज्ञात्वा प्रासाद लिङ्गमुत्तमात् ॥३०॥
मुगदेशे शिरोरम्यं कर्तव्यं च विचक्षण।
लभ्यते स्वर्ग संस्थाने जीव चंद्रार्कमेदिनी ॥३१॥

એ રીતે શીખરમાં પાણીતાટ જાણવા. ૨૮. છંદ ભંગ ન કરવો. હે મુનીશ્વર! એકછંદમાં શ્રૃંગ ઉપર કૂટ કરવા યોગ્યસ્થાને શ્રૃંગ અને તિલક કરવા. (૨૯) ગોળ સૂત્રમાં પત્ર મયુરના કૂટ હે મુનીશ્વર કરવા. ૨૮-૨૯.

यह रीतसे शिखरमें पाणीतार जानना। छंदका भंग न करना। हे मुनीश्वर! एक छंदमें शृंगके उपर कूट करना। योग्य स्थान पर शृंग और तिलक करना। गोल सूत्रमें पत्र मयुरके कूट हे मुनीश्वर, करना। २८–२९.

શિવલિંગને જળાધારી રૂપ–એમ પ્રાસાદને જગતી અને પીઠ જાણવા. (૩૦) મુગદેશના ઉપર (!) રમ્ય એવા જગતી પીઠ વિચક્ષણ શિલ્પીએ કરવા થી સૂર્ય અને ચંદ્ર રહે ત્યાં સુધી તે યજમાનને સ્વર્ગના સ્થાનની પ્રાપ્તિ થાય. (૩૧) રમ્ય એવા મેરૂ શિખરના મર્મ હવે સાંભળો. ૩૦–૩૧.

शिवलिङ्गको जलाधारी रूप इस तरह प्रासादको जगती और पीठ जानना। मुगदेशके उपर (?) रम्य ऐसे जगती पीठ विचक्षण शिल्पीके करनेसे सूर्य और चद्र रहे तब तक उस यजमानको स्वर्गके स्थानकी प्राप्ति होती है। रम्य ऐसे मेरू शिखरका मर्म अब सुनो। ३०-३१

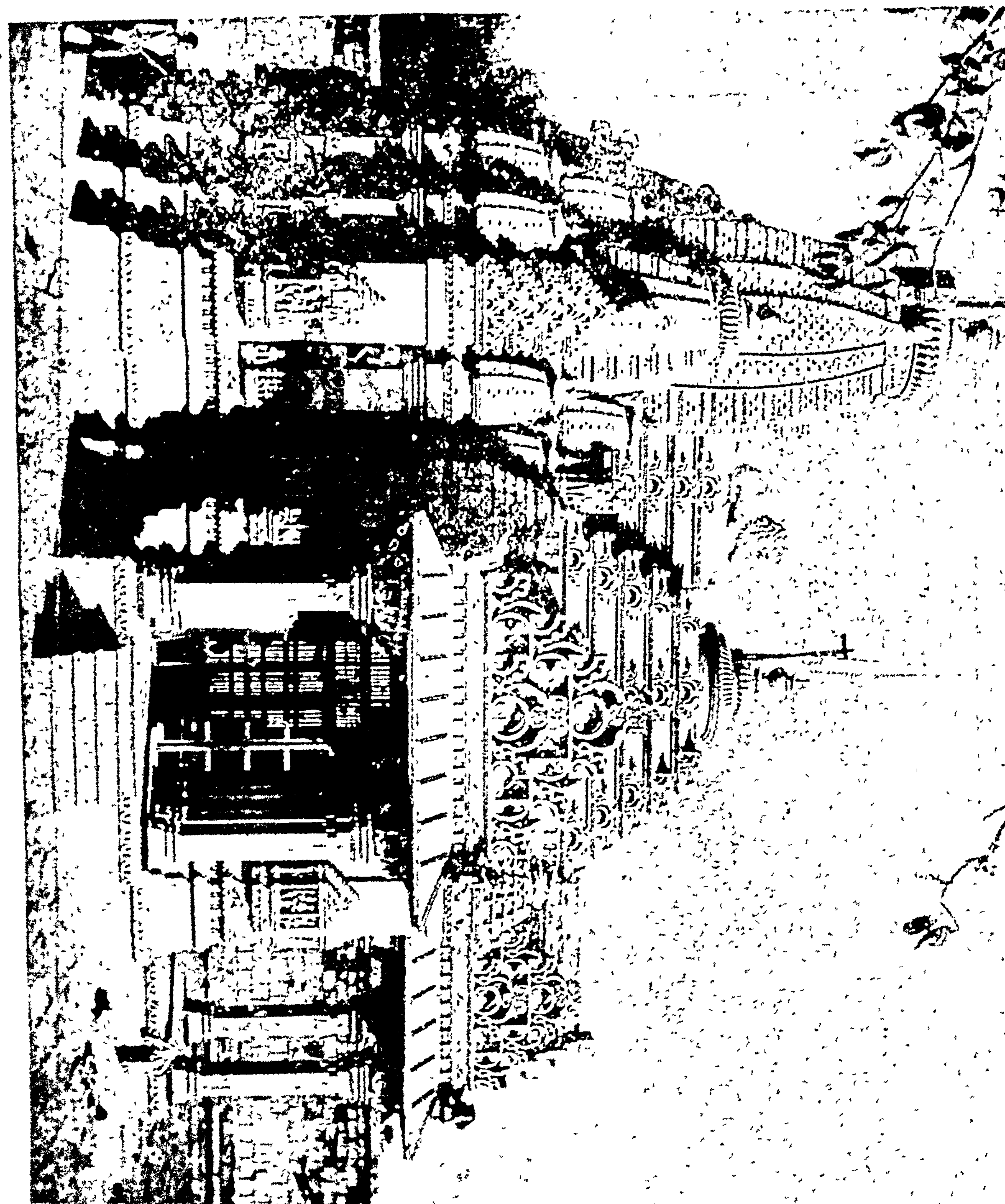
मेरुशिखर सदारम्यं महामर्म अत भृणु।
पंकजे कोमलाकारे अधमाध्यवमूर्ध्वन् ॥३२॥
अधस्ते मुघिकं कार्यं हस्ते हस्ते द्वि अगुलम्।
अर्ध भागे सप्तमांशे गृहीत्वा तत्र स्त्रके ॥३३॥
तेन मूर्ध्वे परिस्थाने कलार्चा यत्र सादयेत्।
तत्शिखरं द्वयं भाग शेपं च मानसाधकम् ॥३४॥
स्कंध स्थाने यदामूर्द्धिकराक्षसं तद्रवक्षते।
तानि सर्वाणि दूर्वाति अशुभ कारक स्तदा ॥३५॥[1]

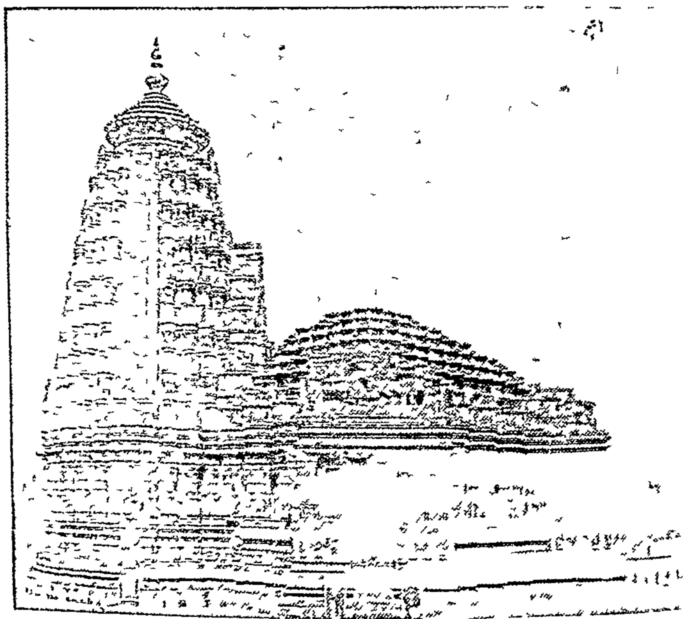
(१) રેખા વિચારનો આ અધ્યાય બીજી અશુદ્ધ પ્રતોમા સ્વતત્ર અધ્યાય નથી પરતુ મિશ્ર છે તેથી વિષયાતર હોઈ તે અધ્યાય ૧૧૪ તરીકે મૂકેલ છે આગળ અર્થ વગરના ત્રણેક શ્લોકના સાવ અશુદ્ધ નિરર્થક પાઠોનો એકસો બારમો અધ્યાય અશુદ્ધ પ્રતોમા ગણેલ છે આ ગ્રથના સશોધનનુ કાર્ય કઠીન છે કારણ કે ગુજરાત સૌરાષ્ટ્ર કે રાજસ્થાન માથી હજુ અમને તેની કોઈ શુદ્ધ પ્રતો પ્રાપ્ત થયેલ નથી આથી સશોધનના કાર્યમા અમોએ ગમે તે એક વિષયને સળગ સકલિત કરેલ

અધ્યાયો ક્રમવાર મૂકવાની ધૃષ્ટતા દુખ સાથે નાઈલાજે કરવી પડી છે તે સુજ્ઞ વિચારક વિદ્વાનો પરિસ્થિતિનો વિચાર કરી અમને ક્ષમા કરશે એવી આશા રાખુ છુ આ એક સો ચૌદમા અધ્યાયમા કેટલીક અપૂર્ણતા જણાથી જે સ્થિતિમા પાઠો મળ્યા તે જ સ્થિતિમા પ્રકાશન કરવા પડેલ છે ભવિષ્યમા કોઈ સારી શુદ્ધ પ્રતોની પ્રાપ્તિ થયેથી કોઈપણ વિદ્વાન સશોધન કરી પ્રકાશ પાડશે તો શિલ્પીવર્ગનુ ઋણ અદા કર્યું ગણાશે તેવા વિદ્વાનનો અમે આભાર માનીશુ

આ ક્ષીરાર્ણવ ગ્રથમા જ્યા જ્યા અમોને અનુવાદ કરવામા અસબદ્ધતા કે અશુદ્ધિ જણાઈ અને તે પૂર્ણ કરવાનુ જ્યા જ્યા શક્ય બન્યુ નથી ત્યા ત્યા અમોએ અનુવાદ કર્યા સિવાય મૂળ પાઠો જ આપેલા છે

(१) रेखाविचारका यह अध्याय दूसरी अशुध प्रतोंमे स्वतत्र अध्याय नहीं है, परतु मिश्र है। जिससे विषयातर होनेसे उसे अ याय ११४ के नामसे रखा गया है। आगे निरर्थक तीनों श्लोकके विल्कुल अशुद्ध पाठोंका अेकसौ बारहवाँ अध्याय अशुद्ध प्रतोंमें गिना गया है। अिस ग्रथके सशोधनका कार्य कठीन है। क्योंकि गुजरात सौराष्ट्र या राजस्थानमेंसे अभी तक हमको वैसी शुद्ध प्रत प्राप्त नहीं हुइ है। जिससे सशोधन कार्यमे हमने इच्छित





भूमिज प्रवार-शैलीका उदयपुर (मालवा) के उदयेश्वरका कल्गमयप्रासाद मडप पर सवरणा

ભાવાર્થ–જેમ કમળ કોમળ આકારનું નીચે મધ્ય અને ઉપર વિકસિક થાય છે. (૩૨) તેમ નીચેથી અધિક બબ્બે આંગળ....અર્ધ ભાગમાં....સાતમો ભાગ ગ્રહણ કરવા. તે સૂત્ર....(૩૩) એ રીતે ઉપર પરિસ્થાને કલાર્ચા સાધવી....તેવું શિખર બે ભાગ....બાકી માન સાધક.... (૩૪) શિખરના સ્કંધ બાંધણાના સ્થાને ....તે સર્વ દુર્માર્ગથી તે સદા અશુભકારક જાણવું. ૩૨–૩૩–૩૪–૩૫.

जिस तरह कमल कोमल आकारका नीचे मध्य और उपर विकसित होता है, ३२–इस तरह नीचेसे अधिक दो दो अंगुल...अर्ध भागमें...सातवें भागको ग्रहण करने–उस सूत्र...(३३) इस तरह उपर परिस्थानपर कलार्चा साधना...वैसा शिखर दो भाग...बाकी मान साधक...(३४) शिखरके स्कंधके स्थान पर...उसको सर्व दुर्मार्गसे उसको सदा अशुभकारक जानना। ३५.

इति श्री विश्वकर्मा कृतायां क्षीरार्णवे नारद पृच्छते रेखा विचार शताग्रे चतुर्दशमोऽध्याय ॥११४॥ क्रमांक अ० १६

ઈતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવે નારદજીએ પૂછેલ શિખર રેખા વિચાર લક્ષણ પર શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલ સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકાનો એકસો ચૌદમો અધ્યાય ૧૧૪. ક્રમાંક અધ્યાય ૧૬.

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव श्री नारदजीके संवादरुप शिखर रेखा विचार लक्षणपर शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रचि हुओ सुप्रभा नाम्नी भाषाटीकाका एकसौ चौदहवाँ अध्याय ॥११४॥ क्रमांक अ० १६

अेक विषयको सांगोपांग संकलितकर अध्यायोंको क्रमशः रखनेकी धृष्टता दुःखके साथ निरूपाय करनी पडी है। तों सुज्ञ विचारक विद्वानों परिस्थितिका विचारकर हमें क्षमा करेंगे अैसी आशा रखते है। अिस अेकसौचौदहवें अध्यायमें कुछ अपूर्णता दिखनेसे जिस स्थितिमें पाठों मिले अिस स्थितिमें उनका प्रकाशन करना पडा है। भविष्यमें कोई अच्छी शुद्ध प्रतोंकी प्राप्ति होनेसे कोइ भी विद्वान संशोधन कर प्रकाश डालेगा तो शिल्पि वर्गका ऋण चूकानेका कार्य माना जायगा। वैसे विद्वानोंके हम आभारी होंगें।

जिस क्षीरार्णव ग्रंथमें जहां जहां हमें अनुवाद करनेमें असंबद्धता या अशुद्धि देखनेमें आयी और उसे पूर्ण करनेका काम जहां जहां शक्य नहीं हुआ हमने अनुवाद किये विना मूल पाठ ही दिये हैं।

॥ अथ स्तंभ लक्षणाधिकार ॥

क्षीरार्णव अ० ॥ ११५ ॥ (क्रमांक अ० १७)

विश्वकर्मा उवाच —

एक हस्ते तु प्रासादे स्तंभ वा चतुरं गुलम् ।
द्वि हस्ते अङ्गुलसप्तं त्रिहस्ते नवमेन च ॥१॥
ततो द्वादश हस्तांत हस्तेहस्ते द्विरङ्गुलम् ।
सपादाङ्गुल वृद्धि स्यात् यावत्पोडशहस्तके ॥२॥
अंगुलीकास्ततो वृद्धिश्चत्वारिंशत्हस्तके ।
तस्योर्ध्वे च शतार्द्धं च पादुनं मङ्गुलं भवेत् ॥३॥

સ્તંભપૃથુમાક		આગુલ
૧ ગજે		૪
૨	,,	૭
૩	,,	૯
૪	,,	૧૧
૫	,,	૧૩
૬	,,	૧૫
૭	,,	૧૭
૮	,,	૧૯
૯	,,	૨૧
૧૦	,,	૨૩
૧૧	,,	૨૫
૧૨	,,	૨૭
૧૬	,,	૩૨
૪૦	,,	૫૬
૫૦	,,	૬૩॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે - એક હાથના પ્રાસાદને ચાર આગળ જાડો સ્તંભ રાખવો. બે હાથનાને સાત આગળ ત્રણ હાથનાને નવ આગળ, ચારથી બાર હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હસ્તે બબ્બે આગળની વૃદ્ધિ કરવી તેરથી સોળ હાથના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે સવા સવા આગળની વૃદ્ધિ કરવી સત્તરથી ચાલીશ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે એકેક આગળની અને એકતાલીશથી પચાસ હાથ સુધીના પ્રાસાદને પ્રત્યેક હાથે પોણા પોણા આગળની વૃદ્ધિ કરવી ૧–૨–૩

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—एक हाथके प्रासादको चार अगुल मोटा स्तंभ रखना । दो हाथके प्रासादको सात अगुल, तीन हाथके प्रासादको नौ अगुल, चारसे वारह हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथ पर दो दो अगुलकी वृद्धि करना। तेरहसे सोलह हाथके प्रासादको प्रत्येक हाथपर सवा सवा अगुलकी वृद्धि करना । सत्रहसे चालीश हाथ तकके प्रासादको प्रत्येक हाथ पर एक, एक एक अगुलकी वृद्धि करना। एकतालिस से पचास हाथ तक का प्रासादको प्रत्येक हाथ, पर पौने पौने अगुलकी वृद्धि करना । १–२–३

प्राकान्तर—प्रासाद दशांश स्तंभ शस्यते शुभकर्मसु ।
एकादशै तु कर्तव्या द्वादशै च विशेषत् ॥४॥
त्रयोदशांशे प्रकर्तव्य शक्राश तथोच्यने ।
एतन्मानं पंचधा च स्तभान्त विस्तरे पृथक् ॥५॥

પ્રાસાદના (૧) દશમા ભાગનો જાડો સ્તંભ, (૨) અગ્યારમા ભાગે, (૩)

બારમા ભાગે (૪) તેરમા ભાગે, અને (૫) ચૌદમા ભાગની જાડાઈના સ્તંભ કરવો એમ પાંચ પ્રકાર સ્તંભની જાડાઈના જુદા જુદા જાણવા. ૪-૫.

प्रासादके (१) दसवें भागका मोटा स्तंभ, (२) ग्यारहवें भागमें, (३) बारहवें भागमें (४) तेरहवें भागमें और (५) चौदहवें भागके मोटेपनका स्तंभ करना । इस तरह पाँच प्रकार स्तंभके मोटेपनके अलग अलग समझना । ४-५.

सभामंडप स्तंभानां प्रमाणं च अतः शृणु ।
दशमांश द्वादशांश्य चतुर्दश्या विशेषत् ॥६॥

प्रमाणं तद्विज्ञेयं पश्चात् बुद्धिः पुनः क्रमात् ।
ज्येष्ठ कन्यस मध्ये च कन्यसे ज्येष्ठमेव च ॥७॥

सभा मंडपयो यंत्र वेदिका च विशेषत् ।
स्तंभ वा कन्यसो मानं कर्तव्यं शास्त्रपारगै ॥८॥

પ્રાસાદ વગરના ખુલ્લા મંડપો વેદી મંડપ તેવા ચોરસ કાર્યની કલ્પના હે મુનિ! હવે તેવા સભા મંડપના સ્તંભોનું પ્રમાણ સાંભળો. મંડપના ? કે

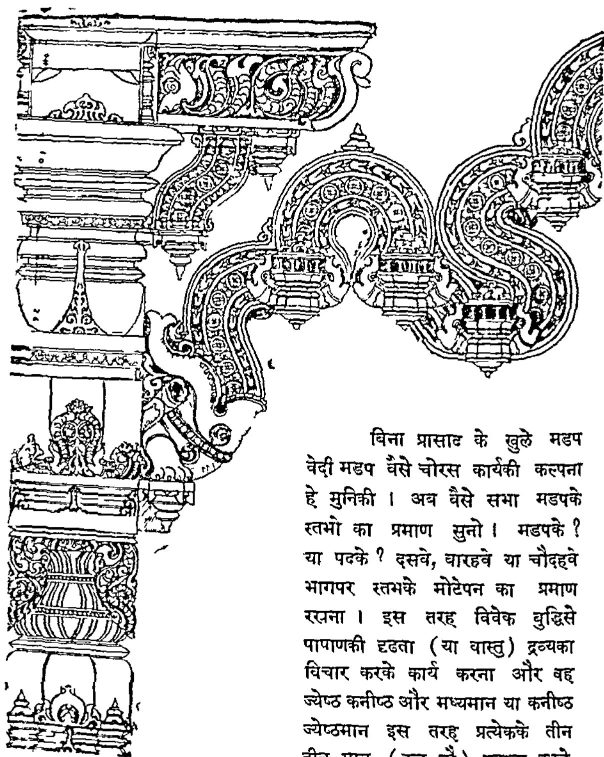
(१) अपराजितसूत्रसंतान-अ० १८५માં પ્રાસાદના પ્રમાણથી સ્તંભની જાડાઈ ૧૦, ૧૧, ૧૨, ૧૩ અને ૧૪ એમ પંચવિધ પ્રમાણ કહ્યાં છે. સ્તંભની જાડાઈનું પ્રમાણ તો શિલ્પીએ વિવેકબુદ્ધિથી કાર્યના વાસ્તુદ્રવ્યના આધારે તેની દઢતાના પ્રમાણમાં તે જેટલું વજન ખમી શકે તે પર વિચાર કરીને રાખવું. શ્યામપાષાણ આરસ જોધપુરી ખારો પત્થર કે પોરબંદરી પત્થરો એ એકેકથી ઉત્તરોત્તર દઢ છે. પોરબંદરથી ખારો મજબુત ખારાથી જોધપુર વધુ દઢ છે. તેથી તે પાતળો સ્હેજ લઈ શકાય.

द्वीपार्णव માં એક સામાન્ય લક્ષણ જાડાઈનું પ્રમાણ આપે છે. "चतुर्गुणोच्छ्रायं प्रोक्तं-मते त्स्तंभस्य लक्षणम् ।" થાંભલાની પહોળાઈથી ચારગણી ઊંચાઈ રાખવી એ સામાન્ય લક્ષણ ઈંટના, ચુનાના કે પોરબંદરી પત્થર જેવાના વાસ્તુ દ્રવ્યના ગણી શકાય.

(१) अपराजित सूत्र संतान अ. १८५वे प्रासादके प्रमाणसे स्तंभका मोटापन १०-११-१२-१३ और १४ अिस तरह पँचविध प्रमाण कहे है । स्तंभके मोटपनका प्रमाण तो शिल्पीको विवेक बुद्धिसे कार्यके वास्तु द्रव्यके आधार पर उसकी दढताके प्रमाणमें वह जितना वजन झेलसके उसपर विचार करके रखना । श्यामपाषाण आरस जोधपुरी खारा मजवूत खारेसे जोधपुरी ज्यादा दढ है । अिससे जरा पतला ले सकते हैं ।

दीपार्णवमें अेक सामान्य लक्षण मोटेपनका प्रमाण देते हैं । **चतुर्गुणोच्छ्रायं प्रोक्तामत त्स्तंभस्य लक्षणम्** । स्तंभके मोटेपनसे चारगुनी ऊँचाई रखना । यह स्थूलमान ईंट खडीके या पोरबंदरी पत्थरके द्रव्यका गिना जा सकता है ।

પદના ? દશમા, બારમા કે ચૌદમા ભાગે સ્તભની જાડાઈનુ પ્રમાણુ રાખવુ તે પ્રમાણે વિવેકબુદ્ધિથી પાષાણુની દૃઢતા કે વાસ્તુ દ્રવ્યનો વિચાર કરીને કાર્ય કરવુ તેમ તે જ્યેષ્ઠ કનીષ્ઠને મધ્યમાન કે કનીષ્ઠ જ્યેષ્ઠમાન એમ પ્રત્યેકના ત્રણુ ત્રણુ માન (કુલ નવ) ઉપજાવવા મભામડપ અને વેદિકા મડપના સ્તભોના પ્રમાણુ કનીષ્ઠમાનના શિલ્પશાસ્ત્રના પારગતોએ રાખવા ૬-૭-૮



विना प्रासाद के खुले मडप वेदी मडप वैसे चोरस कार्यकी कल्पना हे मुनिकी । अत्र वैसे सभा मडपके स्तभों का प्रमाण सुनो । मडपके ? या पदके ? दसवे, बारहवे या चौदहवे भागपर स्तभके मोटेपन का प्रमाण रखना । इस तरह विवेक बुद्धिसे पाषाणकी दृढता (या वास्तु) द्रव्यका विचार करके कार्य करना और वह ज्येष्ठ कनीष्ठ और मध्यमान या कनीष्ठ ज्येष्ठमान इस तरह प्रत्येकके तीन तीन मान (कुल नौ) उत्पन्न करने

घटपल्लव युक्त स्तभ भरणा मदल ओर सरा

के लिये सभामंडप और वेदिका मंडपके स्तंभोंके प्रमाण कनीष्ठमान के शिल्प शास्त्रके पारंगतोंको रखना । ६-७-८.

रुचकाश्च चतुरस्रास्तुभद्रेका भद्र संयुता ।
वर्धमानो प्रभद्राः स्युरष्टास्राश्चाष्टका मता ॥९॥

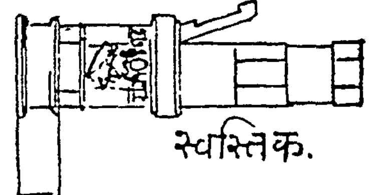
आसनोर्ध्व भवेद् भद्रं स्वस्तिकाश्चाष्टकर्णके ।
पंच विधाश्च कर्तव्या स्तंभा प्रासाद रूपिणः ॥१०॥











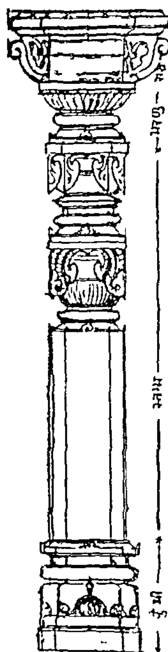
स्तंभोका पंच स्वरुप तलदर्शन

स्तंभोंकी आकृतिपरसे उसका नामाभिधान कहते हैं । (१) चोरस स्तंभको रुचक (२) भद्रवाले (त्रिनाश) को भद्रक (३) प्रति भद्रवाले स्तंभका वर्धमान (४) अष्ठांशके स्तंभको अष्ठक और वेदिका–आसनके उपरकी भद्र अष्ठांश और आठ कर्णीवाले स्तंभका (५) स्वस्तिक नाम जानना । इस तरह पाँच प्रकारके स्तंभोंके नाम जानना । प्रासादके स्वरूप प्रमाण स्तंभोंका रूप होता है ।[२] ९–१०.

સ્તંભોની આકૃતિ પરથી તેનું નામાભિધાન કહે છે. ૧. ચોરસ સ્તંભને રૂચક ૨. ભદ્રવાળા (ત્રિનાશ)ને ભદ્રક ૩. પ્રતિભદ્રવાળા સ્તંભને વર્ધમાન ૪. અષ્ટાંસના સ્તંભને અષ્ટક અને વેદિકા આસનપટ પરની ભદ્ર અષ્ટાંશ અને આઠ કર્ણીવાળા સ્તંભનું (૫) સ્વસ્તિક નામ જાણવું. એ રીતે પાંચ પ્રકારના સ્તંભોનાં નામ જાણવાં. પ્રાસાદના સ્વરૂપ પ્રમાણ સ્તંભોનું રૂપ થાય. (૨) ૯–૧૦.

(૨) अपराजितसूत्र ૧૮૪ માં સ્તંભોની આકૃતિ સ્વરૂપ આ પ્રમાણે આપેલા मत्स्य-पुराण अ० ૨૫૫ અને मानसार अ० ૧૫ માં પૃથક્ પૃથક્ નામો અને સ્વરૂપો આપેલા છે.

	ચોરસ	અષ્ટાંશ	સોળાંશ	બત્રીશણંશ	ગોળ	
मत्स्यपुराण	રૂચક	વજ્ર	દ્વિવજ્રક	પ્રલીનક	વૃત	આમ પૃથક્ પૃથક્ ગ્રંથોમાં નામ અને સ્વરૂપ જુદા જુદા આપેલાં છે.
मानसार	બ્રહ્મકાંત	વિષ્ણુકાંત	રૂદ્રકાંત	સ્કંધકાંત (પાંચ કે ૭ હાંશનાને)		


कुंभी घटपल्लव युक्त
स्तम्भ भरणा सरा

भद्रैरलंकृता कुंभी स्तंभो भद्राष्टसवृतः ।
भरण्या पल्लवावृता शीर्षाग्र चाथ किन्नराः ॥११॥

પ્રાસાદના મંડપ ચોકીના સ્તંભના છોડનુ વર્ણન કરે છે કુંભી અલંકૃત નકશીવાળી ભદ્રયુક્ત કરવી એક સ્તંભમા જુદા જુદા સ્વરૂપ કહ્યા છે પરંતુ એક સ્તંભમા નીચે ભદ્ર વચ્ચે અષ્ટાશ્ર અને ઉપર વૃત્ત=ગોળ ઘટ પલ્લવયુક્ત પણ કરવા ભરણાના ભદ્ર કે પત્ર પાંદડા ખુલ્લા કરી નીચે ગોળ કર્ણિકા કરવી સરૂ એક યા બે ગુંડાવાળુ કરવુ અગર કિન્નર (કીચક) ના રૂપથી અલંકૃત કરવુ ૧૧

प्रासादकी मंडप चोकीके स्तंभके पोवेका वर्णन करते है। कुंभी अलंकृत नकशीवाली भद्रयुक्त करना। एक स्तंभमे भिन्न भिन्न स्वरूप कहे हैं। परंतु एक स्तंभमे नीचे भद्र बिचमे अष्टाश्र और उपरवृत्त=गोल घटपल्लवयुक्त करना। भरणेके भद्रके उपर पत्र पान खुले करके नीचे गोल कर्णिका करना। सरा एक या दो गुण्डेवाला करना। अगर किन्नर (कीचक) के रूपमे अलंकृत करना। ११

घटपल्लव कुंभीभिः स्तंभाः कार्यास्त्वलंकृता ।
ईलिकातोरणैर्युक्ता मदलैर्मंडिताः शुभाः ॥१२॥
देवाङ्गना अष्ट द्वादश षोडश जिन द्वात्रिंशा ।
चतुषष्टि कला युक्ता स्तंभे स्तंभे विराजिते ॥१३॥

સ્તંભના ઘાટ અનેક પ્રકારના થાય છે સાદા, નકશીવાળા, રૂપવાળા પણ થાય એક સ્તંભમા નીચે ભદ્રક તે ઉપર અષ્ટાશ્ર અને તે પર ગોળ વળી ઉપર છ એક ઇંચનો પટ્ટો અષ્ટાશનો કરી તેમા ગ્રાસમુખ કે ફૂલો કરે છે નીચે ગોળ ભાગમા કણી બાવણાના બંધો કરી ઊભી સાંકળી ટોકરી કે પુષ્પનો તોરો કરે છે સાંકળી ટોકરી એ આધ્યાત્મિકરૂપે સુચક તેના ઘાટ કહે છે એવા એના ઘાટના સ્તંભોની સુંદર રચના કુશળ શિલ્પીઓ પોતાના ભેજામાથી ઉપજાવી કાઢે છે જો કે તે અશાસ્ત્રીય તો નથી જ બારમી તેરમી સદીના સ્થાપત્યોમા અને ગોખોમા ઘટપલ્લવયુક્ત કળામય સ્તંભો સુંદર લાગે છે ચારે ખુણે કળામય પત્રો કરી વચ્ચે ઘટકુંભની આકૃતિ સ્તંભના મધ્યમા કરેલી જોવામા આવે છે દક્ષિણાપથ પ્રદેશમા કુંભીનો ઘાટ ખુણે પત્રો કરી મધ્યમા કુંભની આકૃતિ કરી કુંભીના નામને સાર્થક કરેલ જોવામા આવે છે.

મહાપ્રાસાદના કુંભી અને સ્તંભો ઘટપલ્લવોથી અલંકૃત શોભિત કરવા ઈલિકા તોરણ યુકત કે[3] મદળોવાળા સુંદર સ્તંભો કરવા. દેવાંગનાઓ=દેવકન્યા

अपराजित सूत्र १८४में स्तंभोंकी आकृतिके स्वरूप अिस प्रकार दिये हैं। अ० १५ में पृथक् पृथक् नामों और स्वरूपों दिये हैं।

आकृति	— चोरस	— अष्ठांश	— सोलांश	— बत्तीसांश —	गोल
मत्स्य पुराण	— रूचक	— वज्र	— द्विवज्रक	— प्रलीनक —	वृत
मानसार	— ब्रह्मकांत	— विष्णुकात	— रुद्रकांत	— स्कंधकांत —	पंच–छहांश

पृथक् पृथक् ग्रँथों में नाम और स्वरुप भिन्न भिन्न दिये हैं। स्तंभ के घाट अनेक प्रकारके होते हैं। सादे–नकशीवाले रूपवाले भी होते है। अेक स्तंभमें नीचे भद्रक उसके उपर अठांश और उपर गोलवलीके उपर छः ईंचका लगभग पट्टा अठांशका कर उसमें ग्रास मुख या फूलों करते है। नीचे गोल भागमें कणी स्तंभके वंधको कर खडी सांकल टोकनी या पुष्पका तोरा बनाते हैं। सांकली, टोकरी, आध्यात्मिक रूपसे सुचक उसके घाट कहते हैं। अैसे अैसे घाटके स्तंभोंकी सुंदरत रचना कुशल शिल्पीयो अपने दिमागमेंसे उत्पन्न करते हैं। यद्यपि वह अशास्त्रीय तो नहीं है।



कर्णाटक शैलीकी दर्पणयुक्त विधिचिता देवाङ्गना

बारहवीं तरहवीं सदीके स्थापत्यों में अवशेषोंमें घटपल्लवयुक्त कलामय स्तंभों सुंदर लगते हैं। चारों कोनेमें कलामय पत्रोंका बिचमें घटकुंभकी आकृति कर कुंभीके नामको सार्थक किया हुआ देखनेमें आता हैं।

(૩) બે સ્તંભો વચ્ચેના લાંબાગાળાના પાટની મજબુતાઈ શોભા સાથે કરવાને મદળો કરવામાં આવે છે. તે કમાન જેવું સુંદર દેખાય છે. તોરણ કે કાચલાવાળા તોરણ કરતાં મદળોની મજબુતાઈ વિશેષ રહે છે. તોરણની પુરાણી શૈલીનું સ્થાન કાચલાવાળી પડદીવાળી કમાને લીધું. તે પાછલા કાળની કૃતિ છે. પૂર્વ સૂત્રમા સાદી કમાનો પંદરમી સદી પછી

આઠ બાર સોળ ચોવીશ કે બત્રીશ નૃત્યાદિ ચેષ્ટા કરતી ચોસઠ કળાયુક્ત એવા લક્ષણોવાળી થાભલે થાભલે મૂકવી[४] १२-१३

महाप्रासादके कुंभी और स्तभों घट्टपल्लवोंसे अलकृत करना। ईलिका तूल-युक्त [१]मदलेवाले सुदर स्तभों करना। देवाङ्गनाओं-देवकन्या आठ बारह सोलह चौवीस या बत्तीस नृत्यादि चेष्टा करती चोसठ कलायुक्त ऐसे लक्षणोंवाली प्रत्येक स्तभ पर रखना।[४] १२-१३

आद्यथरजाड्यकुंभ कर्णिका ग्रास एव च।
इत्येवं पीठ बन्धस्य भ्रमतश्च प्रदक्षिणे ॥१४॥
कुंभ कलश कपोताल्या वा राजसेन वेदिका।
आसन्न पट्टश्च कार्यं कक्षासन विभूषितं ॥१५॥

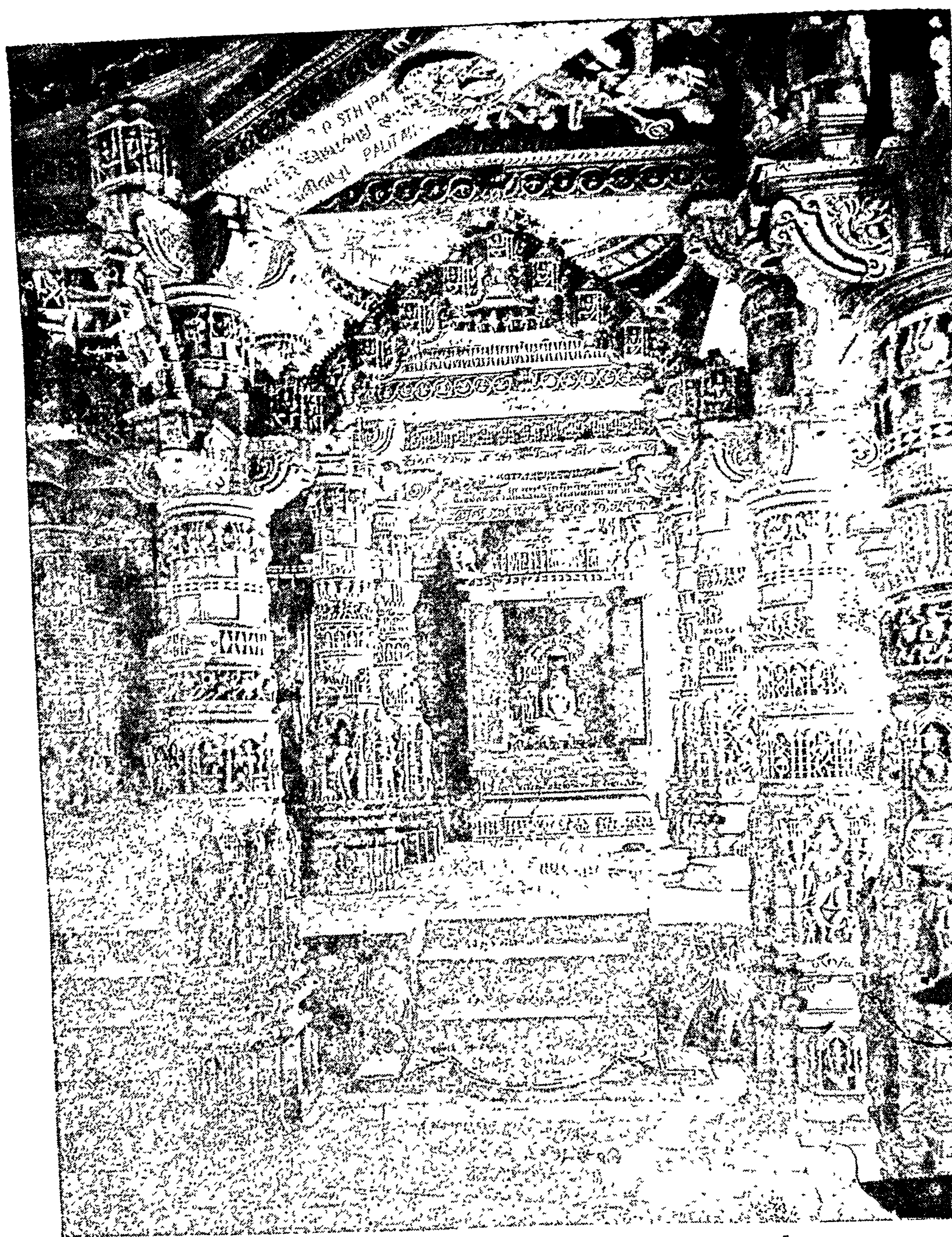
ખુલ્લા મડપને (१) પહેલા થરમા ભિટ્ટ જાડબો ડણી અને ગ્રાસપટ્ટીનુ પીઠ બધ ફરતુ પ્રદક્ષિણાએ કરવુ અગર (२) કુભો કળશો કેવાળ ને પુષ્પકઠના થરો અગર (३) પીઠ પર રાજસેવક વેદિકાને આસનપટ્ટ મૂકી તે પર કક્ષાસનથી શોભતો મડપ કરવો (આવા ત્રણ પ્રકારના જુદા જુદા કક્ષાસનના નામો વૃક્ષાર્ણવમા આપેલા છે) १४-१४

ભારતમા પ્રવિષ્ઠ થઈ જોકે કમાન બીજા રૂપે ભારતમા બૌદ્ધ કાળની સ્થાપત્યોમા જોવામા આવે છે કમાનની જેમ ઘુમટ પણ સાદારૂપે પાછળથી પદરમી સોળમી સદીમા ભારતીય સ્થાપત્યમા દાખલ થયા

(३) दो स्तभोंके पिचके लम्बे अतरके पाटकी मजबूतीको शोभाके साथ करनेके लिये मदल किया जाता है। यह कमानकी तरह सुदर दिखता है। तोरणके काचलेवाली कमान मदलोंकी मजबूती विशेष रहती है। इलकी पुरानी शैलीका स्थान काचलेवाली पडदीवाली कमानने लिया। यह पीछले कालकी कृति है। धूव सूत्रमे सादी कमानों सोलहवीं सदीके बाद भारतमे प्रविष्ठ हुई। यद्यपि कमान दूसरे रूपमे भारतमे बौद्धकालकी देरानमें आती है। कमानकी तरह गुंबज भी सादे रूपमे पीछेसे पद्रहवीं सोलहवीं सदीमे भारतीय स्थापत्यमे प्रविष्ट हुआ।

(४) દેવાગના=દેવકન્યાના સ્વરૂપો અને નામ લક્ષણો બત્રીશ કહેલા છે શરીરના અગ મરોડ અને ચેષ્ટાપરથી તેના લક્ષણ અને નામો જુદા જુદા સવિસ્તર બહુસુદર રીતે વૃક્ષાર્ણવના १४०મા અધ્યાયમા આપેલા છે કલ્પિત દેવાગનાનુ સ્વરૂપ કરવુ નહિ તેમ શાસ્ત્રોક્ત પાઠ સાથે તેના આલેખન સહિત આ ગ્રથ અધ્યાય १२०મા સચિત્ર આપેલા છે તે જોવુ

(४) देवागना-देवकन्याके स्वरूपों और नाम लक्षण बत्तीस कहे हैं। शरीरके अग मरोड और चेष्टा परसे लक्षण और नाम भिन्न भिन्न सविस्तर बहुत सुदर ढगसे वृक्षार्णवके अ १४०मे दिये हैं। कल्पित देवागनाका स्वरूप नहीं करना। उसके शास्त्रोक्त पाठके साथ उसके आलेखन सहित यह क्षीरार्णव ग्रथमे अ १२०में सचित्र दीया है सो देखना।



सुंदर कलामय रुपस्तम्भके छोड, गवाक्ष और ईलिका तोरण (आबु देलवाडा)

આઠ બાર સોળ ચોવીશ કે બત્રીશ નૃત્યાદિ ચેષ્ટા કરતી ચોસઠ કળાયુકત એવા લક્ષણોવાળી થાભલે થાભલે મૂકવી ४ १२-१३

महाप्रासादके कुंभी और स्तभो घट्टपल्लवोसे अलकृत करना। ईलिका शूल-युक्त ३मदलेवाले सुंदर स्तभों करना। देवाङ्गनाओं-देवकन्या आठ बारह सोलह चोवीस या बत्तीस नृत्यादि चेष्टा करती चोसठ कलायुक्त ऐसे लक्षणोंवाली प्रत्येक स्तभ पर रखना।४ १२-१३

आद्यथरजाड्यकुंभ कर्णिका ग्रास एव च।
इत्येवं पीठ बन्धस्य भ्रमतश्च प्रदक्षिणे ॥१४॥
कुंभ कलश कपोताल्या वा राजसेन वेदिका।
आसन्न पट्टश्च कार्यः कक्षासन विभूषित. ॥१५॥

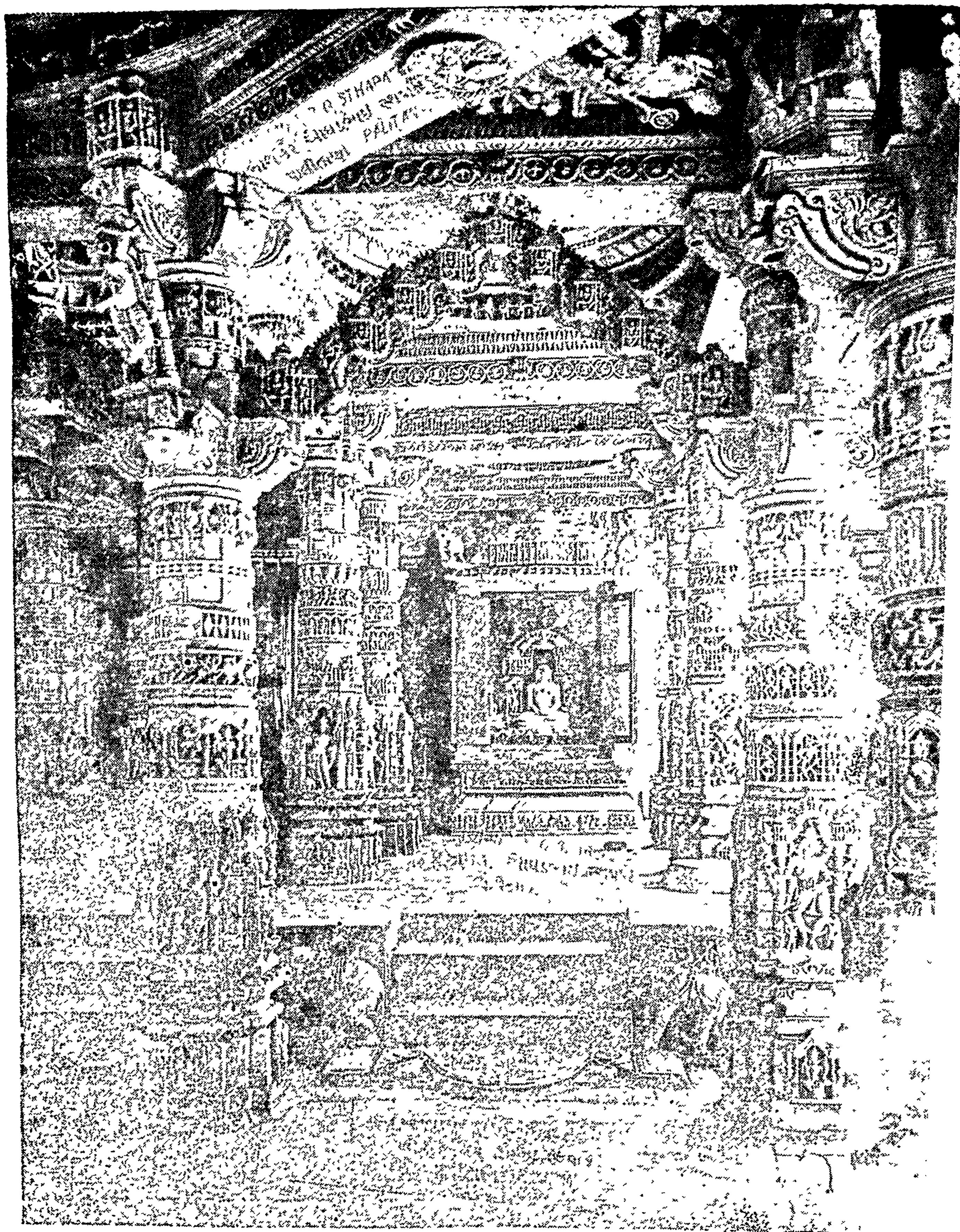
ખુલ્લા મડપને (૧) પહેલા થરમા ભિટ્ટ જાડબો કણી અને ગ્રાસપટ્ટીનુ પીઠ બધ ફરતુ પ્રદક્ષિણાએ કરવું અગર (૨) કુભો કળશો કેવાળ ને પુષ્પકંઠના થરો અગર (૩) પીઠ પર રાજસેનક વેદિકાને આસનપટ્ટ મૂકી તે પર કક્ષાસનથી શોભતો મડપ કરવો (આવા ત્રણ પ્રકારના જુદા જુદા કક્ષાસનના નામો વૃક્ષાર્ણવમા આપેલા છે) १४-१४

ભારતમા પ્રવિષ્ટ થઈ જોકે કમાન બીજા રૂપે ભારતમા બૌદ્ધ કાળની સ્થાપત્યોમા જોવામા આવે છે કમાનની જેમ ઘુમટ પણ સાદારૂપે પાછળથી પદરમી સોળમી સદીમા ભારતીય સ્થાપત્યમા દાખલ થયા

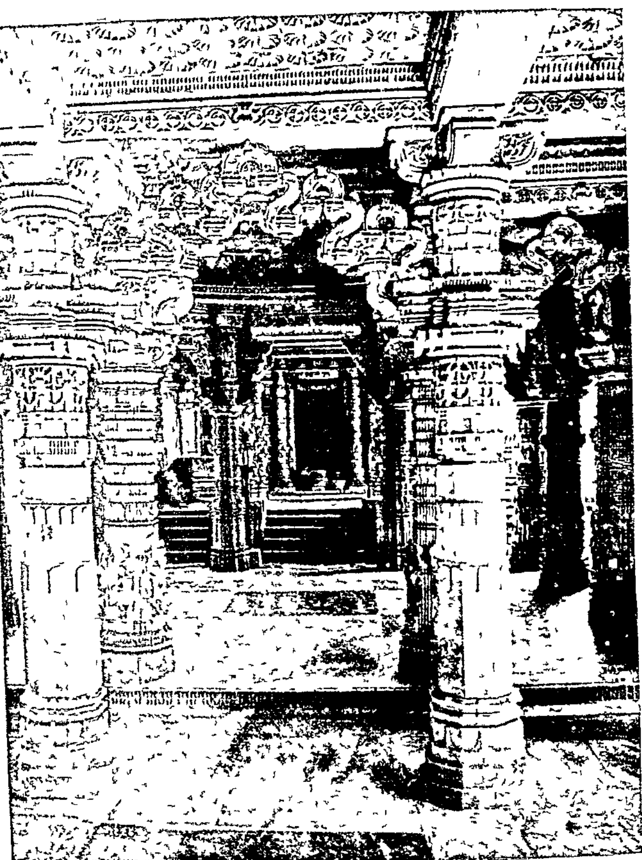
(३) दो स्तभाके पिचके लम्बे आरके पाटको मजबूतीको शोभाके साथ करनेके लिये मदल किया जाता है। यह कमानकी तरह सुंदर दिखता है। तोरणके वाचलेवाली कमान मदलाकी मजबूती विशेष रहती है। इसकी पुरानी शैलीका स्थान वाचलेवाली पडदीवाली कमानने लिया। वह पीछले कालकी कृति है। प्रथ सूत्रमें सादी कमानों सोलहवीं सदीके बाद भारतमें प्रविष्ट हुई यद्यपि कमान दूसरे रूपमें भारतमें बौद्धकालकी देखनेमें आती है। कमानकी तरह गुंबज भी सादे रूपमें पीछेसे पद्रहवीं सोलहवीं सदीमें भारतीय स्थापत्यमें प्रविष्ट हुआ।

(४) દેવાગના=દેવકન્યાના સ્વરૂપો અને નામ લક્ષણો બત્રીશ કહેલા છે શરીરના અગ મરોડ અને ચેષ્ટાપરથી તેના લક્ષણ અને નામો જુદા જુદા સવિસ્તર બહુસુદર રીતે વૃક્ષાર્ણવના १४०મા અધ્યાયમા આપેલા છે કલ્પિત દેવાગનાનુ સ્વરૂપ કરવુ નહિ તેમ શાસ્ત્રોક્ત પાઠ સાથે તેના આલેખન સહિત આ ગ્રથ અધ્યાય १२०મા સચિત્ર આપેલા છે તે જોવુ

(४) देवागना-देवकन्याके स्वरूपों और नाम लक्षण बत्तीस कहे हैं। शरीरके अग मरोड और चेष्टा परसे लक्षण और नाम भिन्न भिन्न सविस्तर बहुत सुंदर ढगसे वृक्षार्णवके अ १४०मे दिये हैं। कल्पित देवागनाका स्वरूप नहीं करना। उसके शास्त्रोक्त पाठके साथ उसके आलेखन सहित यह क्षीरार्णव ग्रथमें अ १२०में सचित्र दीया है सो देखना।

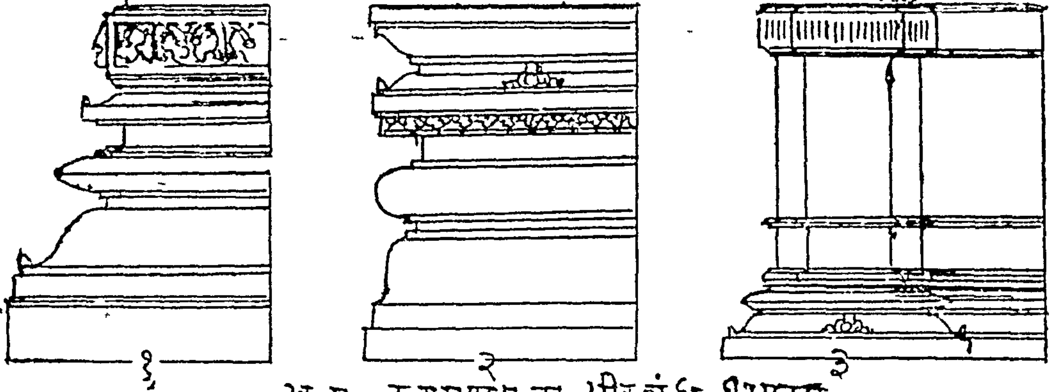


सुंदर कलामय रुपस्तम्भके छोड, गवाक्ष और ईलिका तोरण (आबु देलवाडा)



आबु–वस्तुपाल मंदिर के स्तम्भोंकी विविधता और हींडोल्क (आदोल्क) तोरण

खुले मंडपको (१) पहले थरमें भिट्ट जाडंबा कणी और ग्रासपट्टीका पीठ बंध फिरती प्रदक्षिणामें करना। अगर (२) कुंभ कलश केवाल और पुष्पकंठका थर अगर (३) पीठपर राजसेवक वेदिका और आसन रख कर उसकेपर कक्षासनसे मंडप करना। (ऐसे तीनों प्रकारके भिन्न भिन्न कक्षासनके नामों वृक्षार्णवमें दिये हैं। १४–१५.)

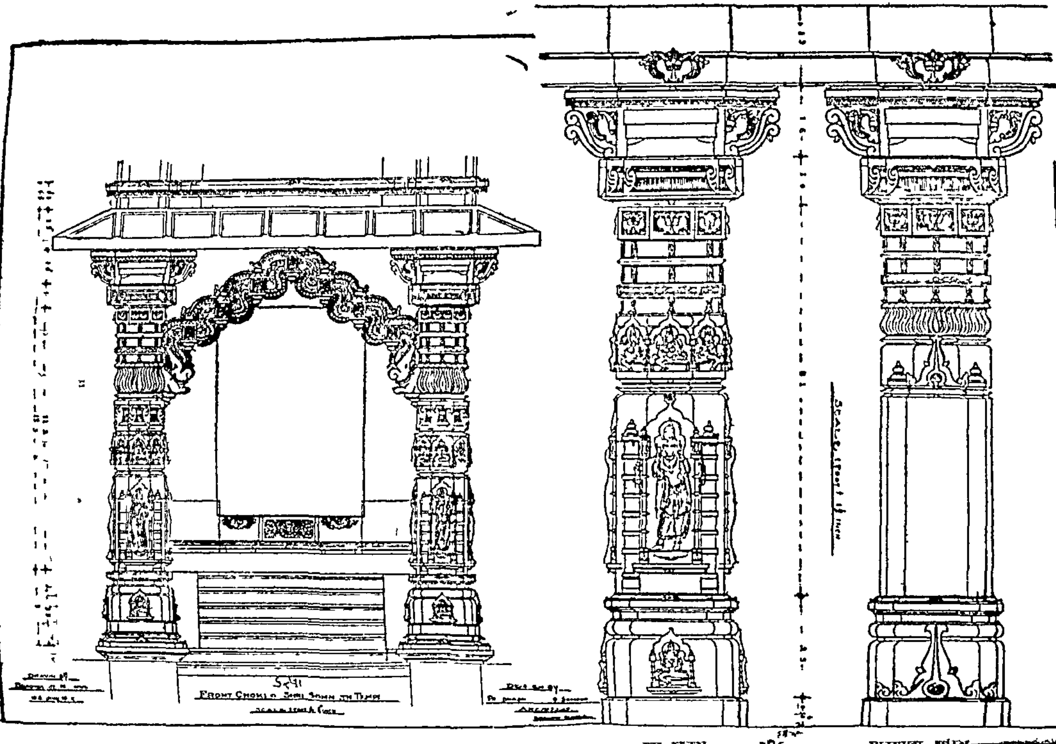


खुल्ला - नृत्यमण्डप का पीठबंन्ध. तीन प्रकार.

प्रासाद् स्त्रिपंच भूमिः सप्तभिः र्नवभिस्तथा।
ब्रह्मस्थानं सदारम्यं स्वर्ग प्रासाद शाश्वतम् ॥ १६ ॥
चतुर्मुखो ब्रह्मणो हि विष्णावेः कुर्याद् विशेषतः।
चतुर्मुखश्च रुद्रस्य प्रासादः पुण्यहेतवे ॥ १७ ॥
यथा दिन विना सूर्य शशांक विना शर्वरी।
यस्मिन् देशे चतुर्मुखः प्रासादोन हि विद्यते ॥ १८ ॥



दीगंम्वर शिव–नृत्य शिव–नृत्य ईशानदेव–दिग्पाल दिग्पाल ब्रह्मा


FRONT CHOKI
SCALE

મહાપ્રાસાદ ત્રણ પાંચ સાત કે નવ ભૂમિ–માળવાળા કરવા. સ્વર્ગ જેવા શાશ્વત પ્રાસાદમાં બ્રહ્મ=મધ્યસ્થાન હમેશાં રમ્ય કરવું. બ્રહ્મ વિષ્ણુ અને રૂદ્રના ચતુર્મુખ પ્રાસાદ કરાવવાથી મહદ્દપુણ્ય ઉપાર્જન થાય છે. જે દેશમાં આવા રમ્ય ચતુર્મુખ પ્રાસાદ નથી તે દેશ સૂર્ય વગરના દિવસ જેવો કે ચંદ્ર વિનાની રાત્રિ જેવો જાણવો. ૧૬–૧૭–૧૮.

महा प्रासाद तीन पाँच सात या नौ भूमि मजलेवाले करना। स्वर्ग जैसे शाश्वत प्रासादमें ब्रह्म मध्यस्थान हमेशा रम्य करना। ब्रह्मा विष्णु और रुद्रके चतुर्मुख प्रासाद करानेसे महद् पुण्य उपार्जन होता है। जिस देशमें ऐसे रम्य चतुर्मुख प्रासाद नहीं है वह देश सूर्यके विना दिन जैसा या चंद्रके विना रात्रि जैसा जानना। १६–१७–१८.

शिवरूपं च कर्तव्यं वामाऽघोर मीशानकम्।
लास्य तांडव नृत्यं च वैतालं च विशेषतः॥१९॥
नारद स्तुम्बरुश्चैव वादित्रै र्विविधैः सह।
सिद्धि बुद्धि समायुक्ते नृत्यकृद् गणनायकः॥२०॥
अष्टाशिति सहस्राणि ऋषि रुपाण्यनेकधा।
चतुसहस्र गोपीयुक्त कृष्णः परिकरै र्वृतः॥२१॥
स्त्री युग्म संयुते रुपं लोकलीलां प्रदर्शयेत्।
[५]मिथुनैः पत्र वल्लिभिः प्रमथैश्चय शोभयेत्॥२२॥

---

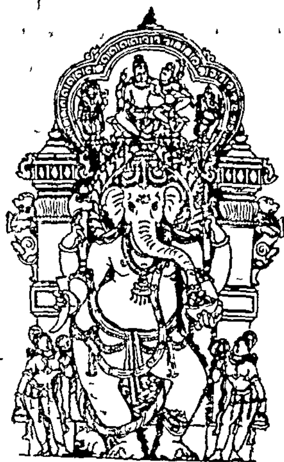
(૫) મિથુનનો અર્થ શિલ્પી બંધુઓએ મૈથુનમાની અનેક જૂના પ્રાસાદોમાં તેવી આકૃતિઓ કુતુહલ વૃત્તિથી કોરેલી છે. અશ્લીલ સ્વરૂપો ઘણા જૂના મંદિરોમાં તેવી ચેષ્ટા કરતા ખુણે ખાંચરે મંડોવરમાં, છતમાં, કુંભાંમાં કે નરપીઠમાં કરેલી જોવામાં આવે છે. તે સહેતુ છે. એવી પણ એક માન્યતા પ્રવર્તે છે. આવાં સ્વરૂપો ઓરીસ્સા, ભુવનેશ્વર, જગન્નાથજી અને કોણાર્કના સૂર્યમંદિરમાં મોટા અને આબુ રાણકપુરના જૈન મંદિરોમાં નાનાં સ્વરૂપો કરેલાં છે.

નોટ—આ ગ્રંથની કેટલીક અપૂર્ણ પ્રતોમાં ફક્ત નવ જ શ્લોક છે. વળી શ્લોક ૧૩થી ૨૩ સુધી દીપાર્ણવ ગ્રંથને મળતા છે.

(५) मिथुनका अर्थ शिल्पी बंधुओंने मैथुन मानकर अनेक पुराने प्रासादोंमें वैसी आकृतियों कुतूहल वृत्तिसे कैंडारी हैं। अश्लील स्वरूपों बहुत पुराने मंदिरोंमें वैसी चेष्टा करते कोनेमें –मंडोवरमें, छत्में, कुंभामें या नरपीठमें की हुई देखनेमें आती हैं। वह सहेतु है अैसी भी अेक मान्यता प्रवर्तती है। अैसे स्वरूपों ओरीसा, भुवनेश्वर जगन्नाथजी और कोनार्कके सूर्य मंदिरमें वडे और आबु राणकपुरके जैनमंदिरोंमें छोटे स्वरूपों बनाया हे। नोट–अिस ग्रंथकी कुछ अपूर्ण प्रतोंमें सिर्फ नौ ही श्लोक १३से २१ तक पाठों दीपार्णव ग्रंथको मिलते जुलते है।



राम पचायतन युक्त वानर सेना साथ हनुमत

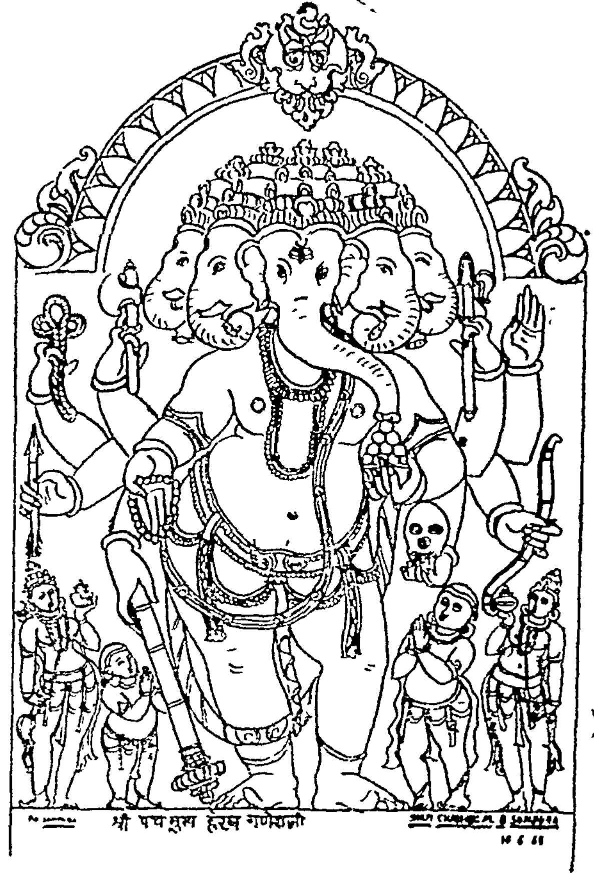


शिव पचायतन युक्त गणपति विरालिका साथ स्तभ तोरण नीम्न सिद्धि ओर सिद्धि नार

શિવના પ્રાસાદના મ ડપમા શિવના અનેક સ્વરૂપો વામ અઘોર, તત્પુરૂષ ઈશાનાદિ કરવા લાસ્ય તાડવ નૃત્ય કરતા શિવના સ્વરૂપો કરવા વૈતાલના પણ રૂપો કરવા (તે રીતે જે દેવોનો પ્રાસાદ હોય ત્યા તેવા સ્વરૂપો કરવા.) નારદ તુબરૂ વિવિધ વાજીત્રયુક્ત સિદ્ધિબુદ્ધિ સહિત નૃત્ય કરતા ગણપતિના રૂપ કરવા અઠ્ઠાશી હજાર ઋષિમુનિના અનેક સ્વરૂપો ચોરાશી હજાર ગોપી સહિત કૃષ્ણથી ફરતા પરિકરયુકત સ્વરૂપો (વિષ્ણુમ દિરમા ને મ ડપમા) કરવા સ્રીપુરુષના જોડલા રૂપો લોકલીલા કરતા દર્શાવવા સ્રીપુરુષના યુગ્મરૂપો કમળના પત્રો અને વેલડીઓથી રૂપો શોભતા કરવા ૧૯–૨૦–૨૧–૨૨

शिवके प्रासादके मडपमे शिवके अनेक स्वरूपों वाम अघोर तत्पुरूप इशानादि करना । लास्य ताडव नृत्य करते शिवके स्वरूप करना । वैतालके रूपों भी करना । (इस तरह देवोंका प्रासाद हो वहाँ वैसे स्वरूपों करना ।) नारद तुंबरू, विविध वाजित्र युक्त सिद्धि बुद्धि सहित नृत्य करते गणपतिके रूप करना । अट्ठाशी हजार ऋषि मुनिके अनेक स्वरूपों चौरासी हजार गोपी सहित कृष्णसे फिरते परिकरयुक्त स्वरूपों (विष्णु मदिरमे तथा मंडपोंमें)





पंचमुख रुद्र हनुमंत मनुष मुखहस्ती करी सिंह वराह पंचमुख हेरंम्व गणपति परिकर युक्त करना । स्त्रीपुरुषके युगलरूपों लोकलीला करते दिखाना । स्त्रीपुरुपके युग्मरूपों कमलके पत्रों और वेलियोंसे रूपोंको शाभित करना । १९–२०–२१–२२.

आदित्य सूर्यका बारा स्वरुप



१ सुधाता

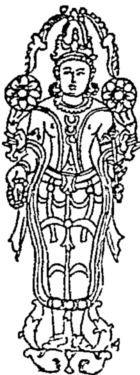


२ मित्रा

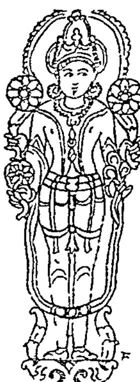


३ आर्य मणि

इंद्रादि लोकपालाश्च नृत्यकुर्वीत ते सदा।
भास्करादि ग्रहः कार्या द्वादश राशयस्तथा ॥२३॥
सप्तविंशतिर्नक्षत्रा कर्तव्यानि प्रयत्नतः।
अष्टावाया श्चाष्टकरया नवतारा स्वरूपकम् ॥२४॥



४ रुद्र



५ वरुण



६ सूर्य

आदित्य सूर्यका स्वरूप



७ भग

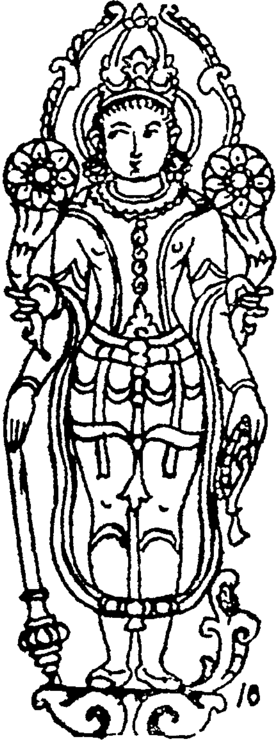


८ विवस्वान



९ पुषा

आदित्य सूर्यका स्वरुप







१० सविता ११ त्वष्टा १२ विष्णु

सप्तस्वराश्च षड्रागाः षट्त्रिंशत्स्वरागिनिकाः ।
द्वादशमेघरुपाणि कर्तव्यानि प्रयत्नतः ॥२५॥

नवग्रह











सूर्य चंद्र मंगल बुध गुरु



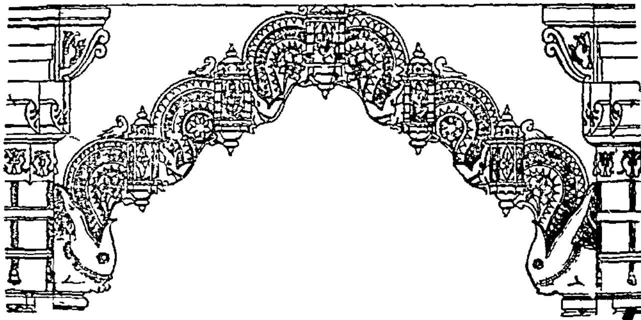




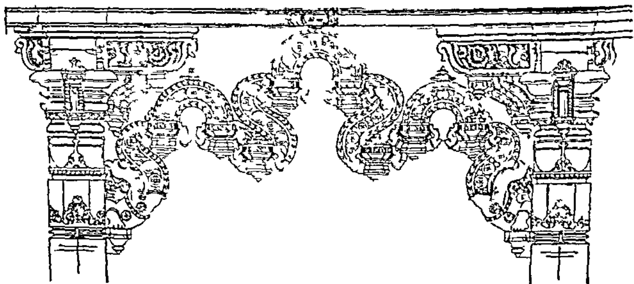


शुक्र शनी राहु केतु

यक्ष गंधर्व विद्याद्या' पन्नगाः किन्नरास्तथा ।
अनेक देवता नृत्य-मंडपे परिवेष्टिताः ।
इलिकातोरणैर्युक्ता गजसिंहविरालिका ॥ २६ ॥

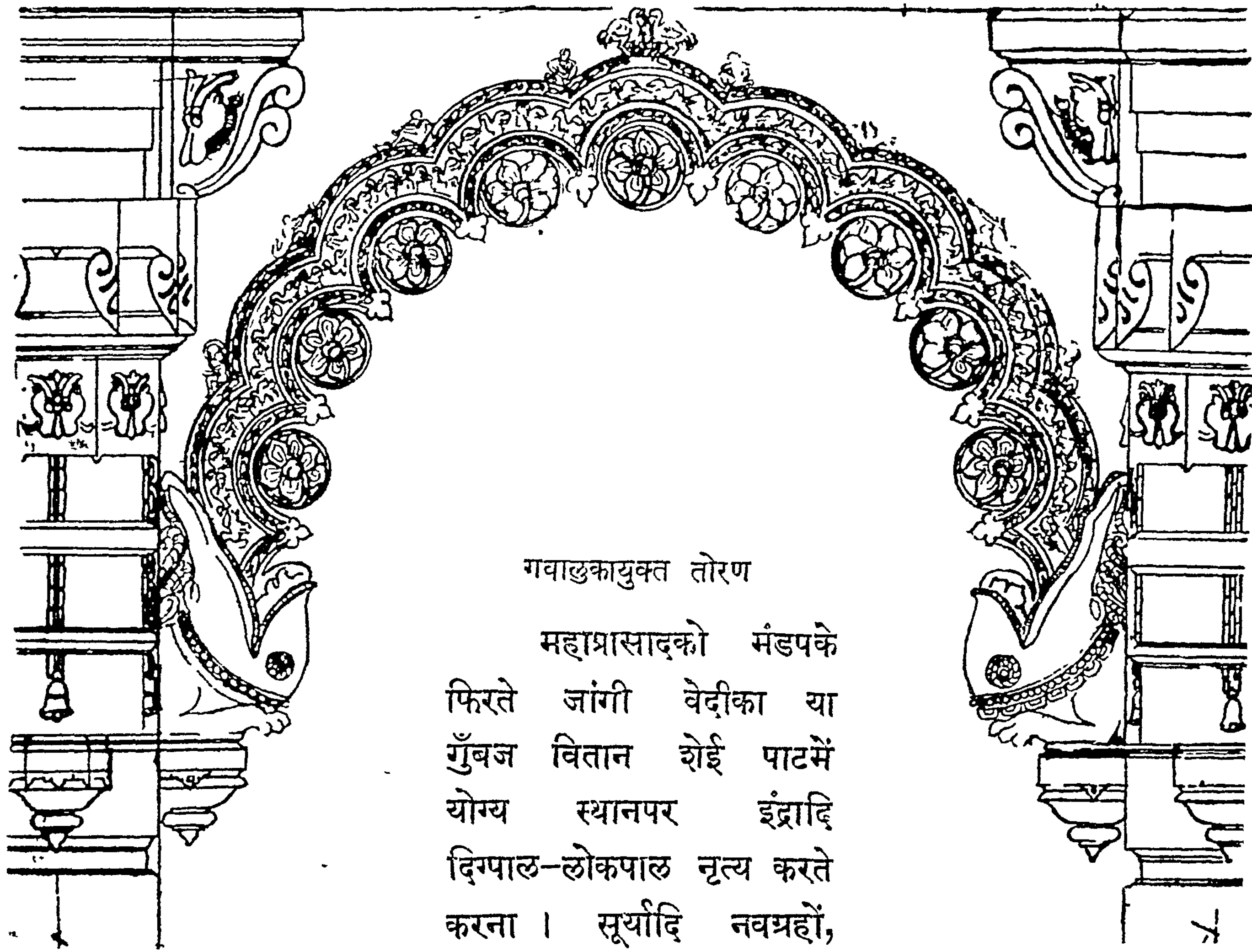


मदल युक्त तिलक तोरण इलिका तोरण



स्तभ भरणा सरा मदल आदोलक हींडोलक तोरण

મહાપ્રાસાદને કે મંડપની ફરતા જાગી વેદિકા કે ઘુમટ વિતાન શેઇપાટમા ચોગ્ય સ્થાને ઇંદ્રાદિ દિગ્પાલ નૃત્ય કરવા, સૂર્યાદિ નવ ગ્રહો, બાર રાશિઓ, સત્તાવીશ નક્ષત્રો, આઠ આય, આઠ વ્યય, નવતારા, સાત સ્વર છ રાગ, છત્રીશ રાગિણી, બારમેઘ, યક્ષગાધર્વ વિદ્યાધરો, નાગ, કિન્નરો વગેરે અનેક દેવો દેવી દેવતાઓના સ્વરૂપો મંડપ ફરતા નૃત્ય કરતા કરવા (મુખ્ય સ્વરૂપને) ઈલિકા તોરણ સાથે ગજસિંહ અને વિરાલિકા સાથે થાભલી સાથે કરવા ૨૩ ૨૪ ૨૫-૨૬



गवाक्षकायुक्त तोरण

महाप्रासादको मंडपके फिरते जांगी वेदीका या गुँबज वितान शेई पाटमें योग्य स्थानपर इंद्रादि दिग्पाल–लोकपाल नृत्य करते करना। सूर्यादि नवग्रहों, बारह राशियों, सत्ताईश नक्षत्रों, आठ आय आठ व्यय, नवतारा, सात स्वर, छः राग छत्तीस रागिणी, बारहमेघ, यक्ष, गँधर्व, विद्याधरों, नाग, किन्नरों वगैरह अनेक देवों देवी देवताओंके स्वरूपों मंडपके फिरते नृत्य करते करना। (मुख्य स्वरूपको) इलिका झूलके साथ गजसिंह और विरालिकाके साथ स्तंभिका के साथ करना। २३–२४–२५–२६.

इतिश्री विश्वकर्माकृतायां क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां स्तंभ मान लक्षणाध्याये शताग्रे पंचदशमोऽध्याय ॥११५॥ क्रमांक अ० १७

ઈતિશ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ નારદજીએ પૂછેલ સ્તંભમાન લક્ષણનો શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકાનો એકસો પંદરમો અધ્યાય ૧૧૫. ક્રમાંક અધ્યાય ૧૭.

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें नारदजीके पूछे हुए स्तंभमान लक्षणका शिल्प विशारद श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रचि हुआी सुप्रभा नामकी भाषाटीका का एकसो पँद्रहवाँ अध्याय ॥११५॥ क्रमांक अध्याय १७

॥ अथ मंडपाधिकार ॥

क्षीरार्णव (अ० ११६) क्रमाक अ० १८

विश्वकर्मा उवाच—

उत्सवार्थे प्रयत्नेन कर्तव्या शुभमडपा ।
प्रासाद राजवेश्मानि वापी कुप तडागयो ॥ १ ॥
तत्रैव मंडपा कार्यां ऋषिराज शृणोत्तमा ।
प्रासादाग्रे महारम्या मडपास्यामनेकधा ॥ २ ॥

श्री विश्वकर्मा कहे छे यज्ञयागादि उत्सवकार्यमा शुभ एवा मडप, प्रासाद आगळ राजभवन, आगळ, वाव कुवा, तळावादि जळाश्रय आगळ मडपो करवानु हे ऋषिराज! हवे सांभळो प्रासादनी आगळ महारम्य एवा अनेक प्रकारना मडपो करवा कह्या छे १-२

श्री विश्वकर्मा कहते हैं। यज्ञयागादि उत्सव कार्यमे शुभ ऐसे मडप प्रासादके आगे राजभवनके आगे, वाव-कूप तालावादि जलाश्रय आगे मडप करनेका हे ऋषिराज, अब सुनो। प्रासादके आगे महारम्य ऐसे अनेक प्रकारके मडप करनेके लिये कहे हैं। १-२

प्राग्वादि विजयाद्यं मडपा उत्क्रमानतः ।
द्विस्तंभ स्ततो वृद्धि मंडपा पुष्प उच्यते ॥ ३ ॥
कन्यसं च ततो हीन द्विगुण नैव कारयेत् ।
जगती मंडपा प्राज्ञ ग्रस्तदोषं परित्यजेत् ॥ ४ ॥

प्राग्वादि अने विजयादि अनेक मडपो मानथी कह्या छे पुष्पकादि प्रकारना मडपो प्रथम सुभद्र मडपथी बब्बे थांभलानी वृद्धिए पुष्पकादि २७ मडपो कह्या छे कनीष्ठमानथी हीन पण ते पदथी बमणो (मडप) कदि न करवो सुज्ञ शिल्पीए जगतीथी मडप नीचो गाळवानो दोष न करवो ३-४

प्राग्वादि और विजयादि अनेक मडपों मानसे कहे हैं। पुष्पकादि प्रकारके मडपां प्रथम सुभद्र मडपसे दो दो स्तभोंकी वृद्धिकर पुष्पकादि २७ मडपां कहे हैं। कनीष्ठमानसे हीन भी उस पदसे दूगना (मडप) कभी नही करना। सुज्ञ शिल्पीको जगतीसे मडप नीचा गाढनेका दोष न करना। ३-४

प्रथमे सम सपाद सार्द्धंच पादोनद्वयम् ।
द्विगुणं चाडपि कर्तव्या सपाद द्वयमेव च ॥ ५ ॥

सार्द्धं द्वयं तु कर्तव्यं अत ऊर्ध्वन कारयेत् ।
सप्तधा प्रमाण सूत्रं वास्तुविद्भिरुदाहृतम् ॥ ६ ॥

મંડપના વિસ્તાર પ્રમાણુ હવે કહે છે (૧) પ્રથમ પ્રાસાદ જેટલો (૨) પ્રાસાદથી સવાયે. (૩) પ્રાસાદથી દોઢો (૫) પ્રાસાદથી પોણુા બે ગણો (૫) પ્રાસાદથી બમણો (૬) પ્રાસાદથી સવા બે ગણો (૭) પ્રાસાદથી અઢીગણો મંડપ કરવો તે સાત પ્રમાણુ જાણુવા તેથી મોટો મંડપ ન કરવો. વાસ્તુશાસ્ત્રના જ્ઞાતાઓએ એ રીતે સાત પ્રમાણુ સૂત્ર મંડપના કહ્યા છે. ૫–૬.

मंडपके विस्तार प्रमाण अब कहते हैं । (१) प्रथम प्रासादके बराबर (२) प्रासादसे सवा गुना (३) प्रासादसे डेढ़ गुना (४) प्रासादसे पौने दो गुना (५) प्रासादसे दो गुना (६) प्रासादसे सवा दो गुना (७) प्रासादसे ढाई गुना मंडप करना । ये सात प्रमाण कहे । इससे बड़ा मंडप नहीं करना । वास्तुशास्त्रके ज्ञाताओंने इसी तरह सात प्रमाण सूत्र मंडपके कहे हैं । ५-६.

[1]समं सपादं पंचाशत्पर्यंतं दशहस्तकम् ।
दशत्पंच हस्ते सार्द्धं चतुर्हस्ते द्वयपादून ॥ ७ ॥
त्रिहस्ते द्विगुणं तद्विशिष्टा चतुष्किका ।
चतुष्कं वाऽपि चाष्टांश शुकस्तंभानुंसारत् ॥ ८ ॥

પચાશ હાથથી દશ હાથના પ્રાસાદોને પ્રાસાદ જેટલો સમ અગર સવાયો મંડપ કરવો. પાંચથી દશ હાથના પ્રાસાદને દોઢો, ચાર હાથના પ્રાસાદને પોણુા બે ગણો ત્રણુ હાથનાને બમણો અને તેનાથી ઓછા નાના પ્રાસાદને વિશિષ્ઠ એવું ચોકિયાળું કરવું. ચોકી ચોરસ કે અષ્ટાંશ શિખરના આગળ શુકનાશના શુક સ્તંભને અનુસરતા પાદમંડપ જેવું કરવું. ૭–૮.

पचास हाथसे दस हाथके प्रासादोंको प्रासादके बराबर सम अगर सवा गुना मंडप करना । पाँचसे दस हाथके प्रासादको डेढ गुना, चार हाथके प्रासादको पौने दो गुना तीन हाथके प्रासादको दूगना और इससे कम छोटे

[1] अपराजितसूत्र १८५ માં આને મળતો પાઠ છે. મહારાજા ભોજદેવ વિરચિત समराङ्गण सूत्रधार अ० ६७માં લઘુ પ્રાસાદને મોટો મંડપ કરવો હોય તો થઈ શકે. વાસ્તુભૂમિના સંકોચના કારણે ઓછો પણુ કરી શકાય તે આગળ જતા મહામંડપનું કહે છે.

शतमष्टोतरं ज्येष्ठश्चतुःषष्ठि करोऽवरः ।
कनिष्ठो मंडपः कार्यो द्वात्रिंशत्कर संमितः ॥

એકસો આઠ હાથનો જ્યેષ્ઠ મંડપ, ચોસઠ હાથનો મધ્યમાનનો અને બત્રીશ હાથનો કનિષ્ઠમાનનો મંડપ રચી શકાય છે.

प्रासादको विशिष्ट ऐसी चोकी करना । चोकी चोरस या अग्राश शिखरके आगेके शुकनासके शुकस्तभको अनुसरते पादमंटप जैसा करना । ५–८

शुकनासे समाघटा कर्तव्या सर्व कामदा ।
तेन मानेन पादान्त(?) मंडपोदय समुत्सृजेत् ॥ ९ ॥

પ્રાસાદના શુકનાસની બરાબર મંડપની શામરણની મૂળ ઘટા સમાન એક સૂત્રમા રાખવી તે સર્વ કામનાને આપનાર જાણવુ તેથી તે માનથી મંડપની ઊંચાઈ રાખવી [२] ૯

प्रासादके शुकनासके बराबर मंडपकी शामरणकी मूल घटाके समान एक सूत्रमे रखना । उसे सर्व कामनाको देनेवाला जानना । इससे उस मानसे मडपकी ऊँचाई रखना ।[२] ९

नरपीठस्य चोर्ध्वं तु उत्तरङ्गस्य मस्तके ।
कृत्वा दश सार्द्धानि भागैक राजसेनकं ॥१०॥
वेदिका च द्विभागा तु भागार्द्धासनपट्टकं ।
स्तंभश्चैव चतुर्भागा भागार्धं भरणं भवेत् ॥११॥
शरं च भागमेकेन पट्टश्च सार्द्ध भागकः ।
कन्यसं च समाख्यातं मध्यमं चमतः शृणु ॥१२॥

भाग	
१	राजसेनक
२	वेदिका
०॥	आसनपट
४	स्तभ
०॥	भरणा
१	शरु
१॥	पाट
१०॥	भागउदय

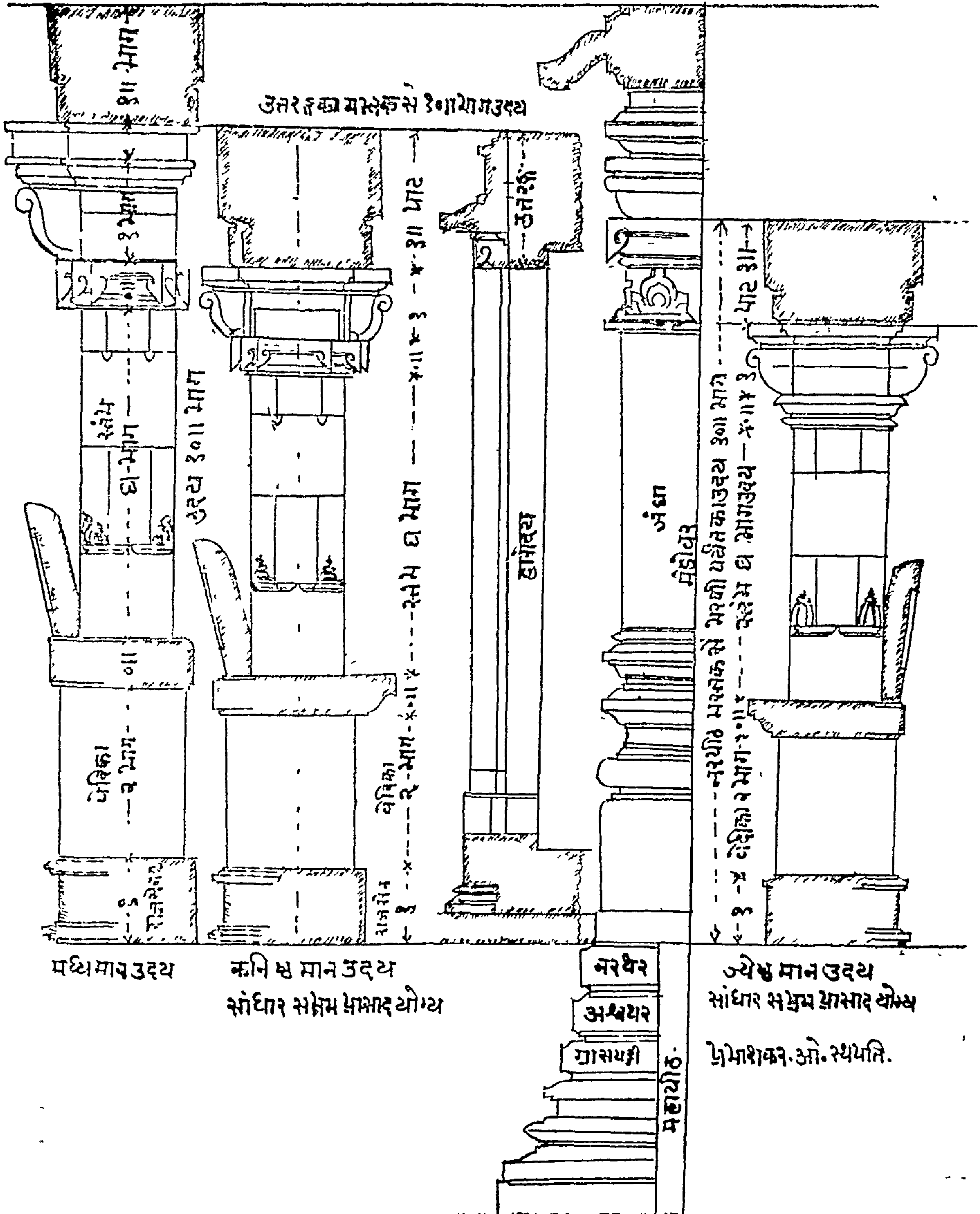
મહાપ્રાસાદના નરથરના મથાળાથી દ્વારના ઓત્તરંગના મથાળા સુધીની ઊંચાઈના (મુખ પ્રાગ્રીવ મંડપના) સાડા દશ ભાગો કરવા તેમાએક ભાગનુ રાજસેનક બે ભાગની વેદિકા અને અર્ધાભાગનુ આસનપટ (આસરોટ) કરવો તે પર ચાર ભાગનો સ્તભ-અરધા ભાગનુ ભરણુ-એક ભાગનુ શરૂ અને દોઢ ભાગનો પાટ જાડો કરવો એ રીતે સાડા દશ ભાગ મંડપના ઉદયના કનિષ્ઠમાનના જાણવા હવે મધ્યમાનનો ઉદય સાભળો ૧૦–૧૧–૧૨

महाप्रासादके नरथरके शीर्षकसे द्वारके ओत्तरंगके शीर्षक तककी ऊँचाई के

(२) અપરાજિતસૂત્ર ૧૮૫મા શુકનાસ માટે કહે છે "तदूर्ध्वे न च कर्तव्य मध स्थ नैव दूपयेत् । શુકનાસની ઘટા ઊચી ન કરવી પણ નીચે હોય તો દોષ નથી મંડનસૂત્રધાર પણ તેમ કહે છે "न्यूनाश्रेष्टा न चाधिका ।

(२) अपराजितसूत्र १८५ में शुकनासके लिये कहते हैं। तदूर्वे न च कर्तव्य मध स्थं नैव दूपयेत् । शुकनाशकी घटाको ऊँची न करना लेकिन नीचे हो तो दोष नहीं है । मंडन सूत्रधार भी ऐसा कहते हैं। न्यूना श्रेष्टा न चाधिका॥

(मुख प्राग्रीवा मंडपके) साढ़े दस भाग करना। उसमें एक भागका राजसेनक दो भागकी वेदिका और आधे भागका आसनपर (आसरोट) करना। उसके पर चार भागका स्तंभ–आधे भागका भरणा एक भागका शरा और डेढ़ भागका पाट मोटा करना। इस तरह साढ़े दस भाग मंडपके उदयके कनीष्ठमानको जानना। अब मध्यमानका उदय सुनो। १०–११–१२.



सांधार निरधार प्रासादके स्त्रीक मंडपका कक्षासन युक्त स्तंभादि उदय प्रमाण

ભાગ	
૧	ગજમેવક
૨	વેદીકા
૦॥	આસનપટ
૪	સ્તભ
૦॥	ભરણુ
૧	સ૬
૧॥	પાટ
૧૦॥	ભાગ

नरपीठम्या चोध्वतु क्रटछाद्यस्य मस्तक।
कृत्वा दश साद्धांशान पूर्वमानेन मध्यमम् ॥१३॥

નિરધાર પ્રાસાદના મડપની નરથરના મથાળાથી છજા સુધીની ઊચાઈના માડા દશ ભાગ કરી આગળ જે વેદિકાને સ્તભાદિના ભાગ કહ્યા પ્રમાણે કરવાથી મધ્યમાન જાણુવુ ૧૩

निरधार प्रासादके मडपकी नरथरके शीर्पकसे छज्जे तककी ऊँचाईके साढे दस भाग कर आगे जो वेदीकाके स्तभादिके भाग कहे उसके अनुसार करनेसे मध्यमान जानना । १३

नरपीठस्य चोर्ध्वे तु यावद् भरणी मस्तके।
भागाश्च दशसार्द्धशा ज्येष्ठमानं विधीयते ॥१४॥[3]

સાધાર મહાપ્રાસાદના નરથરના મથાળાથી મડોવરની ભરણીના મથાળા સુધીના ત્રીક મડપના ઉદયના સાડાદશ ભાગ કરી તેમા આગળ કહેલા ભાગ માન પ્રમાણે વેદિકા સ્તભાદિ કરવા આ જેષ્ઠમાન જાણુવુ ૧૪

साधार महाप्रासादके नरथरके शीर्पकसे मडोवरकी भरणीके शीर्पक तकके त्रीक मडपके उदयके साढे दस भाग उसमे आगे कहे हुए भाग मानके अनुसार वेदिका स्तभादि करना । यह ज्येष्ठमान जानना । १४

नरश्च भरणं चैव सार्द्धदश भाग समुच्छ्र्यं।
दंड छाद्यं द्विभाग च निर्गमं च विनिर्दिशेत् ॥१५॥

भागार्धे च कपोतालि पालके मंडप शुभ।
भागात्र पद विस्तार ततो वृत च भ्रामितं ॥१६॥

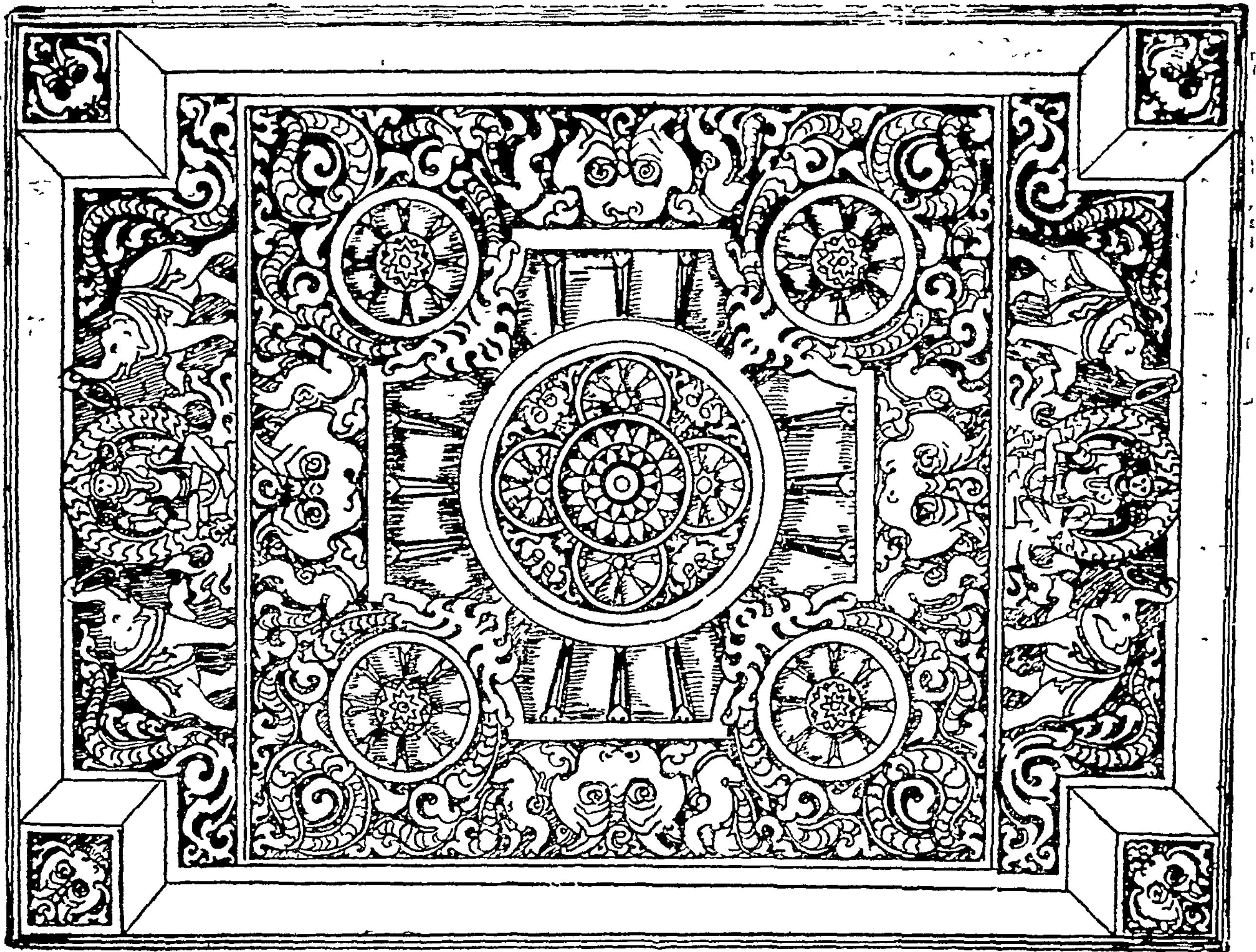
---

(૩) નિરધાર પ્રાસાદમા છજુ અને પાટ એકસત્રમા જ હોય તે પ્રમાણે અહી શ્લોક ૧૪ પ્રમાણે મડપના છોડનુ કર્યુ છે બાકી સાધાર પ્રાસાદમા ઓતરગના મથાળા જેટલી મડપની ઉભણી અગર તો ભરણા જેટલી ઉભણી રાખવાનુ હોય આનુ તારગામા દષ્ટાત છે

(३) निरधार प्रासादमे छज्जा और पाट अेक सूत्रमे ही हो, जिस तरह यहाँ श्लोक १४ के अनुसार मडपके पौधेके लिये कहा है। बाकी साधार प्रासादमे ओतरगके शीर्षकके बराबर मडपका उदय अगर तो भरणीके-बराबर उदय रखनेका होता है। इसका दृष्टात तारगामें है।

નરપીઠથી ભરણી સુધીના ઉદયનાં સાડાદશ ભાગમાં દોઢ ભાગનું દંડ છાદ્ય-દાંતીયું છજું કરવું. અને નીકાળો પણ તેટલો બે ભાગનો રાખવો. તે પર (દાબડી પર) અરધા ભાગનો કેવાળ અને પાલ મંડપ ઉપર બહારના ભાગમાં કરવો તે શુભ જાણવું. અંદર પદ વિસ્તારથી હાંશે વગેરે થર ફરતા ગોળ કરવા. ૧૫-૧૬.

नरपीठसे भरणी तकके उदयके साढ़े दस भागमें देढ भागका दंड-छाद्य-दांतीया छज्जा निर्गम करना। और निकाला भी उतना दो भाग का रखना।

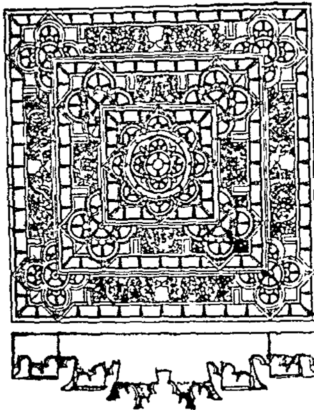


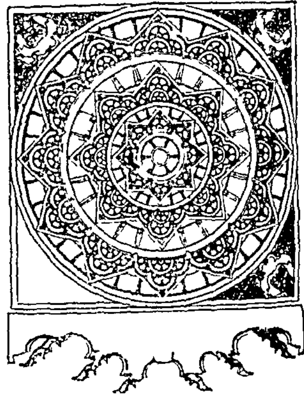
चतुष्कीकाकी छत शिलिंग-वितान

उसके पर (दाबडीके पर) आधे भागका केवाल और पाल मंडपके बाहरके भागमें करना। उसे शुभ जानना। अंदर पद विस्तारसें हांशो वगेरा थर फिरता गोल करना। १५-१६.

वितानानि विचित्राणि क्षिप्तान्युक्षिप्तकानि च।
समतलानि ज्ञेयानि उदितानि त्रिधाक्रमात् ॥१७॥

एकादशशतान्येव वितानानि त्रयोदश ।
प्रोक्ताश्च विविधाश्छंदा लुमा स्तत्रत्वनेकधा ॥१८॥[४]



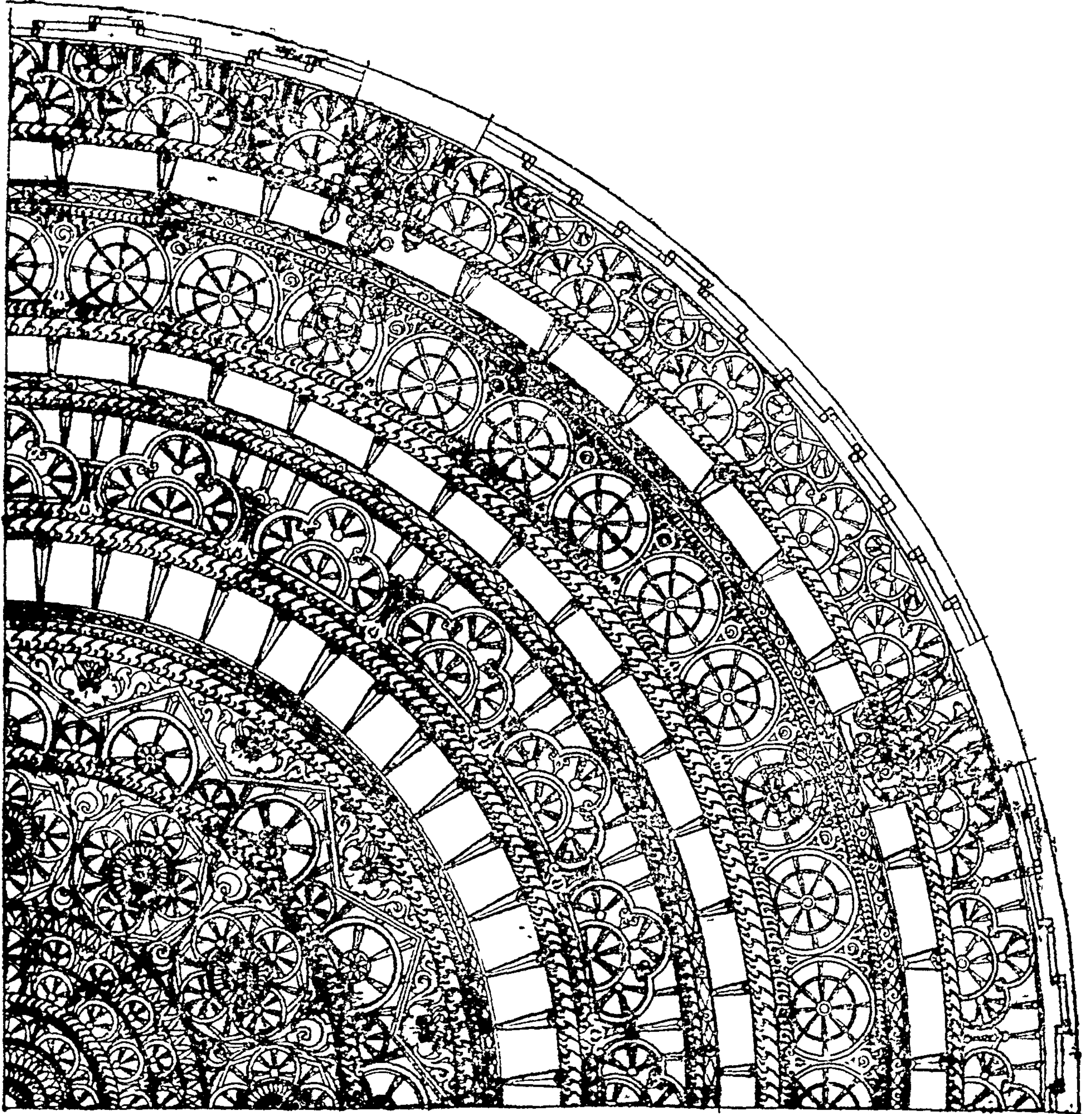


वितानका प्रकार-क्षिप्तानुक्षिप्त-तलदर्शन और ऊर्ध्व दर्शन

(४) વિતાન એટલે આકાશ ચંદરવો, મંડપનું વિતાન એટલે ઘુમટ છત, કોલ કાચલા વાળો ઘુમટ આગ કામોમાં થાય છે તે શીલ્પીઓ પોતાની બુદ્ધિથી સુંદર કરતા. મંડપ ઉપર એક કોલ, એક ગરાળુ વળી કોલ એમ ક્રમે ક્રમે એકેક કરી મધ્યમ ઘુમટ જેવી પદ્મશિલા અલંકૃત થાય છે કેટલાક ત્રણ કોલ અને એક ગરાળુનો થર એમ પણ કરાવે છે ગોળ મંડપમાં દેવરૂપ-કથાના દૃશ્યો કોતરે છે કોઈ ખાસ કે ઉત્સવના રૂપ કરે છે જૈન પ્રાસાદમાં ચોવીશ તીર્થંકર તેમના યક્ષયક્ષણી સાથે કરે છે મધ્યમાં પદ્મશિલાના સ્થાપનનું વિધિથી મુહુર્ત થાય છે કારણ કે તે ઘણું જોખમી કામ છે કોલ કાચલાવાળું કામ ઘુમટનું કીમતી કામ ન કરવું હોય તો ૫-૭-૯ કે ૧૧ થરો ગળતા ગળતાના નીકાળા કાઢીને ઘુમટ કરે છે આ છેલ્લી સાદી રીત સોળમી સદી સુધી હતી મુસ્લીમ રાજ્ય કાળમાં સાદા ઘુમટો થવા માંડ્યા તેમાં ઘુમટ સાચો રાખવામાં આવે છે વિતાનના ૧૧૧૩ વિવિધ પ્રકારો શિલ્પશાસ્ત્રોમાં કહ્યા છે તેમાં કોલ કાચલાના થરો થાય તે ઉપરાંત લુમ લામસા મંડળોના નીકાળાથી સંકોચી ગોળ અગર ચોરસ પણ કામ થાય છે મુસ્લીમ રાજ્યકાળમાં ઘુમટો અંદર બહાર સાદા થવા માંડ્યા તોરણનું સ્થાન કમાને લીધું ઘુમટની બહાર ઉપર સંવરણાને બદલે સંન્યાસીના-મસ્તક જેવા ગોળ ઘુમટ થવા માંડ્યા સંવરણાની રચના સુંદર છે જોકે તેનું વર્તમાન કાળમાં થોડા ફેરફાર સાથે સંવરણા શિલ્પકારો કરી રહ્યા છે તે શુભચિન્હ છે

(४) वितान अर्थात् आकाश, चंदरवा, मंडपका वितान अर्थात् गुंबज छत, कोल

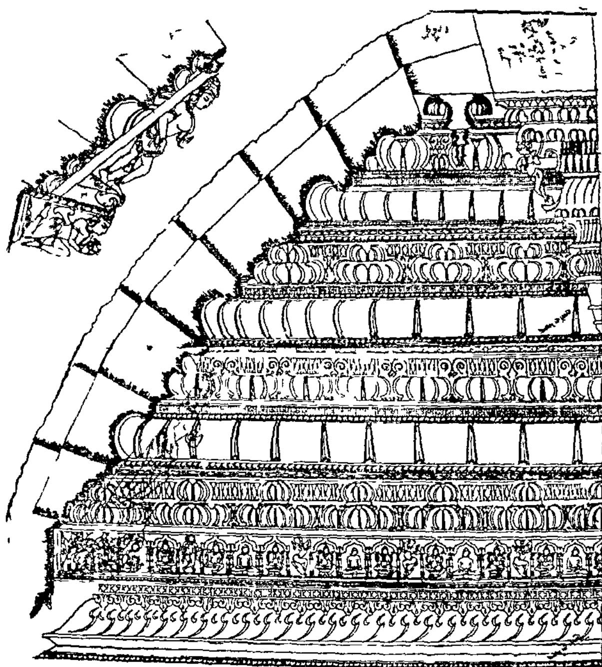
અનેક પ્રકારોના વિતાનો-ઘુમટ વિચિત્ર પ્રકારના થાય તેમાં મુખ્ય ત્રણ ભેદ છે. ૧. ક્ષિપ્તાનુક્ષીપ્ત એટલે કાચલાના થરો ઊંચે ચડી વળી નીચે ઉતરે તેવો ઘાટ (૨) સમતલ- સરખા છાતિયા જેવા કે પટ્ટની જેમ તેમાં આકૃતિઓ પણ કોતરે. (૩) ઉદ્દિતાનિ- એટલે કોલ કાચલાના ઊંચા ઊંચા ચડતા થરોનો



गजतालु और कोल का थरों से अलंकृत वितान (गुम्वज) का तलदर्शन-उदित (२)

काचलावाला गुँवज अच्छे कामोंमें होता है। ये शिल्पीओ अपनी बुद्धिसे सुंदर करते है। रुपकंठके उपर एक कोल जिसी तरह क्रमसे एक एक कर मध्यम झुम्मरके जैसी पद्मशीला अलंकृत होती है। कओ लोग तीन कोल और एक गवालुका थर जिस तरह भी चढाते हैं। गोल रूप कंठमें देवरूप कथाके दृश्योंको कोतरते है। कओ लोग ग्रास या हँसके रूप करते है। जैन प्रासादमें चौवीस तीर्थकरोंको उनके यक्ष यक्षणियोंके साथ करते हैं। पद्मशिला स्थापनका

ઘુમટ, એ રીતે વિતાન છત ઘુમટના ત્રિવિધ પ્રકાર જાણવા તેની જુદી જુદી આકૃતિઓ એક હજાર એકસો તેરની વિવિધ છદની લુમ મદલોના પ્રકારની કહી



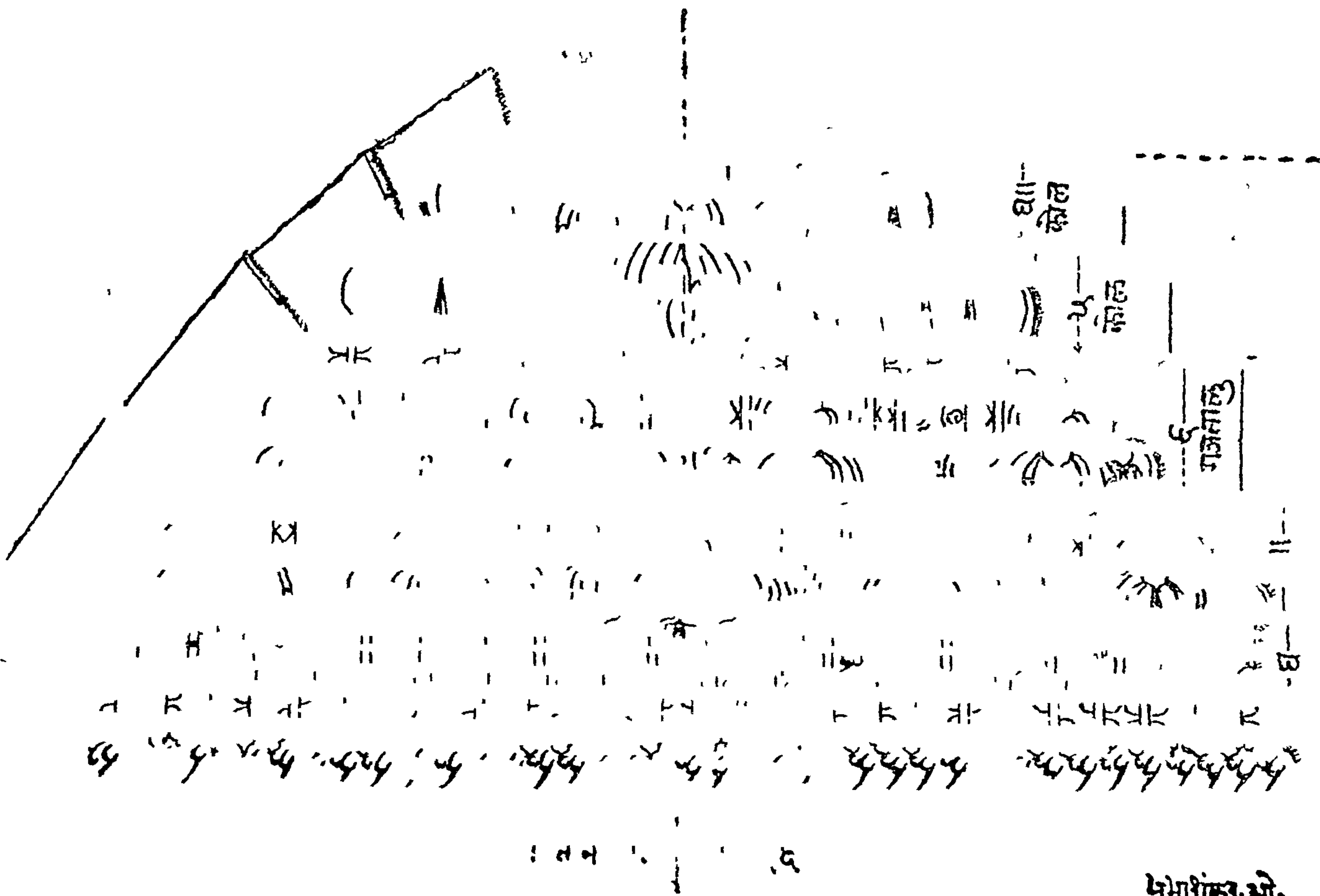
गजताल और कोल से अलंकृत वितान (गुम्बज) का दर्शन और छेद दर्शन उदिल (१)

विधिमें मुहुत होता है क्योंकि वह बहुत सतरेवाला काम है। कोल काचलावाला काम गुंबजका कीमती काम न करना हो तो ५-७-९ या ११ थरो गलते गलतेके निकाले निकालकर गुंबज करते हैं। यह अतीम सादी रीत सोलहवीं सदी तक थी। मुस्लीम राज्य कालमें सादे गुंबज होने लगे। उसमें ध्रुवमें सयान रखा जाता है।

वितानके १११३ विविध प्रकारो शिल्पशास्त्रोंमे कहे हैं। उसमें कोल काचलेके थरों होते हैं, तदूपरात लुम लामसा मदलोंके निकालेसे सकोचक्र गोल या चोरस भी काम होता है। मुस्लीम राज्यकालमें गुंबज अदर बाहर सादे होने लगे। झूलका स्थान कमानों लिया। गुंबजके

છે. તેમાં શુદ્ધ સંઘાટ (સમતલ) મિશ્ર સંઘાટ ઊંચા નીચા તલવાળા ક્ષિપ્ત લટકતા કાચલાવાળા ૪ ઉક્ષિપ્ત–ઉંચા ચડતા કાચલાના થરોવાળા એવા પ્રકારના અનેક વિતાનો કહ્યા છે. મુખ્ય ત્રણ ભેદ છે. ૧૭–૧૮.

अनेक प्रकारोंके वितानों–गुँबज विचित्र प्रकारके होते हैं । उसमें मुख्य तीन भेद हैं । १ क्षिप्त उक्षिप्त–अर्थात् काचलोंके थर उँचे चढ़कर और नीचे उतरे वैसा घाट २ समतल–समान छातिये जैसेकि पट्टकी तरह उसमें आकृतियोंको भी कोतरें । ३ उदितानी–अर्थात् कोल काचलेके ऊँचे ऊँचे चढ़ते थरोंका गुँबज इस तरह वितान छत गुँबजके त्रिविध प्रकार जानना । उसकी भिन्न भिन्न आकृतियाँ एक हजार एकसौ तेरहकी विविध छंदकी लुम मदलादिके प्रकारकी कही गई हैं । उसमें शुद्ध संघाट (समतल) २ सिश्र संघाट–ऊँचे नीचे तलवाले ३ क्षिप्त–लटकते काचलेवाले ४ उक्षिप्त–ऊँचे चढ़ते काचलेके थरोंवाले ऐसे अनेक प्रकारके वितानों कहा हैं, मुख्य तीन भेद हैं । १७–१८.



गजताल और कोलादि थरो युवत: वितान (गुम्वज) विस्तार भाग ६६ उदय भाग ३३

बाहर उपर संवरणाकें बदले सन्यासीके मस्तक जैसे गोल गुम्वज होने लगे । संवरणाकी रचना सुंदर है । यद्यपि वैसा वर्तमान कालमें कुछ फेरफारके साथ संवरणा शिल्पकारों करते हैं । यह शुभ चिह्न है ।

अष्टास्त्रे षोडशास्त्रे च वृत्तं कुर्यात्तदूर्ध्वत'।
उदयं विस्तरार्धेन षट् षष्टि विराजिते ॥१९॥
कर्ण दर्दरिका सप्त भागेन निर्गमोतुच्छ्रता।
रूपकंठे तु पंचभाग द्वयभागेन निर्गमम् ॥२०॥
षोडशाष्टार्क जिन संख्ये विद्याधर निर्गमम्।
तदूर्ध्वे चित्ररुपा देवाङ्गना नृत्य शोभिता ॥२१॥
गजतालु षडभाग प्रथमा द्वितीया तु षष्ठ।
पचभाग मनेत्कोलं चतुर्भाग द्वितियके ॥२२॥
मध्ये वितान कर्तव्य चित्रवर्ण विराजितम्।
एव तु कारयेन्नित्यं वितानैक सुमंडिताम् ॥२३॥

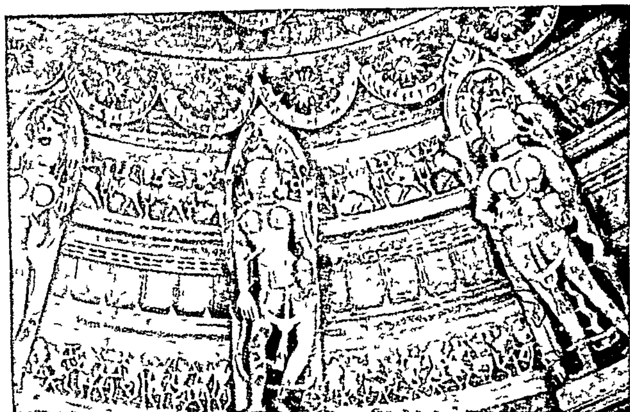
મંડપના અંદર ઉપરના ભાગમા અઠાંશ સોળાંશ (બત્રીશાંશ) આદિ થરો કરી ગોળ થર ફેરવવા ત્યાં તેના વિસ્તારના છાસઠ ભાગ કરી તેના ઉદયના અર્ધ-એટલે તેત્રીશ ભાગ જાણવા કણી દાદરીનો થર સાત ભાગનો અને તેનો નિકાળો પણ તેટલો જ કરવો તે પર રૂપકંઠનો થર પાંચ ભાગનો, તેનો નિકાળો બે ભાગનો રાખવો તે રૂપકંઠના થરમા આઠ, બાર સોળ કે ચોવીશ એમ સંખ્યામા વિદ્યાધરોના નિકળતા સ્વરૂપો કરવા, ને વિદ્યાધર ઉપર ચિત્ર વિચિત્ર એવી દેવાંગનાઓ નૃત્યથી શોભતી કરવી પહેલો ગવાળુનો થર છ ભાગનો અને-બીજો તે પર ગવાળુનો થર પણ છ ભાગનો કરવો પાંચ ભાગનો કોલનો થર કરી તે પર ચાર ભાગનો બીજો કોલનો થર કરવો (એ રીતે કુલ તેત્રીશ ભાગ ઉદયના જાણવા) તેની મધ્યમા લટકતી ઘણી કોતરણીવાળી પદ્મશીલા કરવી એવા લક્ષણ યુક્ત વિતાન-ઘુમટ હમેશા તાંગમંડળ જેવો સુશોભિત કરવો ૧૯ થી ૨૩

मंडपके अंदर उपरके भागमे अठांश सोलांश (बत्तीसांश) आदि थरोंको बनाकर गोल थरको फिराना। वहाँ उसके विस्तारके छियासठ भागकर उसके उदयके अर्ध अर्थात् तैतीस भाग जानना। कणी दादरीका थर सात भागका और उसका निकाला भी उतना ही करना। उस रूपकंठके थरमे आठ, बारह सोल्हया चौवीस इसी संख्यामे विद्याधरोंके निकलते रूपों करना। उस विद्याधरके उपर चित्र विचित्र ऐसी देवाङ्गनाओंको नृत्यसे शोभित करना। पहला गवालुका थर छ भागका और उसके पर दूसरा गवालुका थर भी छ भागका करना। पाँच भागका कोलका थर कर उसके पर चार भागका दूसरा कोलका थर

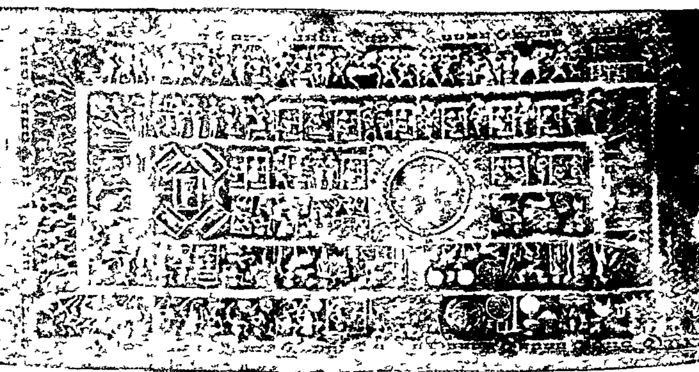
वितान छतके क्षिप्तानुक्षिप्त प्रकार (पंचासरा पाटण)



मूर्तिनिर्माण कर्ता गुजरातके सुप्रसिद्ध शिल्पकलाविद श्री चंदुलाल भ. सोमपुरा



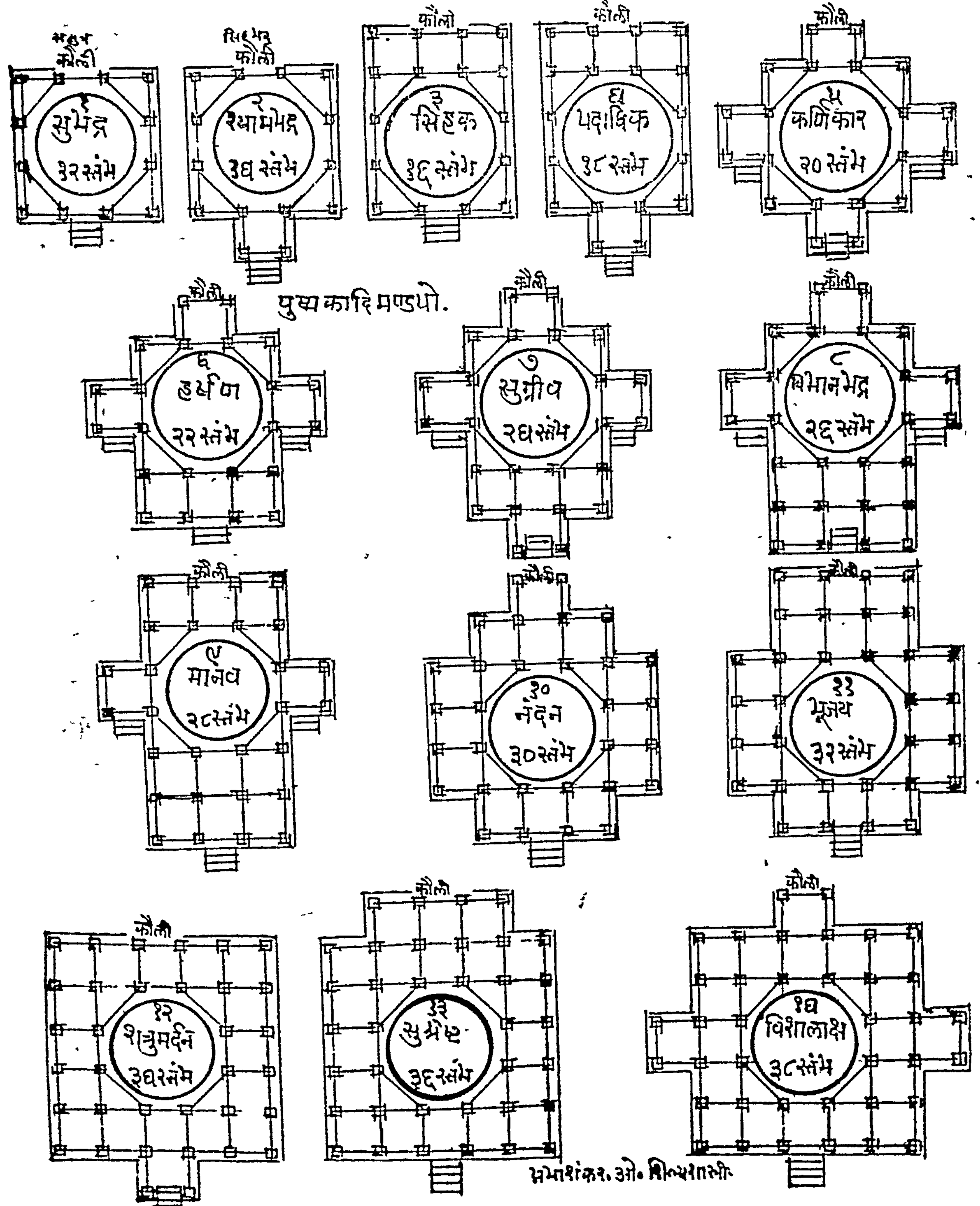
देवदेवाङ्गनादि स्वरुप सहित कोल और गजतालु (दवालु)के थरयुक्त वितान (गुम्बज)



समतल (छतयुक्त) वितानका एक प्रकार (आरासण-अराजी)

करना । (इस तरह कुल तैतीस भाग उदयके जानना ।) उसके मध्यमें लटकती बहुत ही कँडारी हुई पद्मशिला करना । ऐसे लक्षण युक्त वितान-गुँबज हमेशां तारा मंडल जैसा सुशोभित करना । १९ से २३.

पुष्पकोऽथ चतुषष्टि आद्ये द्वादश स्तंभका ।
पुष्पकाद् द्वौ द्वौ हीनाः स्युः मंडपाः सप्तविंशति ॥२४॥



पुष्पकादि २७ मंडप स्वरूप (१ से १४) (१)

५ પુષ્પકાદિ ચોસઠ સ્તભોના મડપોનો આદ્ય પહેલો મડપ બાર સ્તભોનો સુભદ્ર નામથી બબ્બે સ્તભોની વૃદ્ધિ કરતા ચોસઠ સ્તભોના પુષ્પક મડપ થાય તેનાથી બબ્બે સ્તભો ઓછા ઓછા કરતા–૨૭ મંડપો થાય (તેના નામો અને સ્તભ સખ્યા નીચે ફૂટનોટમા આપેલ છે)

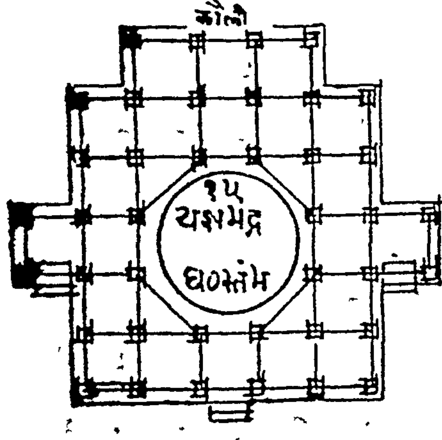
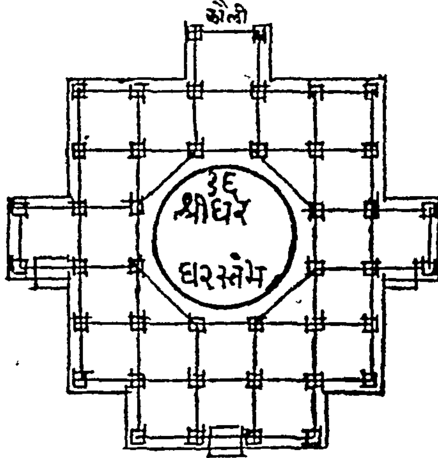
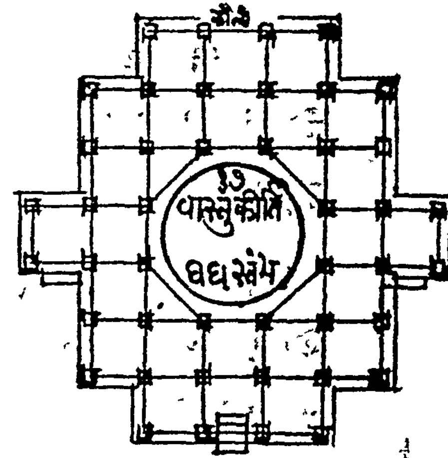
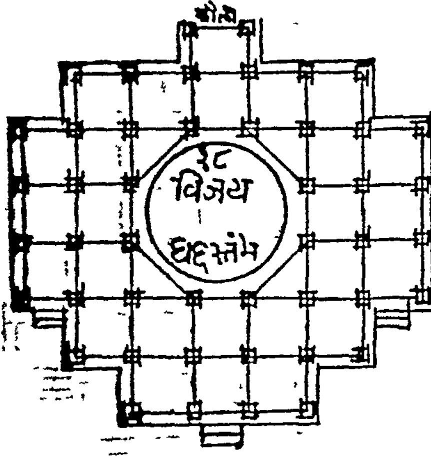
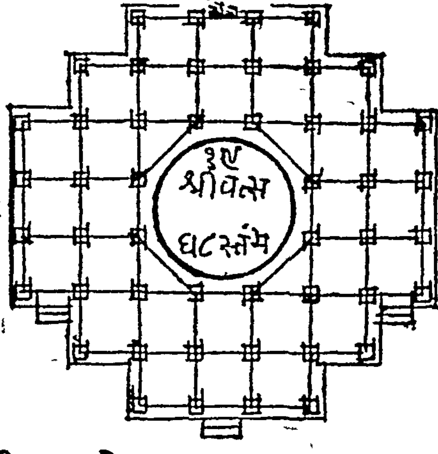
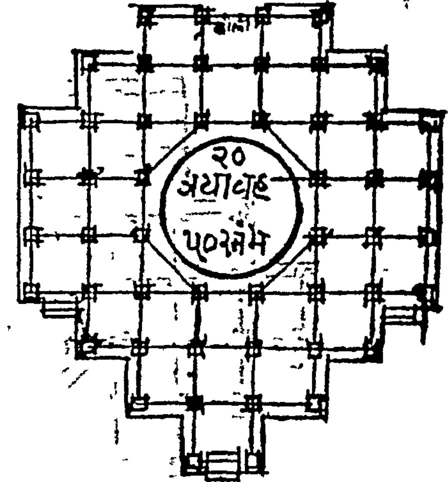
५पुष्पकादि चोसठ स्तभोंके मडपोका आद्य पहला मडप बारह स्तभोंका सुभद्र नामसे दो दो स्तभोकी वृद्धि करने चौसठ स्तभोंका पुष्पक मंडप होता

(૫) (१) अपराजित सूत्र सतान अ १८६ મા પુષ્પકાદિ ૨૭ મડપોના સ્વરૂપો સ્તભ સખ્યા સાથે બહુ સ્પષ્ટ વિગતથી તેની રચના કેમ કરવી તે સાથે આપેલા છે તેમજ મત્સ્યપુરાણમા પણ તેના નામ સખ્યા સાથે આપેલ છે (२) समराङ्गण सूत्रधार अ ६७ મા મડપોના નામો સ્તભ સખ્યા અને સ્વરૂપો અસ્પષ્ટ અને અશુદ્ધ આપેલા છે (३) मत्स्यपुराण अ २७० મા ફક્ત નામો અને સ્તભ સખ્યા કહી છે विश्वकर्मा प्रकाश મા પણ સત્તાવીસ મડપોના નામ અને સ્તભ સખ્યા આપેલા છે પરતુ સ્વરૂપ આપેલા નથી અહી પુષ્પકાદિ ૨૭ મડપો સ્તભ સખ્યા સાથે તેનુ કોષ્ટક ક્રમબદ્ધ આપેલ છે જુદા જુદા ગ્રંથોમા થોડા નામ ફેર જોવામા આવે છે દીપાર્ણવમા તેના સ્વરૂપ વિગતથી આપેલા છે

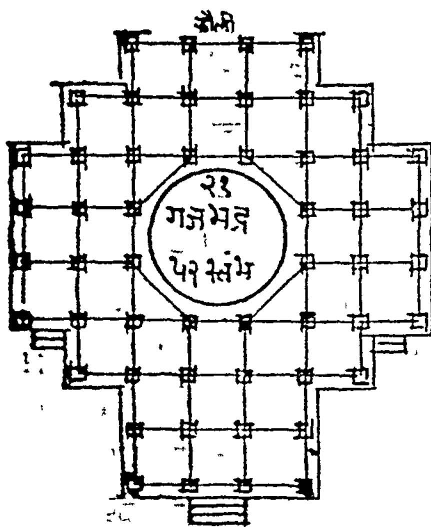
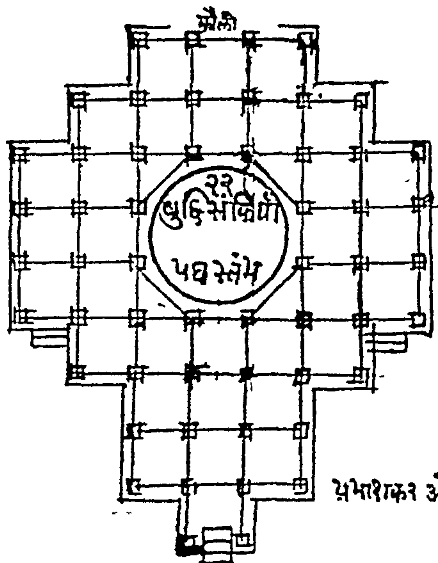
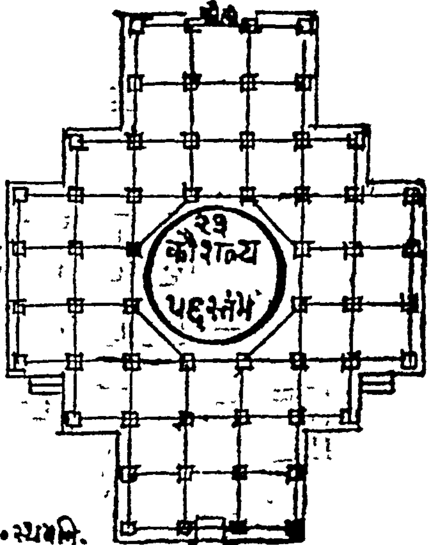
(५) (१) अपराजित सूत्र सतान अ–१८६में पुष्पकादि २७ मडपोके स्वरूपो स्तभ सख्याके साथ बहुत स्पष्ट विगतसे उसकी रचना कैसे करना यह सब साथमें दिया हुआहै और मत्स्य पुराणमें भी उसके नाम सख्याके साथ दिये हैं। (२) समराङ्गणसूत्रधार अ १७ में मडपोंके नाम स्तभ सख्या और स्वरूपो अस्पष्ट और अशुद्ध है। (३) मत्स्य पुराण अ २७०में सिर्फ नामों और स्तभसख्या बतायी गयी है। विश्वकर्मा प्रकाशमें भी सत्ताईश मडपोंके नाम और स्तभ सख्या बतायी गयी है परतु स्वरूप नहीं बताया है । यहा पुष्पकादि २७ मडपो स्तभ सख्याके साथ उसका कोष्टक क्रम बद्धदिया हुआ है । भिन्न भिन्न ग्रंथोंमें कुछ नामफेर देखनेमें आता है। दीपार्णवमें उसका स्वरूप विगतसे दीया गया है।

		स्तभ		स्तभ		स्तभ		स्तभ		स्तभ
सुभद्र	१ सुभद्र	१२	६ हर्षण	२२	११ भूज	३२	१६ श्रीधर	४२	२१ गजभद्र	५२
									२२ बुधिमकर्णि	५४
	२ श्यामभद्र	१४	(हरित)		(भागपच)		(रतिजय)		२३ कौशल्य	५६
	(सिंहभद्र)		७ सुग्रीव	२४	१२ शत्रुमर्दन	३४	१७ वास्तुकीर्ति	४४	२४ मृगनदन	५८
	३ सिंहक	१६	८ विमानभद्र	२६	१३ सुश्रेष्ठ	३६	१८ विजय	४६	(अमृतनदन)	
शतर्धिक	पद्माधिक	१८	९ मानध	२८	१४ विशालाक्ष	३८	१९ श्रीवत्स	४८	२५ सुप्रभ	६०
	४ (शतर्धिक)								(सुव्रत)	
									२६ पुण्यभद्र	६२
	५ कर्णिकार	२०	१० नदन	३०	१५ गजभद्र	४०	२० जयावह	५०	२७ पुष्पक	६४

है । उससे दो दो स्तंभों कम कम करते सत्ताईस मंडपों होवें (उनके नाम) और स्तंभ संख्या नीचे फूटनोट में दिये हैं ।)

पुष्पकादि मण्डपो.

प्रभाशंकर ओ. स्थपति.

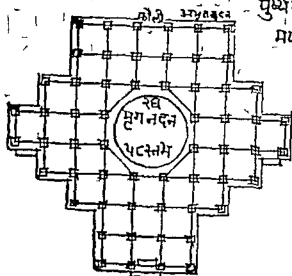
पुष्पकादि २७ मंडप स्वरूप (१५ से २३) (२)

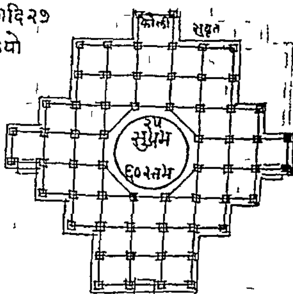
एक त्रिवेद पट् सप्त नव चतुष्किकान्वितः ।
अग्रे भद्रं द्विपार्श्वे द्वयाग्रपार्श्वद्वयो स्तथा ॥२५॥

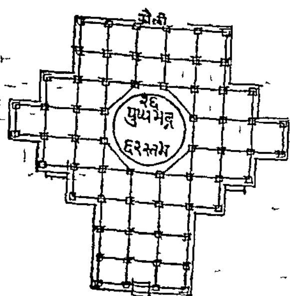
अग्रतस्त्रि चतुष्कत्रश्च तथा पार्श्वे द्वयोऽपिच ।
मुक्तकोणो चतुष्कयौ चेदिति द्वादश मण्डपाः ॥२६॥

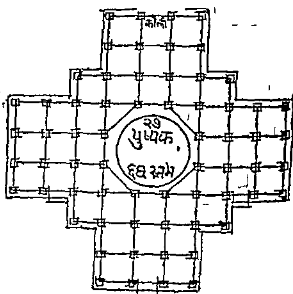
(૧) એક પદની ચોકી સુભદ્ર (૨) ત્રણ પદ કીરિટ (૩) ત્રણ પદ આગળ એક ચોકી દુદુભિ (૪) છ ચોકી પ્રાંત (૫) છચોકી આગળ ૧ ચોકી મનોહર (૬) નવ ચોકીનો શાંત મંડપ (૭) નવ ચોકી આગળ ૧ ચોકી (નંદ) (૮) નવ ચોકીની બાજુમા બે ચોકી (૧૧ પદ) સુદર્શન (૯) સુદર્શનના ૧૧ પદ આગળ એક ચોકી રમ્યક (૧૦) આગળ ત્રણ ચોકીના ૧૪ પદ સુનાભ (૧૧) સુનાભના પડખેની બે ચોકી ને પાછળ બે તરફ એકેક પદ વધારતા ૧૬ પદનો સિંહક

पुष्पकादि २७
मण्डपो

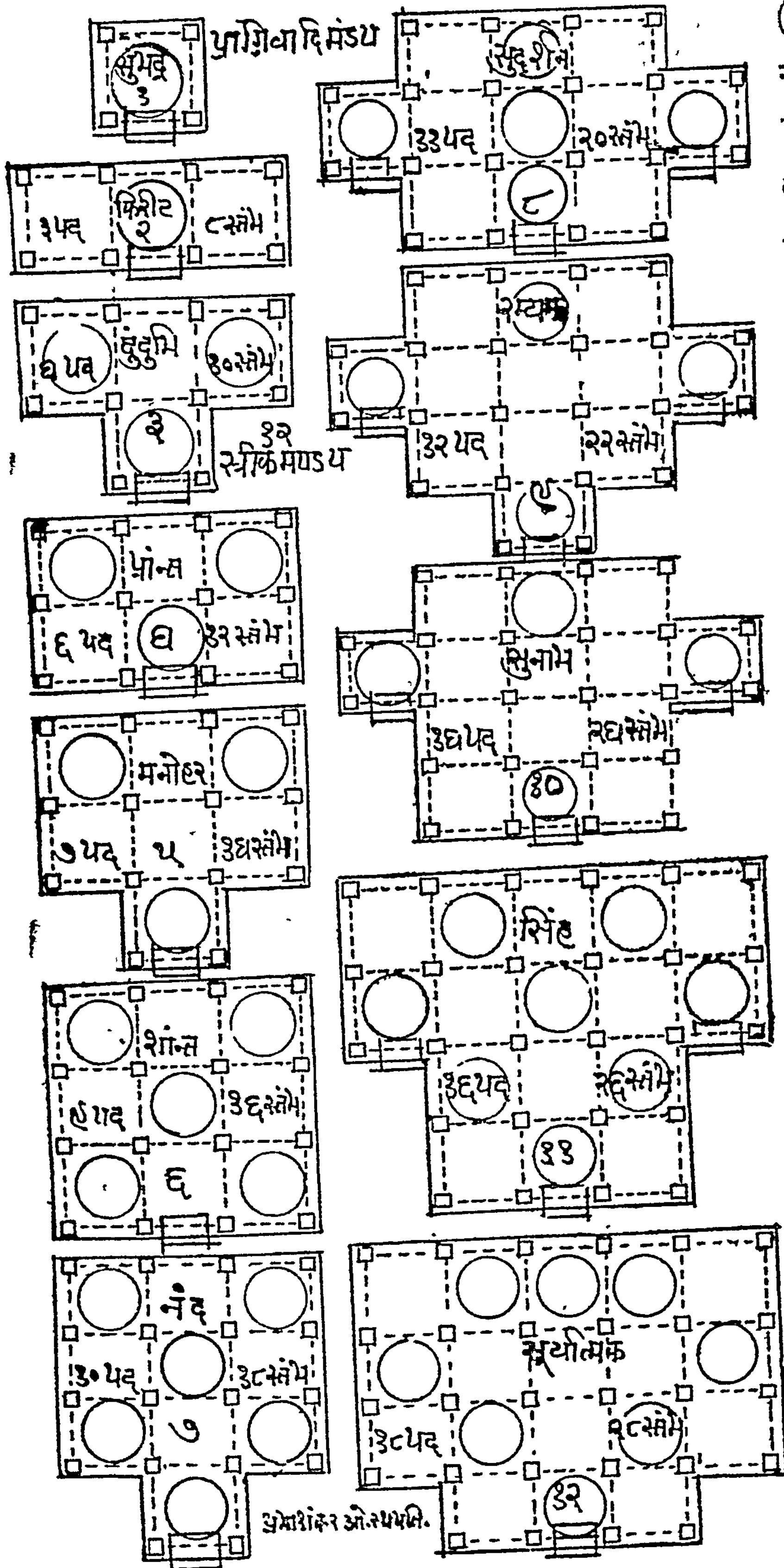








पुष्पकादि २७ मण्डपस्वरूप (२४ से २७) (३)



निगूढ आगे सुभद्रादि त्रीक द्वादश मंडप चोकी

(૧૨) પાંચ પદની ત્રણ પંક્તિ આગળ ત્રણ ચોકીના ૧૮ પદની સૂર્યાત્મક આ પ્રમાણે બાર પ્રકારના પ્રાગ્રિવ ચોકી મંડપ જાણવા. ૨૫–૨૬.

(१) एक पदकी चौकी सुभद्र (२) तीन पदका किरिट (३) तीन पदके आगे एक चौकी दुंदुभि (४) छः चौकी प्रांत (५) छः चौकीके आगेकी चौकी मनोहर (६) नौ चौकीका शान्त मंडप (७) नौ चौकीके आगेकी चौकी (नंद) (८) नौ चौकीकी बाजुमें दो चौकी (११ पद) सुदर्शन (९) सुदर्शनके ११ पदके आगे एक चौकी रम्यक (१०) आगे तीन चौकीके १४ पद सुनाभ (११) सुनाभकी बाजुकी चोकी और पीछे दो तरफ एक एक पद बढ़ाते १६ पदका सिंहक (१२) पाँच पदकी तीन पंक्तिके आगे तीन चौकीके १८ पदके सूर्यात्मक इस तरह बारह प्रकारके प्राग्रिव चौकी मंडप जानना। २५–२६.

सुभद्रस्तु किरीटं च दुन्दुभिः प्रान्त एव चः।
मनोहरश्च शान्तश्च नन्दाख्याश्च सुदर्शनः ॥२७॥

रम्यकश्च सुनाभश्च सिंहः सूर्यात्मकस्तथा ।
निर्गूढाग्रे त्रिकेख्यातं द्वादश मुखमण्डपाः ॥२८॥

ઉપરના સ્વરૂપવાળા બાર મડપોના નામ ૧ સુભદ્ર ૨ કિરીટ ૩ દુન્દુભિ ૪ પ્રાન્ત ૫ મનોહર ૬ શાંત ૭ નદાખ્ય ૮ સુદર્શન ૯ રમ્યક ૧૦ સુનાભ ૧૧ સિંહ ૧૨ સૂર્યાત્મક એ બાર મુખમડપ ગુઢ મડપની આગળ ત્રીકરૂપ બાર મડપ જાણવા ૨૭–૨૮

उपरके स्वरूपवाले वारह मडपोंके नाम १ सुभद्र २ किरीट ३ दुदुभि ४ प्रान्त ५ मनोहर ६ शात ७ नदाख्य ८ सुदर्शन ९ रम्यक १० सुनाभ ११ सिंह १२ सूर्यात्मक इन वारह मुखमडपको गुढमडपके आगे त्रीक रूप वार मडप जानना । २७–२८

क्षीरार्णवे समुद्भूता मेर्वादि मंडपाः
मेरु त्र्यैलोक्य विजयात् संख्याया पंचविंशति ॥२९॥
भित्तिद्वार प्राग्रीवाश्च भूमिकां माडमुच्छ्रयम् ।
समत्तावरणच्छाय संवरण वितानकम् ॥३०॥

ક્ષીરાર્ણવથી ઉદ્ભવેલા એવા મેરવાદિ મડપો મેરૂથી ત્રૈલોક્ય વિજય સુધી પચ્ચીશ સખ્યાના મડપો છે તે ભીતોવાળા દ્વારવાળા પ્રાગ્રિવાદિરૂપ મજલાવાળા ઊંચા કરવા તે કક્ષાસન યુક્ત મત્તવારણ વાળા વિતાન-ઘુમટ અને સવરણાથી છાયેલા કરવા ૨૯–૩૦

क्षीरार्णवसे उत्पन्न मेर्वादि मडपा मेरूसे त्रैलोक्य विजय तक पच्चीस सख्याके मडप है । उनको दिवारोंवाले द्वारवाले प्राग्रिवादिरूप मजलेवाले ऊँचे करना । उनको कक्षासन युक्त मत्तवारणवाले वितान–गुँमज और सवरणोंसे छाये हुए करना । २९–३०

मेर्वादि मडप लक्षण—लक्षणानि म प्रोक्तानि कथयामि समासत ।
चतुरस्त्रीकृते क्षेत्रे अष्टधा प्रविभाजिते ॥३१॥
भवेन्मध्ये द्विभागस्तु चतुष्का सवृतौ धरें ।
अलिंदं भागिक कुर्याद् द्वादश स्तंभै शोभितम् ॥३२॥

હવે હુ મેરવાદિ મડપના લક્ષણો કહુ છુ સમચોરસ ક્ષેત્રને આઠ ભાગ કરવા એટલે ૪×૪ ભાગથી વિભાજિત કરવુ (એટલે ૧૬ પદ થયા) તેમા વચલા ચાર વિભાગનુ એક પદ કરી, ફરતી ચારે દિશામા બબ્બે ભાગની પહોળી

ચતુષ્કિકા કરવી. અને તે ચતુષ્કિકા = અલિંદ એકેક ભાગ નીકળતી કરવી તે પહેલાં બાર સ્તંભનો મંડપ શોભતો કરવો. ૩૧–૩૨.

अब मैं मेरुआदि मंडपके लक्षण कहता हूँ। समचोरस क्षेत्रको आठ भागसे अर्थात् ४×४ भागसे विभाजित करना। (सोलह (१६) पद हुए।) उसमें मध्यके चार विभागका एक पद कर फिरती चारों दिशाओंमें दो दो भागकी चौडी चतुष्किका करना। और वह चतुष्किका = आलिंद एक एक भाग नीकलती करना। उससे पहले बारह स्तंभका मंडप सुशोभित करना। ३१–३२.

द्वितियो विंशति स्तंभै रष्टाविंशतिः परैः।
भद्रं तु भाग निष्कांश षड् भागं चैव विस्तरे ॥३३॥

બીજો મંડપ વીશ સ્તભનો (એટલે ઉપરના બાર સ્તંભના સ્વરૂપને ફરતું ભદ્ર ચારે તરફ બબ્બે સ્તંભોનું ચોકીનું કરવું.) અને ત્રીજો મંડપ અઠ્ઠાવીશ સ્તંભોનો જાણવો. તેમાં એકેક પદ નિકળતું (ત્રણ પદ પહોળું) કરવું–આ મંડપ છ છ ભાગ વિસ્તારમાં (કુલ છત્રીશ ભાગમાં) કરવો–૩૩.

दूसरा मंडप वीस स्तंभका (अर्थात् उपरके बारह स्तंभके स्वरूपको फिरता भद्र चारों तरफ दो दो स्तंभोंका चौकीका करना। और तीसरा मंडप अट्ठाईस स्तंभोंका जानना। उसमें एक एक पद निकलता (तीन पद चौडा) करना। यह मंडप छः छः भाग विस्तारमें (कुल छत्तीस भागमें) करना। ३३.

प्रतिभद्रं ततो भागे चतुर्भागं विस्तरम्।
द्विभागायाम विस्तारः प्राग्रिवः स्याच्चतुर्दिशि ॥३४॥

(સોળ પદમાં બાર સ્તંભોવાળા મંડપને ચારે તરફ) ચાર ભાગ વિસ્તારનું (એક પદ નીકળતું) પ્રતિભદ્ર ચારે તરફ કરવું. તેનાથી આગળ (એક ભાગ) નીકળતી અને બે ભાગની લાંબી વિસ્તાર ચતુષ્કિકા–પ્રાગ્રિવ અલિંદ ચારે તરફ કરવી. આમ ચોથો મંડપ (છત્રીશ સ્તંભોનો) જાણવો. ૩૪.

(सोलह पदमें बारह स्तंभोंवाले मंडपको चारों ओर) चार भाग विस्तारका (एक पद नीकलता) प्रतिभद्र चारों ओर करना। उससे आगे (एक भाग) नीकलती और दो भागकी लम्बी विस्तार चतुष्किका–प्राग्रीव अलिंद चारों ओर करना। इस तरह चौथा मंडप (छत्तीस स्तंभोंका) जानना। ३४.

सूर्योत्तरशतंस्तंभा भूमिका पंचधोच्छिता।
मेरुमंडप उक्तश्च द्विभौमोर्ध्वे च मांडतः ॥३५॥
द्वौ द्वौ स्तंभौ ह्रस्व योगान्मंडपाः स्युरनुक्रमात्।
चतुषष्टि स्तंभ कान्त मंडपाः पंचविंशतिः ॥३६॥

એકસો બાર સ્તભોનો બે મજલાથી પાચભૂમિ મજલા સુધીનો મેરૂમડપ જાણવો એકસો બાર સ્તભોથી બબ્બે સ્તભોના ઓછા ઓછા ક્રમથી અનુક્રમે ચોસઠ સ્તભો સુધીના પચ્ચીશ મડપો જાણવા (ચોસઠ સ્તભોનો ત્રૈલોક્ય વિજય મડપ બે ભૂમિનો જાણવો) ૩૫-૩૬

एक सौ बारह स्तभोंका दो मजलोंसे पाँच भूमि-मजले तकका मेरुमंडप जानना। एक सौ बारह स्तभोंसे दो दो स्तभोंके कम कम क्रमसे अनुक्रमसे चौसठ स्तभों तकके पच्चीस मडपों जानना। (चौसठ स्तभोंका त्रैलोक्य विजय मडप दो भूमिका जानना। ३५-३६

एक भूम्यादि पंचभूम्या गर्भसूत्रानु सारत: ।
[6]छायादर्धत्यं पदान तथानै पञ्चसंभवा ॥ ३७॥
[7]जंघा कार्या सातस्या नवधा [8]पंचलक्षण ।
[9]जंघाछाद्य समोदधः पोडशांश [10]मथोर्धत ॥ ३८ ॥
उत्तरंगोतर सूत्रेण त्राद्य पट्टानसशयः ।
गर्भछाद्य तुलाधस्ता[11] शाखोत्सशचोर्ध्वत् ॥ ३९ ॥
एतत् क्षेत्रस्य मित्युक्तं व्राह्मपद न संशय ।
मंडपाग्रे द्वितीयांश्च[12] युग्मपद यदा भवेत् ॥ ४० ॥
द्वार चानिक्रम यत्र[13] भारपट्टं न संशय ।
द्वारस्या यत[14] त्रिभाग च [15]पद दशाश विधियते ॥ ४१॥
न दोपो समाख्यातो स्ताल भेदो न योजयेत् ।
अलिंदास्यनलिंदस्य [16]सम सूत्रानुसारतः ॥ ४२ ॥
बाह्यलिंदं च कर्तव्य किंचिन्मूलाधिकं शुभ ।
गभसूत्रानुसारेण [17]मध्यदेवा चतुष्किदा ॥ ४३ ॥[18]

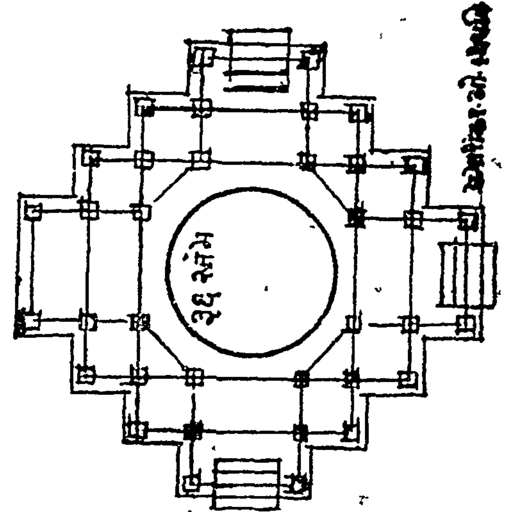
(६) छायादूर्ध्वद्विपदस्यात् (७) जघोऽधतु तथा कार्या (८) पद (९) जघोत्सेधसमोदय (१०) समोर्धत (११) तत्सेधस्था (१२) तृतीयस्तु (१३) यस्यद्वारपट्ट (१४) द्वारस्या (१५) यावद् (१६) भ्रम (१७) मडपकास्यदे वुध

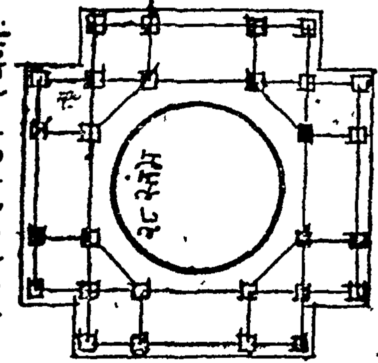
(१) શ્લોક ૩૭ થી ૪૩ સુધીના સાત શ્લોકના પાઠ ભેદની સ્પષ્ટતા કોઈ વિદ્વાન શિલ્પી દ્વારા થશે તો તે નવી આવૃત્તિમા આભાર સ્વીકારીશુ અશુદ્ધ પાઠોવાળી પ્રતો પરથી અમે જે આપી શક્યા છીએ તેનાથી અમે સતુષ્ઠ નથી

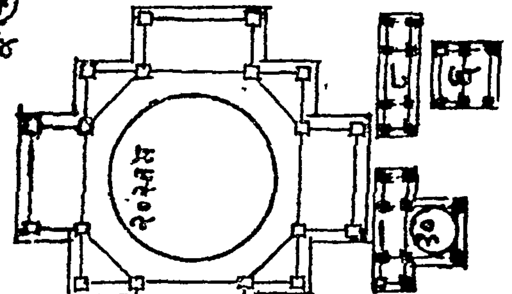
(१८) श्लोक ३७ से ४३ तकके सात श्लोकके पाठ भेदकी स्पष्टता कोई विद्वान शिल्पीके द्वारा होगी तो उसे नये सस्करणमें साभार स्वीकारेंगे। हमको अशुद्ध पाठोंवाली प्रतों परसे जो पता चला है उससे हम सतुष्ठ नहीं है।

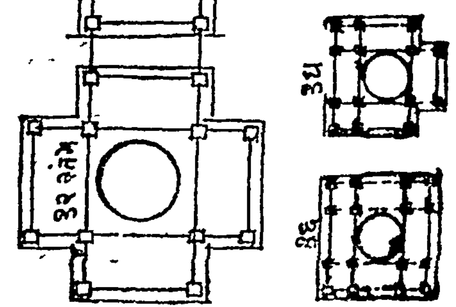
पंचभूमियुक्त मेरवादि २५ मंडप रचना

क्रमांक	मंडपों के नाम	स्तंभ संख्या	भूमि	प्रथम भूमि	द्वितिय भूमि	तृतिय भूमि	चतुर्थ भूमि	पंचम भूमि
१	त्र्येलोक्य विजय	६४	प्रथम	३६	२८			
२	लक्ष्मीविलास	६६	द्वितिय भूमि	३६	३०			
३	पद्म संभव	६८		३६	३२			
४	विमान	७०		३६	३४			
५	तेजवर्धन	७२		३६	३६			
६	प्रताप	७४	तृतिय भूमि	३६	२८	१०		
७	सुर्यांग	७६		३६	२८	१२		
८	भुर्भुवा	७८		३६	२८	१४		
९	पुण्यात्मा	८०		३६	२८	१६		
१०	शान्तिदेह	८२		३६	२८	१८		
११	सुरवल्लभ	८४		३६	२८	२०		
१२	शतश्रृङ्ग	८६		३६	२८	२२		
१३	पूर्णाख्य	८८	चतुर्थ भूमि	३६	२८	१४	१०	
१४	कीर्तिपताक	९०		३६	२८	२०	६	
१५	महापद्म	९२		३६	२८	२०	८	
१६	पद्मराग	९४		३६	२८	२०	१०	
१७	इंद्रनील	९६		३६	२८	२०	१२	
१८	शृंङ्गवा	९८		३६	२८	२०	१४	
१९	रत्नकूट	१००	पंचम भूमि	३६	२८	२०	१२	४
२०	हेमकूट	१०२		३६	२८	२०	१२	६
२१	गंधमादन	१०४		३६	२८	२०	१२	८
२२	हिमवान	१०६		३६	२८	२०	१२	१०
२३	कैलास	१०८		३६	२८	२०	१२	१२
२४	मंदार	११०		३६	२८	२०	१२	१४
२५	मेरु	११२		३६	२८	२०	१२	१६









ભાવાર્થ-એક ભૂમિથી પાચભૂમિ મજલાના મ ડપો ઊભા બ્રહ્મગર્ભને અનુસરીને કરવા છજા ઉપર (બે) પદની નીકળતી ચતુષ્કિકાની રચનાવાળા મ ડપનુ નામ **'પદ્મસ ભવ'** જાણવુ જ ઘાના નવ વિભાગમાના પાચ લક્ષણ જાણવા જ ઘાની છાજલી બરાબરથી નીચે સોળમો અ'શ ઉપર લઈ જવા ઉત્તર ગના ઉત્તર સૂત્રની બહાર પટ્ટનો સ શય ન ગણવો ગભારાની છાજલીના તળાચા નીચે શાખો (૩૯) એ રીતે ક્ષેત્રના બાહ્યપદ ન શય મ ડપની આગળ બીજુ અને ત્રીજુ પદ ૪૦) દ્વારના ભારપટ્ટ એક સૂત્રમા રાખવા દ્વારના ત્રીજાભાગે દશાશ પદ (૪૧) દોષ વગરનુ કાર્ય કરવુ તાલભેદ થવા ન દેવો અલિ દ-ચોકી ઉપર ચોકી સમસૂત્ર અને ગર્ભસૂત્રાનુસાર કરવી બહારના અલિ દ = ચોકી કઈક મૂળથી અધિક કરવી તે શુભ જાણવુ મધ્યની ચોકી ગર્ભ સૂત્રને અનુસરીને કરવી ૩૭ થી ૪૭

भावार्थ-एक भूमिसे पाँच भूमि-मजलेके मडपो खडे ब्रह्मगर्भको अनुसरके करना। छज्जेके उपर (दो) पदकी निकलती चतुष्किकाकी रचनावाले मडपका नाम "पद्म सभव" जानना। जघाके तकमे नौ विभागमे पाँच लक्षण जानना। जघाकी छाजली बराबरसे नीचे सोलहवाँ अश उपर लेजाना। उत्तरगके उत्तर सूत्रकी बाहर पट्टका सशय न रखना। गर्भगृहकी छाजलीके तलाचेके नीचे शाखों इस तरह क्षेत्रके बाह्य पद सशय मडपके आगे दूसरा और तीसरा पद द्वारके भारपट्ट एक सूत्रमे रखना। द्वारके तीसरे भागमे दशाशपद दोष रहित कार्य करना। तालभेद न होने देना। अलिंद-चौकीके उपर चौकी सम-सूत्र और गर्भसूत्रानुसार करना। बाहरके अलिंद=चौकी कुछ मूलसे अधिक करना। वह शुभ समझना। मध्यकी चौकी गर्भसूत्रको अनुसरके करना। ३७ से ४७

मेरुमंदर कैलासः हिमवान् गंधमादन ।
हेमकूटो रत्नकूटाख्य श्चैते शृङ्गमेर च ॥४४॥
इंद्रनीलः पद्मराग' महापद्मस्तथा परः ।
कीर्तिपताक-पूर्णास्यो-शतशृङ्ग सुरवल्लभ ॥४५॥
शाति देहो पुन्यात्म भूर्भुवः स्व स्वर्णाग स्तथा ।
प्रताप तेजवर्द्धन विमान पद्मसंभवः ॥४६॥
लक्ष्मीविलासो विज्ञेय स्त्रैलोक्यविजयस्तथा ।
पंचविंशति संप्रोक्ता मंडपा मेर्वादिका ॥४७॥

મેર્વાદિ પચ્ચીશ મ ડપના નામો કહે છે ૧ મેરૂ ૨ મદર ૩ કૈલાસ

૪ હિમવાન ૫ ગંધમાદન ૬ હેમકૂટ ૭ રત્નકૂટ ૮ શ્રૃંગવા ૯ ઇદ્રનીલ ૧૦ પદ્મરાગ ૧૧ મહાપદ્મ ૧૨ કીર્તિપતાક ૧૩ પુર્ણાખ્ય ૧૪ શતશ્રૃંગ ૧૫ સુરવલ્લભ ૧૬ શાંતિદેહ ૧૭ પુણ્યાત્મા ૧૮ ભુભુવ ૧૯ સૂર્યાંગ ૨૦ પ્રતાપ ૨૧. તેજવર્ધન ૨૨ વિમાન ૨૩ પદ્મ સંભવ ૨૪ લક્ષ્મી વિલાસ ૨૫ ત્ર્યૈલોક્ય વિજય એમ મેરવાદિ પચ્ચીશ મંડપોનાં નામો કહ્યાં. ૪૪ થી ૪૭.

मेरवादि पच्चीश मंडपके नामों कहते हैं। १ मेरू २ मंदर ३ कैलास ४ हिमवान ५ गंधमादन ६ हेमकूट ७ रत्नकूट ८ वैश्रृंग ९ इंद्रनील १० पद्मराग ११ महापद्म १२ कीर्तिपताक १३ पूर्णाख्य १४ शतश्रृंग १५ सुखवल्लभ १६ शांतिदेह १७. पूण्यात्मा १८ सुर्भुव १९ सूर्यांग २० प्रताप २१ तेजवर्धन २२ विमान २३ पद्म संभवं २४ लक्ष्मी विलास २५ त्र्यैलोक्य विजय–इस तरह मेरवादि पच्चीस मंडपोंके नाम कहे। ४४ से ४७.

अतः प्रासादतुल्याच द्वितीया भूमिरुर्ध्वतः।
तृतीया च प्रकर्तव्या प्रासाद स्कंधहीनकं ॥४८॥
मत्तवारणच्छाद्यं च संवरणाः वितानकम्।
प्रासादस्याग्रतः कार्यो बलाणकस्य चोपरि ॥४९॥

હવે પ્રાસાદના પ્રમાણથી ઊંચી બીજી ભૂમિની ઉપર ત્રીજી ભૂમિ મજલો પણ તે પ્રાસાદના સ્કંધથી નીચા કરવા. મંડપોને કક્ષાસન વેદિકાયુક્ત કરી ઢાંકી અંદર વિતાન ઘુમટ અને ઉપર શામરણ કરવી. આવા મેરવાદિ મંડપો પ્રાસાદ આગળ અને બલાણક ઉપર પણ કરવા. ૪૮–૪૯.

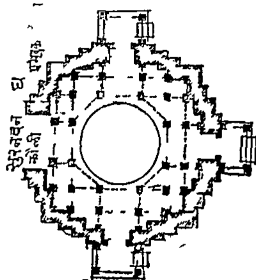
अब प्रासादके प्रमाणेंसे ऊँची दूसरी भूमिके उपर तीसरी भूमिके मजले भी उस प्रासादके स्कंधसे नीचे करना। मंडपोंको कक्षासन वेदिका युक्त कर ढँक कर अंदर वितान गुँबज और उपर शामरण करना। इस तरह मेरवादि मंडपों प्रासादके आगे और बलाणकके उपर भी करना। ४८–४९.

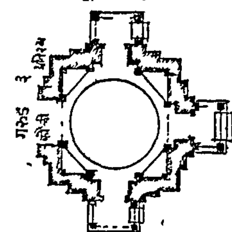
प्रांगणे माढरूपाढयः कर्तव्यः शुभलक्षणः।
राजवेदिकासनश्च कक्षासन विभूषितः॥५०॥ ॥इति मेरवादि मंडपाः॥

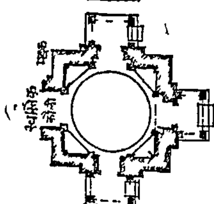
શુભ લક્ષણવાળા આ મેરવાદિ પચ્ચીશ મંડપો આગળ પ્રવેશદ્વાર પર બલાણક કે માઢ કરી વેદિકા આસનપટ અને કક્ષાસનથી વિભૂષિત કરવા. ૫૦.

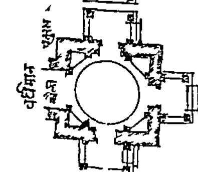
इति मेरवादि २७ मंडप शुभ लक्षणवाले इन मेरवादि पचीस मंडपोंको आगे

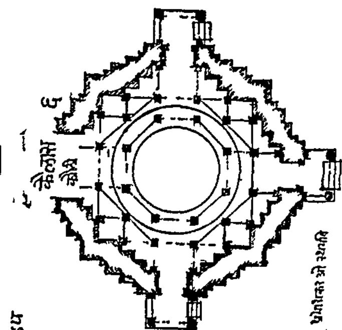
१९. મેરવાદિ મંડપના સ્વરૂપ અને તેના સામાન્ય સ્વરૂપો अपराजितसूत्र ૧૮૮ માં કહ્યાં છે. એ સિવાય સૂત્ર ૧૮૬માં પુષ્પકાદિ સત્તાવીશ મંડપ લક્ષણ સાથે આપેલાં છે. સૂત્ર ૧૮૭માં વર્ધમાનાદિ આઠ ગૂઢ મંડપો તથા સુભદ્રાદિક બાર મંડપો સૂત્રે ૧૮૮માં પ્રગ્રિવાદિ ષોડશ મંડપ સુરાલય ૫ મંડપો, યજ્ઞાર્થ ૫ મંડપો, સભા મંડપો પાંચ, રાજ ભુપણાર્થ પાંચ, નૃપ ભોજનાર્થ પાંચ એમ પચ્ચીશ મંડપો સ્તંભ સંખ્યા સાથે કહ્યા છે. ઉપરાંત નંદનાદિ આઠ મંડપો પણ કહ્યા છે.

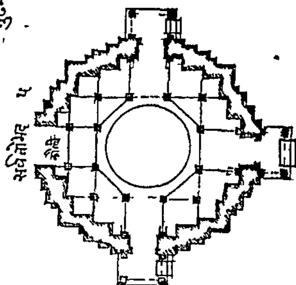








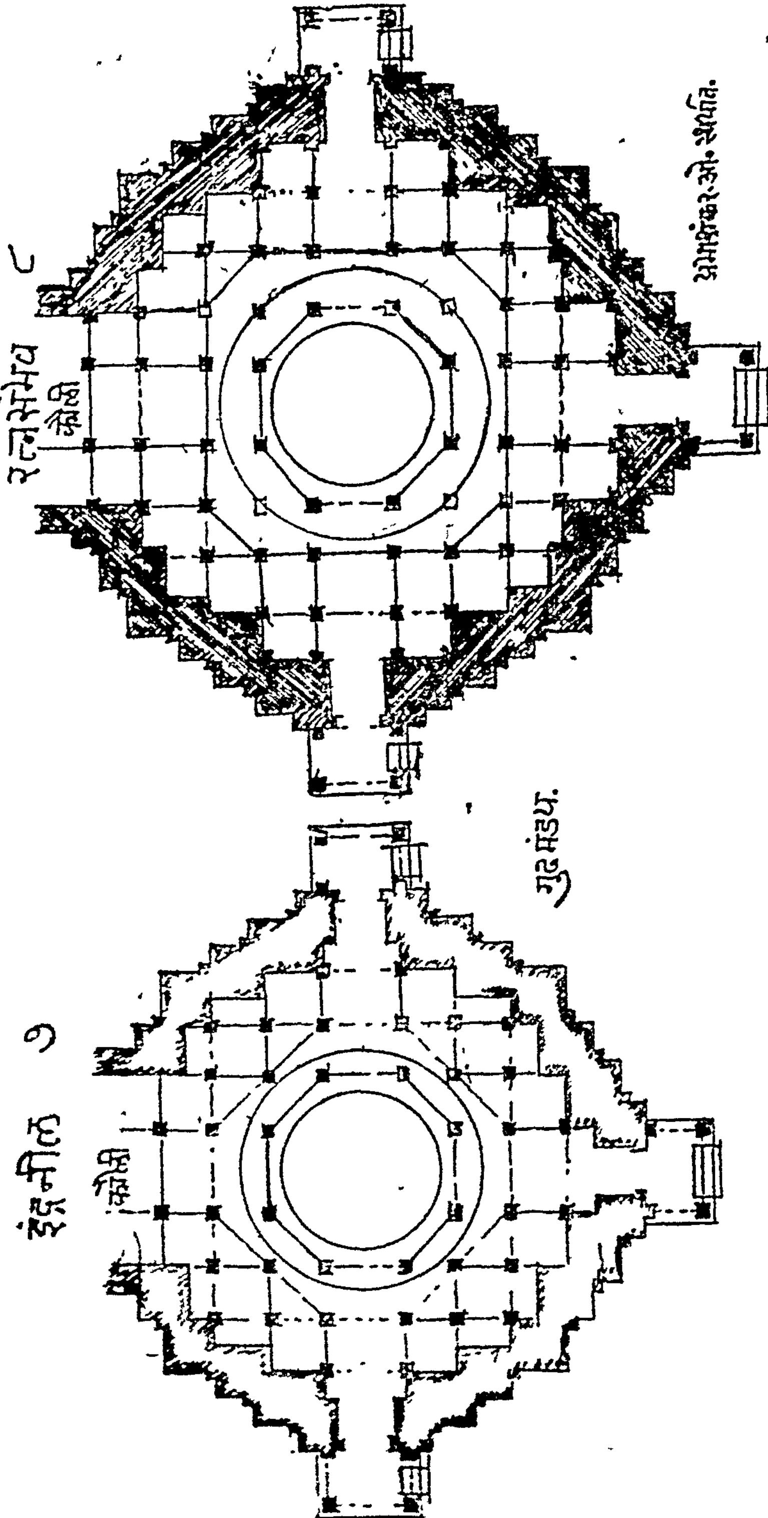




गुढ मडप आठ प्रकारमेंसे छ तलदर्शन

प्रवेश द्वार पर नलाणक घर गाढ कर गजसेनक वेदिका आसनपट और कक्षा-मनसे विभूषित करना। ५० इति मेर्वादि २७ मडप।

वर्धमान: स्वस्तिकाख्यौ गरुड: सुरनंदन: ।
सर्वतोभद्र कैलासेन्द्रनीला रत्नसंभव ॥५१॥
इत्यष्टौच समाख्याता वर्धमानादि मंडपा: ।
सपीठ मंडोवरादि प्रासादाकृति मेखला ॥५२॥
एकं वा त्रीणि वा कुर्याद् द्वाराणि कामदायक: ।
चतुष्किका यास्योत्तरे अग्रे वा वामदक्षिणे ॥५३॥



गूढ मण्डपके ८ प्रकारमेंसे अंतिम दो प्रकार

આઠ ગૂઢ મંડપનાં નામે કહે છે. ૧ વર્ધમાન (ચોરસ) ૨ સ્વસ્તિક (ભદ્રયુક્ત) ૩ ગરૂડ (પ્રતિરથયુક્ત) ૪ સુરનંદન (પ્રભદ્રવાળો) ૫ સર્વતોભદ્ર (કોણીકાયુકત ખુણીઓ કરવી.) ૬ કૈલાસ (અધિક ભદ્રવાળો = સુખ ભદ્રયુક્ત) ૭ ઇંદ્રનીલ (બે પ્રતિ રથ વાળો) ૮ રત્ન સંભવ (ત્રણ પ્રતિ રથવાળો) એમ આઠ ગૂઢ મંડપોનાં નામ જાણવાં. તે ગૂઢ મંડપોને પ્રાસાદના સ્વરૂપ જેવા પીઠ મંડોવર જેવા થરો કરવા. તેવા મંડપોને એક સન્મુખ દ્વાર અગર ત્રણ એમ બાજુના દ્વારો કરવાથી તે કામનાને આપે છે. આગળના દ્વારે એક અને ડાબી જમણી તરફના મંડપના દ્વારોએ આગળ ચોકીયો કરવી. (આનાં સ્વરૂપો દીપાર્ણવ અને અપરાજિતમાં આપેલાં છે.)
૫૧-૫૨-૫૩.

आठ गूढ मडपके नाम कहते है। १ वर्धमान (चोरस) २ स्वस्तिक (भद्र युक्त) ३ गरूड (प्रतिरथ युक्त) ४ सुरनदन (प्रभद्रवाला) ५ सर्वतोभद्र (कोणीका युक्त कोना करना।) ६ कैलास (अधिक भद्रवाला = सुरभद्र युक्त) ७ इद्रनील (दो प्रतिरथवाला) ८ रत्न सभव (तीन प्रतिरथवाला) इस तरह आठ गूढ मडपके नाम जानना। उन गूढ मडपोंको प्रासादके स्वरूप जैसे पीठ मडोवर जैसे थरो करना। वैसे मडपोंको एक सन्मुख द्वार अगर तीन बाजु द्वार करनेसे ये कामनाओंको देते हैं। आगेके द्वारको एक और बाई दाहिनी तरफके मडपके द्वारोंके आगे चौकियाँ करना। ५१-५२-५३ (इनके स्वरूपों दीपार्णव और अपराजितमे दिये है।)

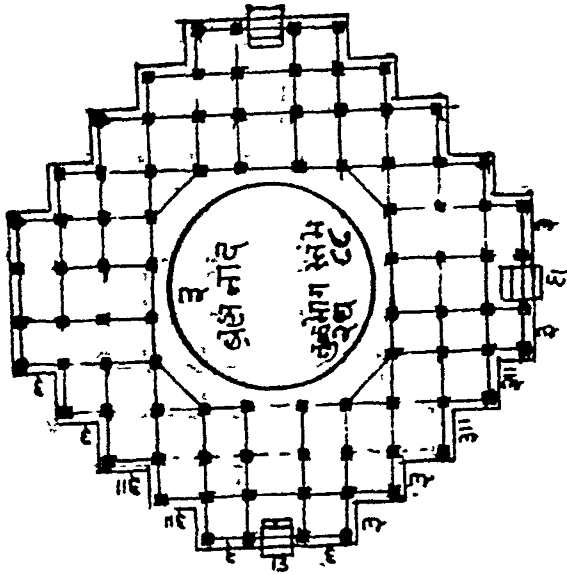
अत परं प्रवक्ष्यामि मंडपाना यथाक्रमम्।
नामस्वरूप मान च प्रयुक्त वृक्षराजसु॥५४॥
शिवनाद हरिनादो ब्रह्मनाद स्तथैव च।
रविनादो सिंहनाद पष्टको मेघनादकः॥५५॥
शिवनादा षण्मंडपा द्विसार्द्धा त्रयभूमिका।
सर्वदेवेषु कर्तव्या स्व नाम्ना च विशेषत॥५६॥
मध्य स्तंभाष्टके गडदी तोरणानि प्रदक्षिणा।
रथयुक्ताश्च प्रासादा वेदियुक्ताश्च मंडपा॥५७॥

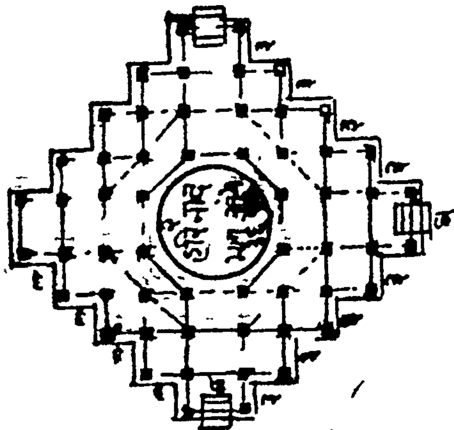
હવે હું છ મહામંડપોના નામ ક્રમથી કહું છું જે વૃક્ષાર્ણવમા તેના માન અને સ્વરૂપો કહેલા છે ૧ શિવનાદ ૨ હરિનાદ ૩ બ્રહ્મનાદ ૪ રવિનાદ ૫ સિંહનાદ ૬ મેઘનાદ એમ છ મહામંડપો જાણવા આ શિવનાદાદિ છ મહામંડપો જાણવા આ શિવનાદાદિ છ મંડપો અઢી કે ત્રણ ભૂમિ ઉદયના વિશેષ કરીને કરવા (તેથી પણ ઉંચા થાય છે,) આ મંડપો સર્વ દેવોને કરવા પરંતુ વિશેષ કરી જેના જેવા નામના દેવોને કરવા તે પ્રાસાદની જેમ ભદ્ર-રથાદિ અંગવાળા (ખુલ્લા મંડપ) કરવા આ મંડપને પ્રાસાદના જેવું પીઠ કરી તે પર વેદિકા કક્ષાસનયુક્ત કે ખુલ્લા સ્તંભો પણ કરી શકાય મંડપના મધ્યના

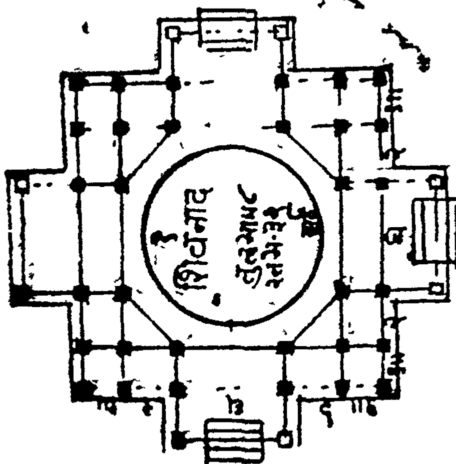
(१९) मेरादि मडपके स्वरूप और उनके सामान्य स्वरूपों अपराजित सूत्र १८८ मे कहे हैं। जिनके सिवा सूत्र १८५ मे पुष्पकादि सत्ताईस मडपा लक्षणके साथ दिये हैं। सूत्र १८७में वर्धमानादि आठ गूढमडपो, तथा सुभद्रादि त्रिक बारह मडपों सूत्र १८८मे प्राग्रीव आदि षोडश मडप सुरालय ५ मडपो यज्ञार्थ ५ मडपों, सभा मडपों ५, राजभूषणार्थ ५, नृपभोजनार्थ ५ इस तरह पच्चीस मडपो स्तभ सख्याके साथ कहे हैं। उपरात नदनादि आठ मडपों भी कहे हैं।

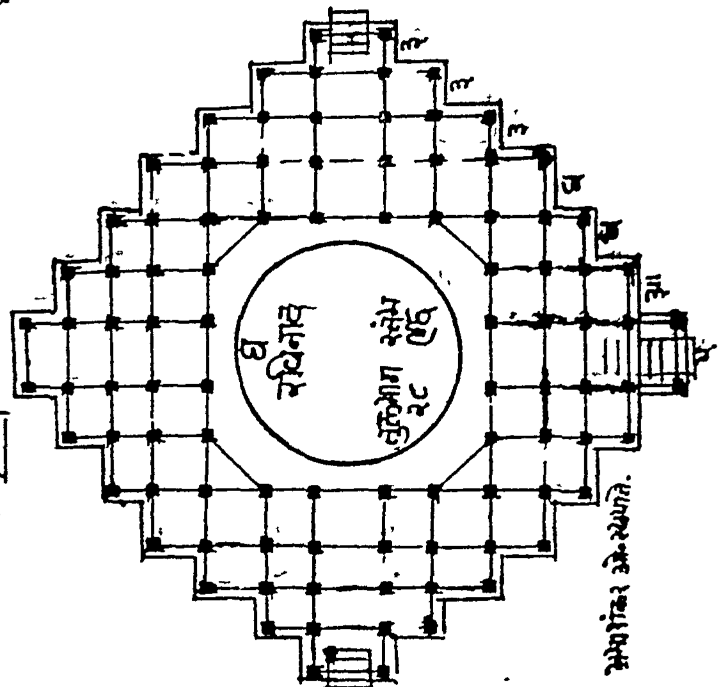
આઠ સ્તંભોને ઠેકી ચઢાવીને દોઢીયા ઉદયવાળા મંડપ કરવા. તેને ફરતા આઠ તોરણો કરવા.[२०]. ૪૭ થી ૫૪.

अब मैं छः महामंडपोंके नाम क्रमसे कहता हूँ जो वृक्षार्णवमें उनके मान स्वरूपों कहे हुए हैं। १ शिवनाद २ हरिनाद ३ ब्रह्मनाद ४ रविनाद ५ सिंहनाद ६ मेघनाद इस तरह छः महामंडपोंको जानना। इन शिवनादादि मंडपोंको ढाई या तीन भूमि उदयके विशेष करके करना (इससे भी ऊँचे होते हैं।) इन मंडपों सर्व देवोंको करना। परंतु विशेषकर जिसके जैसे नामके देवोंको करना। उस प्रासादकी तरह भद्ररथादि अंगवाले (खुले मंडप) करना। इन मंडपोंको प्रासादके जैसा पीठकर उसके पर वेदिका कक्षासनयुक्त या खुले स्तंभ भी कर सकते हैं। मंडपके मध्यके आठ आठ स्तंभोंको









मेघनादादि षड् महामंडप

(२०) આ છ એ મહામંડપોનું વિશેષ વિભાગથી ભદ્ર પ્રતિભદ્ર રથ ઉપરથાદિ અંગ સાથે શિલ્પના મહાગ્રંથ વૃક્ષાર્ણવના અધ્યાય ૧૦૨ માં વિગતથી આપેલું છે. અહીં સંક્ષિપ્ત છે. શિવનાદ ભાગ આઠ સ્તંભ ૨૮, હરિનાદ ભાગ ૧૬, સ્તંભો ૫૬, બ્રહ્મનાદ ભાગ ૨૪,

ભાગે નીચુ ગર્ભ ગૃહનુ ભૂમિતલ રાખવુ રંગ મંડપનુ તળ પીઠના મથાળા બરાબર રાખવુ રંગમંડપનુ તળીયુ આરસના ચિત્ર વિચિત્ર પાષાણોવાળુ રંગીન પટ્ટી-ઓથી શોભતુ કરવુ (ગર્ભગૃહથી મંડપ નીચો તેનાથી નીચી ચોકી એમ ઉત્તરોત્તર નીચુ રાખવુ ઉંચુ રાખે તો દોષ જાણવો ૬૦-૬૧

मडपकी रचना विपम पद विभाग के तलके उपर सम स्तभो से करना। प्रासादके गर्भगृहके ऊँबरेकी ऊँचाईके आधे भागमे, तीसरे भागमे या चौथे भागमे नीचे गर्भगृह के तलको रखना। मडप रगमडप के तल–पीठके शीर्पकपर रखना। रगमंडप का तल आरस के चित्र विचित्र पापाणवाला रगीन पट्टियों से शोभित करना। (गर्भगृहसे मंडप नीचा उससे चौकी नीची इस तरह उत्तरोत्तर नीचा रखना, ऊचा रखनेसे दोप होता है। ६०–६१

अथात्कथित रिषि! वलाणकस्य लक्षणम्।
प्रासाद व्यासमानेन गभमानेन चाऽथवा ॥६२॥
शालालिंद मानेन त्रिविध मानलक्षणम्।
अन्यच्च युक्ति मेदैन पुरतः पृष्ठतोऽथवा ॥६३॥

હે! ઋષિ હવે હુ બલાણકના લક્ષણ કહુ છુ (૧) પ્રાસાદની પહોળાઇના માનથી (૨) ગર્ભગૃહના માને (૩) શાલા આલિંદ ચોકીના પ્રમાણથી બલાણકનો વિસ્તાર રાખવાના આ ત્રણ માન જાણવા અન્ય યુક્તિ ભેદે કરીને પૂર્વ અને પશ્ચિમ આગળ પાછળ એમ ચતુર્મુખ પ્રાસાદને ચારે તરફ બલાણક કરવા એક મુખના પ્રાસાદને આગળ એક બલાણક કરવુ ૬૨-૬૩

हे ऋपि, अब मैं वलाणकके लक्षण वताता हूँ। (१) प्रासादकी चौडाई के मानसे (२) गर्भगृह के मानसे (३) शाला अलिंद चौकी के प्रमाण से वलाणक विस्तार रखने के ये तीन मान जानना। अन्य युक्तिभेदे कर पूर्व और पश्चिम आगे पीछे इस तरह चतुर्मुख प्रासादको चारों तरफ वलाणक करना। एक मुखके प्रासादको आगे एक वलाणक करना। ६२–६३

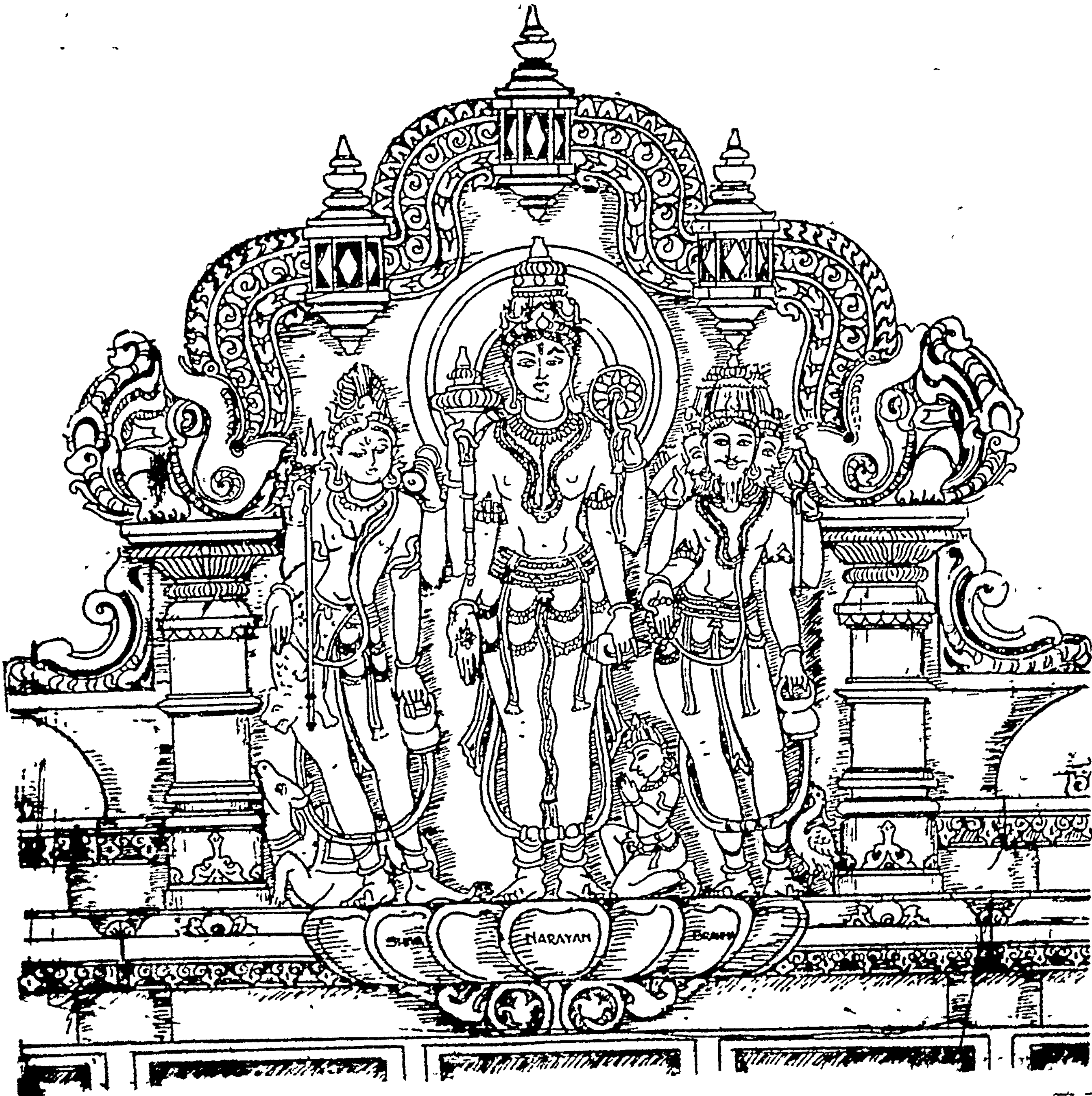
वामनश्च विमानश्च हर्म्यशालश्च पुष्करः।
तथा चोत्तुंगनामा च पंचैते च वलाणकाः ॥६४॥
वर्तनं कथयिष्यामि पदं संस्थानमानतः।
प्रासादग्रे च प्राकारे मंदिरे वारिमध्यतः ॥६५॥

પંચ પ્રકારના બલાણકના નામો કહે છે ૧ વામન ૨ વિમાન ૩ હર્મ્યશાલ ૪ પુષ્કર અને ૫ ઉત્તુંગ એમ પાંચે બલાણકના વર્તન સ્વરૂપ પદ સંસ્થાનના માનથી કયા

કયાં કરવા તે હું કહું છું. દેવમંદિર આગળ પ્રાસાદ (રાજમહેલ) આગળ, નગરના કિલ્લા આગળ, જળાશ્રયની મધ્યમાં કે આગળ એમ બલાણકના પદ સ્થાન જાણવા. ૬૪–૬૫.

पाँच प्रकारके वलाणकके नामों कहते हैं। १. वामन २. विमान ३. हर्म्यशाल ४. पुष्कर ५. उत्तुंग। इस तरह पाँचों वलाणकके वर्तन स्वरूपपद संस्थान के मानसे कहाँ कहाँ करना वह कहता हूँ। देव मंदिर आगे प्रासाद (राजमहल) के आगे; नगर के कोटके आगे; जलाश्रय के मध्यमें या आगे इस तरह वलाणक के पद स्थान जानना। ६४–६५.

वामनो देवताग्रे च विमानोतुङ्गै राजवेश्मनि।
हर्म्यशाले गृहे वाऽपि प्रासादे नगराननेे ॥६६॥



शिव–विष्णु और ब्रह्मा–त्रिमूर्तिका तोरण युक्त गेवलं

पुष्करं वारिमध्यस्थं मग्रतश्चैव भूपितम् ।
सप्त नव भूम्युत्तुंङ्ग मत उर्ध्वंन कारयेत् ॥६७॥

દેવ પ્રાસાદની આગળ જે બલાણક કરવામા આવે તેનુ ૧ वामन નામ જાણવુ: રાજમહેલ આગળના બલાણકને ૨ विमान નામ જાણવુ, અગર તેને ३ उत्तुङ्ग નામ પણ કહ્યુ છે ઘરોના આગળ ડેલી કે નગર આગળના બલાણકને ४ हर्म्यशाल નામ જાણવુ જળાશ્રયના મધ્યમા કે જળાશ્રયના મુખ આગળ શોભિતુ ५ पुष्कर નામનુ બલાણક જાણવુ [3] ઉત્તુઙ્ગ નામનો બલાણક સાતથી નવ માળ સૂધીનો ઉંચો (કીર્તિસ્તંભ જેવો) કરવો તેથી વધુ ઊંચો ન કરવો (२१) ६६-६७

देवप्रासाद के आगे जो वलाणक करने मे आवे उसका १ वामन नाम जानना । राजमहल के आगेके वलाणक का २ विमान नाम जानना । अगर उसका ३ उत्तुग नाम भी कहते हैं। घरोंके आगे खिडकी या नगरमुखके आगे के वलाणकका ४ हर्म्यशाल नाम जानना । जलाश्रय के मध्यमे या जलाश्रय के मुखके आगे शोभता पुष्कर नामका वलाणक जानना । उत्तुग नामका वलाणक सात से नव मालभूमि तकका ऊँचा (कीर्तिस्थम्भ जैसा) करना । इससे ज्यादा ऊँचा न करना[21] । ६६-६७

प्रासादाग्रे जगत्यग्रे ग्रस्तः स्यान्मुखमंडपः ।
उर्ध्वभूमि' प्रकर्तव्या नृत्यमंडप सूत्रतः ॥६८॥
लक्षणं तस्य वक्ष्यामि स्थानमानं च भूमिकाम् ।
एक द्वित्रि चतु पंच रस सप्ताष्टभिस्तथा ॥६९॥

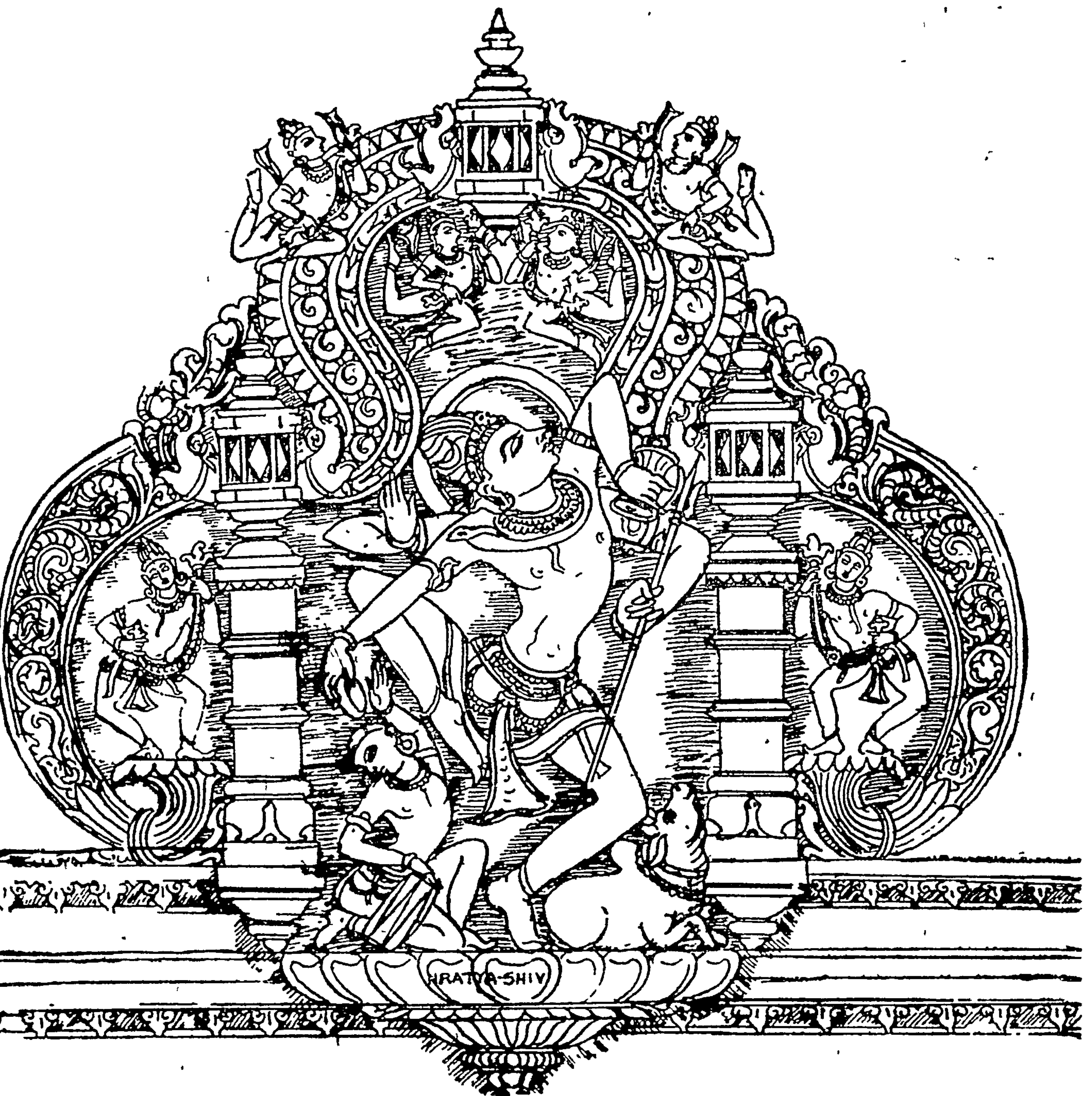
પ્રાસાદની આગળ, જગતીની આગળ કે જગતીથી અંદર ગ્રસ્ત તેવો આગળ મુખ મંડપ કરવો જગતીનો ભૂમિમંડપ નૃત્યમંડપના ગર્ભસૂત્રે કરવો

२१ બલાણક વિષે અન્ય મત પણ છે પ્રાસાદની જગતી આગળ જગતીમા સમાય તેવી ચોકી કે મંડપ કરવો તેને ૧ वामन નામનુ બલાણક કહે છે રાજમહેલ આગળ ૨ विमान કે પાંચ સાત ભૂમિ ઊંચુ એવુ બલાણક उत्तुङ्ग કહે છે ઘર આગળના દ્વાર પર ગોપુરાકૃતિ એક કે બે ત્રણ માળની ડેલી ને હર્મ્યશાલ બલાણક કહે છે અહીં જળાશ્રય આગળ પુષ્કળ બલાણક કહ્યો તેવી જળાશ્રય આગળ ઉત્તુંગ કીર્તિસ્તંભ જેવો અને મંદિર આગળ ગોપુર કહે છે –

२१ वलाणकके बारेमें अन्यमत भी है। प्रासाद की जगती आगे जगतीमें समास के ऐसी चौकी या मडप करना। उसको १ वामन नामका वलणक कहते हैं। राजमहल के आगे २ विमान या पाँच सात भूमि ऊँचा ऐसा वलाणक उत्तुग कहा जाता हैं। घरके पासके द्वारपर गोपुराकृति एक या दो तीन मजलेके प्रवेशद्वार को हर्म्यशाल वलाणक कहते हैं । यहाँ जलाश्रय आगेका पुष्कर वलाणक नहीं कहा है अपूर्ण है । उत्तुङ्ग जलाश्रयके पास कीर्तिस्तम्भ जैसा होता है। मन्दिरके आगे गोपुर भी होता है।

તેનાં લક્ષણ કહું છું. આ બલાણક પ્રાસાદથી જગતીથી એક બે ત્રણ પાંચ છ સાત કે આઠ પદ છેટે સ્થાન માનનો આશ્રય જાણીને ભૂમિ છોડીને કરવો. ૬૮–૬૯.

प्रासादके आगे, जगतीके आगे या जगतीके अंदर समास के एसे आगे मुख मंडप करना। जगतीका भूमि मंडप नृत्य मंडप के गर्भसूत्र में करना। उसके लक्षण कहता हूँ। यह बलाणक प्रासादसे या जगतीसे एक दो तीन पाँच छः सात या आठ पद दूर स्थान मानका आश्रय जानकर भूमि को छोड़कर करना। ६८–६९.



तोरण परिकार साथ नृत्यशिव का गेबल

जगती तु शिरोदेशे जठरे चोत्तरङ्गकम् ।
अधस्तुलोदये भूमिर्घटनादि च तत्समम् ॥७०॥
तत्समं तु प्रकर्तव्य मुत्तरङ्गं सपट्टकम् ।
उदयोन्नतमानेन सोपानं तुलामध्यतः ॥७१॥

જગતીના મથાળા સુધીમા એટલે કે તેના જઠરના દ્વારના ઉત્તરંગનો સમાસ કરવો (જગતી નીચે પ્રવેશ મંડપ કે ચોકીના) તુલા પાટડાનો ઉદય ભૂમિદય કે કુંભા બરાબરમા કે નીચે સમાવવો જગતીની ચોકીના પાટ બરાબર પ્રવેશ દ્વારનો ઉત્તરંગ રાખવો જગતીના ઉદયના માનમા પાટડાની અંદર ઉપર ચડવાના પગથિયા કરવા [२२] ७०-७१

जगतीके शीर्षक तकमे अर्थात् उसके जठरमे द्वारके उत्तुगका समास करना। (जगतीके नीचे प्रवेश मडप या चौकीके) तुला पाटडेका उदय भूमिदय या कुभे के बराबरमे या नीचे समाना। जगती की चौकी के पाट बराबर प्रवेश द्वारका उत्तरंग रखना। जगतीके उदयके मानमे पाटडे के अंदर उपर चढनेके पगथिये करना।[२२] ७०-७१

कुंभीस्तंभ शिरः पट्टं पृथक् सूत्र तुलादिकम् ।
भूमिं तु भुमि मानेन समसूत्रै विचक्षणा ॥७२॥

બલાણકના કુંભી સ્તંભ સરાપાટ આદિ મૂળ પ્રાસાદના સ્તંભના છોડ પ્રમાણે સમસૂત્રે કરવા પ્રત્યેક મજલના ઉદય પ્રમાણે વિચક્ષણ શિલ્પીએ સમસૂત્રે રાખવા ७२

२२=બલાણક એટલે લૌકિક ભાષામાં ડેલી-પ્રવેશ દ્વાર પરનો ભાગ જાણવો દેવ પ્રાસાદમા આવા બલાણક બનાવવોને ભૂમિતળથી એક મજલા જેટલી જગતી ઉંચી કરી તે પર પ્રાસાદ કરેલ હોય તો જ દેવપ્રાસાદ સામે બનાણક કરવુ યોગ્ય થાય છે જો કે જગતીના બરાબર ઉંચાઈ બરાબર પણ આગળ જે મંડપ કરવામા આવે છે તેને પણ 'વામન' નામનુ બલાણક કહ્યુ છે જૈનોમા દેવ સ્થાપના પ્રલોભને બનાણકમા પ્રાસાદની બરાબર સામે ગર્ભગૃહ કરી તે પર શામરણ કે ત્રિપટ કરે છે એટલે મૂળ મંદિરથી નીચુ કરવાના હેતુથી તેમ કહે છે કારણ કે મૂળ પ્રાસાદ કે મૂળ ભવન કે મૂળ ઘરની ડેલી રૂપ આ બલાણક હમેશા નીચુ રહેવુ જ જોઈએ ઓછા ઉદયવાળી જગતીમા શ્લોક ७०-७१ પ્રમાણે નીચેના મુખમંડપ કે ચોકીના પાટ અને તે પરના ભૂમિ દળ (છાતીયા ગણુ થાળ) શાદી-કેવાર) નો સમાસ મૂળ પ્રાસાદના ઉમ્બરની અંદર એટલે કુંભાની અંદર સમાવે છે તેનાથી નીચુ થાય તો ઉત્તમ ગણાય જગતી બરાબર ના મુખ મંડપ કે ચોકીનો પાટ મુખ્ય પ્રવેશ દ્વારના ઉત્તરંગ ઉપર હોય છે આ વિષય સ્થાન માન અને ભૂમિતળના જગતીના ઉદય પર આધાર રાખે છે ઉત્તુંગ નામનો બલાણક દ્રવિડના ગોપુર જેવો અગર રાજ પ્રાસાદ આગળ ટાવર જેવો જાણવો કીર્તિસ્તંભ એ આ ઉત્તુંગના સહોદર જેવો જાણવો

२२ बलानक=अथात् लौकिक भाषामें डहली=प्रवेश द्वारके उपरका भाग समजना। देव प्रासादमें ऐसे बलाणक बनानेमें भूमितलसे एक भूमि जातिनी जगती ऊँची करके प्रासादका

बलाणक के कुम्भी स्तंभ सरापाट आदि मूल प्रासाद के स्तंभ के छोडके अनुसार समसूत्रमें रखना । ७२.

बलाणकस्तत्तदग्रेतोरणभद्रमस्तके ।
तद् बाह्ये मत्तावरणं सन्मुख वामदक्षिणे ॥७३॥

इति पंचविध बलाणक

બલાણકના આગળ ભદ્રભાગના સ્તંભોને તોરણ કરવું. તેની બહાર સન્મુખ અને બાજુમાં જમણી ડાબી તરફ મત્તવારણ કક્ષાસન કરવાં. ૭૩.

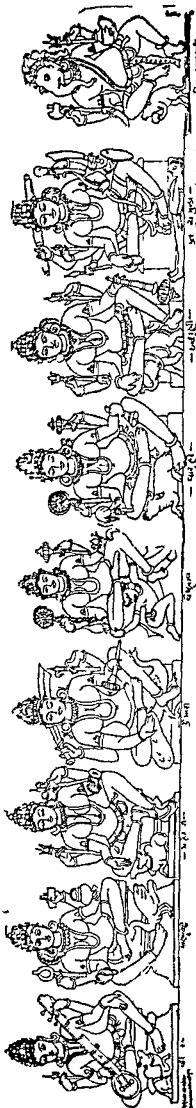
ब्लाणके आगे भद्र भागके स्तम्भों को झूल करना । उसके बाहर सन्मुख और बाजुमें दाहिनी बायीं तरफ मत्तवारण–कक्षासन करना । ७३.

अथ संवरणा—संवरणाश्च प्रवक्ष्यामि प्रथमं पंचघंटन् ।
चतुर्घंटाभिर्वृध्ध्या च यावदेकोत्तरं शतम् ॥७४॥
पंचविंशतिरित्युक्ता विभक्तिर्भाग संख्यया ।
विभक्ति रष्टभागाद्या यावद् वेदोत्तरं शतम् ॥७५॥

હવે હું સંવરણા વિશે કહું છું. શરૂમાં પાંચ ઘંટાથી ચચ્ચાર ઘંટાની વૃદ્ધિએ એકસો એક ઘંટા સુધીની તેમ ભાગ સંખ્યાથી પચ્ચીસ સંવરણા કહી છે. વિભકિત ભાગ સંખ્યાએ પહેલી આઠ ભાગની સામરણથી એક સો ચાર ભાગ સુધીની એમ પચ્ચીશ સંવરણા ચચ્ચાર ભાગની વૃદ્ધિથી કરતા જવું. ૭૪–૭૫.

अब मैं संवरणाके बारेमें कहता हूँ । शुरूमें पाँच घंण्टेसे चार चार घंटे की घृद्धि पर एकसौ एक घण्टे तककी उस भाग संख्या से पच्चीश संवरणा कही गयी है । विभक्ति भाग संख्यासे पहली आठ भागकी शामरणसे एक सौ

निर्माण कीया हो तो ज देव प्रासादके सामने वलाणक हो सकता है । जगतीका उदय सम आगे जो मंडप वनाते हैं उनको **"वामन"** नामक बलाणक कहते हैं । जैनोंमें देव स्थापनका प्रलोभनसे वलाणक प्रासादकी बराबर सामने गर्भगृह करके उसकी पर संवरणा या त्रिषट बनाते हैं । शिखर नहि करता ! मूल मंदिरसे नीचा रखनेका हेतुसे असा करता है । मूल प्रासाद या मूल भवन या मूल घरसे डहली बलाणक हमेशा नीचा होना चाहीये । कम उदय वाली जगतीमें श्लोक ७०–७१ का प्रमाणसे नीचेका मुखमंडप=चोकीका पाट=बीम और ते परकी भूमिदल (छालिया–रणथल=लादी=फलोर) का समास मूल प्रासादके उदम्बकी अंदर होना चाहीये । उससे ऊँचा नहिं मगर नीचा रखना उत्तम है । जगती बराबर मुख मंडप= चोकीका पाट=बीम मुख प्रवेश द्वारका उत्तरङ्ग उपर होना चाहिये ! यह विषय स्थान मान और भूमितलका जगतीका उदय पर आधार रखता है । उत्तुंग नामका वलाणक द्रविडका गोपुरम् जैसे अगर राजप्रासाद आगे टावर जैसे समजना । कीर्ति स्तम्भ ये उत्तुङ्ग का सहोदय जैसा समजना ।



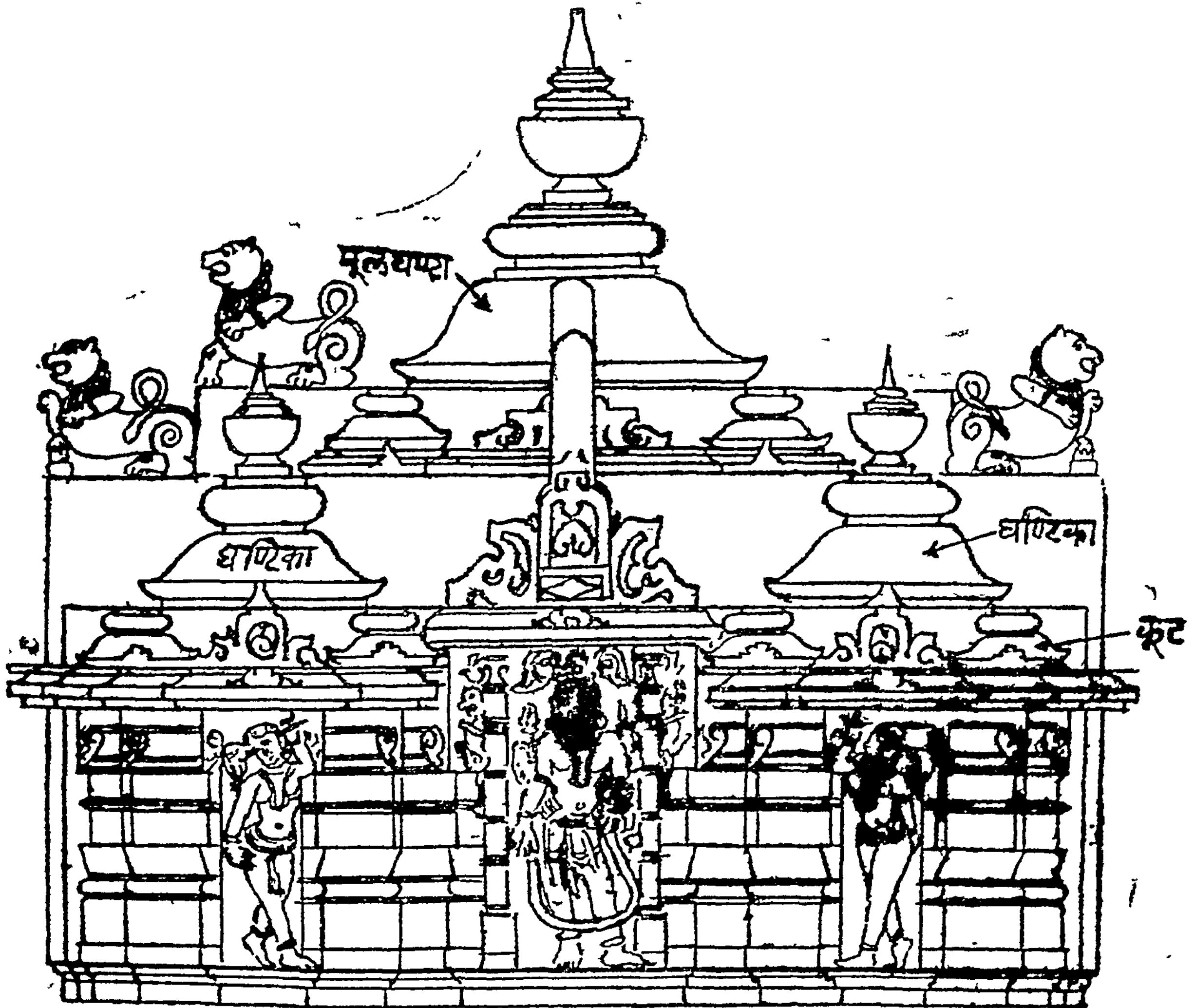
विरेश्वर=विरभद्र १ ब्रह्माणी २ महेश्वरी ३ कौमारी ४ वैष्णवी ५ वाराही ६ इन्द्राणी ७ रक्त चामुंडा विनायक गणेश

सप्त मातृका

સંવરણાને શિલ્પીઓની ભાષામાં શામરણ કહે છે અહી મંડપ પર શામરણ કરવાનુ કહે છે પરંતુ ગર્ભગૃહ પર પણ જ્યાં શિખર કરવાની દુષ્કરતા હોય અગર અલ્પ દ્રવ્ય વ્યયના કારણે ગર્ભગૃહ પર શામરણ કરે છે આબુના મહામુલા મંદિરો પર શામરણ, ઓરિસાકલિંગ દેશમા ઓરીસા કોલગ અને ખજુરાહોમા શિખર અને શામરણ બેઉ જોવામાં આવે છે શામરણનો બીજો પ્રકાર ત્રિઘટા છે કલિંગાદિ દેશોના જુના કામોમા જોવામા આવે છે. આપણા સૌરાષ્ટ્ર ગુજરાતને કચ્છ રાજસ્થાનના જૂના કામોમા ત્રિઘટ જોવામા આવે છે એક પર બીજી છાજલી પાછી મારી સંકોતી ઉપર આમલસારો ઘંટા કરી કળશ ચડાવે છે ત્રિઘટાનો નાગરાદિ શિલ્પમાં શાસ્ત્રોક્ત પાઠ હજુ જોવામા આવેલ નથી ૧ શિખર ૨ શામરણ ૩ ત્રિઘટા એમ ત્રણ સર્વોચ્ચ શિલ્પ મનાય છે ત્રિઘટાએ થોડા ફેરફાર સાથે શામરણનુ સંક્ષિપ્ત સ્વરૂપ છે સંવરણાને શિલ્પમા નાસિજાતિથી સંબોધાય છે શામરણ વિસ્તારથી અર્ધ ઉંચી કહી છે પરંતુ શિલ્પીઓ પોતાની કળાનુ પ્રદર્શન કરવા પ્રત્યેક થરે જાંગી ચડાવી ઉંચી કરે છે જેસલમેરમા તેવુ છે વર્તમાનકાળમાં શામરણ ચડાવવાની જે પ્રથા શિલ્પીઓમાં છે તે બસોક વર્ષથી ચાલી આવી છે છાજલી કૂટએ ઘંટા પ્રત્યેક થરમા કરવાનુ શાસ્ત્રકાર કહે છે જ્યારે વર્તમાન કાળની શામરણમા એકલી ઘંટા—શામસાના થર પર થર ચડાવે છે જો કે આ રીત અશાસ્ત્રી તો ન કહી શકાય જ્યારે ગર્ભગૃહ પર સંવરણા કરવાની હોય છે ત્યારે ઉપર મૂળ ઘંટાના સ્થાને આમલસારો જ કરવાની ફરજ પડે છે કારણ કે ધ્વજાદંડ ઊભો કરવાનુ મૂળ ઘંટામાં બની શકતુ નથી પરંતુ આમલસારામા સાલ રાખીને દંડ સ્થાપન કરી શકાય છે

अथ संवरणा—संवरणाश्च प्रवक्ष्यामि प्रथमं पंचघंटन् ।
चतुर्घंटाभिर्वृध्ध्या च यावदेकोत्तरं शतम् ॥७४॥
पंचविंशतिरित्युक्ता विभक्तिर्भाग संख्यया ।
विभक्ति रष्टभागाद्या यावद् वेदोत्तरं शतम् ॥७५॥

હવે હું સંવરણા વિશે કહું છું. શરૂમાં પાંચ ઘંટાથી ચચ્ચાર ઘંટાની વૃદ્ધિએ એકસો એક ઘંટા સુધીની તેમ ભાગ સંખ્યાથી પચ્ચીસ સંવરણા કહી છે. વિભક્તિ ભાગ સંખ્યાએ પહેલી આઠ ભાગની સામરણથી એક સો ચાર ભાગ સુધીની એમ પચ્ચીશ સંવરણા ચચ્ચાર ભાગની વૃદ્ધિથી કરતા જવું. ૭૪–૭૫.

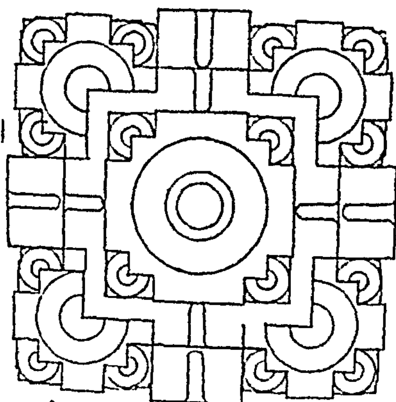


पुष्पिका नाम संवर्णा (१) घण्टिका ५ कूट १६. सिंह ८. भाग ८.
प्रभाशंकर. ओ. स्थपति.

अब मैं संवरणाके बारेमें कहता हूँ। शुरूमें पाँच घण्टेसे चार चार घंटे की वृद्धि पर एकसौ एक घण्टे तककी उस भाग संख्या से पच्चीश संवरणा कही गयी है। विभक्ति भाग संख्यासे पहली आठ भागकी शामरणसे एक सौ

चार भाग तक की इस तरह पच्चीस मंजरणा चार चार भाग की वृद्धि से करते जाना। ७४-७५

चतुरस्त्रीकृते क्षेत्रे अष्टभाग विभाजिते।
भागौ द्वौ रथिका कार्या चतुर्दिक्षु व्यवस्थिता ॥७६॥
कर्णे घंटिकाद्विभागा तदध कूट कोणतः।
मूल घंटा त्रयोभागा भागकं कलशं भवेत् ॥७७॥
उदयं च प्रवक्ष्यामि भागाश्चत्वार एव च।
छाद्योद्गमान्तरकूट: तदूर्ध्वं घटिका भवेत् ॥७८॥



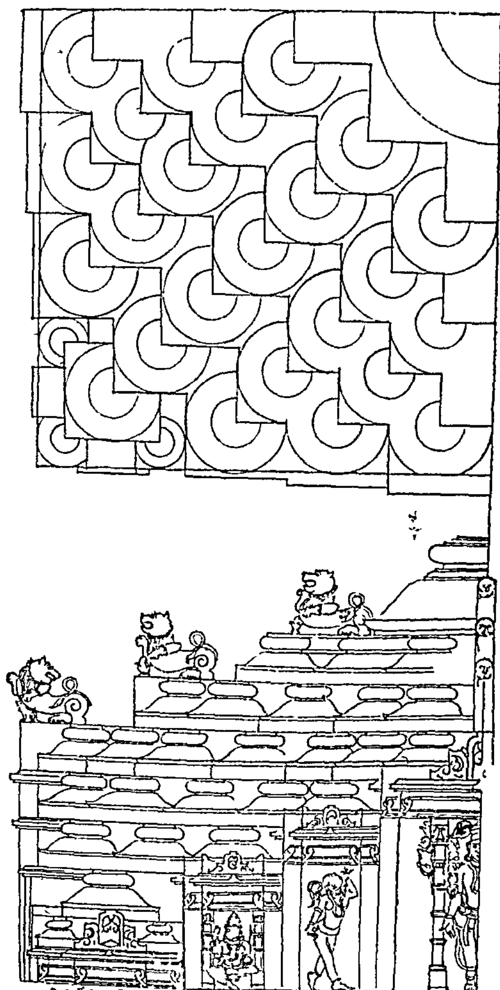
१ पुष्पिका नाम मपर्णा तल दर्शन (उपर सन्मुख दर्शन)

ચોરસ ક્ષેત્રના આઠ વિભાગ કરવા. તેમા ગર્ભે મધ્યમા બે ભાગની રથિકા (ભદ્ર) અને ત્રણ ત્રણ ભાગની રેખા કરવી તે રીતે ચારે બાજુએ વિભાગની વ્યવસ્થા કરવી રેખાયે બે ભાગની પહોળી ઘટિકા કરી તેની નીચે ખુણે કૂટ કરવા સર્વોપરિ મૂળ ઘટ ત્રણ ભાગની કૂટ સાથે ચાર ભાગની પહોળી કરી તે ઉપર એક ભાગનો કળશ કરવો આમ તળવિભાગ કહ્યા હવે ઉદય ઉભણી ચાર ભાગની કરવાનુ કહુ છુ પ્રત્યેક ઘટા નીચે છાજલી તે પર કૂટ કરવુ, કૂટના થરમાં ઘંટિકાના ગર્ભે ઉદ્ગમ દોઢીયા કરવા તે કૂટ ઉપર ઘંટિકા કરવી,

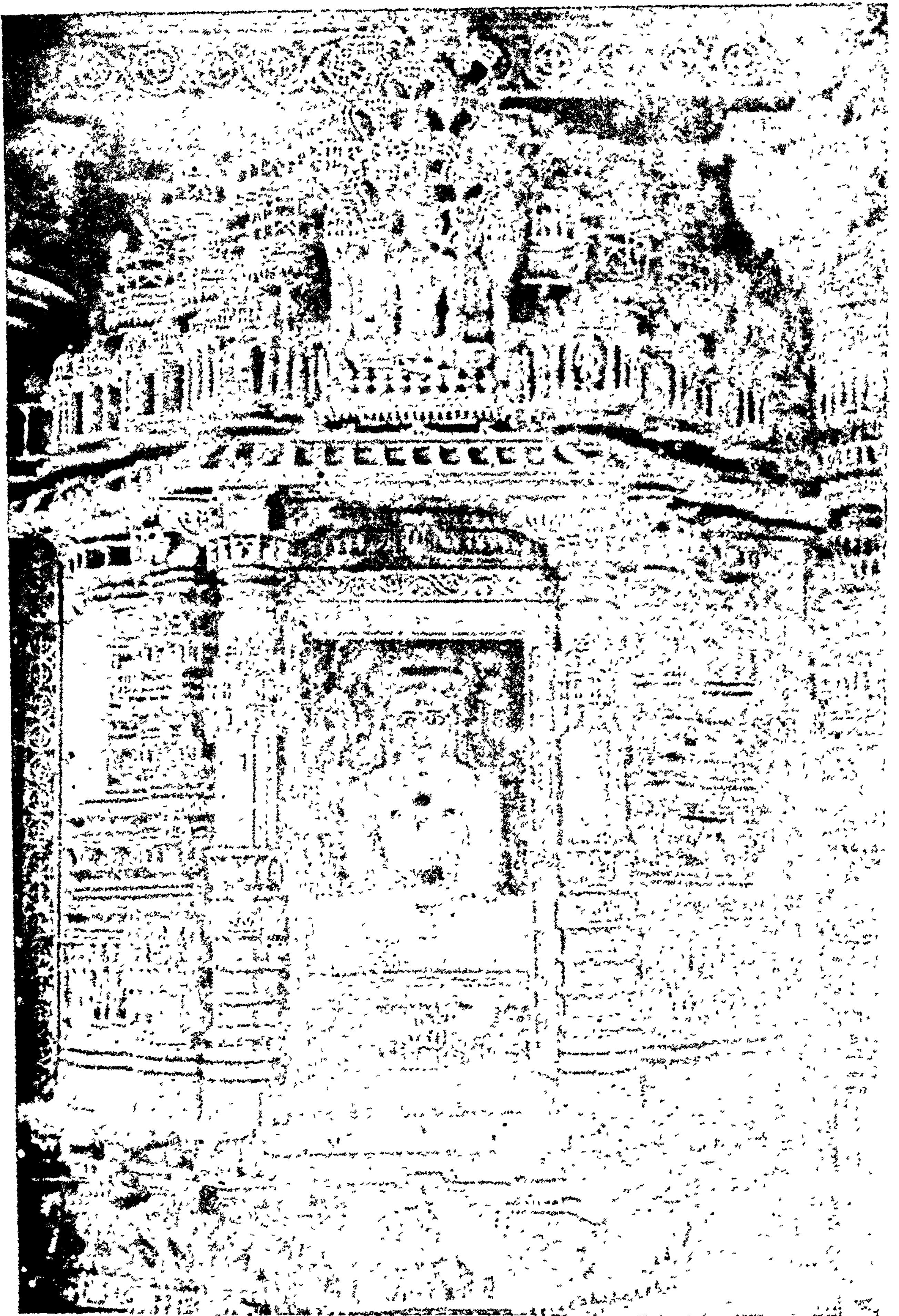
આ રીતે શામરણ–પચ્ચીશ ચડાવવી. શામરણના પ્રત્યેક ઘરમાં નીચે છાજલી કૂટ ઉદ્ગમ અને તે પર ઘંટીકા ચડાવવાં આમ શામરણના પ્રત્યેક થરોને ક્રમ જાણવો આ રીતે કરતાં જેમ શિખરને ઉરુ શૃંગ ચડે છે તેમ શામરણને ગર્ભે ઉરુઘંટા ચડે તે પર સિંહ બેસે છે. મધ્યની સર્વોપરિને મૂળ ઘંટા કહે છે. અને તેના પર મોટો કળશ સ્થાપન થાય. જોકે પ્રત્યેક ઘંટા પર કળશ. ઈંડા મૂકવાં. ૭૬–૭૭–૭૮.

चोरस क्षेत्रके आठ विभाग करना । उसमें गर्भमें मध्य में दो भाग की रथिका (भद्र) और तीन तीन भाग की रेखा करना । इस तरफ चारों बाजु विभाग की व्यवस्था करना । रेखापर दो भागकी चौडी घंटिका कर उसके नीचे कोनेमें कूट करना । सर्वोपरि मूल घण्टा तीन भागकी कूटके साथ चार भाग की चौडी करसे उसके ऊपर एक भागका कलश करना । इस तरह तलविभाग कहे । अब उदय चार भागका करने के लिये कहता हूँ । प्रत्येक घण्टा के नीचे छाजली उसके ऊपर कूट करना । कूटके थरमें घंटिका के गर्भमें उदय डेढिया करना । उस कूटके ऊपर घंटिका करना ।

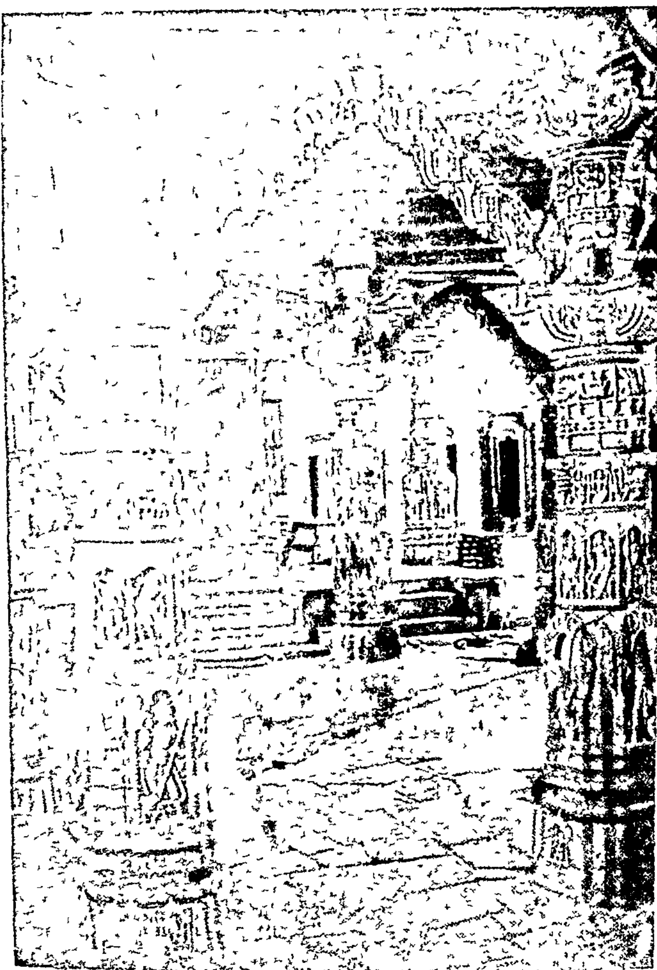
संवरणाको शिल्पीओंकी भाषामें शामरण कहते हैं । यहाँ मंडप पर शामरण करने के लिये कहा है । परंतु गर्भगृह पर भी जहाँ शिखर करनेकी दुष्करता हो अगर अल्प द्रव्य व्ययके कारण गर्भगृह पर शामरण करते हैं । आबूके महामूले मंदिरों पर शामरण ओरिसा–कलिंग और खजुराहोमें शिखर और शामरण दोनों देखनेमें आते हैं । शामरण का दूसरा प्रकार त्रिषट है । और कलिंगादि देशोंके पुराने कामोंमें देखनेमें आते हैं । अपने सौराष्ट्र, गुजरात और कच्छ, राजस्थान के पुराने कामोंमें त्रिषट देखनेको मिलता है । एक पर दूसरी छाजली पीछे मारकर संकोचकर उपर आमलसाराघंटा कर कलश चढ़ाते हैं । त्रिसटाका नागरादि शिल्पमें शास्त्रोक्त पाठ अभी देखनेमें आया नहीं है । (१) शिखर (२) शामरण (३) त्रिषटा इस तरह तीन सर्वोच्च शिल्प होता है । ;त्रिषटा थोड़े फेरफारके साथ शामरणका संक्षिप्त स्वरूप है । संवरणा को शिल्पमें नारी जातिसे संबोधन किया जाता है । शामरण विस्तार से अर्ध ऊँची कही गई है । परंतु शिल्पीओं अपनी कलाका प्रदर्शन करनेके लिये प्रत्येक थर पर जांगी चढ़कर ऊँची करते हैं । जेसलमेरमें वैसा है । वर्तमानकालमें शामरण चढ़ानेकी जो प्रथा शिल्पियोंमें है, वह करीव दो सौ सालसे चली आयी है । छाजली कूट घंटा प्रत्येक थरमें करनेका शास्त्रकारका विधान है । और वर्तमानकाल की शामरणमें अकेली घंटा लामसाके थर पर थर चढ़ाते हैं । यद्यपि यह रीत अशास्त्रीय नहीं कही जाती । जव गर्भगृह पर संवरणा करनेकी होती है तव उपर मूल घंटाके स्थान पर आमल सारा ही करनेका फर्ज पड़ता है, क्योंकि ध्वजा दंड खडा करनेका कारण मूल घंटेमें वनता नहीं है । परंतु आमलसारेमें साल रखकर ध्वजा दंड स्थापन किया जा सकता हैं ।



वर्तमान कालसे शिल्पोओं की शामरण की प्रथा



देवराणी जेठाणी के स्पर्धाका सुंदर कलामय गोखला—लुणिग वसही (देलवाडा आबु)



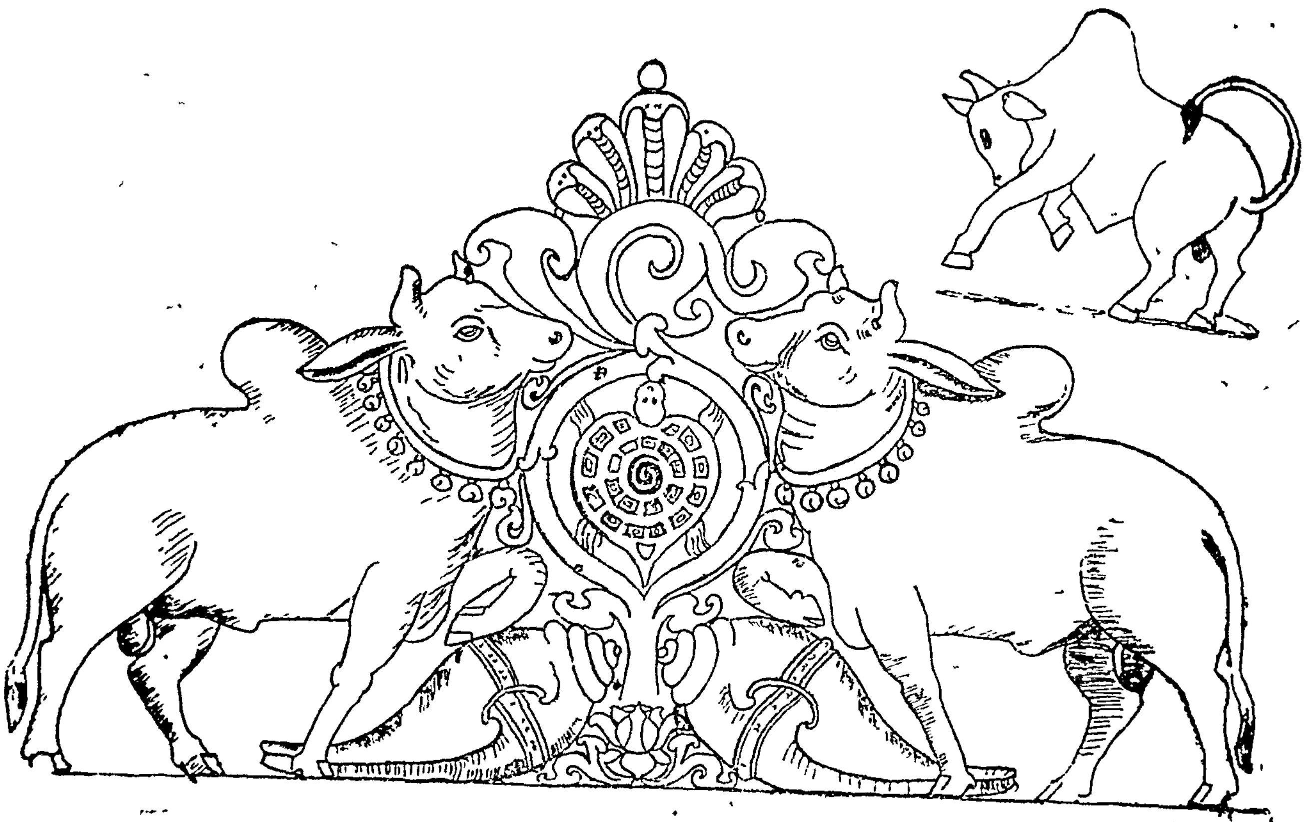
देलवाडा आबु के विमल वसही मंडप के स्तम्भ देवाङ्गना और इलिका तोरण

इस तरह शामरण पच्चीस चढ़ाना–शामरणके प्रत्येक थरमें नीचे छाजली कूट–उद्‌गम और उसके पर घण्टीका चढ़ाना। इस करह शामरणका प्रत्येक थरका क्रम जानना। इस तरह करते जिस तरह शिखर को उरुशृंग चढ़ता है इस तरह शाभरण के गर्भमें उरुघण्टा चढे उसके पर सिंह बैठता है। मध्य की सर्वोपरि को मूल घण्टा कहता हैं और उसके पर बड़ा कलश स्थापित होता है। यद्यपि प्रत्येक घण्टा पर कलश–अंडा रखा गया है। ७६–७७–७८.

इति श्री विश्वकर्मा कृतायां क्षीरार्णवे नारदपृच्छायां मंडपाधिकारे शताग्रे षड्दशमोऽध्याय ॥ ११६ ॥ (क्रमांक अ० १८)

ઈતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિય ક્ષીરાર્ણવ શ્રી નારદજીએ પૂછેલ મંડપાધિકારના શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકા સાથેનો એકસો સોળમો અધ્યાય (૧૧૬) (ક્રમાંક અ૦ ૧૮)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें श्री नारदजीके पूछे हुए मंडपाधिकारके शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रचि हुई सुप्रभा नाम्नी भाषाटीका का एकसौ सोलहवां अध्याय। ११६) (क्रमांक अ० १८)



॥ अथ सांधार भ्रम निरूपणाध्याय ॥

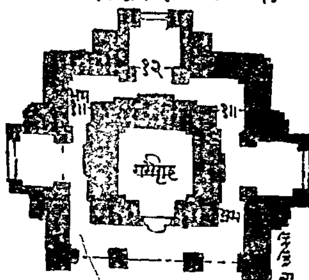
क्षीरार्णव अ० ॥ ११७ ॥ क्रमांक १९

श्री विश्वकर्मा उवाच

भ्रमभित्ति प्रवक्ष्यामि प्रासाद मानतां बुध' ।
दशहस्तोत्तरा यावत्प्रासादा: सभ्रमा भवेत् ॥ १ ॥
दशोर्ध्वे च शतपादे भ्रममेकं प्रकीर्तितम् ।
सप्तविंशे द्वयं चैव अष्टमांशे तथा पुनः ॥ २ ॥
सप्तपादे तु चत्वारि पड्पष्टैं पंचसीर्युते ।
भ्रमभित्ति विभागानि श्रृत्वात्वेकाग्रतो मुनिः ! ॥ ३ ॥
प्रासाद द्वादशभागा गर्भेपड् सार्द्ध मध्ये ।
'सार्द्ध द्वयो द्वयभित्ति शेपं च भ्रम विस्तरे ॥ ४ ॥

इति एक भ्रममान

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે બુદ્ધિમાન શિલ્પીઓ ? પ્રાસાદના માનથી સાધાર પ્રાસાદના ભ્રમ અને ભિત્તિના માન પ્રમાણ હવે હુ તમોને કહુ છુ દશ હાથ ઉપરના પ્રાસાદને ભ્રમ કરવો દશથી પચ્ચીશ હાથના પ્રાસાદને એક ભ્રમ કરવો સત્તાવીશ હાથના પ્રસાદને બે ભ્રમ કરવા અને આઠમા ભાગે ભ્રમભિત્તિ કરવી એમ ભ્રમ અને ભિત્તિના વિભાગ રાખવા હે મુનિ,



एक भ्रम तलदर्शन

હવે એકાગ્રતાથી સાંભળો પ્રાસાદ બહાર રેખાયે હોય તેના બાર ભાગ કરી વચલો સ્તૂપ-ગર્ભગૃહ ભિત્તિ સાથે સાડા છ ભાગનો રાખવો અને બે છેડાની બહારની બેઉ ભીતો અઢી ભાગની જાડી રાખવી (એટલે સવા ભાગની એકેક ભીત જાડી) બાકીના ત્રણ ભાગમાથી દોઢ દોઢ ભાગનો ભ્રમનો વિસ્તાર જાણવો ૧-૨-૩-૪

श्री विश्वकर्माजी कहते हैं। हे ! बुद्धिमान शिल्पि ! प्रासादके मानसे भ्रम

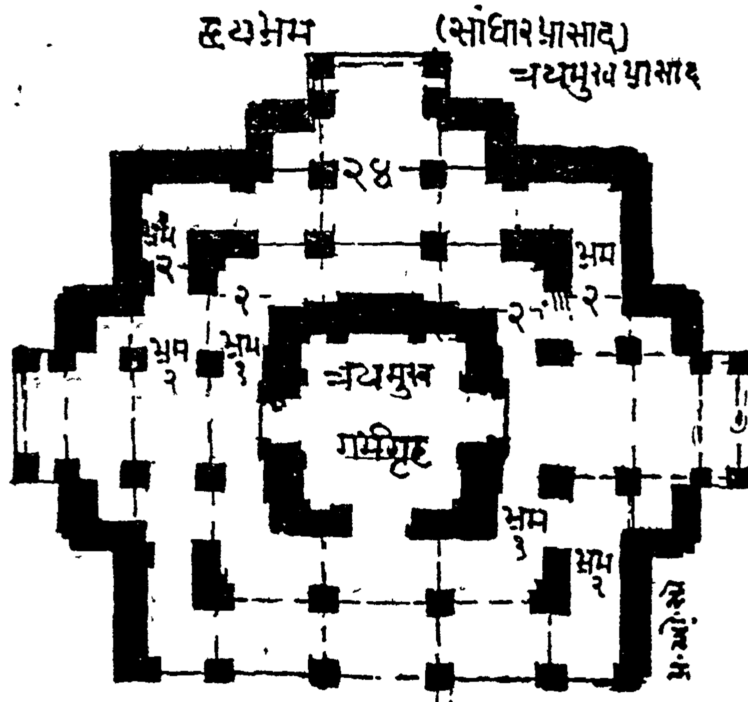
और भित्तिमान सांधार प्रासादके मान प्रमाण अब मैं तुम्हें कहता हूँ। दश हाथके ऊपरके प्रासादको भ्रम करना। दशसे पच्चीस हाथके प्रासादको एक भ्रम करना। सत्ताईश हाथके प्रासाद को दो भ्रम करना और आठवें भागमें भ्रमभित्ति करना।

........इस तरह भ्रम और भित्ति के विभाग करना। हे मुनि! अब एकाग्रतासे सुनो। प्रासाद बाहर रेखाके पर हो उसके बारह भाग कर बिचका स्तूप-गर्भगृह भित्तिके साथ साढे छः भागका रखना और दो अंतकी बाहर की दोनों दिवारें ढाई भाग की मोटी रखना। (अर्थात् सवा सवा भागकी एकेक दिवार मोटी) बाकीके तीन भागमें से डेढ़ डेढ़ भागका भ्रमका विस्तार जानना। १-२-३-४. इति एक भित्तिमान।

द्विभ्रमं च प्रवक्ष्यामि यथा शास्त्रे न संभवः।
चतुर्विंश कृते क्षेत्रे द्वादश लिङ्ग पीठयोः ॥५॥
चतुर्भिभित्ति त्रिभागानि शेषं च भ्रम मुत्तमम्।
स्तंभः श्रेणि यदा सूत्र भ्रमद्वय विराजिता ॥६॥
कर्ण मध्ये प्रकर्तव्या मंडपा मर्हता श्रता।

॥ इति भ्रमद्वयं मध्यमान ॥

હવે બે ભ્રમનું શાસ્ત્રોક્ત માન સંશય વગરનું કહું છું સાંધાર પ્રાસાદની બહારની રેખાયે ચોવીશ ભાગ કરી વચલું લિંગપીઠ=સ્તૂપ-ભિત્તિ સાથે ગર્ભગૃહ -બાર ભાગનો રાખવો ચાર ભીંતો ત્રણ ભાગની એટલે પોણા પોણા ભાગની પ્રત્યેક ભિંત જાડી રાખવી. બાકીના બેઉ ભ્રમો બબ્બે ભાગના રાખવા ભ્રમની ભિંતોના સ્થાને સ્તંભોની શ્રેણી ભીંતના સૂત્રના સ્થાને રાખવીઃ આ ગલી કર્ણ-રેખા-મંડપમાં સ્તંભોની શ્રેણીથી જાણવી.



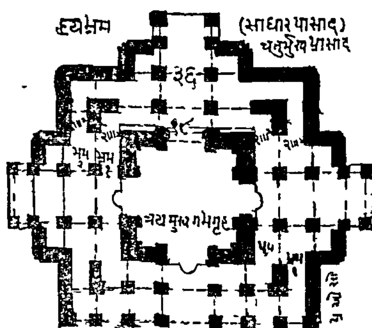
मध्यमान द्वय भ्रम तल दर्शन

अब दो भ्रमका शास्त्रोक्त मान असंशय कहता हूँ। सांधार प्रासाद की

वाहर की रेखाके पर चौवीस भागकर विचका लिंगपीठ–स्तूप–भित्ति के साथ गर्भगृह–बारह भागका रखना। चार दिवारे तीन भागकी अर्थात् पौने पौने भाग की प्रत्येक दीवार मोटी रखना। बाकीके दोनों भ्रम दो दो भागके रखना। भ्रम की दिवारोके स्थानपर स्तम्भों की श्रेणी भींतके सूत्रके स्थानपर रखना। आगेकी कर्णरेखा–मडपमे स्तम्भों की श्रेणीसे जानना।

षड्त्रिंश कृते क्षेत्रे लिङ्ग पीठ दशाष्टकम् ॥७॥
भित्तिषड् सार्द्धश्च चत्वारिभ्रम कल्पयेत्।
रुद्रसार्द्ध चतुभ्रम स्तंभ युक्तं न संशय ॥८॥
एवं विभक्ति मादाय भ्रमाद्वय विराजिते।
(भ्रमा त्रीणि विराजित) इति भ्रमद्वय कनिष्ठमान

હવે કનીષ્ઠ માનના બે ભ્રમવાળા પ્રાસાદોના ભાગો કહે છે બહાર રેખાયે છત્રીશ ભાગ કરવા તેમા વચલો લિંગપીઠ (સ્તૂપ) ભિતિ સહિત ગર્ભગૃહ–અઢાર ભાગનો રાખવો તેની ચાર ભીતો સાડા છ ભાગની (એટલે ૧॥=ભાગની એકેક કરવી) કનીષ્ઠ માનના દ્વય ભ્રમ ની રાખવી સાડા અગ્યાર ભાગના ચાર ભ્રમો (૨॥=ભાગની એકેક) = પ્રદક્ષિણા રાખવી ભિતોના સ્થાને (ભ્રમના ભદ્રોમા) સ્તંભો મૂકી શકાય તેમા સંશય ન કરવો એ રીતે બે ભ્રમના પ્રાસાદના વિભાગ કનીષ્ઠમાનના જાણવા



भ्रम द्वय (कनिष्ठमान) तलदर्शन ७–८

अब कनिष्ठ मानसे दो भ्रमवाले प्रासादोंके भागों कहते हैं। वाहर रेखाके पर छत्तीस भाग करना। उसमे विचका लिंगापीठ (स्तूप) (भित्तिसहित) गर्भगृह अठारह भागका रखना। उसकी चार दिवारे साढे छ' भागकी (अर्थात् १॥= भागकी एक करना) कनिष्ठमान के द्वय भ्रमकी रखना। साढे ग्यारह भाग के चार भ्रमों (२॥।= भागकी एक एक प्रदक्षिणा रखना। भितोंके स्थानपर (भ्रम के

१ द्याऽविंशैत् पच भ्रमविस्तरे–पाठांतर।

भद्रोंमें) स्तम्भों रख सकते हैं। उसमें संशय न करना, इस तरह दो भ्रम के प्रासादके विभागों कनिष्ठमान के जानना। ७-८.

यथा एवं विभागं च जेष्ठत्वेष्टादशः शुभं ॥९॥
सर्वभित्ति भवेद्भागं भागैकं भ्रमणद्वयं।
द्विभागं द्विभ्रमजेष्ठं शेषं गर्भगृहं भवेत् ॥१०॥
॥ इति भ्रमद्वय ज्येष्ठमान ॥

હવે જેષ્ઠમાનના બે ભ્રમની વિધિ કહે છે. અઢાર ભાગ રેખાયે કરવા સર્વ ભીતો એકેક ભાગની અને બે ભ્રમ એકેક ભાગના રાખવા એટલે એક તરફ બે ભ્રમ બે ભાગના જાણવા. અને બાકી દશ ભાગનો (ગર્ભગૃહ-(સાથે સ્તૂપ) રાખવો. ૯-૧૦.

अब ज्येष्ठमान के दो भ्रमकी विधि कहते हैं। अठारह भाग रेखाके पर करना। सर्व दिवारें एक एक भागकी और दो भ्रम एक एक भागके रखना। अर्थात् एक तरफ दो भ्रम दो भागके जानना और बाकी दश भागका (गर्भगृह स्तूप साथका रखना। ९=१०.

क्षेत्राष्ट दशभिर्भागं षड्भागं लिङ्गपीठके।
भागैकं षटभित्ति च भाग भागं भ्रमत्रय ॥११॥
स्तंभा श्रेणि युतां तंश्च भ्रमांश्चत्वारि धीमतांम्।
मध्यवेदिककृते गर्भे (क्षेत्र) सभ्रमं च करोटकः ॥१२॥
ज्ञायते तद् भ्रमं पंच महामेरुप्रसिद्धयेत्।
कवलिका सभ्रमाख्याता भाषितं विश्वकर्मणा ॥१३॥

સાંધાર પ્રાસાદના બહાર રેખાયે હોય તેના અઢાર ભાગ કરવા. તેમાંથી વચ્ચે છ ભાગનું લિઙ્ગપીઠ સ્તૂપ ભિતિ સાથે ગર્ભગૃહ-રાખવો. તેની છ ભિંતો એકેક ભાગની અને ત્રણ ત્રણ ભ્રમ પણ એકેક ભાગના કરવા. (એ રીતે ભ્રમનું પ્રમાણ જાણવું.) ૧૧-૧૨-૧૩.

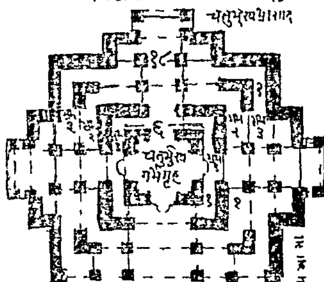
सांधार प्रासादके बाहर रेखाके हो उसके अठारह भाग करना। उनमें से बिचमें छः भागका लिङ्गपीठ-स्तूप-भित्ति के साथ गर्भगृह रखना। उसकी छः

(२) શ્લોક ૭-૮ ના પાઠો ઘણા જ અશુદ્ધ અને ગણત્રી બહારનાં વિભાગ અશુદ્ધ હતા. શુદ્ધ પાઠો મળશે તો નવી આવૃત્તિ શુદ્ધ પાઠ મુકીશું.

२, श्लोक ७-८ के पाठो अशुद्ध है। शुद्ध मिलनेसे नया संस्करणमें शुद्ध पाठ रखेंगे।

विवारे एक एक भागकी और तीन तीन भ्रम भी एक एक भाग के करना। (इस तरह तीन भ्रमका प्रमाण जानना। ११–१२–१३

ભ્રમની ભીતોમા મધ્યભાગમા ચચ્ચાર શ્રેણીના સ્તભો બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ કરવા (તેવુ બબ્બે એટલે ચાર ભ્રમના પ્રાસાદને કરવુ) મધ્યમા વેદીકા કરી ગર્ભગૃહને ઘુમટી–કલાડીયા–કરોકટ કરવો પ્રસિદ્ધ એવા મહામેરૂને પાચ ભ્રમ કરવા (અથવા પચ મેરૂને આ રીતે ભ્રમ કરવા ?) આગળ કોલીકા ભ્રમના વિભાગમા શ્રી વિશ્વકર્માએ કહી છે



भ्रमत्रय–तलदर्शन

भ्रमकी दिवारोंमे मध्यभागमें चार चार श्रेणीके स्तभ बुद्धिमान शिल्पी को करना। (वैसा दो दो अर्थात चार भ्रमके प्रासादको करना। मध्यमे वेदीका कर गर्भगृहको घुमटी कलाडिया–करोटक करना। प्रसिद्ध ऐसे सहामेरूको पाँच भ्रम करना। (अथवा पचमेरू को इस तरह भ्रम करना ?) आगे कोलीका भ्रम के विभागमे श्री विश्वकर्माने कही है।

एक द्विर्द्वयो त्रीणि तृतीये चतुपंचके।
मध्य वेदी समायुक्त भ्रमस्तैतालिलक्षणम्॥१४॥
भ्रमश्च भ्रमयोंमध्ये यदाभित्ति निवेशितम्।
सपंष्ट तसोत्परे प्राज्ञ क्रमशा क्रमणान्तके (?)॥१५॥

સાધાર પ્રાસાદને એક ભ્રમ બેને બે ત્રણના ત્રણ અને ચાર અને પાચ ભ્રમો કરવા વચ્ચે વેદી (ભદ્રમા) ભ્રમની તાલીકાના લક્ષણો જાણવા ભ્રમ અને બીજા ભ્રમની વચ્ચે ભિતી કરવી ભ્રમના મધ્યના ભાગમા સ્તભોની શ્રેણી કરવી એ રીતે ડાહ્યા શિલ્પીએ ક્રમ પર ક્રમથી ભ્રમો કરવા ૧૪–૧૫

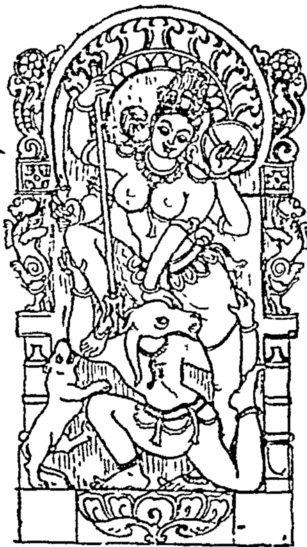
साधार प्रासादको एक भ्रम दो को दो, तीनके तीन और चार और पाँच भ्रमों करना। विचमे वेदी (भद्रमे) भ्रमकी तालिकाके लक्षण जानना। भ्रम और दूसरे भ्रमके बीच भिती करना। भ्रमके मध्य भागमे स्तभों की श्रेणी करना। इस तरह बुद्धिमान शिल्पीको क्रमपरक्रमसे भ्रमों करना चाहिये। १४–१५

शिवेच देवता उक्ता आगमस्ता पुनः पुनः ।
एहि–उक्ता ग्रहासर्वे तत्सर्वेभ्रममध्यनः ॥ १६ ॥

भवाज्ञा रुप संयुक्ता गणपति विविधानि च ।
नकुलिशो शेषरामाश्वभ्रमस्तुयलंकृते ॥ १७ ॥

प्रवेक्ष्णं यदा सूर्ये सौम्यादि नवमेव च ।
भ्रमस्थाने प्रदातव्या पूजिता च सुखावहा ॥ १८ ॥


ब्रह्मा


महिषासुरमर्दिनी

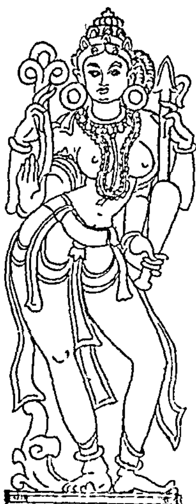

सूर्य


विष्णु

उर्ध्वे पृथक् पृथक् पक्ष तोरण पक्षे विरालिका स्तंभिका आदि परिकर युक्त

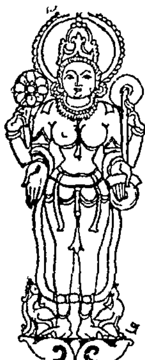
આવા સાંધાર ભ્રમયુક્ત પ્રાસાદોમાં શિવઆદિ દેવો જે આગમોમાં તેની અંગ સંખ્યા ફરી ફરીને કહી છે...........તે સર્વે તથા સર્વ ગ્રહો ફરતા ભ્રમની ભીંતોના મધ્યમાં કરવા....ગણપતિના જુદા જુદા બત્રીશ સ્વરૂપો (મુદ્‌ગલ પુરાણમાં કહ્યા છે તે નકુલીશ ભગવાન શેષનારાયણ રામ આદિ સ્વરૂપો ભ્રમ પ્રદક્ષિણામાં કરી અલંકૃત કરવા... સૂર્ય અને ચંદ્રાદિ નવ ગ્રહો ભ્રમના સ્થાનમાં તેનાં સ્વરૂપો કરી પૂજવાથી સુખને આપનારા જાણવા, ૧૬–૧૭–૧૮.

ऐसे सांधार भ्रमयुक्त प्रासादो में शिव आदि देवों जो आगमों में उनकी अंग संख्या बार बार कही गई है......उन सब तथा सव ग्रहोंके चारों ओर भ्रमकी दिवारों के नकुलीश भगवान शेषनारायण राम आदि स्वरूपों भ्रम प्रदक्षिणामें कर अलंकृत करना...सूर्य और चन्द्रादि नौ ग्रहों भ्रमके स्थानमें उनके स्वरूपों कर पूजन करनेसे सुखके देनेवाले हैं । १६–१५–१८.

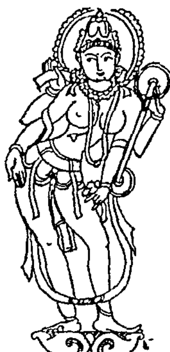




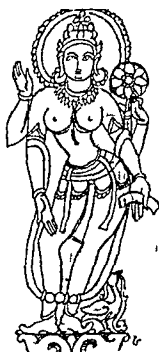
श्रुतदेवी–शारदा
सरस्वती का १२ स्वरूप



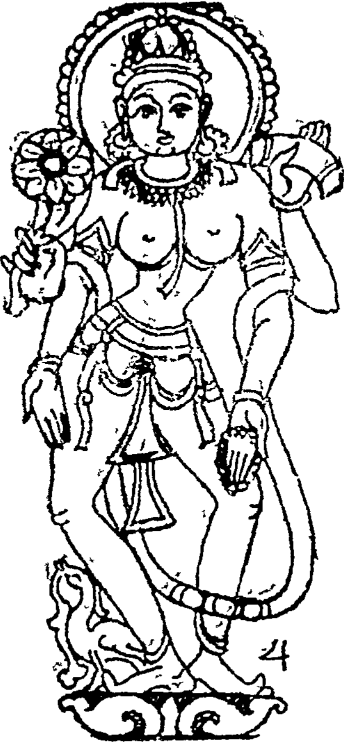
१ महाधेनु



२ वेदगर्भा



३ इश्वरी



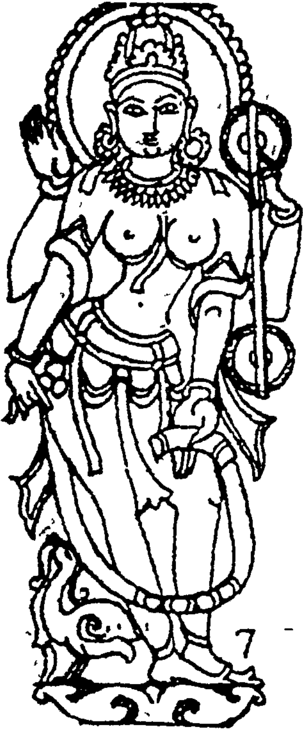
४ जयादेवी



५ विजयादेवी



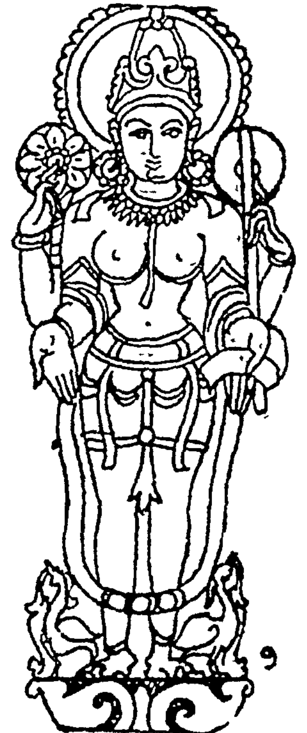
६ सारंङ्गदेवी



७ तुंबरीदेवी

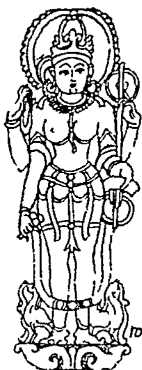


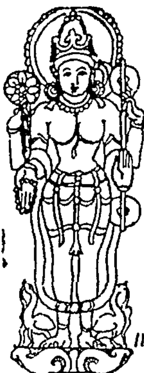
८ नारदीदेवी



९ सर्वमंगला

नारदादि रिषि सर्वे पांडवाद्यायुधिष्ठिरः।
प्रासादे भ्रम संस्थाने स्वस्थाने भ्रम प्रदक्षिणे ॥१९॥
स्वच्छंद भैरवाद्यं च आनंदो प्रति भैरव।
मुक्ति उक्ता यथा देव्या भ्रम स्थाने सुखावहा ॥२०॥


१० विद्याधरी


११ मर्वविद्या


१२ सर्वप्रसन्ना नारदीय

अष्टाशिति सहस्त्राणि ऋपिराज सुखावहा ।
ब्रह्मणे भ्रमसंस्थाने वसिष्ठाद्य प्रदक्षिणे ॥२१॥

નારદ આદિ સર્વ ઋપિઓ અને યુધિષ્ઠિરાદિ પાડવો પ્રાસાદના ભ્રમના પોત પોતાના સ્થાને ફરતા કરવા તેમા સ્વચ્છદ ભૈરવાદિ આનદ ભૈરવ પ્રતિ ભૈરવ તથા મુક્તિને દેનારા એવા દેવો અને દેવીઓને પ્રદક્ષિણામા સ્થાપવા તે સુખને આપનારા જાણવા ભ્રમમા અઠ્યાશી હજાર ઋપિ વસિષ્ઠાદિના સ્વરૂપો બ્રાહ્મના મહા પ્રાસાદના ભ્રમની પ્રદક્ષિણામા કરવા ૧૯–૨૦–૨૧


दक्षिण दिग्पाल यम


भैरव–क्षेत्रपाल
नीरुती


उमामहेश–आसनस्थ

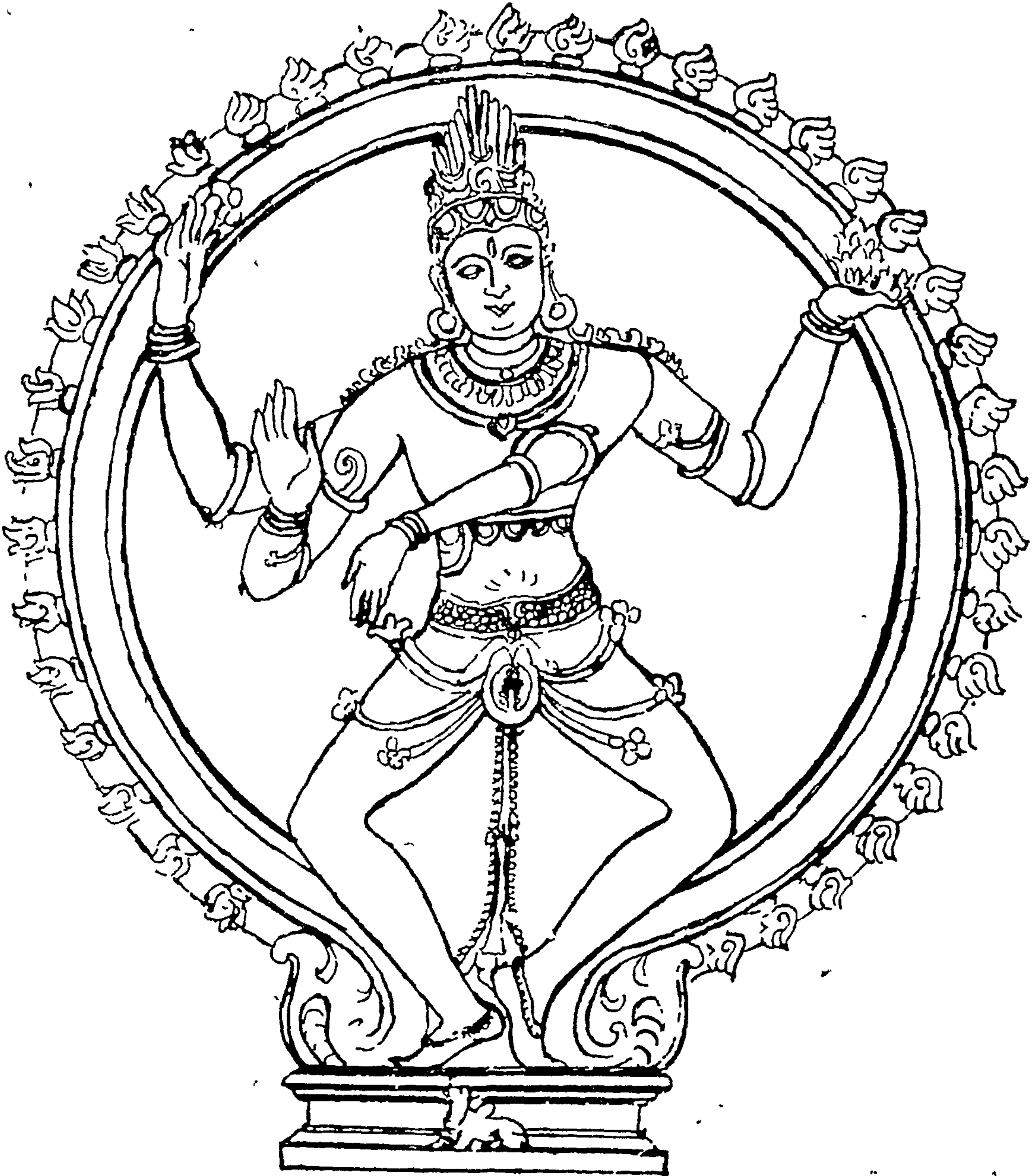

उर्ध्व नृत्य–ललाट तिलक
शिव

नारद आदि सर्व ऋषियों और युधिष्ठिरादि पाँडवों को प्रासादके भ्रमके अपने अपने स्थानपर फिरते करना। उनमें स्वच्छंद भैरवादि. आनन्द भैरव, प्रति भैरव तथा मुक्तिदाता ऐसे देवों और देवियों को प्रदक्षिणा में स्थापना वे सुखके देनेवाले हैं। भ्रममें अठ्ठासी हजार ऋषि वसिष्ठादि के स्वरूपों ब्रह्मा के स्वरूपों ब्रह्माके महाप्रासादके भ्रमकी प्रदक्षिणामें करना। १९-२०-२१.

इतिश्री विश्वकर्माकृतायां क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां सांधार भ्रम निरुपणाधिकारे शताग्रे सप्तदशाधिकारे ॥११७॥ क्रमांक अ० १९

ઈતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ શ્રી નારદઋષિએ પૂછેલા સાંધાર ભ્રમ નિરૂપણ અધિકાર પર શિલ્પ વિશારદ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકાનો એકસો સત્તરમો અધ્યાય. ૧૧૭, (ક્રમાંક અ૦ ૧૯)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें नारदजीके पूछे हुए सांधार भ्रम निरूपण अधिकार का शिल्प विशारद श्री प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुराकी रचि हुअी सुप्रभा नामकी भाषाटीका एकसौ सत्रहवाँ अध्याय ॥११७॥ (क्रमांक अ० १९)



शिव-तांडवनृत्य

॥ अथ सांधार चतुर्मुख प्रासाद वर्णन ॥

क्षीरार्णव अ० ११८ क्रमांक २०

श्री नारदोवाच–

स्वर्ग स्थानार्चितं[1] पूर्वं शिवस्थानं चतुर्मुख ।
जिनभवन देवलोके ममन्मृत्वा मुहुर्मुहुः ॥१॥

पुन कांच विशिष्टं[2] च मानतुङ्गं[3] महीतले ।
उक्ता चातुर्मुखा सर्वे कथितं मम सांप्रत ॥२॥

શ્રી નારદજી કહે છે ચાતુર્મુખ એવો શિવસ્થાન પ્રાસાદ સ્વર્ગમા પૂજાય તેવો આપે આગળ કહ્યો, તેવો દેવલોકમા પૂજાય તેવા જીન ભવનનો મર્મ મને કહો મૃત્યુ લોકમા પૃથ્વીને વિશે વિશિષ્ઠ એવો કાચન જેવા પ્રાસાદ ચાતુર્મુખ હવે મને કહો ૧–૨

श्री नारदजी कहते हैं—चातुर्मुख ऐसा शिवस्थान प्रासाद स्वर्गमें भी पूजनीय होवे वैसा आपने आगे कहा, वैसा ही देवलोक से पूज्य होवे वैसा जिनभवन का मर्म मुझे बताओ । १–२

श्री विश्वकर्मा उवाच–

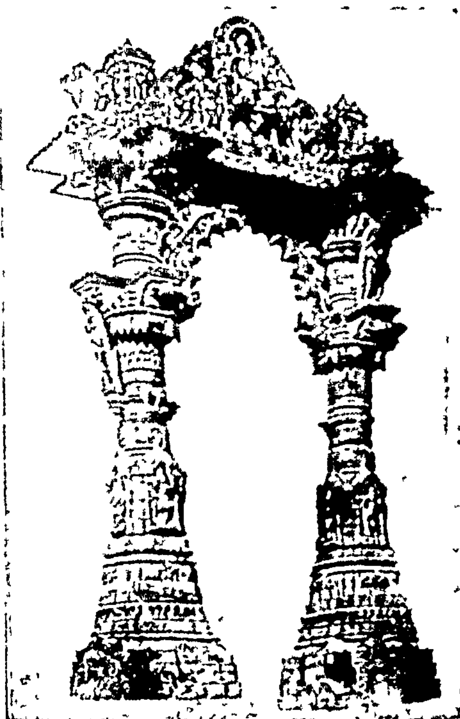
* उक्तं माहवमितिश्च क्षेत्रे[4] चातुर्मुख वंदिते ।
प्रासाद ब्रह्मसूत्रे सरथर[5] युक्तेन च ॥३॥
नंदकोष्ट[6] प्रतिष्ठे स्याद्ततः वेदि भ्रमति परिघा ।
मंडपा तस्य चाग्रेण त्रिभिः[7] कर्णे पद्धिर्यता वेदिका ॥४॥
तेपा युक्ति विधातन सुरे जैनेंद्र[8] पुर्णोत्तरे[9] ।
युक्ता कोष्ट प्रमाण विवरे आयामा विस्तीर्पा कोष्टे ॥५॥
उपसिविटपे (?) आयाम त्रिंग गृह्णंति कोष्टा ।
विधेभ्य श्रति, मेघा रचति मेघस्वरानि[10] सिंहश्रिते ॥६॥

पाठान्तर १ स्वचित पूर्वं चतुर्मुख, २ विसिष्ट, ३ मातलोगे, ४ ध्येत्रे, ५ सरबयुक्तेन ६ नदाकाष्टे, ७ कर्णे कर्णे त्रिभि, ८ नेनेंद्र, ९ पूणोत्तरे, १० मेघध्वरानि ।

* શ્લોક ૩ થી ૧૦ મા ઘણી અશુદ્ધિઓ હોવાથી અનુવાદ થઈ શકયો નથી.

त्रिताल-तोरण सांचीस्तूप ईस. पूर्व दुसरी. शताब्दी

कछामय हींडोलक (आंदोळक) तोरण सोमनाथ (प्रभासपाटण)



पीठ, स्तम्भ, भरणी, शिर ईल्लिकायुक्त सुंदर बनावटी तोरण
मध्यमें गजग्राह तोरण वडनगर (गुजरात)

तथाग्नि मेघारचंति सार्ध्वं नाल्योपरिः संक्रमे ।
अधरः स्वभूमिकृते नंदवेदी कक्षांन्तरे ॥७॥
वर्तने त्यावच्छादनं [11]भूमति चेइ चातुर्दक्षु निर्मिता ।
द्वौ कोष्टो भ्रमण रहितं त्रिविटिस्तु मे संचयम् ॥८॥
प्रासाद [12]पक्षे भ्रम वेदि उच्छालयं उत्तमं ।
संलग्नं स्तंभत्यजे भिति त्यजेत्............... ॥९॥
लग्नापुटं उछालने रुपमनेक चित्रे प्रासादानां सन्मुखम् ।
च्छादंति छानिरुपा: प्रसिद्ध: सूर्यादि ताराउली ॥१०॥
रथोपरथ निष्क्रान्ते माने कवली सदा ।
निर्मितं गवाक्ष मदलै[13] स्तंभस्य सहित पदभ्यं पटान्तरे ॥११॥
द्वारश्च द्वारे[14] शाखा प्रशाखे उपर्यु परि भूमिके ।
पुनः पुनः कपोताली जंघा प्रजंघा कपोल[15] छाद्यकै ॥१२॥

ભાવાર્થ–રથ ઉપરથના ઉપાંગોના નિકાળાના માનથી કોળીનું નિર્માણ હંમેશાં કરવું ગોખ જરૂખા મદન સ્તંભો સહિત સુશોભિત કરવું–પદના પાટ સુધી....દ્વાર ઉપર દ્વાર દ્વારની શાખા ઉપશાખા ઉપરાઉપર કરવી. ઉપલી ભૂમિને ફરી કેવાળ જંઘા તે પર ફરી જંઘા કરી કેવાળ પર છજું કરવું ૨૯–૩૦

भावार्थ—रथ उपरथके उपांगोंके निकालेके मानसे कोलिका निर्माण हमेशां करना । गोख, झरोखा महल स्तंभों के सहित सुशोभित करना । पदके पाट तक... ...द्वारके ऊपर द्वार द्वारकी शाखा उपशाखा उपरापर करना । उपरकी भूमिं को फिर केवाल जंघा, उसके पर फिर जंघा कर केवाल–पर छज्जा करना । २९–३०

मानतुङ्गो विराजितः सदा जिनेंद्र उक्ता शुभा ।
त्यात्र जगती भ्रमती परिधी लुब्ध मानतुङ्गा ईता ॥१३॥
ज्ञाति वैरादिच्छंदर्विमाने मञ्जर्य रेखा निजः ।
श्री भद्रागतश्च क्रियते अक्षय पदं लभ्यते (?) ॥१४॥

ભાવાર્થ—માનતુંગ પ્રાસાદ જ્યાં છે ત્યાં સદા શુભ એવા જિનેન્દ્ર પ્રભુ વિરાજે છે, તેની જગતી પરિધી–ભ્રમવાળી છે. માનતુંગ પ્રાસાદ વૈરાટી જ્ઞાતિ છંદ કે વિમાન જાતિમાં મંજરી રેખાવાળું શિખર કરવું. આવો પ્રાસાદ કરાવનારને અક્ષય પદના લાભની પ્રાપ્તિ થાય છે. ૩૧–૩૨

पाठान्तर ११. भ्रमतिः, १२. प्रासाद क्षेत्रभ्रमवेदिः, १३. मदलैर्भस्या, १४. द्वंर श्रद्वारे, १५. कपोत ।

भावार्थ—मानतुंग प्रासाद जहाँ है वहाँ सदा शुभ ऐसे जिनेन्द्र प्रभु विराजते हैं। उसकी जगती परिधी-भ्रमनाली है। मानतुंग प्रासाद वैराटी ज्ञाति छद या विमान जातिमें मजरी रेखावाला शिखर करना। ऐसा प्रासाद करानेवाले को अक्षयपद के लाभकी प्राप्ति होती है। ३१-३२

शिखरोर्ध्वे पंचदंड स्कंधे कुर्यादि जिनेश्वरम्।

ઉપલા ચાર ઉરુશ્રૃંગોના આમલસારામા ચાર અને મૂળ શિખરને મળી પાચ ધ્વજાદંડ ચોમુખને કરવા અને શિખરના બાંધણા ઉપર જિનેશ્વરની મૂર્તિ કરવી ૩૩

उपरके चार उरुश्रृंगोंका आमलसारेमे चार और मूल शिखर सब मिलकर पाँच ध्वजादण्ड चौमुखको करना और शिखरके स्कंधके ऊपर जिनेश्वरकी मूर्ति करना। ३३

चतुरस्त्रीकृते क्षेत्रे अष्टादश विभाजिते।
कर्ण त्रिभाग विस्तारं पल्लवी पदमेन च ॥१५॥
निर्गमंतत्समंकार्यं प्रतिकर्णद्वयो भवेत्।
निष्क्रांत समंवक्ष्ये कर्णि भागाश्च विस्तर ॥१६॥
निवेशं च समं कुर्यात् भद्रार्ध भाग द्वयो भवेत्।
निर्गमं पद सार्द्धं च उभयो वामदक्षिणे ॥१७॥

૩	કર્ણ
૧	પલ્લવી
૨	પ્રતિરથ
૧	નદી
૨	ભદ્ર
૯	ભાગ
૯	ભાગ
૧૮	

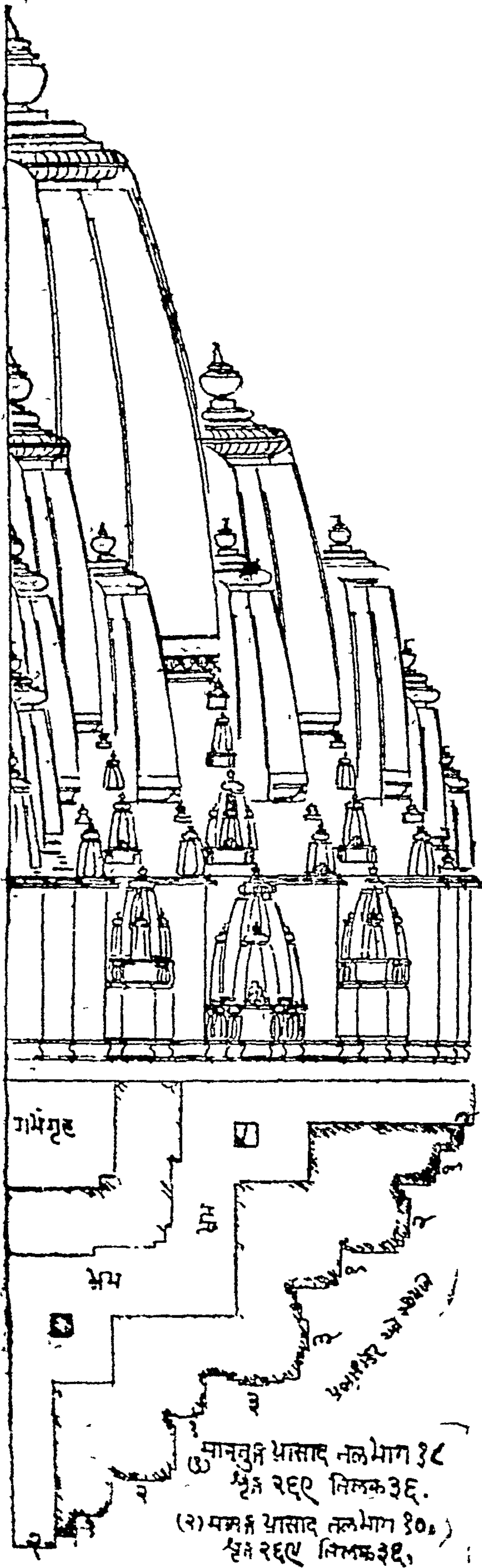
પ્રાસાદના ચોરસ ક્ષેત્રના અઢાર ભાગ કરવા કરવા તેમા રેખા ત્રણ ભાગની પલ્લવી (નદી) એક ભાગની સમદલ, એવા બે પ્રતિકર્ણ બબ્બે ભાગના તે પણ સમદલ કરવા નદી-ખૂણી એક ભાગની સમદલ અરધુ ભદ્ર બે ભાગનુ અને તેનો નીકાળો દોઢ ભાગનો રાખવો એમ બે ઉત્તર ડાબી જમણી તરફ એમ ચારે તરફ કરવુ ૧૫-૧૬-૧૭

प्रासादके चोरस क्षेत्रके अठारह भाग करना। उनमे रेखा तीन भाग की पल्लवी (नदी) एक भागकी समदल, ऐसे दो प्रतिकर्ण दो दो भाग के, वे भी समदल करना। नंदी कोनी एक भाग की शमअर्धा भद्र दो भागका और उसका निकाला डेढ भागका रखना। इस तरह दो उत्तर बायीं दायीं तरफ ऐसे चारों तरफ करना। १५-१६-१७

कर्णे नन्दनं सर्वेषां नवश्रृङ्ग रथोपरि।
नन्दि श्रीवत्समेकैकं रथिका भद्रभूषित ॥१८॥
रथे कग पुन कार्यं नव पश्च परि भ्रमं।
कर्णि तिलकं प्रदातव्यं कूटकारादिकं क्रमात् ॥१९॥

पाठान्तर १७ कटकारादिक

केसरी कर्ण संस्थाने रथे श्रीवत्सदाययेत् ।
मञ्जरी मूल रेखा च षट्श्रृंगसतुला (!) ॥२०॥
ऊरु ङ्गं प्रत्यांङ्गै सरतरा सर्वकामदा ।
नागेषवेद युक्ताश्च श्रृङ्गवत्
पूरितांन्तरै ॥२१॥
तिलकं[१८] षड्त्रिंशोक्तं मानंतुङ्ग
विराजिते ।
तेषा लक्ष मातंगैश्च रिषिराज
श्रृणोत्तमम् ॥२२॥ इति मानतुङ्ग

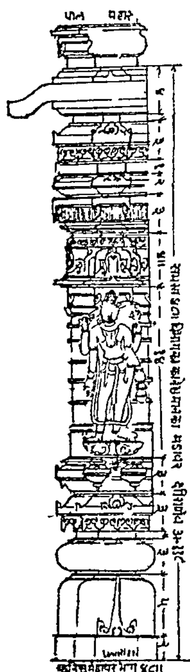


રેખા કર્ણે તેર અંડકનું નંદન કર્મ પહેલું ચડાવવું. પઢરે નવ અંડકનું સર્વતોભદ્ર ચડાવવું. ભદ્રની બેઉ ખૂણીઓ પર એકેક શ્રૃંગ ચડાવવું. ફરી રેખા પર નવ શ્રૃંગનું સર્વતોભદ્ર અને પ્રતિરથ પર પાંચ અંડકનું કેસરી ચડાવવું. ખૂણીઓ પર તિલક કૂટ ચડાવવા. રેખા પર ત્રીજું કર્મ કેસરી પાંચ અંડકનું અને પ્રતિરથ પર શ્રીવત્સ–શ્રૃંગ ચડાવવું. મૂળ રેખા પર મંજરી (તિલક ચડાવવું.) ....(ભદ્રના ખૂણે એક તિલક ચડાવવું) ઉરુશ્રૃંગ સોળ અને આઠ પ્રત્યાઙ્ગ ચડાવવાથી બસો ઓગણસીત્તેર ૨૬૯ શ્રૃંગ અને છત્રીશ તિલક ચડે ત્યારે ઇતિ માનતુંગ નામનો પ્રાસાદ થયો ૪–૫ જાણવો. હવે માતંગ પ્રાસાદના લક્ષણ હે ઋષિરાજ ! કહ્યું તે સાંભળો. ૧૮ થી ૨૨.

कर्ण पर तेरह श्रृङ्गका नंदन कर्म प्रथम चढ़ाना। प्रतिरथ पर ९ सर्वतोभद्र

१८ तिलकं त्रिशोक्त

भद्रके कोणी पर एकेक श्रृङ्ग चडाना–फिर कर्ण पर नौ श्रृङ्गका सर्वतोभद्र, और प्रतिरथ पर केसरी चडाना। कौने पर तिलक कूट रखना–कर्ण उपरे तीसरा कर्म केसरी पाँच श्रृङ्गका चडाना और प्रतिरथे एक श्रङ्ग चड़ाना। मूल रेखा पर मञ्जरी–तिलक चडाना



४८॥ मानका कनिष्ठमानका मंडोवर

भद्रके कौने पर तिलक रखना। उरुश्रृङ्ग सोलह और प्रत्याग आठ चडानेसे दोसौ उनसित्तर श्रङ्ग और छत्तीस तिलक चड़ानेसे मानतुङ्ग नामक प्रासाद समजना। अब हे ऋषिराज! मातङ्ग प्रासाद का लक्षण मैं कहता हुँ वो सुनो। १८ से २२ इति मानतुङ्ग

दशधात यदा क्षेत्रं चेइ आणे निवेशितं।
मानतुङ्गश्च यदाङ्गा शिखर सर्व कामदम् ॥२३॥
अन्यत्रांङ्गे न कर्तव्यं प्रासादादि संयुतम्।
चेइआणे विशेषण शोक सन्ताप कारितः ॥२४॥
यादशं मूल प्रासाद तादश[१६] जगती क्रम।
रथेयुक्ते विभागं च समेश्रृङ्ग समाकुलम् ॥२५॥
इति मातङ्ग

ભાવાર્થ–માતંગ પ્રાસાદ ચેઇયાણુના ક્ષેત્રના દશ ભાગકરવા તેમા અંગ કાલના માનતુંગ પ્રાસાદ જેટલા (અઢારના દશભાગે) કરવા અને શિખર પણ એવા જ પ્રકારનુ કર્મશ્રૃંગવાળુ કરવાથી સર્વ કામનાને આપનારૂ જાણવુ તે પ્રાસાદ અંગ વિભાગ બીજા ન કરવા જો બીજા કરે તો શોક સંતાપને આપે જ્યા સુધી મૂળ પ્રાસાદના રથ આદિ અંગ વિભાગ કરવા અને શ્રૃંગો પણ એમ તેટલા જ ચડાવવા (રેખા બે ભાગ, બે નદી અરધા અરધા ભાગની, પ્રતિરથ અને ભદ્ર એકેક ભાગના મળી દશ ભાગ કરવા) ઇતિ માતંગ २३–२४–२५

मातङ्ग प्रासादका क्षेत्रका दश भाग करना (२ भाग रेखा दो नदी आधा आधा भाग। प्रतिरथ और भद्रार्ध एकैक भाग) उनका फालना मानतुङ्ग जीतना

१६ तादश चतुर्दिश्यो।

प्रमाणसे रखना। शिखर उसी प्रकारका कर्म श्रृंग युक्त करना यह सर्व कामना दायक समजना। प्रासादका अङ्गविभाग और श्रृङ्गादि अन्य प्रकारका करना नहि यदी करे तो शोक संतापकारक समजना। २३–२४–२५

इति मातङ्ग

तथा मंडोवरे रिषि विभागं श्रृणु सांप्रतम्।
पीठं पूर्व प्रमाणेन कुबेर कुमुदोद्भवम् ॥२६॥
खुरकं द्वयं भागानी कुंभकं पंच मेव च।
कलशं त्रिभागमुत्सेधं रन्तरपत्रं पदार्धत ॥२७॥
कपोताली त्रिभागेन [20]मश्चिका स्त्रिणि वे रिषि।
[21]चतुर्दश्योच्छिता जंघा सार्धचत्वारि उद्गमम् ॥२८॥
भरणी गुण विचारेण द्विपदंउर्ध्वकपोतिका।
छादनं पदमेकेन कपोताली च पूर्वतः ॥२९॥
अर्धयान्तर पत्रं च चत्वारि कूट छाद्यकं।
कन्यसं च अत: प्रोक्तं मध्यमानं च कथ्यते ॥३०॥

હે ઋષિરાજ! હવે મંડોવરના વિભાગ સાંભળો. પીઠ આગળ કહ્યા પ્રમાણે કુબેર કે કુમુદોદ્ભવ પ્રકારનું કરવું. ખરો બે ભાગ, કુંભો પાંચ ભાગનો, કળશો ત્રણ ભાગનો, અંતરપત્ર અરધા ભાગનું, કેવાળ ત્રણ ભાગનો, માચી ત્રણ ભાગની, જંઘા ચૌદ ભાગની, ઉદ્ગમ દોઢીયો સાડા ચાર ભાગનો, ભરણી ત્રણ ભાગની, (૩૮ ભાગ) તે પર ઉર્ધ્વ કેવાળ બે ભાગનો, છાદન એક ભાગનું, કેવાળ ત્રણ ભાગનો, અંતરપત્ર અરધા ભાગનો, ચાર ભાગનું છજું. એ રીતે ૪૮॥ ભાગના કનીષ્ઠ માનના મંડોવરના ભાગ કહ્યા. હવે મધ્યમાનના મંડોવરના વિભાગ કહું છું.

२	खरो
५	कुंभो
३	कलसा
०॥	अंतरपत्र
३	केवाल
३	मंचिका
१४	जंघा
४॥	उद्गम
३	भरणी
२	ऊर्ध्वकथो
१	छादन
३	केवाल
०॥	अंतराल
४	छजु
४८॥	भाग

कनिष्ठमान

हे ऋषिराज! अव मंडोवर का विभाग सुनाता हुँ। पीठ आगे कहा ऐसा कुवेर–या कुसुदोद्भव प्रकारका करना। खुरो–दो भाग, कुंभक पाँच भाग, कलशा तीन भाग, अंतराल आधा भागका, केवाल और माची तीन तीन भागकी जंघा चौदा भागका, देढीया साडा चार भागका, भरणी तीन भाककी, (३८ भाग) उसकी पर अर्ध्व केवाल दो भागका, छादन एक भागका, केवाल तीन भागका, अंधारी आधे भागकी, और छज्जा चार भागका। ऐसे कनीष्ठ माकका मंडोवर ४८॥ भागका कहा, अब मध्य मानका मंडोवर कहता हुँ। २६ से ३०

पाठान्तर २० मंचिका स्तंभवेद्भिमि २१ चतुर्दश

भरणी मस्तके प्राज्ञ चतुर्भागा शिरावटिः ।
छादनं कथ्यते पूर्वं कपोतालि च पूर्वतः[२२] ॥३१॥
पुनः कपोताली त्रिभागेन अर्धं चान्तरपत्रय ।
कूट छाद्यं भवेत्पूर्व मध्यमानंतु निश्चयं ॥३२॥

ઉપર કહેલા કનિષ્ઠમાનના મંડોવરમા ત્રણ ભાગની ભરણી (સુધીના ૩૮ ભાગ) ઉપર ચાર ભાગની શિરાવટી અને આગળ કહ્યા તે પ્રમાણુ છાદન એક ભાગ, કેવાળ ત્રણ ભાગ ફરી કેવાળ ત્રણ ભાગનો, અંધારી અર્ધ ભાગની, છજુ ચાર ભાગનુ કરવુ એ રીતે પ૩॥ ભાગનો મધ્યમાનનો મંડોવર જાણવો ૩૧–૩૨

૩ ભરણી	
૩૮ ભાગ આગળ	૪૬
૪ શીરાવટી	૯ જંધા
૧ છાદન	૪॥ દોઢીયો
૩ કેવાળ	૩ ભરણી
૩ કેવાલ	૩ કેવાલ
०॥ અંધારી	०॥ અંધારી
૪ છજુ	૪ છજુ
ભાગ પ૩॥ મધ્યમાન	ભાગ ૭૦ જ્યેષ્ઠમાન

आगे कहा हुआ कनिष्ठमान का मंडोवर मे तीन भागकी भरणी (थर्यतका ३८ भाग) उपर चार भागकी शिरावटी, एक भागका छादन, तीन भागका केवाल फीर तीन भागका केवाल, आधे भागकी अधारी, चार भागका छज्जा करना । ऐसे ५३॥ भागका मध्यमानका मडोवर समजना ।

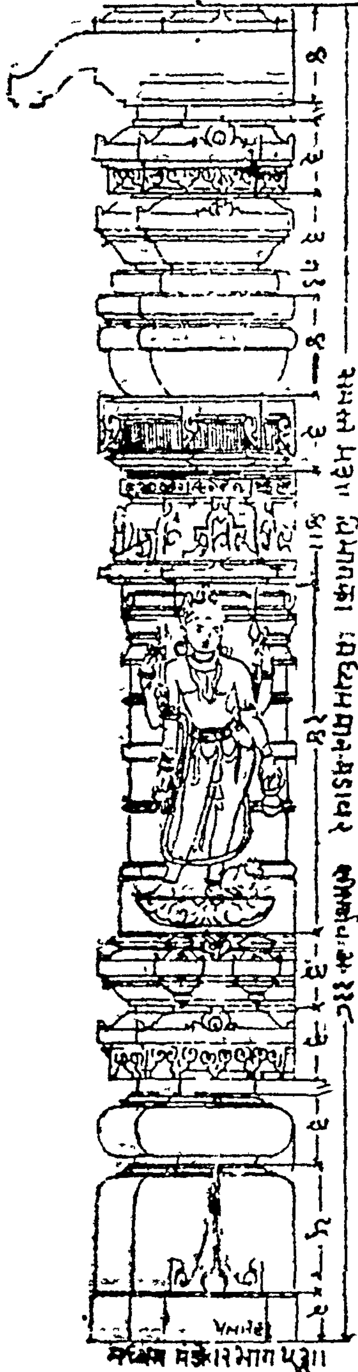
कपोताली बभूमध्ये जंघा भाग नव स्तथा ।
[२३]उपरे छाद्य प्रधानं च ज्येष्ठ मानं च सिद्धति[२४] ॥३३॥

ઉપર કહ્યા મધ્યમાનના પ૩॥ ભાગમા બે કેવાળ વચ્ચે ૪૬ ભાગ પર જંઘા નવ ભાગની કરવી તે ઉપારના થરો આગળ કહ્યા દોઢીયો ૪॥ ભાગ, ભરણી ત્રણ ભાગ, કેવાળ ત્રણ ભાગનો, અંધારી અરધો ભાગ અને ચાર ભાગનુ છજુ મળી કુલ ૭૦ ભાગનો જ્યેષ્ઠ માનનો મંડોવર સિદ્ધિને આપનાર જાણવો (બે ભૂમિ એક છાદ્ય) ૩૩

आगे मध्यमानका ५३॥ भागमे दो केवालकी विचमे ४६ भाग, उपर जघा नव भागकी ते उपरके थरों आगे कहा उद्गम ४॥ भाग, भरणी तीन भाग, केवाल तीन भाग, अधारी आधा भाग उपर मुख्य छाद्य चार भागका मीलके ७० भागका ज्येष्ठमानका मडोवर (दो भूमि एक छाद्यका) सिद्धि दायक जानना । ३३

२२ पूर्वक २३ थरे छाद्य २४ सिद्धिमि ।

विश्वकर्मा उवाच —



५३॥ भागका मध्यमानका मंडोवर

¹तथा जगती कोष्ठेन आयामं[२५] च विस्तीर्णम् ।
कोष्ठे वेदि च त्रयोविंशे[२६] मुखायते च त्रिंशतिः ॥३४॥
ततो कोष्टान मध्ये चैई मेकोन विंशतिः ।
पंचविंशति मुखायते [२७]त्रयमाने विधीयते ॥३५॥
त्रयो [२८] कोष्टान्तरे अष्टत्रयो भद्रे च षोडशः ।
सिंहद्वार[२९] बभुपक्षे द्वांत्रिंशैव सिद्धयति ॥३६॥
भद्रपक्षे भवेत्त्रीणी कक्षान्तरे प्रवेष्टितं ।
[३०](अष्टमत्वधू प्रविष्ठस्य भद्रे भद्रे जिनालयं) ॥३७॥
जिनालये वरश्रेष्ठः सर्वक्षेत्रे च बावन ।
.... ॥३८॥

(ભાવાર્થ) શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે....જિનાયતનની જગતીનો કોઠો લાંબો પહોળો કરવો. તે કોઠાના વેદિ ૨૩ ભાગ અને ઉંડાઈ ત્રીશ ભાગ તે કોઠામાં મૂળ પ્રાસાદ ચેંઈઆણુ (૧) ઓગણીશ ભાગ અને પચ્ચીશ ભાગ લાંબો ઉંડાઈમાં વિધિથી કરવો. ત્રણ કોઠાના અંતરે આઠ એવા ત્રણ ભદ્રે....સોળ.... મધ્યગર્ભથી બેઉ પડખે બત્રીશ....ભદ્રના પડખે પણ....ત્રણ ત્રણ પડખાના અંતરે પ્રવિષ્ઠ કરવા. આઠ....ઊંડા પ્રવિષ્ઠ....ભદ્રે ભદ્રે જિનાલય કરવાં જિનાલયમાં બાવન જિનાલય સર્વમાં શ્રેષ્ઠ છે. ૩૪–૩૫–૩૬–૩૭–૩૮

(૧) અહીં આપેલો અધ્યાય ૧૧૮ મો કેટલીક જૂની પ્રતોમાંતે ને અ ૧૪૭મો ગણ્યો છે. એટલે તે કદાચ પાછળના ભાગમાં હોય ! આ ગ્રંથના કેટલાક પાછલા અધ્યાયો વૃક્ષાર્ણવ ગ્રંથને મળતા તેના કેટલાકના ભાગ અને પાઠો છે.

१. यहाँ दिया हुआ अध्याय ११८ वाँ कओं पुरानी प्रतोंमें अ० १४७ वाँ गिना गया है। इससे हो सकता है वह पीछेके भागमें भी हो। इस ग्रन्थके कओं पीछले अध्याय के वृक्षार्णव ग्रन्थसे मिलते जुलते उनके कओं भाग या पाठों हैं।

पाठान्तर २५ आयामंत्र विस्तृतम्, २६ आयमं च त्रिंशति, २७ क्रियमान, २८ कक्षान्तरे २९ सिद्धा बभूपक्षे ३० ( ) ફરેલ છે તે આ બે પદો કેટલીક પ્રતોમાં નથી.

ज्येष्ठ मानका महामंडोवर एक छज्जा उदय भूमि–उदयजंघा युक्त मंडोवर समस्त भाग ७०

(भावार्थ) विश्वकर्मा कहते हैं जिनायत की जगतीका कोष्ठ लम्बा चोडा करना। उस कोष्ठके वेदि २३ भाग और गहराई तीस भाग। उस कोठे मे मूल प्रासाद=चेइयाण उन्नीस भाग और पच्चीस भाग लम्बा गहराईमे विधि से रखना। तीन कोठे के अतरे आठ ऐसे तीन भद्रे सोलह मध्यगर्भ से दोनु ओर बत्तीस भद्रके बगलमे भी तीन तीन बाजुके अतरमे प्रविष्ठ करना। आठ गहरा प्रविष्ठ भद्रे भद्रे जीनालय करना। जिनायतमे बावन जिनायतन सर्वमे श्रेष्ठ है। ३४–३५–३६–३७–३८

दिग्पाल ताडवनाद्यं लास्यं
लोके वैतालश्च ॥३९॥
[३१]प्रकृते पु पुनर्निमिक्षु (?)
नृत्य कूर्याच्चतुर्मुखे[३२]।
स्तर स्थाने विशेपण शाखे
स्तभे निरंतरे[३४] ॥४०॥
यावज्जीवानि सर्वाणि नृत्यकुर्वंति
मे सदा।
प्रासाद मानतुङ्गश्च [३५]द्विपंचाश
जिनालय' ॥४१॥
छद नागर मादाय
सर्वछदानिमाश्रितम्।
[३६]येनपीठ विरंचितम्
मडोवर विशेपत' ॥४२॥
चातुर्मुखे च दातव्या पुनर्दद्या चतुर्मुखे।
इति मातग (मानतुङ्गप्रासाद)

३१ प्रकृत्ये न कृत्य चातुर्मुख, ३२ चातुर्दशे।
पाठान्तर-३३ पदस्थाने, ३४ विस्तरे, ३५ दिपन्त्रिश बावन, ३६ जीतपिराज्यते।

ભાવાર્થ–ચાતુર્મુખ જિનાયતનને ફરતા તાંડવ લાસ્યાદિ નૃત્ય કરતા દિગ્પાલ લોકપાલ વૈતાલાદિનાં સ્વરૂપ કરવા. અને વિશેષે કરીને થરના સ્થાને, શાખાઓમાં અને સ્તંભના વિસ્તારમાં હંમેશાં સ્વરૂપો કરવાં. જ્યાં સુધી જીવોનું અસ્તિત્વ છે ત્યાં સુધી જાણે તે સર્વ હંમેશાં નૃત્ય કરતા રહે. તેવો માનતુંગ પ્રાસાદ (૩૫) બાવન....જિનાલયવાળો કરવો. પ્રાસાદના સર્વ છંદમાં નાગરછંદના આશ્રયે એટલે પ્રાધાન્ય રૂપે જાણવો. તેના પીઠ પર મંડોવર કરવો. ચતુર્મુખના ઉપર ફરી ચોમુખ એમ કરવા. ૪૦–૪૧–૪૨. ઈતિ માતંગ (માનતુઙ્ગ) પ્રાસાદ

भावार्थ—जिनालय के चारों ओर तांडव लास्यादि नृत्य करते दिग्पाल लोकपाल, वैतालादि के स्वरूप करना और विशेपकर थरके स्थानपर, शाखाओंमें और स्तंभके विस्तारमें हमेशां रूपों करना। जहाँतक जीवोंका अस्तित्व है वहाँ तक वे सब जाने हमेशां नृत्य करते रहते हो ऐसा मानतुंग प्रासाद (३५) बावन...जिनालयवाला करना। प्रासादके सर्व छंदमें नागरछंद के आश्रयपर अर्थात प्राधान्य रूपसे जानना। उसके पीठपर मंडोवर करना। चतुर्मुख के ऊपर फिर चोमुख ऐसे करना। ४०–४१–४२. इति मातङ्ग (मानतुङ्ग) प्रासाद।

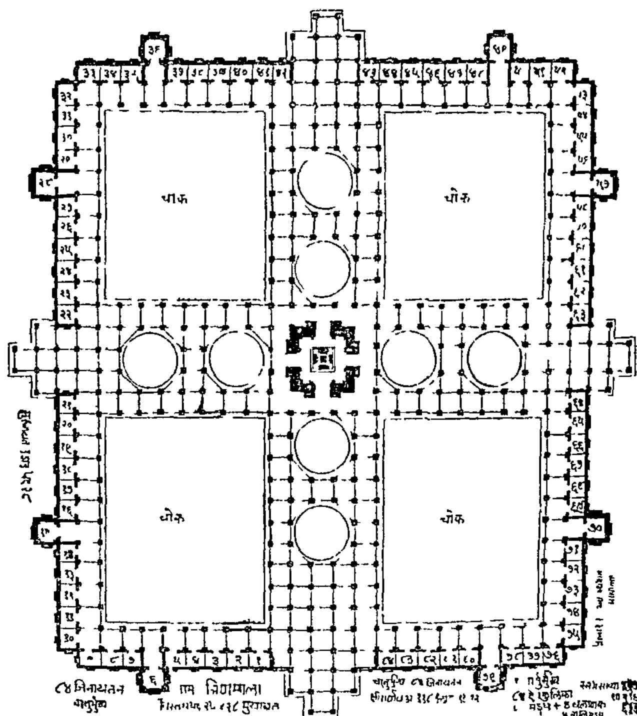
जगती प्रदीया क्षेत्रे महावेदे [३७]प्रदीया [३८]जिन ॥ ४३॥
प्रदीया जिन संस्थाने जिणमाला[३९] मूर्ध्वनाय ।
वामदक्षे तथा पृष्ठाग्र मंडपा रंङ्गमण्डपे ॥४४॥
पंचविंशति विस्तार अष्टाविंश मुखायतम् ।
[४०]भागैक लोपयेत्कर्ण चतुराशिति जिणालयम् ॥ ४५॥
विंश विंशाग्र[४१] पृष्ठे (चतु) चत्वारिं मुखायते ।
[४२]जिणमाला स्तदानाम सर्वकल्याण कारिणी ॥ ४६॥

१ चतुर्मुख
७६ देवकलोका
८ महघर
——
८४
८ मंडप
४ वलाणक
स्तंभ संख्या
४२०
३३६ देरी ८४में
१२ मूळगर्भगृह
——
गर्भगृह
स्तंभ ७६८प्रथम भूमि

ભાવાર્થ–જગતીના ક્ષેત્રના....સંસ્થાનમાં જીણમાલાની વૃદ્ધિ કરવી. ડાબી જમણી તરફ અને આગળ તથા પાછળ રંગમંડપો (ફરતા ચોમુખને) કરવા. ક્ષેત્રના પચ્ચીશ ભાગ પહોળાઈ અને અઠ્ઠાવીશ ભાગ (મુખાયત=ઊંડા) લંબાઈમાં કરી ચાર ખુણે એકેક ભાગ લોપવો. એ રીતે ચોરાશી જીણાલય વીશ વીશ આગળ પાછળ અને પડખે બાવીશ બાવીશ એટલે ચુમાલીશ મુખાયતમાં જીનાયત કરવાં. એવું ચોરાશી જીણાયતન સર્વનું કલ્યાણ કરનારૂં એવું "जिणमाला" નામ જાણવું. ૪૩–૪૪–૪૫–૪૬.

३७ महाविद्ये, ३८ प्रतिमादिच, ३९ विवर्द्धनीय, ४० भागै लोपये, ४१ विंशविंशकृतेक्षेत्रे पृष्ठे चत्वारिंश मुखायतो, ४२ जिपाद्रष्टि विचार कृतै पृष्ठे।

जीणमाला तलदर्शन



२८×२५=खण्ड=विभागका ८४ जिनायतनके चतुर्मुख "जिणमाला"

१ ચતુર્મુખ	મંડપ-૮
૭૬ દેવકુલિકા	બલાણક-૪
૮ મહાધર	નાલીમંડપ-૪
૮૪	
સ્તંભ સંખ્યા	૪૨૦
દેરી ૮૪ના	૩૩૬
મૂલ ગર્ભગૃહ	૧૨
	૭૬૮

जगतीके क्षेत्रके संस्थान के जिनमालाकी वृद्धि करना बाऐं दायीं तरफ और आगे तथा पीछे रंग-मण्डपों (फिरते चोमुख के) करना। क्षेत्रके पच्चीश भाग चौडाई और अट्ठाईश भाग (मुखायत गहरे) लम्बाई मे कर चारों कोनोंमे एक एक भाग लोपना। इस तरह चोराशी जिनालय वीस वीस आगे पीछे और बाजुमे बाईस

बाईस अर्थात चुमालीश मुखायतमें जिनायत करना। ऐसा चोर्याशी जिनायतन सर्वका कल्याणकर ऐसा "जिणमाला" नाम जानना। ४३–४४–४५–४६.

द्वारस्य विस्तरंगृह्य अष्टमांशानि मध्यतः।
ज्येष्ठमध्या कनिष्ठं वा अर्चामानं चतुर्मुखे ॥४७॥
द्वारस्य विस्तरं ग्राह्यं द्विधा भक्तं च कारयेत्।
वीतरागो स्तथा कृष्ण अर्चामानं च सर्वतः ॥४८॥
हीने हानि प्रकुर्वित अधिके स्वजनक्षयम्।
रेखामानं भवेदर्चा सर्वकामर्थकारिणी ॥४९॥

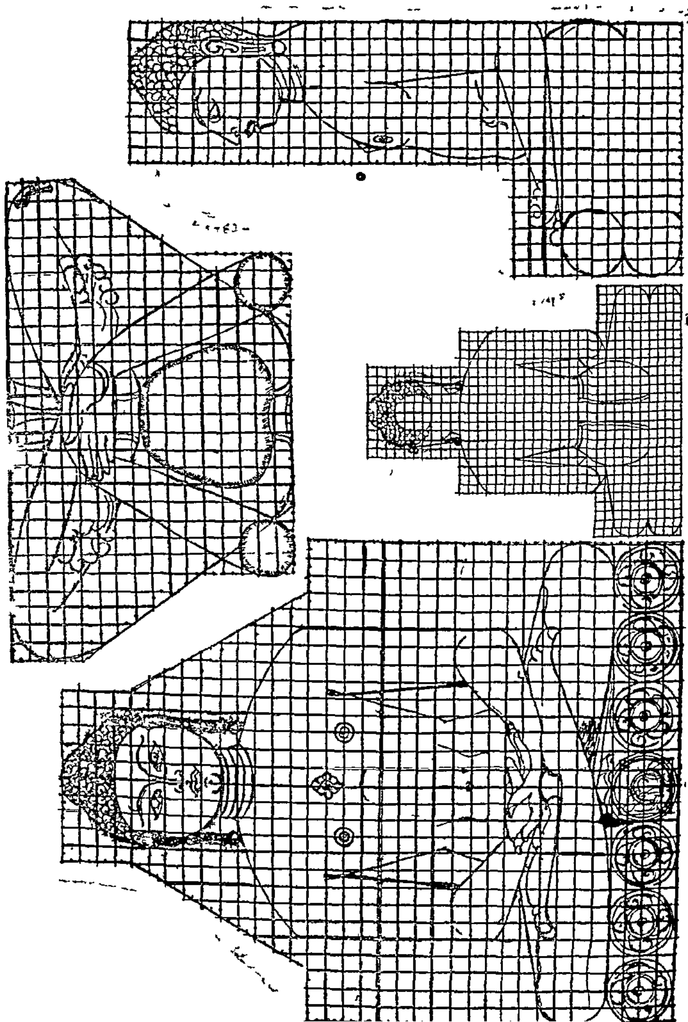
ગર્ભગૃહના દ્વારના વિસ્તાર જેટલી પ્રતિમા કરવી. તે મધ્યમાન–તેનો આઠમો ભાગ હીન કરવાથી કનીષ્ઠમાન અને આઠમો ભાગ અધિક કરવાથી જેષ્ઠ માન તે ચાતુર્મુખ પ્રતિમાનું માન જાણવું. દ્વાર વિસ્તારના બે ભાગ કરી એક ભાગની જિન પ્રતિમા અને કૃષ્ણ તથા લક્ષ્મીની પૂજનીક મૂર્તિનું માન જાણવું. કહેલા માનથી હીન કરવાથી હાનિ થાય અને વધુ મોટી કરવાથી પોતાના સ્વજનનો નાશ થાય. કહેલા આમ રેખા માનથી પ્રતિમા કરાવવાથી કામ અર્થનો લાભ થાય છે. ૪૭–૪૮–૪૯.

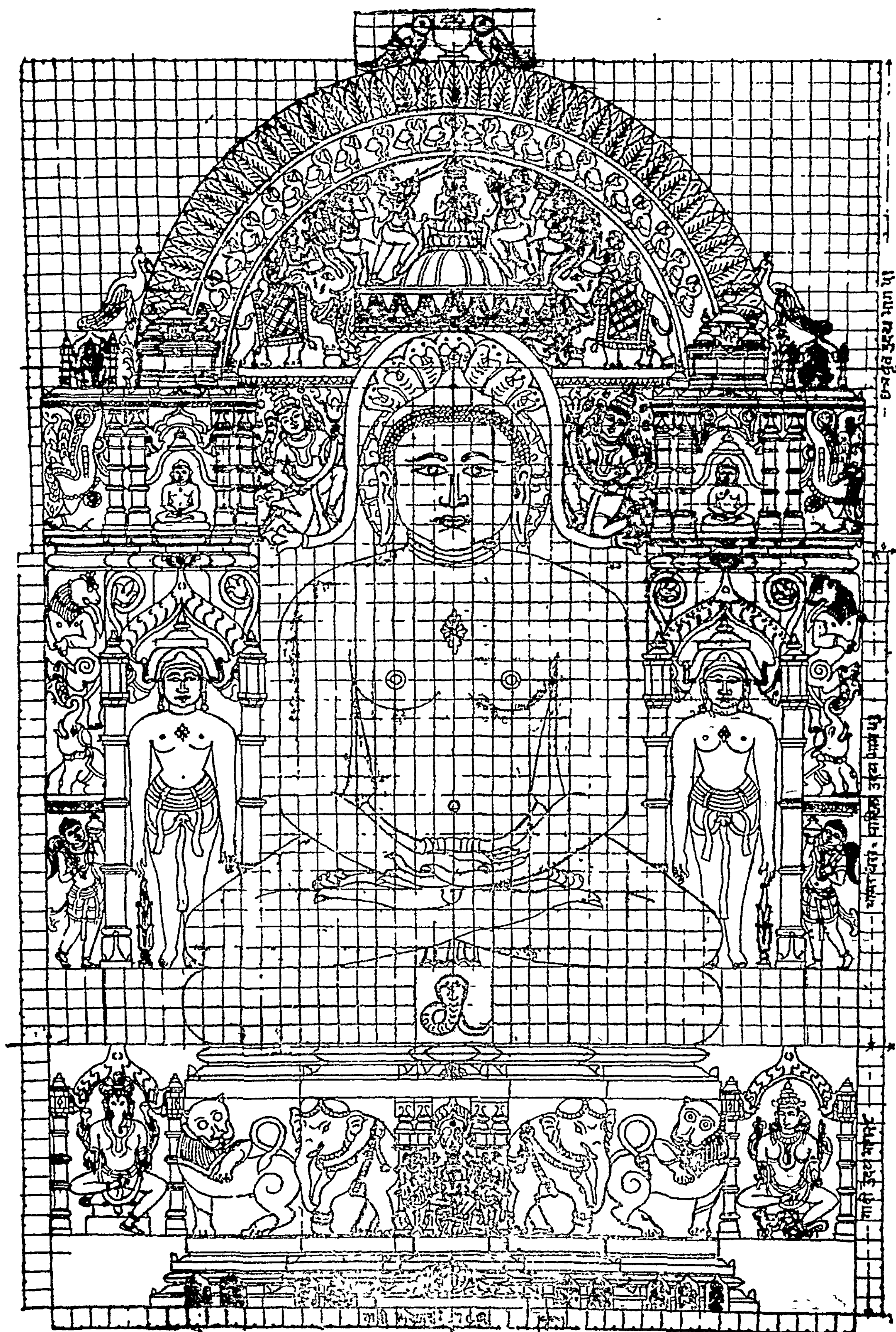
गर्भगृहके द्वारके विस्तारके बराबर प्रतिमा करना। उस मध्यमानका; आठवाँ भाग हीन करनेसे कनिष्ठमान और आठवाँ भाग अधिक करने से ज्येष्ठमान ...चातुर्मुख प्रतिमाका मान जानना। द्वार विस्तार के दो भाग कर एक भागकी जिन प्रतिमा और कृष्ण तथा लक्ष्मी की पूजनीक मूर्तिका मान जानना। कहे हुए मानसे हीन करनेसे हानि होती है, और ज्यादा बड़ी करनेसे अपने स्वजन का नाश होता है। कहे हुए ऐसे रेखामान से प्रतिमा करने से काम अर्थका लाभ होता है। ४७–४८–४९.

द्वारोछ्रयष्टधा भक्ते भागमेकं परित्यजेत्।
सप्तमाष्टसे सप्तम देवद्रष्टि नियोजयेत् ॥५०॥
उर्ध्व द्रष्टि द्रव्यनाशाय अधस्ते भोगहानि च।
रेखा द्रष्टि यदाग्राह्य दानपुण्य विवर्धनम् ॥५१॥
अर्चाद्रष्टि स्तर स्तंभ पीठ मंडोवरं स्तथा।
*वालाग्र लोपयेद्यत्र निष्कलं तत्पूजायते ॥५२॥

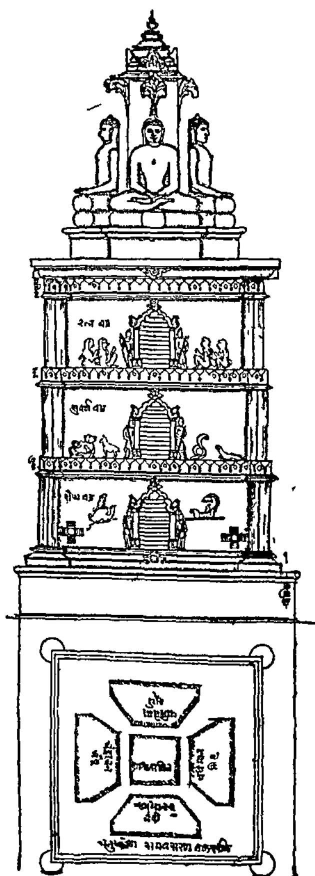
* કેટલીક જુની પ્રતોમાં શ્લોક ૪૭ થી ૫૨ ના પાઠો નથી.

जिन प्रतिमा अग विभाग





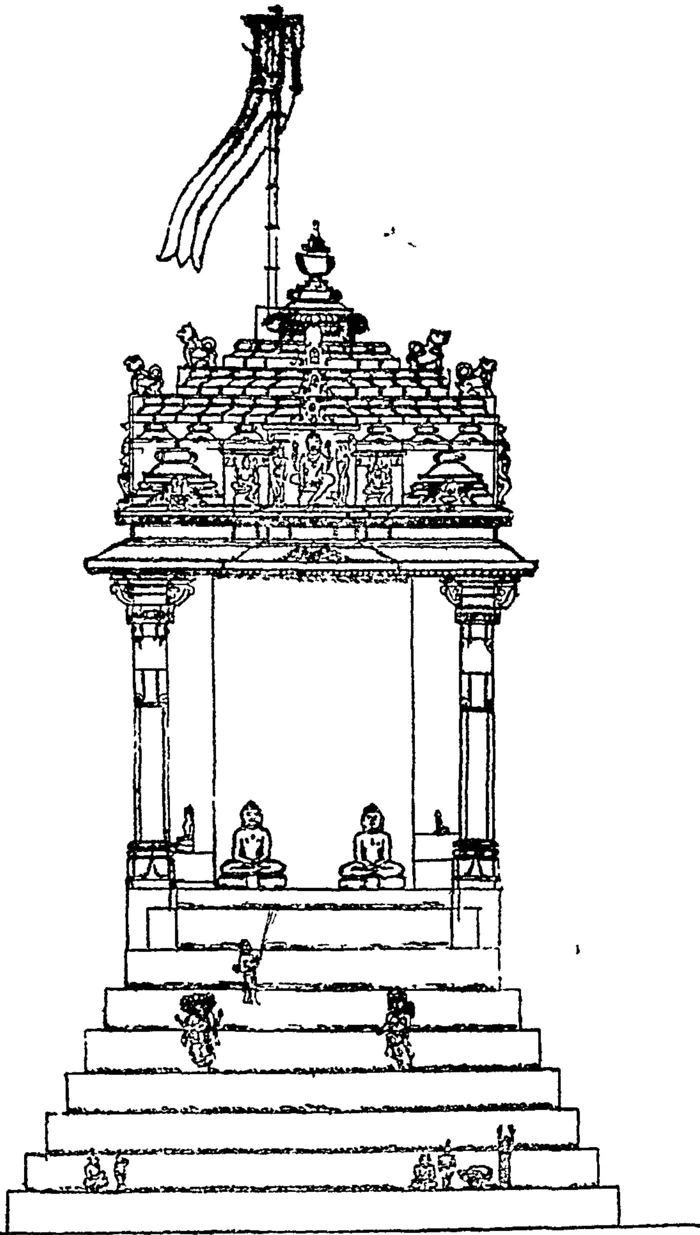
जैन प्रतिमा और परिकर विभाग



जैन समवसरण

ગર્ભગૃહના દ્વારની ઊંચાઈના આઠ ભાગ કરી તેનો ઉપલો ભાગ તજી નીચેના સાતમા ભાગના આઠ ભાગ કરવા તેના સાતમા ભાગે દેવદષ્ટિ રાખવી કહેલા માનથી જો દૃષ્ટિ ઊંચી રાખે તો ધનનો નાશ થાય અગર જો નીચી રાખે તો સમૃદ્ધિનો નાશ થાય માટે ડાહ્યા પુરુષોએ રેખા પ્રમાણે જ્યાં રેખા આવી હોય ત્યાંજ દૃષ્ટિ રાખવાથી દાન પુણ્યની વૃદ્ધિ થાય છે પ્રતિમા દૃષ્ટિ થર, સ્તંભ, પીઠ અને મંડોવર તેના માનથી જો એક વાળ જેટલો પણ ઊંચા નીચે લોપથાય તો તે કાર્ય ફળને આપનારૂ ન જાણવુ પૂજા નિષ્ફળ જાય ૫૦–૫૧–૫૨

गर्भगृहके द्वारकी ऊँचाईके आठ भाग कर उसका उपर का भाग आठवाँ तज कर सातवें भागका आठ भाग करना । उसके सातवें भागमे देवदृष्टि रखना । कहे हुए मानसे जो दृष्टि ऊँची रखे तो धनका नाश होता है अगर जो नीची रखे तो समृद्धिका नाश होता है । इस लिये सुज्ञ पुरुषोंको चाहिये कि रेखाके बराबर जहाँ रेखा आयी हो वहाँ ही दृष्टि रखना, इससे दान पुण्य की वृद्धि होती है । प्रतिमा दृष्टि थर, स्तभ, पीठ और मडोवर उसके मानसे जो एक वाल जितना भी ऊँचा नीचा लोप हो तो उसे फल प्रदकार्य न जानना । ५०–५१–५२


अष्टापद

इतिश्री विश्वकर्मा कृतायां क्षीरार्णवे नारद पृच्छायां सांधार चातुर्मुख प्रासाद मंडोवरादि लक्षणं नाम शताग्रे अष्टादश मोऽध्याय ॥ ११८ ॥ क्रमांक अ० २०

ઈતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ શ્રી નારદજીએ પૂછેલા સાંધાર ચાતુર્મુખ પ્રાસાદ અને મંડોવરાદિ લક્ષણના શિલ્પ વિશારદ શ્રી પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈએ રચેલ સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકાનો એકસો અઢારમો અધ્યાય. ૧૧૮. ક્રમાંક અ૦ ૨૦

इतिश्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णव श्री नारदजीके पूछे हुए सांधार चातुर्मुख प्रासाद और मंडोवरादि लक्षणके शिल्प विशारद श्री प्रभाशंकर ओघडभाईकी रची हुई सुप्रभा नाम्नी भाषा टीकाका एक सौ अठारहवाँ अध्याय ॥११८॥ क्रमांक अ० ॥२०॥

संवरणा के कोष्टक. अ-११६ के श्लोक ७४ से ७८ का स्पष्टीकरण

क्रम	संवरणानु नाम	विभक्ति भाग	घंटिका संख्या	फूट संख्या	सिंह संख्या	क्रम	संवरणानु नाम	विभक्ति भाग	घंटिका संख्या	फूट संख्या	सिंह संख्या
१	पुष्टिका	८	५	१६	८	१४	देव गांधारी	६०	५७	—	६०
२	नंदिनी	१२	९	४८	१२	१५	रत्नगर्भा	६४	६१	—	६४
३	दशाक्षा	१६	१३	—	१६	१६	चूडामणि	६८	६५	—	६८
४	देवसुंदरी	२०	१७	—	२०	१७	हेम रत्ना	७२	६९	—	७२
५	कुल तिलक	२४	२१	—	२४	१८	चित्र कूट	७६	७३	—	७६
६	रम्या	२८	२५	—	२८	१९	हिमा	८०	७७	—	८०
७	उद्भिन्ना	३२	२९	—	३२	२०	गंध मादनी	८४	८१	—	८४
८	नारायणी	३६	३३	—	३६	२१	मंदरा	८८	८५	—	८८
९	नलिका	४०	३७	—	४०	२२	मेदिनी	९२	८९	—	९२
१०	चंपका	४४	४१	—	४४	२३	कैलासा	९६	९३	—	९६
११	पद्मा	४८	४५	—	४८	२४	रत्न संभवा	१००	९७	—	१००
१२	समुद्भवा	५२	४९	—	५२	२५	मेरु कूट	१०४	१०१	—	१०४
१३	त्रिदशा	५६	५३	—	५६						

॥ अथ केशरादि वैराग्यकूलप्रासाद ॥

क्षीरार्णव (अ० ११९) क्रमांक २१

श्री नारदोवाच-

प्रणपत्यमिद वक्ष्ये यावन्मे धारणामतः।
कथियामि न संदेहो शिखरं सर्वकामदम् ॥ १ ॥
कस्मिनाकारे समुत्पन्ना प्रासाद शिखरोत्तमं।
किं दलं किं विभक्तेन किंमा शृंगे विभागतः ॥ २ ॥

શ્રી નારદજી કહે છે હું પ્રણામ કરીને કહું છું કે મને પ્રાસાદના શિખરો કે જે સર્વ-કામનાને પૂરનાર છે તેના વિષે સંદેહ વગર કહો. તે કેવા આકારના ઉત્પન્ન થયા, તેના દલ અને શૃંગના વિભાગ આદિ મને કહો ૧-૨

श्री नारदजी कहते है— मे प्रणाम कर कहता हूँ कि मुझे प्रासाद के शिखरों के बारेमे कि जो सब कामनाओं को पूरने वाले है, उनके बारेमे नि सन्देह कहो। वे कैसे आकार के उत्पन्न हुए, उनके दल विभाग और शृंग के विभाग आदि मुझे कहो। १-२

किं मे अष्ट विभक्तं च तेषां स्कंध किंतां भवेत्।
दशधा स्कंध रेषा च स्कंधमान किता भवेत् ॥ ३ ॥
मम वालंजरं श्रुत्वा सरतरकं हेतवे।
किं विभागे समोत्पन्ना कथय ममसाग्रतं ॥ ४ ॥

આઠ વિભાગ કેમ કરવા શિખરનું સ્કંધ બાંધણું કેટલા ભાગે કેવું કરવું, શિખરના બાંધણાની રેખા સ્કંધનું માન કેવું રાખવું, વાલંજરના ભાગ તથા પાણીતાર કેમ કરવા વિભાગોની ઉત્પત્તિ કેવી રીતે થઈ? તે મને હવે કહો ૩-૪

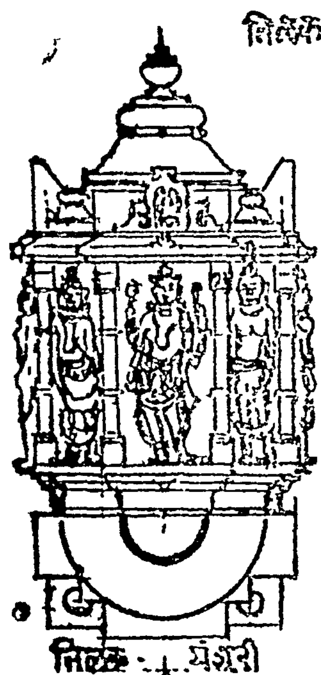
आठ विभाग कैसे करना, शिखर का स्कंध कितने भागपर कैसे करना, शिखरके स्कंध की रेखा-स्कंधका मान कैसे रखना, वालंजरके भाग तथा पानीतार कैसे करना विभागोंकी उत्पत्ति कैसे हुई?–यह मुझे अब बताओ। ३-४

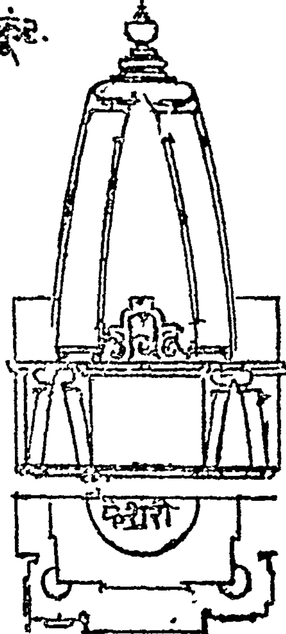
विश्वकर्मा उवाच-

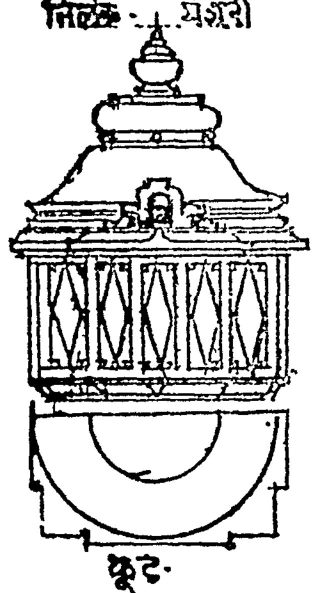
यत्त्वया पृच्छते चैव श्रृणुत्वेकाग्रतो मुने।
शिखरं विविधाकारा अनेकाकारमुद्रितः ॥ ५ ॥
उक्तं च प्रवक्ष्यामि श्रेष्ठाना वैराज्य कुल संभवेत्।
केसरादि विधिस्तेषा तथा क्षीरार्णवे स्मृते ॥ ६ ॥
द्विमान मथुरे प्रोक्ता! कस्यमेनफलेथवा।
शिखरो पुष्करे विद्यात् विमाना रूह देवता ॥ ७ ॥

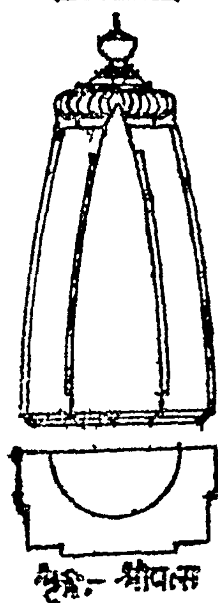
શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે. તમે પૂછો છો હે મુનિ, હવે એકાગ્ર મનથી સાંભળો. શિખરોના અનેક વિધ આકારોના અને અનેક આકારના કહ્યા છે, તે હું તમોને શ્રેષ્ઠ એવા વૈરાજ્યકુળના કેશરાદિ પ્રાસાદનો વિધી તે ક્ષીરાર્ણવમાં (તથા વૃક્ષાર્ણવમાં પણ) કહું છું. ૫–૬–૭

शिखरमां आवता क्रमोनो समज.









तिलक मञ्जरी कूट—शृङ्ग श्रीवत्स केसरी

श्री विश्वकर्मा कहते हैं—तुम पूछते हो तो हे मुनि, अब एकाग्रता से सुनो। शिखरों के अनेकविध आकारों और अनेक आकारके शिखर कहे हैं। वह मैं तुम्हें श्रेष्ठ वैराग्यकुल के केशरादि प्रासाद का विधि मैं क्षीरार्णव में भी कहता हूँ। ५–६–७.

[1]वज्र पद्मराग वैडूर्य रत्नकोट विमानकः।
भूधरो च महानीलं ईन्द्रनीलो पृथ्वीजयः ॥८॥
कैलास हेमकूट श्रामृतोद्भव मंदिरं तथा।
नंदशाली नंदनं च हयेते विभक्ति दशतलम् ॥९॥

વૈરાગ્યકુળના ૨૫ પ્રાસાદોના ૧૧ થી ૨૫ શિખરો દશાઈતળનાં નામ કહે

(૧) મૂળ જૂની પ્રતોમાં ઉપરોક્ત આપેલા શ્લોક ૮ થી ૧૧ ના પાઠોનાં નામ અને તળ વિભક્તિ અને શ્રૃંગની સંખ્યાનો ક્યાંય મેળ ખાતો નથી. તેથી ઉપર આપેલ ક્રમ પ્રમાણે મળે છે. પરંતુ અઢાઈ અને દશાઈ તળના ૭ નામો બંને વિભક્તિનાં ખેંચડાય છે. કોઈની શુદ્ધ પ્રતની પ્રાપ્તિથી આ અધ્યાય સ્પષ્ટ થઈ શકે. અમને મળેલી ગુજરાત સૌરાષ્ટ્રની દશ બાર પ્રતોમાં આવાજ પ્રકારની અશુદ્ધિ છે. અપરાજિત સૂત્ર ૧૫૪ થી ૫૭ ના

છે ૨૫ વજ્ર ૨૪ પદ્મરાગ, ૨૩ વૈડૂર્ય, ૨૨ રત્નકૂટ, ૨૧ વિમાન, ૨૦ ભૂધર ૧૯ મહાનીલ, ૧૮ ઇંદ્રનીલ, ૧૭ પૃથ્વીજય ૧૬ કૈલાસ, ૧૫ હેમકૂટ, ૧૪ અમૃતોદ્ભવ, ૧૩ મંદિર, ૧૨ નંદશાળી અને ૧૧ નંદન એ ૫૬૭ પ્રાસાદોના શીખરોની દશાઇતળની વિભક્તિ જાણવી ૮-૯

वैराज्यकुलके २५ प्रासादोंके ११ से २१ शिखरों दशाई तलके नाम कहते हैं। २५ वज्र, २४ पद्मराग, २३ वैडूर्य, २२ रत्नकूटी, २१ विमान, २० भूधर

ચાર અધ્યાયો વૈરાજ્યાદિ પ્રાસાદોના છે તેના સાથે અહી આપેલા નામ કે વિભાગનો પણ મેળ ખાતો નથી કોઈ ગ્રંથનો આધાર હશે

મૂળ જૂની પ્રતોમા આ પ્રમાણે ક્રમ વગરના નામો આપેલા છે તે મૂળ પાઠ આ નીચે આપીએ છીએ

२५ वज्र २३ वैडूर्य मुक्त वाइद्रमणि भूतिलक ।
२४ पुष्पराग च गोमेधं प्रवालं शृङ्ग भूषण ॥ ८ ॥
तथा शृङ्गतलं विद्यादष्ट भाग च लक्षणम् ।
१ केसरी २ सर्वतोभद्र नंदनस्य विशेपतः ॥ ९ ॥
३ मंदिरो ७ हैमकूटश्च १६ कैलासो १४ भृतोद्भव ।
४ श्रीवृक्षो विजय श्चैव अष्टधा च निश्चलम् ॥१०॥
१२ नंदशाल ६ हैमवाश्च नंदिश्यो १८ इद्रनीलकम् ।
४ श्रीवत्साद्यो मनेकाश्च दशधा तलं दीयते ॥११॥

મૂળ પ્રતમા આ આપેલ પાઠો અસ્તવ્યસ્ત છે તેથી સુધારીને ઉપર ૮ થી ૧૧ શ્લોક ક્રમબદ્ધ આપવામા આવ્યા છે તેજ પ્રમાણે આગળ આપેલી વિભક્તિ તળ અને શ્રૃંગ સંખ્યા અને નામનો ક્રમ બરાબર મળી રહે છે ઉપરના ચાર શ્લોક સુધારીને મૂકવાની ધૃષ્ટતા કરવા બદલ વિદ્વાનો ક્ષમા આપશે અગર

(१) मूल पुरानी प्रतोंमे उपरोक्त दिये हुए श्लोक ८ से ११ के पाठोंमें नाम और तल तल विभक्ति और शृङ्गकी संख्याका कहीं भी पता नही लगता है। इसमे ऊपर दिये हुए क्रमके अनुसार मिले, लेकिन अठाई और दशाई तलके छ नामा दोनों विभक्तिमें दुने होते हैं। किसी प्राचीन शुद्ध प्रतकी प्राप्तिसे यह अध्याय स्पष्ट हो सके। हम मिली हुई गुजरात सौराष्ट्रकी दस बारह प्रतोंमें ऐसे ही प्रकारकी अशुद्धि है। अपराजित सूत्र १५४ से ५७ के चार अध्यायों वैराज्यादि प्रासादोंके हैं। उनके साथ यहाँ दिये हुए नामों या विभागका भी मेल नहीं मिलता है। किस ग्रंथका आधार होगा ?

मूल पुरानी प्रतोंमे क्रमके बिना अस्तव्यस्त क्रममे नामों दिये हैं। वह मूलपाठ (श्लोक ८ से ११) ऊपर लिखा गया है।

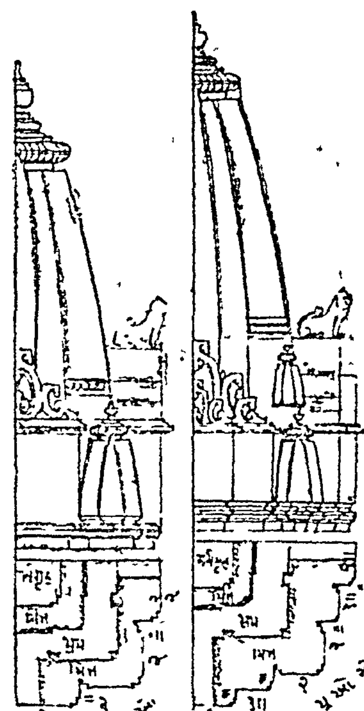
१९ महानील, १८ इन्द्रनील, १७ पृथ्वीजय, १६ कैलास, १५ हेमकूट, १४ अमृतोद्भव, १३ मन्दिर, १२ नंदशाली और ११ नंन्दन इन पन्द्रह प्रासादों के शिखरों की दशाईतल की विभक्ति जानना। ८–९.

रत्नकूट भूधराख्य महानीलं हेमकूटकू।
हेमवर्णाऽमृतोद्भवो श्रीवत्सं मंदिरं स्तथो ॥१०॥
सर्वतो भद्र केशरीं च ह्यते चाष्ट विभक्तितलम्।
तथा शृङ्गतल विद्यात् दशाष्ट भागं च लक्षणम् ॥ ११ ॥

ते पछी १० रत्नकूट, ९ भूधर, ८ महानील, ७ हेमकूट, ६ हेमवर्ण, ५ अमृतोद्भव, ४ श्रीवत्स, ३ मंदिर, (नंदन) २ सर्वतोभद्र अने १ केशरी एम दश प्रासादोना शिखरनी अठ्ठाई तल विभक्ति जाणवी. ए रीते कुल पच्चीश प्रासादो अठ्ठाई अने दशाई तल अने श्रृंगनां लक्षणो हवे कहे छे. १०–११.

उसके बाद १० रत्नकूट, ९ भूधर, ८ महानील, ७ हेमकूट, ६ हेमवर्ण, ५ अमृतोद्भव, ४ श्रीवत्स, ३ मन्दिर, २ सर्वतोभद्र और १ केशरी। इस तरह दस प्रासादों के शिखर की अट्ठाई तल विभक्ति जानना। इस तरह कुल पच्चीस प्रासादो अट्ठाई और दशाई तल और श्रृंगके लक्षणों अब कहते हैं। १०–११.

संक्षेप्तं कथितं चैव तथा विस्तरश्रृणु।
क्षेत्रार्धं च भवेद्भद्रे भद्रार्द्ध कर्ण विस्तरम् ॥१२॥
कर्णार्द्धेन प्रयत्नेन कर्तव्यं भद्र निर्गमम्।
श्रीवत्स कर्ण संस्थाने भद्रे च उद्गमोत्तमम् ॥१३॥
पंचश्रृङ्गं प्रदातव्यं केसरी शिखरान्वितं।
भद्रे शृङ्ग प्रदातव्यं सर्वतोभद्र नामतः ॥१४॥

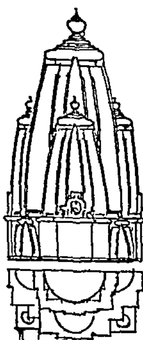


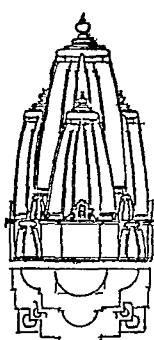
प्रासादोनां नाम अने विभक्ति संक्षिप्तमां कह्यां. हवे विस्तारथी सांभळो. प्रासादना क्षेत्रना (आठ) विभाग करवा. तेमां क्षेत्रना अर्धमां आखुं भद्र पहोळुं करवुं अने भद्रनुं अर्ध कर्ण रेखा पहोळी करवी. एटले बे भागनी रेखा अने अरधुं भद्र बे भागनुं कुल आठ भाग रेखानुं अर्ध एटले एक भागनो भद्रनो निंकालो राखवो. कर्ण-रेखा पर श्रीवत्स श्रृंग चडावी भद्रे दोढीयो करवो तेवो

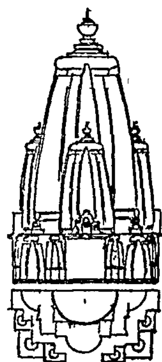
પાચ શ્રૃગનો ૧ **કેસરી** નામનો પ્રાસાદ જાણવો જો કેશરીના સ્થાને ભદ્રે ઉરુશ્રૃગ ચડાવે તો ૨ **સર્વતોભદ્ર** નામનુ નવ અડકનુ બીજુ શિખર જાણવુ ૧૨ ૧૩ ૧૪

प्रासादों के नाम और विभक्ति संक्षिप्तमें कहे गये, अब विस्तारसे सुनो। प्रासाद के क्षेत्रके (आठ) विभाग करना। उसमें क्षेत्रके अर्धमें पूरा भद्र चौडा करना और भद्रका अर्ध कर्ण=रेखा चोडी करना। अर्थात दो भाग की रेखा और आधा भद्र दो भागका, कुल भाग आठ, रेखाका अर्ध अर्थात एक भागका भद्रका निकाला रखना। कर्ण-रेखा के पर श्रीवत्स=श्रृग चढाकर भद्र पर डेढिया करना, वैसा पाँच श्रृगका केसरी नामका प्रासाद जानना। जो केशरी के स्थानपर भद्र पर उरुश्रृग चढाया जाय तो सर्वतोभद्र नामका नव अडक का दूसरा शिखर जानना। १२-१३-१४

कर्णे केसरी सर्वेण भद्रे श्रृंग चतुर्भवेत्।
भद्रकर्णकृते कूटं गवाक्षं मध्यदापयेत् ॥१५॥
उरुश्रृङ्ग तथा मध्ये शिखरं सर्वकामदं।
अन्य श्रृङ्ग च संस्थाने मदिरं सौश्रमानकं ॥१६॥





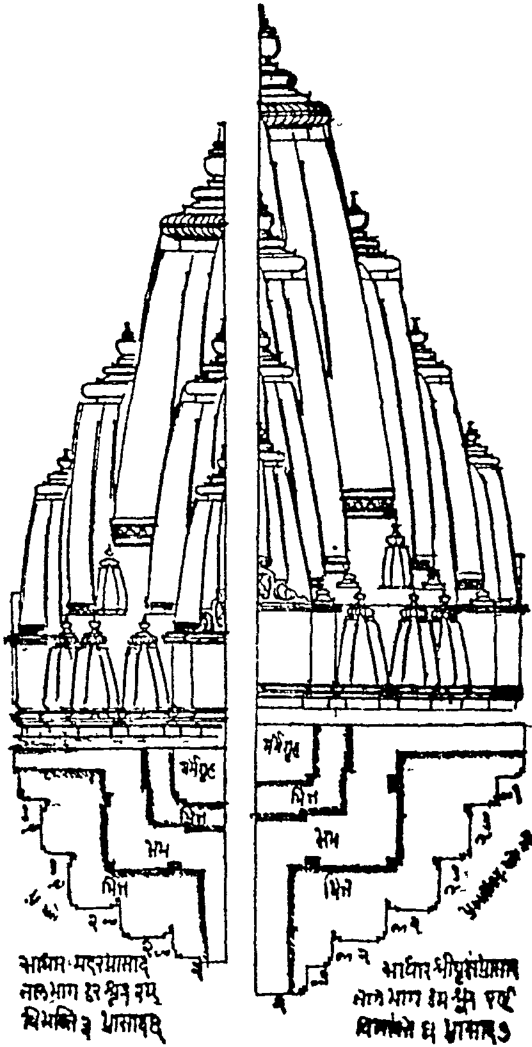


सावधारादि केशरी प्रासाद

હવે પચ્ચીશ શ્રૃગનુ મદિર શીખર હવે સાભળો ઉપરના અઢ્ઠાઈતળના ચારે કર્ણે-કેસરી કર્મ (પાચ અડકનુ) ચડાવવુ અને ભદ્રે એકેક એમ ચાર ઉરુશ્રૃગ ચડાવવા અને ભદ્રના ખૂણે કૂટ ચડાવવા ભદ્રના વચ્ચે ગવાક્ષ કરવો આથી

સર્વ કામનાને આપનારું એવું અન્યશ્રૃંગના સ્થાનરૂપ **મંદિર** નામનું ત્રીજું શિખર પચ્ચીશ અંડકનું જાણવું. ૧૫-૧૬.

अब पच्चीस श्रृंगका मन्दिर शिखर सुनो। ऊपर के अठ्ठाई तलके चारों कर्णों पर केसरी कर्म (पाँच अंडक का) चढाना और भद्र पर एक एक इस तरह चार उरुश्रृंग चढाना और भद्रके कोने पर कूट चढाना। भद्रके बिचके गवाक्ष करना। इस सर्व कामना को देनेवाला ऐसा अन्य श्रृंगका स्थानरूप मंदिर नामका तीसरा शिखर पच्चीस अंडकका जानना। १५-१६.



कर्ण श्रृङ्ग द्वितीयं च श्रीवत्सं सर्वकामदं।
सर्वे भद्रे उरुश्रृङ्गं अमृतोद्भव संज्ञकः ॥१७॥

મંદિર શિખરની રેખાયે એક બીજું શ્રૃંગ ચડાવવાથી સર્વ કામનાને દેનારું ચોથું **શ્રીવત્સ** શિખર ૨૯ અંડકનું જાણવું. અને શ્રીવત્સ શિખરના ચારે ભદ્રે અંડક ઉરુશ્રૃંગ ચડાવવાથી ૩૩ અંડકનું **અમૃતોદ્ભવ** નામનું પાંચમું શિખર જાણવું. ૧૭.

मन्दिर शिखर की रेखापर एक दूसरा श्रृंग चढानेसे सर्व कामनाओं को देनेवाला चोथा श्रीवत्स शिखर २९ अंडकका जानना और श्रीवत्स शिखर के चारों भद्रके पर अंडक उरुश्रृंम चढाने से ३३ अंडकका अमृतोद्भव नामका शिखर पाँचवा जानना। १७.

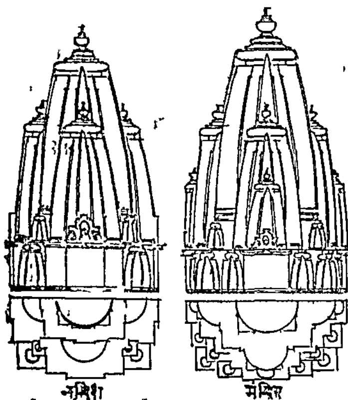
सर्वतोभद्रं च कर्णेषु भद्र श्रृङ्गततोष्टमि।
हेमवर्णं च माक्षातं हेमकूटं च अतः श्रृणु ॥१८॥

मूल प्रतमें इन दिये हुए पाठोंको सुधारकर उपर ८ से ११ श्लोक क्रमवद्ध दिये गये है। उसी तरह आगे दि हुई विभक्ति तल और श्रृङ्ग संख्या और नामका क्रम बरावर मिलता है। उपरके चार श्लोक सुधारकर रखनेकी धृष्टता करनेके लिये विद्वानों हमको क्षमा करें।...

ચારે ભદ્રના ખુણા પર (કૂટના બદલે) એકેક એમ આઠ શ્રૃગ ચડાવવાથી એકતાલીશ અડકનો સાક્ષાત્ **હેમવર્ણ** નામનો છઠ્ઠો પ્રાસાદ જાણવો હવે હેમકૂટ પ્રાસાદનુ સ્વરૂપ સાભળો ૧૮

चारों भद्रके कोनेपर (कूटके बदले) एकेक इस तरह आठ शृग चढाने से इग्यालिश अडकका साक्षात हेमवर्ण नामका छट्ठा प्रासाद जानना । अब हेमकूट प्रासाद का स्वरूप सुनो । १८

कर्णे श्रृङ्ग प्रदातव्यं तथा नवमालय उच्यते ।
कर्ण ते अंडक' प्रोक्त भद्रे श्रृङ्ग प्रदापयेत् ॥ १९ ॥
श्रृङ्ग संभावर श्चैव महानीलं च मिश्रकं ।
पुनः श्रृङ्गं तदा भद्रे भूधरो मिश्रकान्वितः ॥ २० ॥



सार्वधारादि केशरी नन्दिश मदिर

હેમવર્ણને રેખા પર એકેક શ્રૃગ ચડાવવાથી ૪૫ અડકનુ નવમાલ્ય એવુ **હેમકૂટ** શિખર સાતમુ જાણવુ રેખાયે એકેક અને ભદ્રે એકેક ઉરુશ્રૃગ ચડાવવાથી ૫૩ અડકનો એવો મિશ્રક **મહાનીલ** પ્રાસાદ આઠમો જાણવો ફરી વળી એક ઉરુશ્રૃગ ભદ્રે વધારવાથી ૫૭ અડકનો **ભુધર** મિશ્રક નવમો પ્રાસાદ જાણવો [2]

हेमवर्णकी हर रेखापर एकेक शृग चढानेसे ४१ अडकका नवमाल्य ऐसा हेमकूट शिखर सातवा जानना । रेखाके पर एकैक और भद्रपर एकेक उरुशृग चढानेमें ५३ अडकका महानील मिश्रक प्रासाद आठवाँ जानना । फिर एक उरुशृगको भद्र पर चढानेसे भूधर नामक मिश्रक प्रासाद नवमाँ जानना ।[2]

(૨) ઉપર કહેલા ૧ કેસરી ૨ સર્વતોભદ્ર ૩ મદિર ૪ શ્રીવત્સ અને વધુમા ૫ અમૃતોદ્ભવ—એમ પાચ પ્રાસાદ મૂળ અટ્ઠાઈતળ પર આ પાચ શિખર ચડી શકે તે પછીના પાચ હેમવર્ણથી રત્નકૂટ સુધીના પાચ પ્રાસાદના શિખરો અટ્ઠાઈ તળ પર ચડાવવાનુ ઘણુ મુશ્કેલ છે અગર અહી પાઠ ત્રુટક છે જો કે અમોએ પાચ સાત પ્રતો મેળવીને પ્રયાસ કરી

कर्णे शृङ्गं द्वितियं च रत्नकूटं प्रणष्टकम् ।
एकाशी अंडक चैव कर्णे द्वितिय केसरी ॥ २१ ॥

भुद्दर शिखरनी रेखाये एक वधु शृंग श्रीवत्स अने एक बीजुं पंचांडी केसरी कर्म चडाववाथी एकाशी शृंगनो पापनाशक एवो **रत्नकूट** नामनो प्रासाद दशमो जाणवो. ए रीते अढ्ढाई विभक्ति उपर दश भेद कह्या. २१.

भुदर शिखर की रेखा पर एक ज्यादा शृंग श्रीवत्स और एक दूसरा पंचांडी केसरी कर्म चढानेसे इक्याशी शृंगको पापनाशक ऐसा रत्नकूट नामका प्रासाद दशवाँ जानना । इस प्रकार अढ्ढाई विभक्तिके उपर दस भेद कहे । २१.

तथा च दशमीक्षेत्रं कर्णस्य पंचमांशकः ।
तस्यार्द्धं रथंकार्यं शेषं भद्रस्य विस्तरम् ॥ २२ ॥
भाग भागं च निष्कान्तं उर्ध्वमानं अतः शृणुः ।
कर्णे द्वयं कार्यं भद्र शृङ्गं च मेव च ॥ २३ ॥
मध्ये गवाक्ष प्रदातव्यं सर्वकामदा ।
भद्रे शृङ्ग प्रदातव्यं नंदशाली मनोहर ॥ २४ ॥

हवे दशार्धतळना प्रासादो कहे छे. प्रासादना क्षेत्रना दश भाग करवा. तेमां रेखा–कर्ण पांचमो भाग एटले बे बे भागनी करवी. एक भागनो प्रतिरथ अने बाकीना चार भागनुं भद्र पहोळुं जाणवुं. ते उपांगोना नीकाळा एकेक भागना राखवा. अने उपरना शिखरनुं मान सांभळो. २२.

अब दशाईतल के प्रासादोंके बारेमें कहते हैं । प्रासादके क्षेत्रके दस भाग करना । उसमें रेखा=कर्ण पाँचवा भाग अर्थात् दो दो भागकी करनी । एकेक भागका प्रतिरथ और बाकीके चार भागका भद्र चौडा जानना । इन उपांगों के नीकाले एकेक भागके रखना और ऊपरके शिखरका मान सुनो । २२.

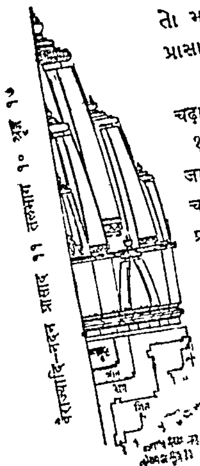
रेखाये बब्बे शृंग अने भद्रे एकेक उरुशृंग चडाववाथी ने भद्रे गोखं करवाथी तेर अंडकनो नामनो अग्यारमो **नंदन** प्रासाद सर्व कामनाने देनारो जाणवो.

जोयो छे. परंतु अमने मळती बधी प्रतोमां आवा सरखा ज पाछो मल्या छे तेथी जेवुं अमने मळ्युं तेवुं अहीं रजु करीये छीए.

(२) उपर कहे हुए १ केसरी २ सर्वतो भद्र ३ मंदिर ४ श्री वत्स और ज्यादा से ज्यादा ५ अमृतोद्भव-इस तरह पाँच प्रासाद तक अढ्ढाई तल पर ये पाँच शिखरों चढ सके उसके बादके पाँच हेमवर्णसे रत्नकूट तकके पाँच प्रासादके शिखरों अढ्ढाई तल पर चढनेका काम मुश्किल है, या तो यहाँ पाठ त्रुटक है । जो कि हमने पाँच सात प्रतों मिलाकर प्रयास किया है, परंतु सब प्रतोंमें ऐसे समान ही पाठों है इससे जैसा हमें मिला वैसा यहाँ रखते हैं ।

न दनशिખરમા જો એકના બદલે બબ્બે ઉરુશૃંગ ચડાવે તો મનોહર એવો સત્તર અ ડકનો બારમો **ન દશાલી** પ્રાસાદ જાણવો ૨૩-૨૪.

रेखाके पर दो दो शृ ग और भद्रके पर एक उरुश्रंग चढ़ानेसे औरभद्रपर गोख ,करनेसे तेरह अडकका नंदन ११वा नामका प्रासाद सर्व कामना का देनेवाला जानना । नदन शिखरमे जो एक के वदले दो दो उरुशृग चढ़ाया जाय तो मनोहर ऐसा सत्रह अडकका नदशाली प्रासाद बारवाँ जानना । २३-२४



र्यादि–नदन प्रासाद ११ तलमाग १०

रथे भृङ्गप्रदातव्यं उरुशृंग तयोपरि ।
मदिरख्यातं भृङ्गस्यात्पंचविंशतिः ॥२५॥

જેની પર ઉરુશૃંગ છે પઢરાએ એક શ્રૃગ મૂકવુ ત્યા ત્યારે તે પચ્ચીશ શ્રૃ ગનુ **મ દિર** શિખર તેરમુ જાણવુ ૨૫

प्रतिरथ के पर एक श्रृग रखना। जिसके पर उरुश्रृग है वहाँ तब उसे पच्चीस श्रृगका मदिर शिखर तेरहवाँ जानना । २५

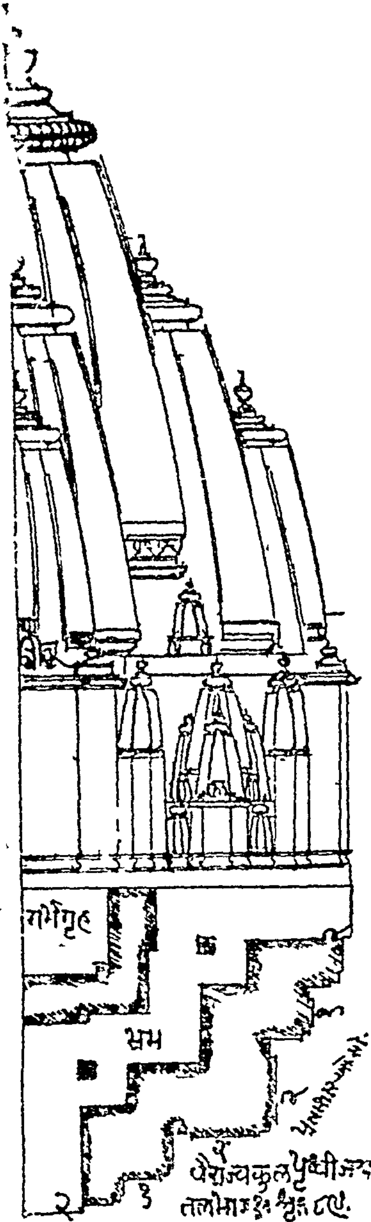
कर्णे केसरी सर्वे रथकूटं प्रदीयते ।
अमृतोद्भव नामाख्य वल्लभं सर्व देवता ॥२६॥

રેખાએ બે શ્રૃગ છે ત્યા એક પચાડી કેસરી કર્મ રેખાપર વધારે મૂકવુ ર. પઢના ૧૨ કૂટ ચડાવવાથી સર્વ દેવોને વલ્લભ એવો **અમૃતોદ્ભવ** નામનો (૪૫ શ્રૃગનો) ચૌદમો પ્રાસાદ થાય ૨૬

रेखाके पर दो श्रृग जहाँ है वहाँ एक पचाडी केसरी कर्म रेखापर ज्यादा रखना और पढ़रेपर कूट चढानेसे सर्व देवोंको वल्लभ ऐसा अमृतोद्भव नामका (४५ श्रृगका) चौदवाँ प्रासाद होता है। २६

रथे भृंगप्रदातव्य हेमकूट स उच्यते ।
मुखभद्रे श्रृंगमेकं कैलास सर्वकामदं ॥२७॥

પઢરે એક શ્રૃગ ચડાવવાથી (૫૩ શ્રૃગનુ) હેમકૂટ પ દરમુ શિખર થાય, અને જો ભદ્ર ઉપર બે ઉરશ્રૃગના બદલે ત્રણ ઉરુશ્રૃગ ચડાવીએ તો ૫૭ શ્રૃ ગનુ સોળમુ પૅાચ હેમન્તુંથનુ શિખર (૧૬) જાણવુ ૨૭.
મુશ્કેલ છે અગ



प्रथयुक्त वैराज्यकुल—पृथ्वीजय प्रासाद (१७) तलभाग १० शृंग ९७

पढ़रेपर एक श्रृंग चढानेसे (५३ श्रृंगका) हेमकूट पंदरवाँ शिखर होता है, और जो भद्र के पर दो उरुश्रृंग वदले तीन उरुश्रृंग चढायें तो ५७ श्रृंगका कैलास नामका शिखर (१६) जानना। २७.

कर्णे च नंदनं सर्वे रथे श्रृङ्गपरित्यजेत्।
उरुश्रृङ्गाष्ट कर्तव्यं पृथ्वीजयं च मुत्तमम् ॥२८॥

રેખાયે ચારે ખુણે એકેક તેર અંડકનું નંદન કર્મ ચઢાવવું અને પઢરે બે શ્રૃંગ છે તે એક તજવાથી અને ઉરુશ્રૃંગ આઠ કરવાથી **પૃથ્વીજય** નામનું ૯૭ શ્રૃંગ શિખર જાણવું. ૨૮.

रेखाके पर चारों कोनेमें एक एक तेरह अंडकका नंदनकर्म चढाना और पढरे पर दो श्रृंग है वह एक तजने से ओर उरुश्रृंग आठ करनेसे ९७ श्रृंगका पृथ्वीजय नामका १७ मा शिखर जानना। २८.

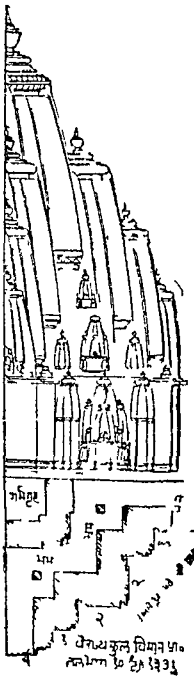
इंद्रनीलं च प्रासादे उरुश्रृङ्गानी द्वादश।
उरुश्रृंग परित्यज्यं रथेश्रृंग प्रदापयेत् ॥२९॥
महानीलं च विज्ञेयं सर्व मनोरथदायक।

પૃથ્વીજયના સ્થાને આઠને બદલે બાર ઉરુશ્રૃંગ ચડાવવાથી (૧૦૧ શ્રૃગનું) **ઈન્દ્રનીલ** નામનું અઢારમું શિખર થાય. ઇંદ્રનીલના સ્થાને ભદ્રનું એક ઉરુશ્રૃંગ તજીને પઢરાપર એકના બદલે બે શ્રૃંગ ચડાવવાથી ૧૦૫ શ્રૃંગનું **મહાનીલ** (૧૯) નામનું સર્વ પ્રકારના મનોરથને આપનારું શિખર જાણવું. ૨૯.

पृथ्वीजय के स्थानपर आठके वदले वारह उरुश्रृंग चढानेसे (१०१ श्रृंग) इंद्रनील नामका शिखर होता है। इन्द्रनील के स्थानपर भद्रका एक उरुश्रृंग तजकर पढरेपर एकके वदले दो श्रृंग चढानेसे १०५ श्रृंगका महानील (१९) सर्व प्रकारका मनोरथ देनेवाला शिखर जानना। २९.

उरुश्रृङ्गार्क शेषं च भूधर सुरवल्लभ ॥३०॥
केसरी सर्वतोभद्रं कर्णस्थाने प्रदापयेत्।
*** रथश्रृङ्गश्च संस्थाने विमानं च विचक्षणं रथश्रृङ्ग प्रयोजयेत् ॥३१॥**
उरुश्रृङ्गाष्ट कर्तव्या रत्नकोटि यथाविधि।

* પાઠાન્તર रथश्रृङ्ग संस्थाने विमानं त्त द्विचक्षणात् ॥३१॥ આ પાઠ ફેર છે. વિમાન શિખર ઉપજાવ્યા પછી રત્નકોટિ ઉપજે.



क्रमयुक्त वैराज्यकुल विमान प्रासाद (२१) तलभाग १० शृंग १४५

મહાનીલ શિખરના સ્થાને આઠને બદલે બાર ઉરુશ્રૃંગ ચડાવવાથી દેવોને દુર્લભ એવુ (૧૦૯ શ્રૃંગનુ) ભૂધર નામનુ વીશમુ શિખર જાણવુ ભૂધરના સ્થાને રેખાયે ૯ શ્રૃંગનુ સર્વતોભદ્ર કર્મ ચડાવવાથી ૨૧મુ **વિમાન** નામનુ ૧૪૫ શ્રૃંગનુ શિખર જાણવુ વિમાન શિખરના સ્થાને પઢરાપર એક શ્રૃંગ ચડાવવુ અને ભદ્રે આઠ ઉરુશ્રૃંગ કરવાથી (૧૪૯ શ્રૃંગનુ) (૨૨) **રત્નકોટિ** નામનુ શિખર જાણવુ ૩૦–૩૧

महानील शिखरके स्थानपर आठके बदले बारह उरुश्रृंग चढानेसे देवों को दुर्लभ ऐसा (१०९ श्रृंगका) (२०) भुधर नामका शिखर जानना। भूधर के स्थान पर रेखा के पर ९ श्रृंगका सर्वतोभद्र कर्म चढानेसे (२१) विमान नामका (१४५ श्रृंगका) शिखर जानना। विमान शिखरके स्थानपर पढरेपर एक श्रृंग चढाना और भद्रके पर आठ उरुश्रृंग करने से (१४९ श्रृंगका) (२२) रत्नकोटि नामका शिखर जानना। ३०–३१

तथा वैडूर्य प्रासादो उरुश्रृंगानि द्वादश ॥३२॥
भद्रे श्रृंग परित्यज्य रथे श्रृंग प्रदापयेत्।
पद्मराग च नामाख्यं प्रासादा सर्वकामदम् ॥३३॥

રત્ન કોટિ શિખરના સ્થાને બાર ઉરુશ્રૃંગ ચડાવે તો ૧૫૩ શ્રૃંગનુ (૨૩) **વૈડૂર્ય** નામનુ શિખર જાણવુ તે પછી જો ભદ્રનુ એક ઉરુશ્રૃંગ તજીને પઢરે એક શ્રૃંગ ચડાવે તો સર્વ કામનાને દેનારુ એવુ ૧૫૭ શ્રૃંગનુ ૨૪મુ **પદ્મરાગ** નામનુ શિખર થાય ૩૨–૩૩

रत्नकोटि शिखरके स्थानपर बारह उरुश्रृंग चढावे तो १५३ श्रृंगका २३वाँ वैडूर्य नामका शिखर जानना। उसके बाद जो भद्रका एक उरुश्रृंग तजकर पढरे पर एक श्रृंग चढावें तो सर्व कामना को देनेवाला ऐसा १५७ श्रृंगका २४वा पद्मराग नामका शिखर होता है। ३२–३३

भद्रेश्रृंग प्रदातव्यं वज्रकर्म मुमुक्षुका ।
मुकुटोज्वल प्रासादं उरुश्रृंगार्के भूषिते ॥ ३४ ॥
तन्वधा जायते प्राज्ञ आदि मध्या च सानकं ।

પદ્મરાગ શિખરને ભદ્રે શ્રૃંગ ચડાવી કુલ બાર ઉરુશ્રૃંગથી શોભતું શિખર (૨૫) વજ્ર કર્મના મુમુક્ષુને....વજ્રક નામનું (૧૬૧ શ્રૃંગનું) શિખર જાણવું તે રીતે....[४].

पद्मराग शिखरको भद्रपर एक श्रृग चढ़ाकर कुल बारह उरुश्रृङ्गसे शोभित शिखर (२५) वज्रकर्मके मुमुक्षुको...दुर्लभ ऐसे १६१ श्रृङ्गका बज्रक नामका शिखर जानना, इस तरह...[४].

[४]अष्टधा दशधा क्षेत्रं केशरी पंच विंशति ॥३५॥
तथा मृक्षके च ज्ञात्वा त्रिविधं च विशेषत् ।

વૈરાજ્ય કુળના કેશરાદિ પચ્ચીશ પ્રાસાદના શિખરો અઠ્ઠાઇ અને દશાઇ તળ ક્ષેત્રના કહ્યા. આવા પ્રાસાદો કરાવવાથી ત્રિવિધ ધર્મ અર્થને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે. ૩૫.

वैराज्यकुलके केशरादि पच्चीस प्रासाद के शिखरों अट्ठाई और दशाई तल क्षेत्रके कहे । ऐसे प्रासादों बनवाने से त्रिविध धर्म अर्थ और मोक्ष की प्राप्ति होती है । ३५.

(૪) વૈરાજ્યકુળના કેશરાદિ ૨૫ પ્રાસાદોનો પાઠમાં આપેલ ક્રમ અને શ્રૃગ સંખ્યા–

अट्ठाईतल विभक्ति   दशाईतल विभक्ति

	क्रम	प्रासाद	श्रृङ्ग		क्रम	प्रासाद	श्रृङ्ग		क्रम	प्रासाद	श्रृङ्ग
	१	केसरी	५		११	नन्दन	१३	*	१९	महानील	१०५
	२	सर्वतोभद्र	१३		१२	नन्दशाली	१७		२०	भूधर	१०९
*	३	मन्दिर	२५	*	१३	मन्दिर	२५		२१	विमान	१४५
	४	श्रीवत्स	२९	*	१४	अमृतोद्भव	४५	*	२२	रत्नकूट	१४९
*	५	अमृतोद्भव	३३	*	१५	हेमकूट	५३		२३	वैडूर्य	१५३
	६	हेमवर्ण	४१		१६	कैलास	५७		२४	पद्मराग	१५७
*	७	हेमकूट	४५		१७	पृथ्वीजय	९७		२५	वज्रक	१६१
*	८	महानील	५३	*	१८	इन्दनील	१०१				
*	९	भूधर	५७								
*	१०	रत्नकूट	८१								

અહીં આપેલા પચીસ પ્રાસાદોના શિખરો અઠ્ઠાઈતળ વિભક્તિના દશ ભેદ અને દશાઈ તળ વિભક્તિના પંદર ભેદ મળી કુલ પચીસ શિખરો કહ્યા છે. તે બેઉ વિભક્તિના પ્રાસાદના કૂલવાળા નામો દશાઈ અઠાઇમાં એક જ આવે છે. એ વિચિત્ર છે.

તેના શ્રૃંગની વિધિનાં ૧ કેશરાદિથી વધુમાં વધુ પાંચમા અમૃતોદ્દભવ સુધી શ્રૃગો અટ્ઠાઈતળ

शृङ्ग मिश्रधा न्यस्त (भद्रे) मिश्रक तिलकोत्तमम् ॥ ३६ ॥
कर्णे तिलक प्रदातव्या रथन्यस्तकोणमा।
शृङ्गमध्ये गत शृङ्ग तन्मध्ये शिखरं भवेत ॥ ३७ ॥
(इति) मिश्रक सर्वतोभद्रं कर्णे तिलक द्वितीयकम्।

ભાવાર્થ—શૃંગ મિશ્રક-૩૪૮ અને ભદ્રે મિ તને તિલક કર્ણે-કોણાયે

પરંતુ શિલ્પીઓ પોતાની બુદ્ધિથી ... કરતા થયા પરંતુ પાછળના ૯ થી ૧૦ સુધીના પ્રકાર શિખરના શૃંગ ... અન્ય ગ્રંથોની સાથે ... પ્રાસાદના બીજા કોઈ પ્રમાણ ... પાઠો કે નામ પણ નથી ... પાછળ યથાનિયમ લાગે ... અમુક પાઠોમાં ... શુદ્ધ ... સંશોધન કરી ... પ્રયાસ કર્યો છે

केशरी ... केसरादि ... पच्चीस पाठ दिये हुए हैं और उनकी ...—(ऊपर देखिये।)

यहाँ दिये हुए प्रासाद केसरादि ...-अष्टादश विभक्तिके नव भेद और ... विभक्तिके पन्द्रह भेद मिलकर कुल पच्चीस ... कहे हुए हैं। ये दोनों विभक्ति प्रासादके ... एक ही जाते हैं।

इसमें ... विधि १ केसरादि ... ज्यादा ... अष्टोत्तर ... पर शिल्पीओं स्वबुद्धि ... परंतु पीछेके ९ से १० ... बहुत मुश्किल है। ... दूसरे किसी ग्रंथमें इनसे मिलते जुलते पाठों का ज्ञान नहीं रहा है। संशोधन के पीछे यथाशक्ति ... किया है। जो कि अशुद्ध पाठोंमें ... हो वहाँ उनको अबाधित रखकर संशोधन पर ... का प्रयास किया है।

(૫) અહીં શ્લોક ૩૬ થી મિશ્રક ૩૪...દિ જાતના પ્રાસાદના હોય તેમ જણાય છે પરંતુ અપરાજિત સૂત્ર ૧૬૮મા તે પાઠો આપેલ છે પરંતુ અહીં પાઠોમાં ઘણી અશુદ્ધિ હોઈ બંધ બેસતું નથી

प्रकृत वैराज्यकुल पञ्चक प्रासाद (२५) तलभाग १० भूम १६१

(५) यहाँ श्लोक ३६ से मिश्रक सुतारादि जातिके प्रासादके हो ऐसा दिखता है। परंतु अपराजित सूत्र १६८ में ये पाठ दिये हैं, लेकिन यहाँ पाठमें बहुत अशुद्धि होनेसे मिलता जुलता नहीं है।

તિલક ચડાવવું અને રથ–પઢરા પર ઉત્તમ એવું રૂચક ચડાવવું. શ્રૃંગની ઉપર શ્રૃગ અને તે ઉપર શિખર.......મિશ્રક સર્વતો ભદ્રને કર્ણ રેખાયે બીજું તિલક ચડાવવું. ૩૬–૩૭.

भावार्थ—श्रृंग मिश्रक–रूचक और भद्र पर मिश्रको तिलक......कर्णरेखा के पर तिलक चढाना और रथ–पढरेपर उत्तम ऐसा सूचक चढाना। श्रृंग के उपर श्रृंग और उसके उपर शिखर.........मिश्रक सर्वतोभद्र को कर्णरेखा पर दूसरा तिलक चढाना। ३६–३७.

कर्णे तिलकं मेकं श्री वत्सं च तथोपरि? ॥३८॥
माल्यातकं च कर्तव्यं ऊरुश्रृङ्गे विभूषितं।
केसरी मिश्रकं विद्या तिलकः श्रृङ्ग समाकुलम् ॥३९॥
तथा च सर्व क्षेत्राणां मिश्रकं सर्व कामदं।
केशराद्यं प्रयोज्यते यावत्कैलासमिश्रकं ॥४०॥

રેખાયે બીજું તિલક શ્રી વત્સ ઉપર ચડાવવું........ઉરુશ્રૃંગથી શોભતો માલ્યાતલ.......પ્રાસાદ જાણવો. મિશ્રક કેસરી પ્રાસાદો તિલક અને શ્રૃંગો ચડાવીને પોતાના સર્વ ક્ષેત્રે (અઠ્ઠાઈ દશાઈ) સર્વ કામનાને દેનારા એવા મિશ્રક કેસરાદિથી મિશ્રક કૈલાસ સુધીના (પચ્ચીશ પ્રાસાદો) જાણવા. ૪૦.

रेखाके पर दूसरा तिलक श्रीवत्स उपर चढाना।......उरुश्रृंग से शोभता माल्यातल...प्रासाद जानना। मिश्रक केसरी प्रासादों तिलक और श्रृंगों चढाकर अपने सर्व क्षेत्रपर (अठ्ठाई दशाई) सर्व कामनाको देनेवाले ऐसे मिश्रक केसरादि से मिश्रक कैलासतक के (पच्चीस प्रासादों) जानना। ४०.

इति श्री विश्वकर्मा कृतायां क्षीरार्णवे नारद पृच्छते केसरादि वैराज्यकूल मिश्रक प्रासादाधिकारे शताग्रेएकोविंशतेऽध्याय ॥११९॥ क्रमांक अ० २१

ઈતિશ્રી વિશ્વકર્મા કૃતાયા ક્ષીરાર્ણવે નારદે પૂછેલ કેસરાદિ વૈરાજ્ય કુલ મિશ્રક પ્રાસાદનો અધિકાર શિલ્પ વિશારદ પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરાએ રચેલી ગુર્જર ભાષામાં સુપ્રભા નામની ટીકાનો એક સો ઓગણીસમો અધ્યાય ૧૧૯. ક્રમાંક અ૦ ૨૧

इति श्री विश्वकर्माकृते क्षीरार्णवे में नारदपृच्छा में वैराज्यकूल मिश्रक प्रासादाधिकार शिल्प विशारद प्रभाशंकर ओघडभाई की रची हुई भाषामें सुप्रभा नामकी भाषा टीकाका एकसो उन्नीसवाँ अध्याय ११९ क्रमांक अध्याय २१

अथ चातुर्मुख प्रासाद स्वरुप लक्षणम्

क्षीरार्णव अ० १२० क्रमांक २२

श्री नारद उवाच—

स्वर्गे देवलोके च मघवन्स्थानमुत्तमम् ।
अन्यच्च किं विशिष्टं स्यात् कथय मम साम्प्रतम् ॥ १ ॥
यावत् सप्तपातालं ब्रह्मांड सप्तसंख्यया ।
चतुर्मुखो हि प्रासादो कथय परमेश्वर ॥ २ ॥

શ્રી નારદજી કહે છે જેમ સ્વર્ગમા દેવલોક વિશે ઇંદ્રનુ સ્થાન ઉત્તમ છે તેમ બીજુ શુ ઉત્તમ છે તે મને હમણા કહો. સાત પાતાળ અને સાત બ્રહ્માંડ એ ચૌદ લોકમા એવુ ચતુર્મુખ પ્રાસાદનુ વર્ણન હે પરમેશ્વર, મને કહો ૧-૨

श्री नारदजी कहते हैं–जिस तरह स्वर्गमे देवलोकमे इन्द्रका स्थान उत्तम है इस तरह दूसरा क्या उत्तम है, वह मुझे अब कहो । सात पाताल और सात ब्रह्माड इन चौदह लोकमे ऐसे चतुर्मुख प्रासादका वर्णन हे परमेश्वर मुझे कहो । १–२

विश्वकर्मोवाच—

क्षीरार्णवे समुत्पन्नाः प्रासादाश्च अनेकधा ।
तन्मध्ये श्रेष्ठप्रासादः चैतुर्मुखः सुशोभनः ॥ ३ ॥

શ્રી વિશ્વકર્મા કહે છે ક્ષીરાર્ણવમા અનેક પ્રકારના પ્રાસાદો ઉત્પન્ન થયેલા છે તેમા સર્વોત્તમ એવો શ્રેષ્ઠ શ્રેણીનો ચતુર્મુખ પ્રાસાદ સુંદર શોભનીક છે ૩

श्री विश्वकर्मा कहते हैं–क्षीरार्णवमे अनेक प्रकारके प्रासादों उत्पन्न हुए हैं । उनमे सवोत्तम ऐसा श्रेष्ठ श्रेणीका चतुर्मुख प्रासाद सुंदर शोभनीक है । ३

---

(૧) આ અધ્યાય સં ૧૭૬૭ આસો શુક્લ ૧૫ ભોમવારની પ્રત પરથી ઉતારેલ છે આજ અધ્યાય વૃક્ષાર્ણવમા સંપૂર્ણ છે જ્યારે ક્ષીરાર્ણવમા શ્લોક ૯૨ સુધીનો અપૂર્ણ ગુજરાત સૌરાષ્ટ્રની પ્રતોમા મળે છે શ્લોક ૪ થી ૧૦ સુધીનો અનુવાદ અમારી મતિ પ્રમાણે બંધ બેસતો કરવા પ્રયત્ન કર્યો છે શુદ્ધિ પ્રાપ્ત થયેલી અમારી કોઈ ક્ષતિ હશે તો તે સુધારીશુ અગર કોઈ વિદ્વાન અમારુ લક્ષ્ય દોરશે તો અમે આભારી થઈશુ

(१) ईस अध्यायको सं १७६७ आसो शुक्ल १५ भोमवारकी प्रत परसे उतारा है। वृक्षार्णवमें यही अध्याय संपूर्ण है और क्षीरार्णव श्लोक ९२ तकका अपूर्ण गुजरात सौराष्ट्रकी प्रतोंमें मिलता है। श्लोक ४ से १० तकका अनुवाद हमारी मतिके अनुसार योग्य रूपमें लागु करनेका प्रयत्न किया है। शुद्धि प्राप्त होके हमारी कोई क्षति होगी तो उसे हम सुधारेंगे। या कोई विद्वान हमारा लक्ष्य खिंचेगा तो हम उसके ऋणी बनगे।

चतुरस्त्रीकृते क्षेत्रे सर्वक्षेत्रास्यमध्यतः ।
निर्गमो वेदिवैर्युक्त त्रयोविंशति विस्तरे ॥ ४ ॥
आयामे षट् विंशति निरंधारं च सिद्धयति ।
शरंध्रे नवकोष्टानि ब्रह्मस्थानं विचक्षणः ॥ ५ ॥
पंचमं कोष्टकं ज्येष्ट सार्द्धत्रयं च मध्यमम् ।
त्रिपदं कन्यसं वक्षे किंचिदाऽयामते गृहे ॥ ६ ॥
षड् चत्वारिंशत्कोष्ठ उत्तमोत्तमं जायते ।
कोष्टं तथैव चत्वारी जायते स्थान मानकम् ॥ ७ ॥
दशपंच हस्त मध्ये शरंध्रे नव कोष्ठके ।
षोडशैव यदा हस्ते कर्णांते नव कोष्टभिः ॥ ८ ॥
तस्योर्ध्वे षट् त्रिंशान्तं शरंध्रे पंचविंशतिः ।
कर्णात्पंचविंशत्या शतार्धं हस्त मानयोः ॥ ९ ॥
तथा च नवकोष्टेन ब्रह्मस्थानं प्रजायते ।

ભાવાર્થ—પ્રાસાદના ચોરસ ક્ષેત્રના સર્વની મધ્યમાં નીકળતી વેદી સાથે ત્રેવીશ પદ પહોળાઇના કરવા. લંબાઇમાં છત્રીશ પદ નિરંધાર પ્રાસાદના નવ કોઠાનો મૂળ $\frac{\text{શરંધ્ર}}{\text{ગર્ભગૃહ}}$ બ્રહ્મસ્થાન સાથે વિચક્ષણ શિલ્પીએ કરવા. તેમાં પાંચ કોઠા જ્યેષ્ઠમાન–સાડાત્રણ કોઠા મધ્યમાન અને ત્રણ કોઠા–કનિષ્ઠમાન કંઇક લાંબા (ગર્ભગૃહ) કરવા (૬) છેંતાલીશ પદના ગૃહમાં ઉત્તમોત્તમ સ્થાન માન પ્રમાણે ચાર કોઠા કરવા. પંદર હાથના ગૃહમાં શરંધ્રં (   ) નવ કોઠાનો–સોળ હાથ સુધીમાં પણ નવ કોઠાનો શરંધ્ર (   ) કરવો. તે પર છત્રીશ સુધીમાં શરંધ્રં (   ) પચ્ચીશ પદના કરવા. તે પચાસ હાથ સુધીના ને કર્ણાંત પંચવિશ સુધી બ્રહ્મ સ્થાનમાં નવ કોઠા કરવા.

भावार्थ—प्रासादके चोरस क्षेत्रके सबकी मध्यमें नीकलती वेदीके साथ तेईश भाग चौडाईके करना। लम्बाईमें छत्तीस पद निरंधार प्रासादके नौ कोठेका मूल $\frac{\text{शरंध्र}}{\text{गर्भगृह}}$ ब्रह्मस्थानके साथ विचक्षण शिल्पिको करना। उसमें पाँच कोठे जेष्ठमान–साढेतीन कोठे मध्यमान और तीन कोठे कनिष्ठमान कुछ लंम्बा (गर्भगृह) करना। (६) छ्यालीश पदके गृहमें उत्तमोत्तम स्थानमान के अनुसार चार कोठे करना। पंद्रह हाथके गृहमें शरंध्रं (   ) नौ कोठेका सोलह हाथ तकमें भी

नौ कोठेका शरध्र (~~) करना । उसके पर छत्तीस तकमे शरध्र ( ) पच्चीश पदके करना । उस पच्चास हाथ तकने को कर्णात पचनिश तक ब्रह्म स्थानमे नौ कोठे करना ।

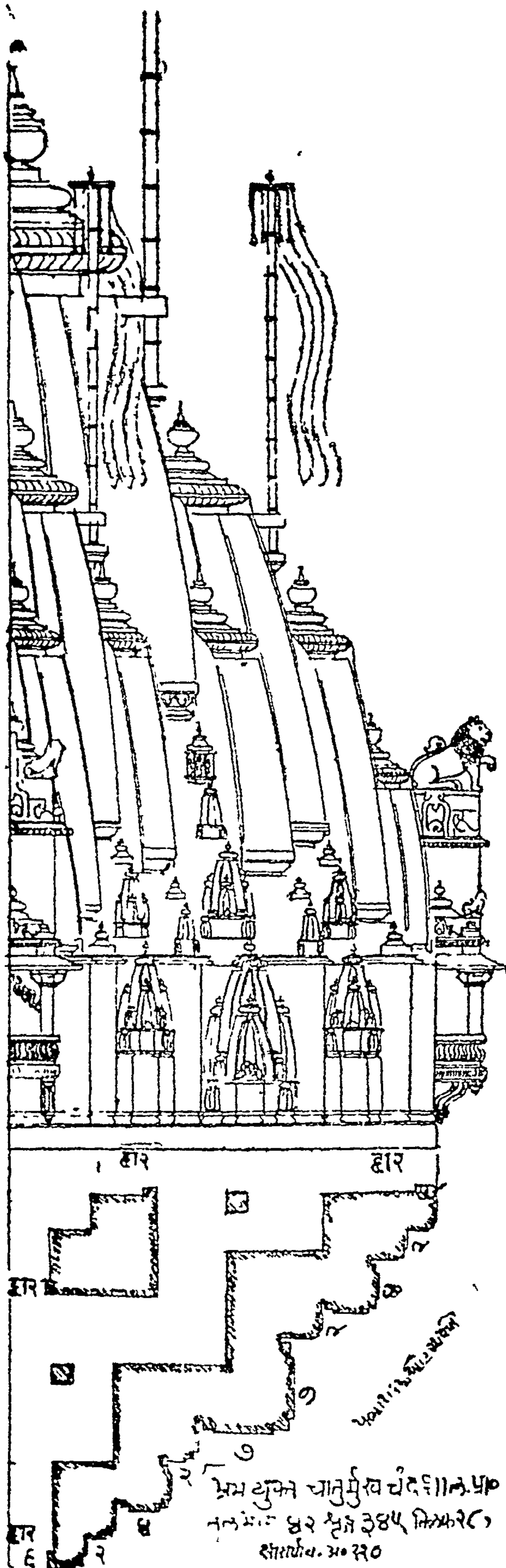
द्विचत्वारशदतक्षेत्रे सप्तधाकर्ण विस्तरे ॥ १० ॥
द्विपदं समसूत्रेण कर्णिका सर्वकामदा ।
अनुगश्चतुरो भागे निर्गमं च समं भवेत् ॥ ११ ॥
नन्दी भागद्वयं कार्या समनिष्कांगमेव च ।
शेपभद्र विस्तार स्त्रय निष्कांशं वर्त्तये ॥ १२ ॥

મહા ચાતુર્મુખ પ્રાસાદના ક્ષેત્રના બેતાળીશ ભાગ કરવા તેમા રેખા સાત ભાગની બે ભાગની કર્ણિકા સમદલ-અનુગ (પ્રતિરથ) ચાર ભાગનો સમદલ, નદી બે ભાગની સમદલ નીકળતી, બાકીનુ આખુ ભદ્ર (બાર ભાગ પહોળુ) અને ત્રણ ભાગ નીકળતુ કરવુ ૧૦-૧૧-૧૨

महा चातुर्मुख प्रासादके क्षेत्रके बयालीश भाग करना । उसमे रेखा सात भागकी. दो भागकी कर्णिका समदल, अनुग (प्रतिरथ चार भागका समदल नीकलती, बाकीका पूरा भद्र (बारह भाग चोडा) और तीन भाग नीकलता करना । १०-११-१२.

तथा पर्णं भ्रमं तेन पदं पच दशस्तथा ।
नन्दन स्थापयेत्कर्णे सर्वतोभद्र चानुगे ॥ १३ ॥
नदिके केसरी देयं भद्रे द्वार च धीमताम् ।
गवाक्षे परिवेष्टितं इलिका तौरणैर्युतम् ॥ १४ ॥
अनुगे दापयेत्कर्ण नन्दयो च उत्तमोपरि ।
तिलक पल्लवी त्वाङ्गं उरुप्रत्याङ्ग भूपणम् ॥ १५ ॥
कर्णे केसरीं चैव तिलकं रथिकोपरि ।
मंजरी मूलरेखा च च पडम् (?) शृङ्गभूपितं ॥ १६ ॥
पंचचत्वारिंशत्त्रया उरु शृङ्गानि द्वादश ।
प्रत्याङ्गस्तु भवेदष्टौ तिलके सर्वदापयेत् ॥ १७ ॥

ભ્રમ ભાગ પાચનો અને (બે ઓસાર) દશ ભાગના (અને મધ્યનો સ્તૂપ-લિંગ-બાવીશ ભાગના તેના ઓસાર પાચ પાચ ભાગના) જાણવા રેખાયે



भ्रमयुक्त चातुर्मुख चंद्रशाल प्रासाद भाग ४२ श्रृंग ३४५ तिलक २८

તેર અંડકનું નંદન કર્મ ચડાવવું. અનુગ-પઢરે નવ અંડકનું સર્વતોભદ્ર કર્મ ચડાવવું. રેખા પાસેની નંદી પર પાંચ અંડકનું કેસરી કર્મ ચડાવવું અને બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ ચારે ભદ્રમાં દ્વાર મુકવા. તે પર ચારે તરફ ગવાક્ષ-ગોખ, ઝરુખા અને ઇલીકા-તોરણાદિથી શુભોભિત ભદ્ર કરવું. બીજા થરમાં અનુગ પઢરે રેખાની જેમ તેર અંડકનું નંદન કર્મ (અને ૯ અંડકનું સર્વતોભદ્ર કર્મ) ચડાવવાં. ભદ્ર પાસેની નંદી પર એક તિલક ચડાવવું. (રેખા પાસેની નંદી પર) પ્રત્યાંગ ચડાવી શુભોભિત કરવું. રેખાયે ત્રીજું પાંચ અંડકનું ચડાવવું. પઢરા પર (બલકૂટ) તિલક ચડાવવું અને મૂળ રેખા પાયચા નીચે કૂટ યુક્ત મંજરી ચડાવવું અને બાર ઉરુશ્રૃંગ અને આઠ પ્રત્યાંગ ચડાવી કુલ ત્રણસો પીસ્તાળીશ અંડકનો પ્રાસાદ જાણવો. અને તિલક (૨૮) સર્વ સ્થાને ચડાવવાં.

भ्रम भाग पाँचका और (दो ओसार) दश भागके (और मध्यका स्तूप-लिंग बाईस भागके, उनके ओसार पाँच पाँच भागके) जानना। रेखा पर तेरह अंडक का नंदन कर्म चढ़ाना। अनुग-पढरा नौ अंडका सर्वतोभद्र कर्म चढाना। रेखाके पासकी नंदी पर पाँच अंडका केसरी कर्म चढ़ाना। और

बुद्धिमान शिल्पीको चारो भद्रमे द्वार रखना। उस पर चारों ओर गवाक्ष-गोख, झरोखा और इलिका तोरणादिसे शुशोभित भद्र करना। दूसरा थरमें अनुग=प्रतिरथ पर रेखाकी तरह तेरह अडकका नंदन कर्म (और नौ अडकका सर्वतोभद्र कर्म) चढ़ाना। भद्रके पासकी नदी पर एक तिलक चढाना (रेखाके पासकी नदी पर) प्रत्यग चढ़ाकर सुशोभित करना। रेखा पर तीसरा पाँच अडकका चढाना। पढरे पर (बलकूट) तिलक चढाना। और मूल रेखा पाचवेंके नीचे कूटयुक्त मजरी चढाना। और बारह उरुश्रृङ्ग और आठ प्रत्यग चढाकर कुल तीनसो पैतालीश अडकका प्रासाद जानना। और तिलक (२८) सर्व स्थानो पर चडाना। १३-१४-१५-१६-१७

अर्चाश्च वीतरागाणां तिलकं त्रिभुवनस्य च।
एभि स्तगैर्युक्तश्चंद्रशालं चतुर्मुखे ॥१८॥

इति चद्रशाल चातुर्मुख प्रासाद भाग-४२, अडक ३४५

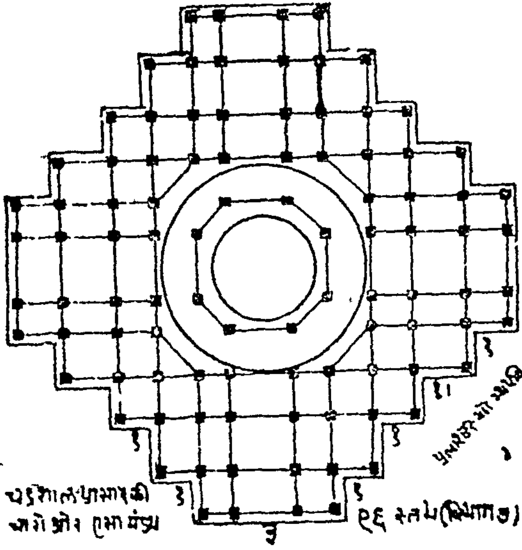
વીતરાગ જિન ભગવાનની મૂર્તિ જે ત્રણ ભુવનમા તિલક સમાન છે તેનો ચદ્રશાલ નામનો ચતુર્મુખ પ્રાસાદ તે જાણવો ઇતિ ચદ્રશાલ પ્રાસાદ-ભાગ-૪૨, શ્રૃઙ્ગ ૩૪૫ અને તિલક + ૨૮

वीतराग जिन भगवानकी मूर्ति जो तीन भुवनमे तिलक समान है, उसका चँद्रशाल नामका चतुर्मुख प्रासाद जानना। इति चँद्रशाल, प्रासाद भाग-४२ श्रृग ३४५ और तिलक २८

तथा पीठं च विस्तारं चत्वारो मंडपैर्युतै।
पणमेकं भवेत्कर्ण प्रतिकर्ण स्तथैव च ॥१९॥
कर्ण च सपाद निष्क्रांत अनुगे भद्रे मंडपा।
भद्रं त्रिणि पणं प्राज्ञ पणमेक तु निर्गमम् ॥२०॥
सिंहद्वार विशेपेण अनुगे सह सयुतम्।
पणपचैव विस्तारं यावत् त्रयमंडपा ॥२१॥
चत्वारि च पुनर्वेदा स्त्रीणि त्रीणि पदा नपि।
अष्टाविंशं सिंद्वद्वारे अष्टस्थान अतः श्रृणु ॥२२॥

પ્રાસાદને ચારે તરફ મડપો પીઠ સહિત વિસ્તારથી કરવા તેને એક ભાગ રેખા પ્રતિરથ એક ભાગ તે રેખાથી સવાયો નીકળતો અનુગ (પરોઢ) અને ભદ્રનો રાખવો ભદ્ર ત્રણ ભાગનુ ચતુર શિલ્પીએ રાખવુ નીકાળો એક ભાગ

તેનું (નીચે) બહારનું સિંહ દ્વારની (ચતુષ્કિકા) અનુગ પઢરા સહિતના વિસ્તાર જેટલું રાખવું. ત્રણે મંડપના પાંચ પદ જેટલું રાખવું.



चंद्रशाल प्रासादकी चारो और ऐसा
मंडप–९६–९६ स्तंभोंका करना

ચાર ભાગ રેખા, ચાર ભાગ અનુગ, ત્રણ ભાગ પ્રતિરથ અને ત્રણ ભાગ (અર્ધ-ભદ્ર) એમ બેઉ બાજુના મળી એટલે અઠ્ઠાવીશ ભાગ સિંહ દ્વાર સાથે મંડપ કરવા. આઠ સ્થાનનું હવે સાંભળો. ૧૯–૨૦–૨૧–૨૨.

प्रासादकी चारों तरफ मंडपों पीठ सहित विस्तारसे करना। उसको एक भाग रेखा प्रतिरथ एक भाग उस रेखासे सवागुना नीकलता अनुग (पढरा) और भद्रका रखना। भद्र तीन भागका चतुर शिल्पीको रखना। नीकाला एक भाग–उसका (नीचे) बारहका सिंह द्वारकी (चतुष्किका) अनुग पढरा सहितके विस्तार जितना रखना। तीन मंडपके पाँच पदके जितना रखना।

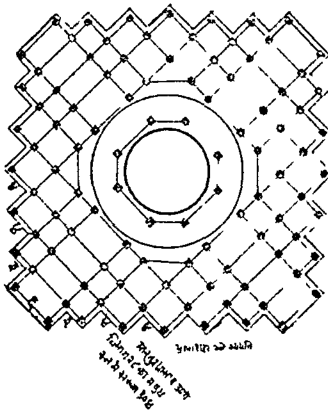
चार भाग रेखा, चार भाग अनुग, तीन भाग प्रतिरथ और तीन भाग (अर्ध भद्र) इस तरह दोनों बाजुके मिलकर अर्थात् अट्ठाईस भाग सिंह द्वारके साथ मंडप करना। आठ स्थानका अब सुनो। १९–२०–२१–२२.

त्रीणि च त्रीणि चाष्टस्थाने चतुर्विंशति धीमता।
चंद्रीआणाश्च सिध्यन्ति द्विपंचाशद् मनोहरा॥ २३॥

रथयुक्ताः च प्रासादा चन्द्रिआण सनिर्मिता।
चंद्रवक्त्रस्य नामानि विभागं शिखर सह॥ २४॥

एतःक्षेत्रान मध्यं च चतुःकर्ण वर्जिताम्।
बावनो जिन अर्चाणी उक्ता क्षीरार्णवे शुभे॥ २५॥

આઠ સ્થાને ત્રણ ત્રણ (   ) એમ ચોવીશ ચંદ્રીયાણ (ચૌમુખ મંદિર સહિત અને મનોહર એવા બાવન જિનાલય ચંદ્રીઆણ પ્રાસાદના રથભદ્રાદિ યુક્તનું નિર્મિત કરવું. શિખરના વિભાગ સાથે ચંદ્રવક્ત્ર નામ જાણવું. એવા ક્ષેત્રના ચારે કર્ણ ખુણા વગરના (ચાર ખુણે ખાંચા પાડેલ) ચોરસ બાવન જિનમૂર્તિના બાવન જિનાલય ક્ષીરાર્ણવમાં શુભ કહ્યો છે. ૨૩–૨૪–૨૫.



मानतुङ्ग प्रासादके आगे
२८ विभागका मडप स्तभ १०४

आठ स्थानो पर तीन तीन ( ) इस तरह चोवीश चँद्री-आण (प्रमुख मदिर महित) और मनोहर ऐसे बावन जिनालय चँद्रीआण प्रासादके रथ भद्रादि युक्तका निमित करना। शिखरके विभागके साथ चँद्रनक नाम जानना। ऐसे क्षेत्रकी मध्यमे चार कर्ण कोने विनाका चोरस बावन जिनमूर्तिका बावन जिनालय क्षीरार्णवमे शुभ कहा है। २३-२४-२५

बावनासेन भद्रा च बासठि
त्रीणि कर्णिका।
महामान जगतीना विचित्रै
विधि भूषणै ॥२६॥

तथाश्च सिंह द्वारेण बभूव पक्षे नवस्तथा।
ते नालग्रे त्रयो दश चत्वारिंशन्मुखायते ॥ २७॥
सिंहद्वारे पराङ्गमुखे चतु'स्थाने शुभं भवेत्।
अशीति चतुराग्रेण चेन्द्रियाणा च सिध्यति ॥ २८॥
सिंहद्वारे विचारेण ब्रह्मस्थाने अतः शृणु।
प्रासादे नवकोष्ठेन पणमेक प्रदक्षिणे ॥ २९॥
श्रीमंवृष पण: पंच मेघनादे तु पंचके।
त्रिके नालित्परिश्चैव नववेदाभद्राग्रत ॥ ३०॥

ભાવાર્થ—બાવન જિનાયતના ભદ્ર ભાગ ત્રણ કર્ણિકા વિચિત્ર એવી જગતી વિધિથી શોભતી કરવી (૨૬) સિહ દ્વારની બેઉ બાજુ નવ નાલ (મડપની) આગળ પહોળા તેર ભાગ અને ચાલીશ ભાગ ઉડા કરવો સિહ દ્વારની પાછળ મુખે પશ્ચિમે અને ચારે સ્થાનમા શુભ (એવા મહાધર કરવા ?) ફરતા ચોરાશી જિનાયતનની દેવ કુલિકાઓ સિદ્ધ કરવી સિહ દ્વારનો વિચાર કરીને શુભ એવુ મધ્યનુ બ્રહ્મ સ્થાનનુ સાભળો પ્રાસાદના નવ કોઠાને એક ભાગ પ્રદક્ષિણાનો રાખવો તેવા પાચ વર્ણા (?) શ્રીમવૃષ

(ચોમુખ!) થાય તે પાંચને મેઘનાદ મંડપો કરવા. તેના નીચે સિંહ દ્વારે નાલિ (મંડપ) તેના ઉપર પાંચ કે નવ પદ ભદ્રનો આગળ (મંડપ)... ૨૬-૨૭-૨૮-૨૯-૩૦

भावार्थ—बावन जिनायतनके भद्र भाग......तीन कर्णिका......विचित्र ऐसी जगती विधिसे शोभती करना। (२६) सिंह द्वारकी दोनों बाजु नौ...... ताल (मंडपकी) आगे गहरा तेरह भाग और चालीश भाग चौड़ा......करना। सिंह द्वारकी पीछे मुख पर पश्चिममें और चारों स्थानोंमें शुभ......(ऐसे महाधर करना!) फिरते चौरासी जिनायनकी देवकुलिकाओं सिद्ध करना। सिंह द्वारका विचार कर शुभ ऐसा मध्यके ब्रह्मस्थानके बारेमें सुनो। प्रासादके नौ कोठेको एक भाग प्रदक्षिणाका रखना। वैसे पाँच वर्ण (?) श्रीमघृष (चौमुख!) होवे उन पाँचको मेघनाद मंडपों करना। उनके नीचे सिंह द्वार पर नालि (मंडप) उसके पर पंच या नौ भद्रका आगे (मंडप)...२६-२७-२८-२९-३०.

ब्रह्मस्थाने त्रय: पक्षे निर्गमं च विशेषतः।
त्रयो मंडपा न मध्ये पण द्वयं प्रदापयेत् ॥३१॥
मंडपै र्नालिकैर्वक्ष्ये पणमेकेन बाह्यतः।
निर्गमो वेदिका बाह्ये अग्र च योणि वेदिका ॥३२॥
तेषां प्रस्तार भावेन सर्वालंकार संयुता।
... ...नाम मानतुङ्गना ॥३३॥

ભાવાર્થ—બ્રહ્મ સ્થાન (મધ્ય ચોમુખ!) ના ત્રણે બાજુ નિકાળો વિશેષે કરીને રાખવો. ત્રણે તરફના મંડપના મધ્યમાં બબ્બે પદ ભાગનું (અંતર!) રાખવું. નાલિમંડપ ઉપર કહુ છું એક પદ બહાર બાજુમાં અને ચાર પદ આગળ નીકળતા નીચે રાખવા. બાકી અંદર જિનાયતનને ફરતો પ્રસ્તાર ચોકીયાળા કરવાથી તે સર્વ અલંકારયુક્ત એવો માનતુઙ્ગ નામનો ચતુર્મુખ પ્રાસાદ જાણવો. ૩૧-૩૨-૩૩

ब्रह्मस्थान (मध्य चौमुख) के तीनों बाजु निकाला विशेषकर रखना। तीनों तरफके मंडपके मध्यमें दो दो पद भागका (अंतर) रखना। नालि मंडप उपर कहता हूँ। एक पद बाहर बाजुमें और चार पद आगे नीकलतेके नीचे रखना। बाकी अंदर जिनायतनके चारों और प्रस्तार-चौकीयाले करनेसे उसे सर्व अलंकारसे युक्त ऐसा मानतुङ्ग नामका चतुर्मुख प्रासाद जानना। ३१-३२-३३.

सौभाग्यानि प्रवक्ष्यामि तथा किरणावली शुभा।
प्रासादं ब्रह्मसत्रेश शरध्रं नव कोष्टके ॥३४॥

त्रिसंघाट समाकीर्णो कवली रथसूत्रके।
चतुर्मुखमता चंद्रो सभ्रमा वर्जितागता ॥३५॥
गवालुका छादनं रम्यं गर्भमंडपस्यान्तरे।

'ભાવાર્થ—હવે હુ તમને સૌભાગ્યાનિ અને શુભ એવી કિરણાવલી કહુ છુ પ્રાસાદના બ્રહ્મસૂત્રના શરભ્ર નવ કોઠા કરવા રથ (પ્રતિરથ)ના સૂત્રે કોળી ત્રણ પદ જોડતી કરવી ચતુર્મુખના ભ્રમવાળા કે ભ્રમ વગરના પ્રાસાદને જોડતો ગર્ભ મંડપને ગવાલુકાના થરોથી રમ્ય એવો છાજેલ કરવો ૩૪-૩૫

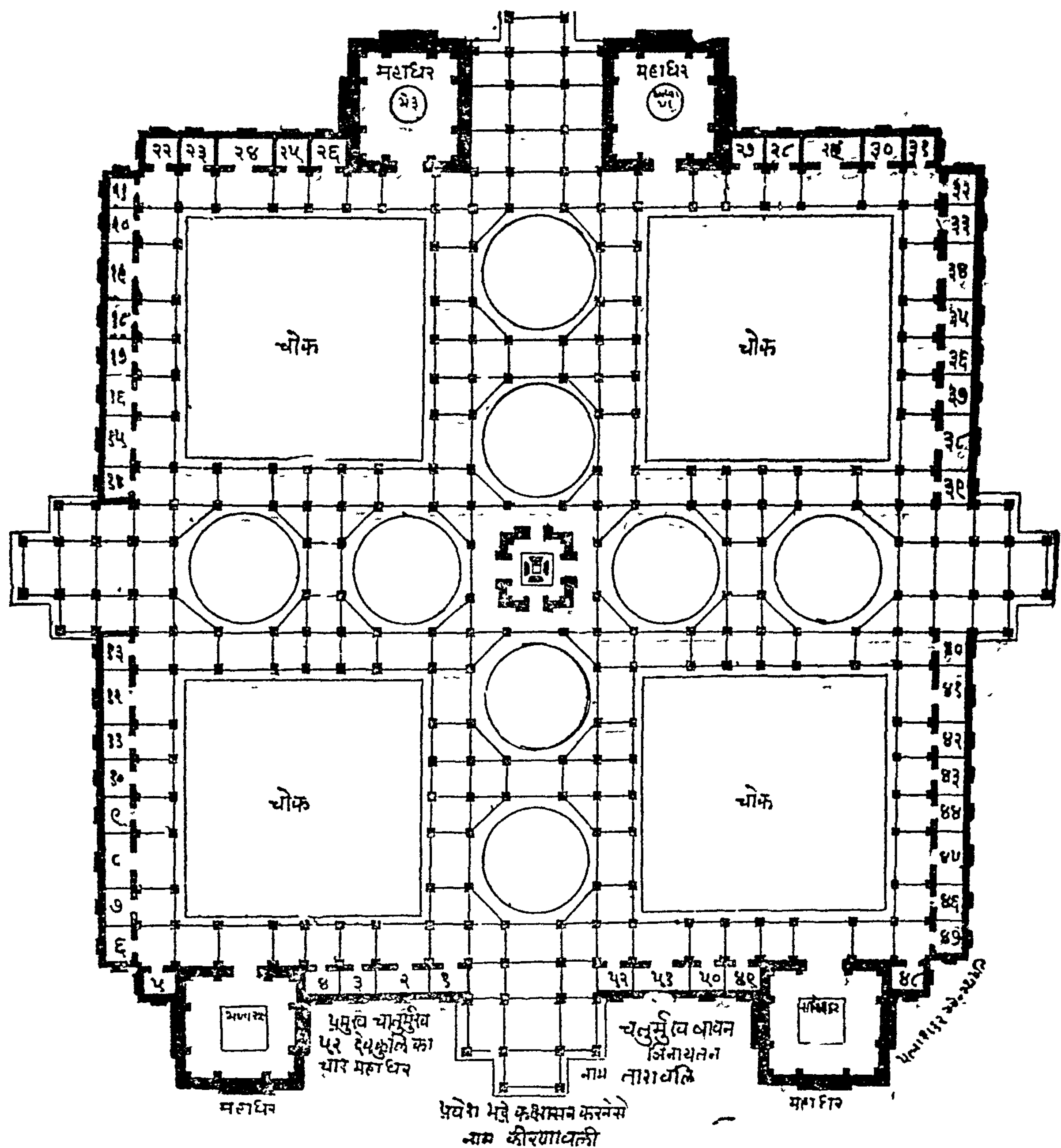
अब मैं तुम्हे सौभाग्यानि और शुभ ऐसी किरणावली कहता हूँ। प्रासाद के ब्रह्मसूत्रके शरध्र नौ कोठे करना। रथ प्रतिरथके सूत्र पर कोली तीन पद जोडती करना। चतुर्मुखके भ्रमवाले या भ्रम विनाके प्रासादको जोडता गर्भ मडपको गवालुकाके थरोंसे रम्य ऐसा छाजेल करना। ३४-३५

अथः मंडोवरे प्राज्ञ' नागरं द्राविड शृणु ॥३६॥
तल छंदानुसारेण कवलीहीनं न कारयेत्।
अज्ञाने कुरुते प्राज्ञ प्रासाद पुण्यवर्जितम् ॥३७॥
असि स्तम्भ समाकर्णे भ्रमंते च प्रदक्षिणे।
चतुर्विंश चैत्यकानां मध्येपंक्तिश्च दापयेत् ॥३८॥
त्रयोदश चतुःकर्णे द्विपंचाशस्य क्षेत्रके।
मंडपाश्च द्वयो मध्ये पणमेकां च सिध्यति ॥३९॥
अघ' पीठं भवेच्चैत्ये प्रासादे ज्येष्ठ पीठकम्।
कर्ण कक्षान्तरे कृत्वा पट' चैत्य प्रदक्षीणे ॥४०॥

'ભાવાર્થ—નાગરાદિ અને દ્રવિડાદિ છદના મંડોવર ડાહ્યા પુરુષોએ કહ્યા છે, તે સાભળો તળે છદને અનુસરીને કોળી હીન ન કરવુ જો અજ્ઞાનતાથી તેમ કરે તો પ્રાસાદ બાધવાનુ પુણ્ય વર્જિત થાય એશી સ્તભો ફરતા પ્રદક્ષિણાએ ભ્રમમા કરવા ચોવીશ જિનાલયની મધ્ય પંક્તિમા તેર તેર ચારખૂણે કરી બાવન જીનાયતના ક્ષેત્રમા તેમ કરવુ બે મંડપો જોડાતા હોય તો વચ્ચે એક પદ જેટલુ અંતર ચોકીનુ રાખવુ ચૈત્યને નીચે પીઠ કરવુ મૂળ પ્રાસાદને જ્યેષ્ઠ માનનુ પીઠ કરવુ જિનાયતનની ફરતી પંક્તિમા ખુણે અને વચ્ચે કક્ષમા છ ચૈત્ય ફરતા કરવા (તેને મહાધર કહે છે)

नागरादि और द्राविडादि छदके मडोवर बुद्धिमानोने कहे हैं वे सुनो। तलच्छदको अनुसरके कोलीहीन न करना। जो अज्ञानतासे ऐसा किया जाय

तो प्रासाद बाँधनेका पुण्य वर्जित होता है ।...अस्सी स्तंभोंको फिरते प्रदक्षिणामें भ्रममें करना । चौवीस जिनालयकी मध्य पंक्तिमें तेरह तेरह चार कोनेमें कर बावनके क्षेत्रमें वैसा करना । दो मंडपों मिलते हो तो बिचमें एक पद जितना अंतर चौकीका रखना । चैत्यके नीचे पीठ करना । मूल प्रासादको जेष्ठमानका



३५६ स्तंभ संख्या	बावन देवकुलिका सहित चतुर्मुख	१ चतुर्मुख
४८ महाधर ४	नाम **"ताराउली"**	५२ देवकुलिका
१२ मूळ चोमुख	प्रवेश भद्रे कक्षासन करनेसे	४ महाधर
२०८ देरी पर	**"किरणाउली"**	५७
६२४ कुल स्तंभ		४ मेघनाद मंडप
		४ मंडप
		४ बलाणक
		६९

पीठ करना। जिनायतन की फिरती पक्तिमे कोने पर और विचमे कक्षमे छ चैत्यों फिरने करना। (उसे महाधर कहते हैं।)

भद्रस्य कोष्टकं वक्ष्ये मुखभद्रे त्रीणिभवेत्।
तत्स्थाने वेदिका रम्या सुभद्रा सर्वकामदा ॥४१॥

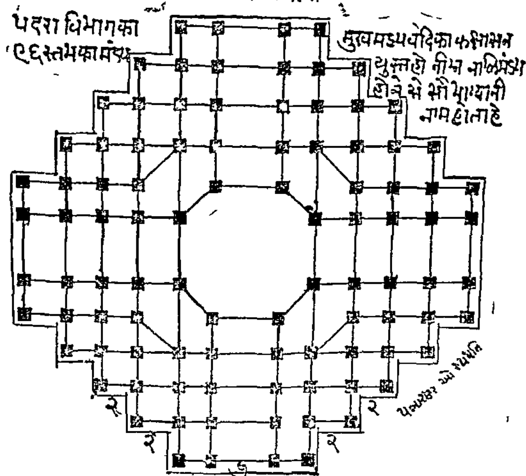
॥ इति किरणावली ॥

ભદ્રના કોઠાનુ કહુ છુ મુખ ભદ્રને ત્રણે સ્થાને રમ્ય એવી વેદિકા-સુભદ્રા સર્વ કામનાને દેનારી કરવી તે કિરણાવલી જાણવી ૪૧

इति किरणावली=भद्रके कोठेके बारेमे कहता हूँ। मुख भद्रके तीनों स्थान पर रम्य ऐसी वेदिका सुभद्रा सर्व कामनाको देनेवाली करना। उसे किरणावली जानना। ४१

कीरणावली—सौभाग्यानी

कीरणावली मडप—मुख मडप वेदिका कक्षासन युक्त और निम्न नाली मडप करनेसे सौभाग्यानि नाम पदरा विभागका ९६ स्तम्भका मडप



दिपंचाशज्जिनालये स्तम्भको मंडपद्वयम् ।
तस्याग्रे वेदिकास्यात् पंक्ति सोपान संचयः ॥४२॥
द्विसप्तति जिनावासे मंडपे मध्यवेदिका ।
नाली मंडप समाख्याता वेदिकासनमंडिताः ॥४३॥

બાવન જિનાલયમાં આગળ ફરતા સ્તંભો અને તેને બે મંડપો કરવા. તેનાથી આગળ પગથિયાની પંક્તિ કરવી. બહોતેર જિનાયતનને મધ્યમાં મંડપ વેદિકાયુક્ત કરવો. નીચે નાલી મંડપનો આગળનો ભાગ વેદિકા આસન પટ્ટથી શોભતો કરવો. ૪૨-૪૩.

बावन जिनालयमें आगे फिरते स्तंभों और उसे दो मंडपों करना । उससे आगेके भागमें (स्तंभोंको कक्षासन युक्त) वेदिका और उससे आगे पगथियेकी पंक्ति करना । बहोत्तर जिनायतनके मध्यमें मंडप वेदिका युक्त करना । नीचे नाली मंडपका आगेका भाग वेदिका आसनपट्टसे शोभता करना । ४२-४३.

कर्ण भाग द्वयं कार्य प्रतिकर्णद्वयं भवेत् ।
सप्तभागायतं भद्रं मुख भद्रं त्रयं कारयेत् ॥४४॥
निष्कांशो भाग भागेन वेदिका मुखमंडनी ।
नाली मंडप सौभाग्यं स्वरूपो लक्षणान्वितं ॥४५॥

॥ इति सौभाग्यानी ॥

મંડપના તળ વિભાગ કહે છે. કર્ણ રેખા બે ભાગ, પ્રતિરથ પણ બે ભાગનો સાત ભાગનું ભદ્ર તેને ત્રણે તરફ મુખ મંડપ કરવા (ભદ્રમાંથી ત્રણ ભાગનુ મુખભદ્ર) તેમાં નીકાલા અકેક ભાગના રાખવા મુખ મંડપને વેદિકા કક્ષાસન કરવુ એવા સ્વરૂપ અને લક્ષણવાળો સૌભાગ્યાની નામનો નાલી મંડપ જાણવો. ૪૪-૪૫. ઇતિ **સૌભાગ્યની.**

मंडपका विभाग कहते हैं कर्ण=रेखा और प्रतिरथ दो दो भागका सात भागका भद्र रखना उसके तीनों बाजु मुख भद्र करना (भद्रसे तीन भाग मुख भद्र ?) उसका निकाला एकेक भागका रखना । मुख भद्रके वेदिका कक्षासन करना ऐसे स्वरुप और लक्षणवाला सौभाग्यनी नामके नालिमंडप जानना । ४४-४५.

नगवेद षट्कोष्टेन प्रासादा जिनचरिताः ।
तन्मध्ये मेघनादः स्यात् स्थापने पुण्यसागरः ॥४६॥

७ × ७ = ઓગણ પચાસ પદમાં છ કોષ્ટકના પદના જિનનો પ્રાસાદ રથ સાથે વચ્ચે કરી તેમાં મધ્યમાં મેઘનાદ નામનો મંડપ સ્થાપન કરવાથી અનેક સાગરોપમ ગણું પુણ્ય પ્રાપ્ત થાય. ૪૬.

उनचास पदमे छ कोष्टकके पदके जिनके प्रासाद रथ के साथ निचमे कर उनमे मध्यमे मेरनाद नामका मडप स्थापन करनेसे अनेक सागरोपम गुना पुण्य प्राप्त होता है। ४६

तारका पच भूरकार्यं जर्टईये वृपभंगयणा सइं जिणालय होइशो सहीपुणे कजेणा उदकारस्य पचभृइ जुइ पदउयपगणणे सेद् जिणालयं इसो सो ही पुण्य कालेन ? (?) ४७

(४७)

मध्य परिध्य वेदी सा वेदी चेडआणादि देय अर्द्ध चतुर्मुखे यनरौर चानन ? ।४८।

(४८)

पड्पष्टि शतत्रीणि कोष्ठका याम विस्तरे। आवर्जित प्रयत्नेन चौकाग्रेरा शतत्रय ॥ ४९ ॥

त्रणुसोने साठ पदना विस्तारवाळा कोठामा ओकसो त्रण पद (४९)
तीनसौ साठ पदके विस्तारवाले कोठेमे एक सो तीन पद ४९

ब्रह्मस्थाने च सस्थाप्य पंचविंशा चतुर्मुखे।
त्रिपंचपट् संघाटा' प्रासादा रथ संयुता ॥५०॥
शतकोष्टस्य तन्मध्ये च मेघनादश्चतुर्दिशि।
रथयुक्ताश्च प्रासादा वेदियुक्ताश्च मंडपाः ॥५१॥
क्षेत्रस्यायाम विस्तीर्ण योगकोष्टाः सप्तदशः।
चतुरस्रे पोडश स्तंभा दिशिनाह्यमुत्तरमेव च ॥५२॥
।
चतुर्मुखे युक्तिकरै निरन्तरे ॥५३॥
द्विभूमि रचिता पुंसि! मेघनाद स्वच्छद ज्ञाति वर्णाभिरतरं।
चतुर्दिशी स्वमुखे मंडित शुभ सद्दिश कार्यमुख पक्ति प्रदायनी ॥५४॥

ભાવાર્થ—ક્ષેત્રના બ્રહ્મસ્થાનમા પચ્ચીશ ખડ પદમા ચોમુખની રચના કરવી ત્રણ પાચ છ એમ જોડતા પ્રાસાદો રથ સાથે અગો યોજવા સો પદના કોઠાના મધ્યમા ચારે દિશાએ મેઘનાદ મડપની રચના કરવી પ્રાસાદ જેમ રથાદિ અગ યુક્ત કરવા તેમ મડપો વેદિ કક્ષાસન યુક્ત કરવા (૫૧) ક્ષેત્રની લબાઇ અને પહોળાઇના યોગે કરીને સત્તર કોઠા કરવા તેમા ચોરસાઇમા સોળ સ્તભો બહારની (ઉત્તર) દિશામા કરવા ! યુક્તિથી ચતુર્મુખમા હમેશા

યોજવા (૫૩) પોતાની જાતી અને વર્ણ છંદનો મેઘનાદ મંડપ બે ભૂમિનો રચવો. તે ચારે દિશાએ પોતાના મુખથી શોભતો.......(૫૪).

क्षेत्रके ब्रह्मस्थानमें पच्चीश खंड–पदमें चोमुखकी रचना करना। तीन पाँच छ इस तरह जोडते प्रासादों रथके साथ अंगोंको योजना। सो पदके कोठेके मध्यमें चारों दिशामें मेघनाद मंडपकी रचना करना। जिसे तरह प्रासाद को रथादि अंग युक्त करना इस तरह मंडपों वेदि कक्षासन युक्त करना। (५१) क्षेत्रकी लम्बाई और चौडाईके योगसे सत्रह कोठे करना। उसमें चौरसाइमें सोलह स्तंभ बाहरकी (उत्तर) दिशामें करना।

.... युक्तिसे चतुर्मुख हमेशा....योजना ५३

अपनी जाती और वर्णोके छंदका मेघनाद मंडप दो भूमिका रचना। वह चारों दिशामें अपने मुखसे शोभता .... ५०–५१–५२–५३–५४.

द्विसप्तति जिनान्यक्षे नालिमंडप जिनविर।
रचिताम्यमत्त मेरुकृतेभूपला भास्करेक्ति कारका सदा पदतश्चले ॥५५॥

બહોતેર જિનાયતનમાં નીચે નાલિ મંડપ...........ઉપર બાર સ્તંભના મંડપમાં રમ્ય એવા “મેરૂ” ની રચના કરવી.... .... ૫૫

बहोतर जिनायतमें नीचे नालि मंडप ··· .... उपर बारह स्तंभका मंडप से रम्य ऐसे “मेरु” की रचना करनी ५५

प्रासाद भवने चैव आयामे विस्तरे शुभम्।
भागैकं च भवेत्कर्ण पंचाशिति शतद्वयम् ॥५६॥
युक्ति बाह्यं प्रकर्तव्यं चतुष्कोष्टा मुखाग्रे च।
जलांन्तरं गतं द्वारं वेदिका मुखमंडितम् ॥५७॥
चँद्ररेखा च संस्थाने भद्रं च नवभागिकाम्।
निष्कांश भागमेकेन चतुर्दिक्षु व्यवस्थितम् ॥५८॥
त्रीणि त्रीणि भवेत्वेदी स्थापदेंन न नाभं च पोडश!
जिनवाचं वरमुच्यते! चतुर्भूमियदानि च ॥५९॥
पदैकं पोडश पदे च मध्यस्तु पद (वेद) मुखै।
इलिका तौरणैर्युक्तं रवि रेखा विराजितं ॥६०॥
नालिंमंडप संयुक्ता द्वित्रिभूमि समाकुलाः।
वेदिकासन पट्टेश्च पंक्ति सोपान संचयः ॥६१॥

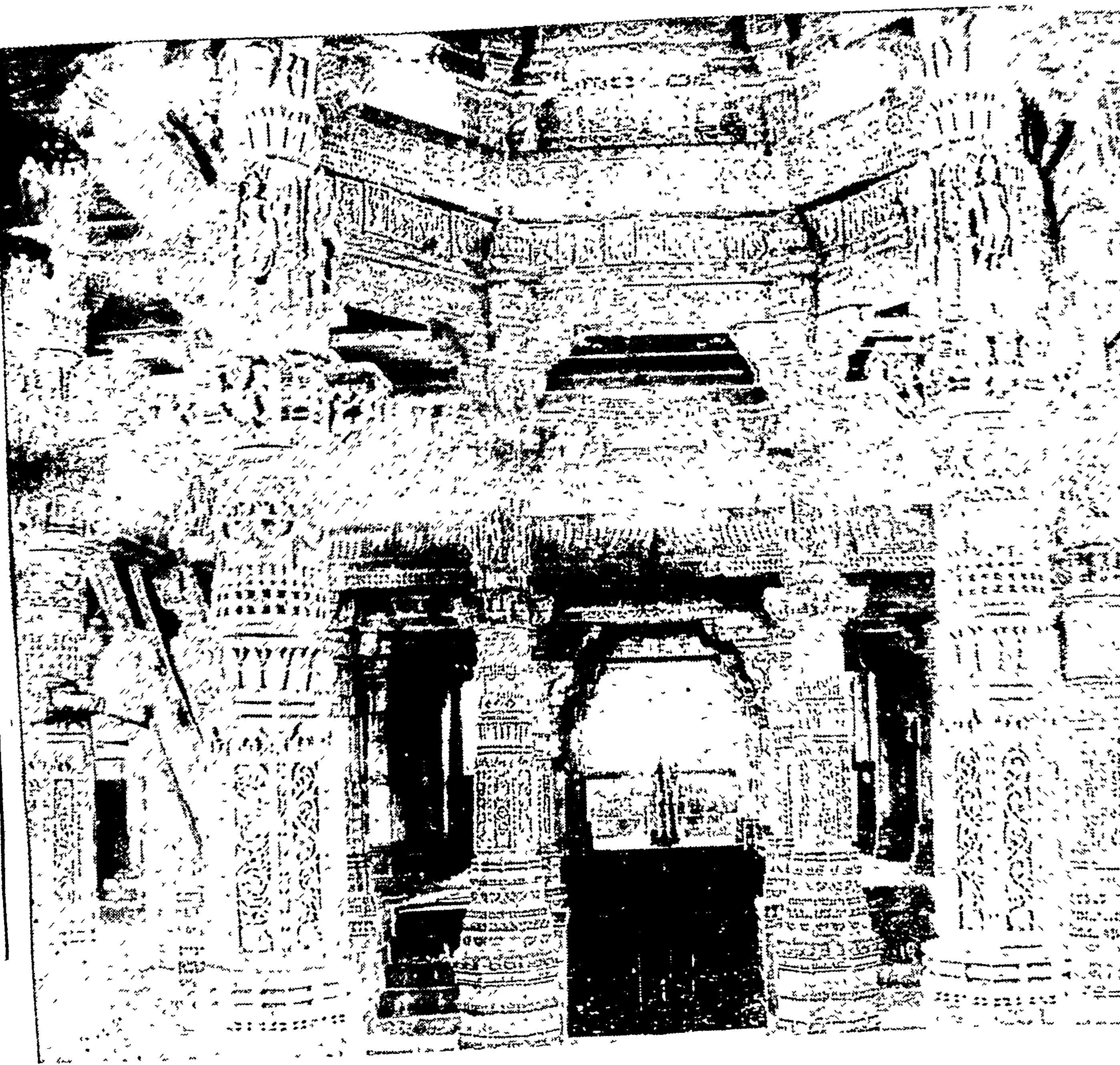
ભાવાર્થ—પ્રાસાદ ભવનના ક્ષેત્રની લંબાઈ પહોળાઈના બસો પચાશી વિભાગના કોઠામા ચાર ખુણે એકેક ભાગનો કર્ણ ગણવો યુક્તિથી બહાર ચાર કોઠા મુખના અગ્રે કરવા જલાન્તર। મા દ્વાર કરી વેદિકાદિથી મુખ શોભિત કરવુ ચંદ્રરેખા। ( ) ના સ્થાને નવ ભાગનુ ભદ્ર કરવુ તેનો નિકાળો એકેક ભાગનો એમ ચારે તરફ કરવુ ત્રણ ત્રણ પદની વેદી . ચાર ભૂમિ ઊંચા (૫૬-૫૯)

એકેક પદ એમ સોળ પદના મધ્યે કરવુ તેને ઇલિકા તોરણથી યુક્ત રવિરેખા। ( ) તેને નાલિમંડપ સાથે બે ત્રણ ભૂમિવાળો કરવો તેને રાજસેનક વેદિકા આસનપટ્ટાદિ કરવા અને આગળ પગથિયાની પંક્તિ કરવી ૫૬ થી ૬૧

प्रासाद भवनके क्षेत्रकी लम्बाई चोडाईके दोसो पचाशी विभाग-कोठके चार कोनेमे एक एक भागका कर्ण रखना। युक्तिसे बाहर चार कोठे मुखके अगले भागमे करना। जलान्तर। मे द्वार कर वेदिकासे मुखको शोभित करना। चँद्र रेखा। ( ) के स्थान पर नौ भागका भद्र करना। उसका निकाला एक एक भागका इस तरह चारो ओर करना। तीन तीन पदकी वेदी चार भूमि ऊँचे एकेक पद इस तरह सोलह पदका मध्यमे करना। उसे इलिका तोरणसे युक्त रवि रेखा। ( ) उसे नालि मडपके साथ दो तीन भूमिवाला करना। उसे राजसेनक वेदिका आसन पट्टादि करना और आगे पगथियेकी पक्ति करना। ५६ से ६१

मेघनादैश्चसंयुक्ता द्वैश मृदा मेघनाश्रितं।
मढलैमंडिता जाती इलिकाकुश नालिका' ॥६२॥
पुनः प्रासाद विधिपूर्वा नारदः श्रृणु सांप्रतम्।
सभ्रमाय भ्रम हीन (पूर्वा) द्रव्यहीना धिकं स्तथा ॥६३॥
गतोऽयं दिव्यलोकेन पुन' क्षीरार्णवे शुभे।
क्षेत्रं मंदाति प्राज्ञ' नैव चिंत्तति मानुषैः ॥६४॥
तथा वेध रहितानि सिंह द्वाराणि सर्वतः।
सभ्रमं तत्र कार्यं च सिंह दारे च मंडपे ॥६५॥

ભાવાર્થ— ના આશ્રિત મેઘનાદ સહિત મંડપ મઢળો-ઇલિકા તોરણાદિથી સુશોભિત કરવો હે નારદ, હવે ફરી પ્રાસાદની વિધિ સાભળો ભ્રમયુક્ત કે ભ્રમ વગરનો તે તો દ્રવ્યની હીન અધિકતા પ્રમાણે કરવુ તેથી



राणकपुर (राजस्थान) के मंदिरका मेघनाद मंडपका अंतरस्थ भव्य द्रश्य स्तंम्भ मदल और कलायुक्त

मोढेरा के कलामय सूयमदिर के मडपद्वार स्तभ और गजतालुयुक्त तोरण

मोढेरा के कलामय सूयमदिर के नृत्यमडप का बाह्य दर्शन–पीठ कक्षासन स्तभादि

તેવો પ્રાસાદ કરાવનાર દિવ્યલોકમાં જઈ વિષ્ણુના શુભ એવા ક્ષીરાર્ણવમાં જાય. ક્ષેત્રની મંદતા નાના મોટાની ડાહ્યા મનુષ્યે ચિંતા ન કરવી. (સ્થાન પ્રમાણે ભ્રમવાળો કે ભ્રમ વગરનો એવો પ્રાસાદ કરવો.) પરંતુ તે વેધ રહિત કરવો. ચારે બાજુ સિંહ દ્વારો (પ્રવેશ) કરવા. તે ભ્રમવાળા પ્રાસાદને મંડપ સિંહ દ્વાર વાળા કરવા. ૬૨–૬૩–૬૪–૬૫.

.......के आश्रित मेघनादके साथ मंडप–मदलो–इलिका तोरणादिसे सुशोभित करना। हे नारद, अब फिर प्रासादकी विधि सुनो। भ्रमयुक्त या भ्रमके बिनाका वह तो द्रव्यकी हीनाधिकताके अनुसार करना। इससे वैसा प्रासाद करनेवाला दिव्यलोकमें जाकर विष्णुके शुभ ऐसे क्षीरार्णवमें जाता है। क्षेत्रकी मंदता छोटे बडेकी सुज्ञ मनुष्यको चिंता न करनी चाहिये। (स्थानके अनुसार भ्रमवाला या भ्रमके बिनाका प्रासाद करना।) परंतु उसे वेध रहित करना। चारों तरफ सिंह द्वारों (प्रवेश) करना। उस भ्रमवाले प्रासादको सिंह मंडप द्वारवाले करना। ६२–६३–६४–६५.

एकजंघा नवघंतं प्रासादेस्य श्चतुर्मुखे।
तथा भ्रमश्च निर्वाण द्वयो जंघ नियोजयेत् ॥६६॥
ततः कुर्यात्प्रयत्नेन सिंहद्वारं विशेषतः।
पुष्परागश्च सर्वेशं सर्वविस्तर प्रजायते ॥६७॥
मिश्र मेघं प्रकर्तव्यं सिंहनादस्तथा भवेत्।
सर्व मेघ स्ततो वक्ष्ये उक्तं प्रासादमुत्तमम् ॥६८॥

મહાચાતુર્મુખ પ્રાસાદના મંડોવરને એકથી નવ જંઘા ચડાવવી. ફરતો ભ્રમ હોય તો બે જંઘા ચડાવવાની યોજના (તો જરૂર). તેને પ્રયત્ને કરીને સિંહ દ્વાર તો વિશેષે કરીને કરવું. પુષ્પરાગ આદિ સર્વ પ્રાસાદો પહોળાઈ વાળા કરવા. તેને મિશ્ર મેઘનાદ કે સિંહનાદ મંડપો કરવા. તેવા ઉત્તમ પ્રાસાદોને સર્વેને મેઘનાદાદિ મંડપો કરવાનું કહ્યું છે. ૬૬–૬૭–૬૮.

महा चातुर्मुख प्रासादके मंडोवरको एकसे नौ जंघा चढ़ाना। फिरता हुआ भ्रम हो तो दो जंघा चढ़ानेकी योजना (जरूर) करना। उसे यत्न करके सिंह द्वार तो विशेष कर करना। पुष्पराग आदि सर्व प्रासादों चौडाईवाले करना। उसे मिश्र मेघनाद या सिंहनाद मंडपों करना। वैसे उत्तम प्रासादोंको मेघनादादि मंडपों बनानेके लिये कहा है। ६६–६७–६८.

पूर्वे च पश्चिमे चैव उत्तरे दक्षिणे तथा ।
सर्वत्र मेघनादं च तत्पुण्यं सागरोपमम् ॥६९॥
प्रासादस्य छंन्देन मंडपस्य चतुर्दिशि ।
उत्तमं तद्भवे द्वास्तु इहलोके स्वयंभूवा ॥७०॥
प्रासादे ज्येष्ठमानं च मंडपं कन्यसं भवेत् ।
त्रयोद्वारा भवेत्यत्र सिंह द्वार विवर्जितम् ॥७१॥

મહાચાતુર્મુખ પ્રાસાદને પૂર્વ પશ્ચિમ ઉત્તર અને દક્ષિણે એમ ચારે દિશામા મેઘનાદ મ ડપોની રચના કરવાથી સાગરોપમ પુણ્યની પ્રાપ્તિ થાય છે પ્રાસાદના પોતાના છ દનો મ ડપ ચારે દિશાએ કરવો તે ઉત્તમ વાસ્તુથી આ લોકમાથી સ્વય સ્વદેહે મોક્ષ જાય છે આવા જ્યેષ્ઠ માનના પ્રાસાદોને કનિષ્ઠ માનનો મ ડપ કરી શકાય તેને ત્રણ બાજુએ દ્વાર કરવામા આવે તો એક તરફનુ સિંહ દ્વાર ન કરવુ ૬૯–૭૦–૭૧

महा चातुर्मुख प्रासादको पूर्व पश्चिम उत्तर और दक्षिण इस तरह चारो दिशाओंमे मेघनाद मडपोंकी रचना करनेसे सागरोपम पुण्यकी प्राप्ति होती है। प्रासादके अपने छदका मडप चारों दिशाओमे करना । वह उत्तम वास्तुसे स्वय स्वदेहे मोक्षमे जाता है । ऐसे ज्येष्ठमानके प्रासादोंको कनिष्ठमानका मडप कर सकते हैं । उसे तीनों तरफ द्वार किया जाय तो एक तरफका सिंह द्वार न करना । ६९–७०–७१

अष्टहस्ते भवेत्पादौ यावद् दशपंचकम् ।
भ्रमोदय च कर्तव्यं योजया द्वि भूमिका ॥७२॥
एक भूम्या द्वयो यत्र भूमि जंघा विधिक्रमाम् ।
मया प्रोक्त माक्षाता चैकादौ भास्करात्तकम् ॥७३॥

આઠ હાથના પ્રાસાદથી પ દર હાથના ભ્રમવાળા પ્રાસાદને ભ્રમના ઉદયમા બે ભૂમિ કરવી એ એક ભૂમિ (ના સાધાર મહાપ્રાસાદના મેરુ મ ડોવર) ને બે જ ઘા કરવી એમ ક્રમે વિધિથી મે એકથી બાર જ ઘાની ભૂમિનુ મે કહ્યુ છે ૭૨–૭૩

आठ हाथके प्रासादसे पदरा हाथके भ्रमवाले प्रासादको भ्रमके उदयमे दो भूमि करना यह एक भूमि (के साधार महाप्रासादके मेरु मडोवर) को दो जघा करना । ईस तरह क्रमसे विधिसे मैने एकसे बारह जघाकी भूमिका मैने कहा है । ७२–७३

तथा पीठस्ततोरिचि मानं मंडोवरं श्रृणु ।
क्षीरसागरमुत्पन्ना प्रासादास्युश्चतुर्मुखाः ॥७४॥
षड्भागं च भवेद् भिट्टं पंचभागं द्वितीयकम् ।
भाग भार्गं च निष्क्रांतं त्रिपदं च तृतीयक ॥७५॥
सप्तांश जाड्यकुंभं च त्रयोदश कणालिका ।
द्वादशयोच्छ्रिता हस्ति हयास्तु वसुभागिकः ॥७६॥
[२](सप्त भागां नरपीठं पीठं सप्त चत्वारिंशतः)[२] ।
तथा निष्क्रान्तं वक्ष्यामि द्विपदं भिट्टमेव च ॥७७॥
द्वितीयं तत्समं काय पदमेकं तृतीयकम् ।
वसुभिः जाड्य कुंभं च कणालिका षड्मेव च ॥७८॥
गजाश्चत्वारि भागानि त्रयं सार्द्ध तुरङ्गमाः ।
द्विपदं नरपीठं च शिरपट्टीनु मेकतः ॥७९॥
(द्वेहया च गजद्वेय उपटीया संपूजितं) ।

હે ઋષિરાજ, હવે ક્ષીર સાગરમાં ઉત્પન્ન થયેલ એવા ચતુર્મુખ મહાપ્રાસાદના પીઠ વિભાગ અને મંડોવર માન સાંભળો (૭૩) ત્રણ ભિટ્ટમાં પહેલું છ ભાગનું, બીજું પાંચ ભાગનું અને ત્રીજું ત્રણ ભાગનું (એમ જે માન આવ્યું હોય તેના ચૌદ ભાગ કરીને ત્રણભિટ્ટ કરવાં) અને તેના નિકાળા એક એક ભાગના રાખવા. સાત ભાગનો જાડંબો. તેર ભાગની કણી, (છાજલી અને ગ્રાસ પટ્ટી સાથે) કરવી. બાર ભાગનું ગજપીઠ, આઠ ભાગનું અશ્વપીઠ અને સાત ભાગનું નરપીઠ કરવું. એ રીતે મહાપીઠના ઉદયના સુડતાળીશ ભાગ જાણવા. ૭૪–૭૫–૭૬–૭૭.

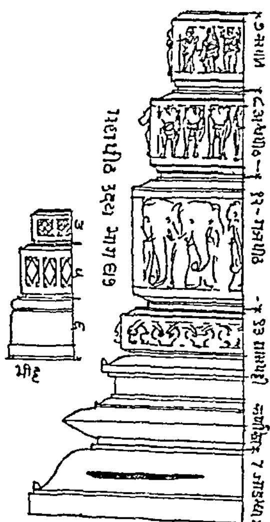
હવે નિકાળા કહે છે. પહેલું અને બીજું ભિટ્ટ બબ્બે ભાગ અને ત્રીજું ભિટ્ટ એક ભાગના નિકાળાનું કરવું. જાડંબાનો આઠ ભાગ નિકાળો, કણીનો છ ભાગનો, ગજપીઠનો ચાર ભાગનો, અશ્વપીઠનો સાડા ત્રણ ભાગનો, અને નરપીઠનો બે ભાગનો નિકાળો રાખવો. માથાની પટ્ટીથી નરના ૩૫ એક ભાગ

(૨) કૌંસમાં આપેલ શ્લોક ૭૭ના બે પદો–સાત ભાગનું નરપીઠ અને કુલ ઉદય સુડતાલીશ દરેક પ્રતોમાં નથી. પરંતુ તે બે પદ હોય તો જ પીઠ વિભાગ પૂર્ણ થાય. તેથી તેની પૂર્તિ કરવા રજા લઉં છું.

(२) कौंसमें दिये हुए श्लोक ७७ के दो पदों सात भागका नरपीठ और कुल उदय सैंतालीश दरेक प्रतोंमें लहियेके दोषसे नहीं हैं। परंतु दो पद होनेसे ही पीठ विभाग पूर्ण होता है। इससे उसकी पूर्ति करनेके लिये क्षमा करना।

નીકળતા પટ્ટીથી બે ભાગ અશ્વપીઠના રૂપ નીકળતા કરવા ગજપીઠના રૂપો, નીચેની પટ્ટીથી બે ભાગ નીકળતા કરવા

हे ऋषिराज, अब क्षीर सागरमे उत्पन्न हुए ऐसे चतुर्मुख महाप्रासादके और मंडोवरमान सुनो। तीन भिट्टमे पहला ७ भागका, दूसरा पाँच भागका और तीसरा तीन भागका (इस तरह जो मान आया हो उसके चौदह भाग कर तीन भिट्ट करना। और उनके निकाले एक एक भागके रखना। सात भागका जाड्या तेरह भागकी कणी, (छाजली और ग्रास पट्टीके साथ) करना। बारह भागका गजपीठ, आठ भागका अश्वपीठ और सात भागका नरपीठ करना। इस तरह महापीठके उदयके सुडतालीश भाग जानना। ७४-७५-७६-७७



अब निकाले कहते हैं। पहला और दूसरा भिट्ट दो दो भाग और तीसरा भिट्ट एक भागके निकालेका करना। जाड्याका आठ भाग निकाला, कणीका छ भागको, गजपीठका चार भागका, अश्वपीठका साढे तीन भागका, और नर पीठका दो भागका निकाला रखना। सरकी पट्टीसे नरके रूप एक भाग निकलते-पट्टीसे दो भाग अश्वपीठके रूप निकलते करना। गजपीठके रूपों-नीचेकी पट्टीसे दो भाग निकलते करना। ७८-७९

३ भिट्ट भाग १४ और महापीठ विभाग ४७

तथा मंडोवरं वक्ष्ये खुरकं द्विपदं भवेत् ॥८०॥
कुंभकं पंचसार्द्धंच कलश त्रिपदं शुभं।
अंतरपत्रं पदमेकेन कपोतालि त्रयपदा ॥८१॥
मंचिका त्रयसार्द्धा चं जंघैकादशपंचके।

હવે મહાચોમુખના મંડોવરના ભાગ કહું છું ખરો બે ભાગનો, કુંભો સાડાપાંચ ભાગનો, કળશો ત્રણ ભાગ, અંતરપત્ર એક ભાગ, કેવાળ ત્રણ ભાગ,

માચી સાડા ત્રણ ભાગ અને એક પહેલી જંઘા, પંદર ભાગની ઊંચી કરવી. (હવે તે જંઘામાં કરવાના જુદા જુદા દેવ દેવાંગના દિગ્પાલાદિના સ્વરૂપો કહે છે). ૮૦-૮૧.

अब महाचोमुखके मंडोवरके भाग कहता हूँ। खरा दो भागका, कुंभा साढ़े पाँच भागका, कलश तीन भागका, अंतरपत्र एक भाग, केवाल तीन भाग, माची, साढे तीन भाग और एक पहली जंघा, पंद्रह भागकी ऊँची करना। (अब उस जंघामें करनेके भिन्न भिन्न देव देवाङ्गना दिग्पालादिके स्वरूपों कहते हैं। ८०-८१.

लोकपालाश्च दिग्पाला: अतीवानन्दपूरिता: ॥८२॥
रथदेवादीनां तत्र नृत्यंवादित्र संयुता: ।
लास्यस्तांडव श्चैव तालानां च विशेषत: ॥८३॥
आयुधैर्वाहनैर्युक्ता नृत्यं कुर्वति देवता: ।
उत्सवं जिनालये च विशेषेण चतुर्मुखे ॥८४॥
इंद्रनाद्यं प्रकुर्तितं गण सेव्यं पुरावृत्तं ।
अध: बाण कर तंच नृत्यमानादि हस्तकम् ॥८५॥
अधोद्रष्टि विशेषेण वासयान पदस्तलम् ।
षड्भुजा अष्टभुजा वा मूर्ति मानादि संयुतं ॥८६॥

મંડોવરની જંઘામાં લોકપાલ અને દિગ્પાલનાં સ્વરૂપો અતિ આનંદ ભાવયુક્ત ફરતા કરવા. રથ પ્રતિરથમાં દેવાંગનાનાં સ્વરૂપો વાજીંત્ર સાથે નૃત્ય કરતા જોડલાં રૂપો પણ કરવાં લાસ્ય અને તાંડવાદિ તાલથી નૃત્ય કરતા રૂપો વિશેષે કરીને કરવાં. આયુધ અને વાહનવાળા ઇંદ્રાદિ સ્વરૂપો ચતુર્મુખ જીનભવનમાં ઉત્સવ હોય તેમ નૃત્ય કરતા તેમ જ તાલ આપતા ગણ સેવકોના ફરતા સ્વરૂપો કરવાં. દેવાંગનાઓનાં સ્વરૂપોમાં કોઈ નીચે બાણ મારતા હાથવાળી-કોઈ નૃત્ય માનાદિ હાથ મુદ્રા યુક્ત કરવી. વિશેષે કરીને દેવાંગનાઓ નીચી દ્દષ્ટિવાળી કોઈ સમાન પદ તળવાળી કોઇ ડાબા ઉપડતા પદતાલવાળી એવી દેવાંગનાનાં સ્વરૂપો કરવાં. દેવોની મૂર્તિઓ, કોઈ (ચાર) છ કે આઠ હાથવાળી માનસૂત્ર પ્રમાણ સાથે સપ્રમાણ કરવી. ૮૨-૮૩-૮૪-૮૫-૮૬.

मंडोवरकी जंघामें लोकपाल और दिग्पालके स्वरूपों अति आनंद भावयुक्त करना। रथ प्रतिथरमें देवांगनाके स्वरूपों वाजित्रके साथ नृत्य करते युगल रूपों भी करना। लास्य और तांडवादि तालसे नृत्य करते रूपों विशेष करके करना।

आयुध ओर वाहनवाले इद्रादि स्वरूपों चतुर्मुख जिन भवनमे उत्सवमे हो इस तरह नृत्य करते ओर ताल देते गण सेवकोंके फिरते स्वरूपों करना। देवाङ्गनाओंके स्वरूपोंमे कोई नीचे बाण मारते हाथवाली–कोई नृत्यमानादि हाथ मानादियुक्त करना। विशेपकर देवाङ्गनाओं नीची दृष्टिवाली कोई समान पद तलवाली कोई बाये उठाए हुए पदतलवाली ऐसी देवाङ्गनाके स्वरूपों करना। देवोंकी मूर्तियों कोई (चार) छ या आठ हाथवाली मान सूत्र प्रमाणके साथ–सप्रमाण करना। ८२–८३–८४–८५–८६

तालमाना' समाख्याता नृत्यंति पोडशां कला: ।
पड्हस्ताश्च (सहिता) अग्निगणा ते चाप सव्यताचृतम् ॥८७॥
वामहस्तंश्च कर्णांते दक्षयान पद तलम् ।
दक्षपादोत्पलं कृत्वा द्विधा वामांगसंयुतम् ॥८८॥
अधोकरश्च वामालिन्यो यमो दक्षिणनिरीक्ष्यते ।
नैरुत्ये क्षेत्रपालश्च यक्षगण स्ततोपर ॥८९॥
अधो हेतु तेजां ते (?) उत्तानं नृत्यकारक ।
परावृत्य च वरुणं शिर दक्षकरो भवेत् ॥९०॥
अधो दृष्टि प्रयत्नेन हृदये वामहस्तकम् ।

સોળે કળાથી ખિલેલા તાલમાનથી નૃત્ય કરતી દેવાગનાના સ્વરૂપો કરવા છ ભૂજાવાળા અગ્નિ ગણુ સવ્યાપસવ્ય ગોળ અગ મરોડવાળા રૂપો કરવા દેવાગનાઓમા ડાબો હાથ કર્ણને સ્પર્શ કરતો જમણો હાથ પગ (પકડતો) કરવો કેટલીક દેવાગનાનો જમણો પગ કમળની જેવો બીજી વીધિથી ડાબા અગ દેખાડતી એવી દેવાગના કરવી જેનો હાથ નીચે ડાબી તરફ ઢળતા નૃત્ય કરતો કરવો દક્ષિણ દિશામા યમ=ધર્મરાજ નિરીક્ષણ કરતા કરવા નૈઋત્ય કોણમા ક્ષેત્રપાળ (ભૈરવ નીરૂતિ) ના સ્વરૂપો કરવા યક્ષ અને ગણોના રૂપો પણ કરવા

શ્રેષ્ઠ (ઊચી) એવી "ઉત્તાન" દેવાગના નૃત્ય કરતી કરવી પશ્ચિમ દિશામા વરૂણ દેવનુ સ્વરૂપ કરવુ દેવાગનાઓના કેટલીકનો જમણો હાથ મસ્તકપર કરવો નીચે દૃષ્ટિ રાખેલી અને ડાબો હાથ છાતીએ રાખીને નૃત્ય કરતી કરવી ૮૭–૮૮–૮૯–૯૦

सोलह कलाओंसे निकसे हुए तालमानसे नृत्य करती देवागनाके स्वरूपों करना। छ भूजावाले अग्निगण सव्यापसव्य गोल अग मरोडदार रूपों करना। देवागनाओंमे बाया हाथ कर्णको स्पर्श करता, जाहिना हाथ (पाँवको पकडता),

करना। कओीं देवांगनाओंका दाहिना पाँव कमल जैसा, दूसरी विधिसे बाँया अंग बताती हुई देवांगना करना। जिसका हाथ नीचे बांओीं तरफ ढलता नृत्य करता करना। दक्षिण दिशामें यमः धर्मराजको निरीक्षण करते करना। नैॠत्य कोणमें क्षेत्रपाल (भैरव–नीॠति) के स्वरूपों करना। यक्ष और गणोंके रूपों भी करना।........श्रेष्ठ (ऊँची) ऐसी उत्तान देवांगना नृत्य करती करना। पश्चिम दिशामें वरूणदेवका स्वरूप करना। देवांगनाओंमें से कितनीका दाहिना हाथ मस्तक पर करना। नीचे दृष्टि रखी हुई और बाँया हाथ वक्ष पर रखी हुई नृत्य करती करना। ८७–८८–८९–९०.

वायव्ये वैतालका वक्ष्ये पुनस्तांडव्य ताङ्गतः ॥९१॥
भ्रमरीयं च विशेषेण वस्त्रहस्तं विशेषतः।
कुबेरे पद्मिनीलिला गण इंद्रादि कोत्तमा ॥९२॥
ग्रतांश्चान्ये दक्षहस्ते करैकं शिरभूषिता।
इशाने इश्वरंश्चैव भुजाष्टक संयुतः ॥९३॥
अभय श्रीवृतमुक्तिर्ण (?) वामहस्ते कारण (!)।[३]

વાયવ્ય કોણમાં (વાયુદેવ કે) વૈતાલનું સ્વરૂપ કરવાનું કહ્યું છે–તે વિશેષ કરીને ભમરી ફરતા તાંડવ નૃત્ય કરતું હાથમાં વસ્ત્ર ધારણ કરેલ કરવું ઉત્તરમાં કુબેરની સાથે પદ્મિની દેવાંગના લીલા કરતી ગણ ઈંદ્રાદિ એવાં ઉત્તમ સ્વરૂપો શોભનાં કરવાં. પદ્મિનીનો નૃત્ય ગતિમાં નીચે જમણો પગ એક હાથ શિરપર શોભતો રાખવો. ઈશાન કોણમાં ઈશનું સ્વરૂપ આઠ ભુજાવાળું અભયાદિ મુદ્રાવાળું અને ડાબો હાથ........૯૧–૯૨–૯૩.

वायव्य कोणमें (वायुदेव या) वैतालका स्वरूप करनेका कहा है। उसें विशेपकर भमरीके चारों तरफ तांडव नृत्य करता हाथमें वस्त्र धारण किया हुआ करना। उत्तरसें कुबेरकी साथ पद्मिनी लीला करते गण इंद्रादि ऐसे उत्तम स्वरूपों सुंदर शोभता करना। पद्मिनी नृत्य गतिमें नीचे पाउ दाहिना एक हाथ शिर

(૩) ગુજરાત સૌરાષ્ટ્રની ઘણી ખરી ક્ષીરાર્ણવની પ્રતો અહીં શ્લોક ૯૩ પછી સમાપ્ત થાય છે. આગળ નથી. પરંતુ અમારા સંગ્રહની એક પ્રતમાં અને આજ અધ્યાય વૃક્ષાર્ણવમાં સંપૂર્ણ મળતો હોવાથી અપૂર્ણતા દૂર કરી શકાઈ છે. એ સદ્‌ભાગ્ય.

(३) गुजरात सौराष्ट्रकी वहुत कुछ क्षीरार्णवकी प्रतें यहाँ श्लोक ९३ के वाद समाप्त होती है। आगे नही है। परंतु हमारे संग्रहकी एक प्रतमें और यही अध्याय वृक्षार्णवमें संपूर्ण मिलनेसे–अपूर्ण दूर हो सकी है। यह सद्भाग्य!

Z तिलोत्तमा (कामरुपा) तिलोचना।

पर शोभता रखना। इशान कोणमे ईशका स्वरूप आठ भुजावाला अभय आदि मुद्रावाला और बाँया हाथ। ९१-९२-९३

करे दक्षे मते रिंद्र वामयान पदस्तले ॥९४॥
मेनका दक्षिणांगानि भूतले प्रतिधारिता।
रभा इंद्रस्य संयोगे दक्ष याने पदस्तले ॥९५॥
बाण याम करे रम्या वीणा दक्षकरे पुरे।
अग्निर्दक्षे वंशहस्ते प्रावर्तस्या च उर्वशी ॥९६॥
तेनत्रृते पुनर्भावे देवता नृत्यकारिता।
यमे त्रिलोचन उक्ता तालमंजीर कंसिका ॥९७॥
नृत्य भावे समाख्याता कामरूपा पदस्तले।

જમણો હાથ ઇંદ્ર ડાબો પગ ૯૪ મેનકા દક્ષિણાગી સ્વર્ગ માથી ભૂતલે આવેલ છે રભા અને ઇંદ્રના સયોગી આલિગન આપતુ સ્વરૂપ કરતુ જમણો પગ ડાબા હાથમા રમ્ય એવુ બાણુ છે જમણા હાથમા વીણા છે અગ્નિ કોણમા જમણા હાથમા વાસળીવાળી ઉર્વશી એવા ભાવથી નૃત્ય કરતા દેવોના સ્વરૂપો કરવા દક્ષિણ દિશામા યમ માથે તાલ મજીરા અને કાસીયા બજાવતી ત્રિલોચના કરવી નૃત્ય ભાવવાળી કામ રૂપાના પગ ૯૪-૯૫-૯૬-૯૭

दाहिना हाथ इंद्र बाँया हाथ (९४) मेनका दक्षिणागी स्वर्गमेसे भूतलपर आयी हुई है। रभा और इंद्रके सयोगी आलिंगन देते हुए स्वरूप करना। दाहिना पाँव बाँये हाथमे रम्य बाण है, दाहिने हाथमे वीणा है। अग्निकोणमे दाहिने हाथमे बाँसुरीवाली उर्वशी ऐसे भावसे नृत्य करते देवोंके स्वरूप करना। दक्षिण दिशामे ताल-मजीरे और कासिया बजाती हुई त्रिलोचना करना। नृत्य भाववाली कामरूपाके पाच ९४-९५-९६-९७

शची नैऋत्य संयोगे क्षेत्रपाल सदक्षिणे॥९८॥
चंद्राउली दक्षकरं सो! गणातत्क्षेत्रपालका।
परम लोकौ सप्तवामाङ्गे वरुणदेव समास्मृता ॥९९॥
मर्दनानि समायुक्त बाणं रभादिकोद्भव।
नृत्यंति वासुदेव च मंजुघोषा सदक्षिणे ॥१००॥
वस्त्रहस्ते खड्गाद्यंति दक्षयाने पदस्तलं।
रभादि देवकन्या च दिग्पाला सहसंयुता ॥१०१॥

नृत्यंति इंद्ररंभा च देव* भवने चतुर्मुखे।
मेनकादि ईशान्याद्या तदस्थान प्रदक्षिणे ॥१०२॥

શચી નીરૂતી સહિત નૈઋત્યે દક્ષિણે ક્ષેત્રપાલ અને ચંદ્રાઉલી હાથ જોડતી ક્ષેત્રપાલ અને ગણો.................

પશ્ચિમે વરુણ દેવ. કોઇ (શત્રુને) મર્દન કરતી. ધનુષ બાણવાળી. રંભા દેવાંગના કરવી. વાયવ્યે વાયુદેવતા નૃત્ય કરતા કરવા તેની દક્ષિણે મંજુઘોષા દેવાંગનાનું સ્વરૂપ કરવું. બેઉ હાથના........જમણો...પગ........

જંઘામાં રંભાદિ દેવકન્યાઓ અને દિગ્પાલના સ્વરૂપો સાથે ઇંદ્ર અને રંભા સાથેના સ્વરૂપો દેવ ભવનના ચતુર્મુખમાં નૃત્ય કરતાં કરવાં. એ રીતે મેનકાદિ બત્રીશ દેવાંગનાઓનાં સ્વરૂપો ઇશાન કોણથી ફરતા પ્રદક્ષિણાએ તેના સ્થાને જંઘામાં કરવાં. ૯૮ થી ૧૦૨.

शचीनीरूतीके साथ नैॠत्यमें दक्षिणे क्षेत्रपाल और चंद्राउली हाथ जोडी क्षेत्रपाल और गणों............पश्चिममें वरुण देव कोई (शत्रुको) मर्दन करती धनुष–बाणवाली रंभा देवांगना करना। वायव्यमें वायुदेवताको नृत्य करते करना। उनकी दक्षिण दिशामें मंजुघोषा देवांगनाका स्वरूप करना। दोनों हाथके खड्ग धारण करती दाहिना पग खडा रखे........जंघामें रंभादि देवकन्याओं और दिग्पालके स्वरूपोंके साथ इंद्र और रंभाके युग्म स्वरूपों देव भवनके चतुर्मुखमें नृत्य करते करना। इस तरह मेनकादि बत्रीश देवांगनाओंके स्वरूपों ईशान कोणसे फिरते प्रदक्षिणामें उसके स्थान पर जंघामें करना। ९८ से १०२.

[४]मेनकाद्य ईशान्याद्या ततस्थाना च प्रदक्षिणे ॥१०३॥
लीलावती[२] विधिश्रिता[३] सुंदरी[४] शुभभामिनी[५]।

---

* पाठान्तरे जिनभवने।

(४) ઉપરની બત્રીશ દેવાઙનાઓમાં કેટલાક ગ્રંથોમાં છે. કેટલાંકમાં ચોવીશ કહી છે. ઓરીસ્સા-ઉડીયા શિલ્પમાં સોળ કહી છે. વૃક્ષાર્ણવ: ક્ષીરાર્ણવ અને અમારા ગ્રંથસંગ્રહના ઓળીયામાં કેટલાકના નામ ભેદો પૃથક્ પૃથક્ કહ્યા છે. કોઇ રૂપ લક્ષણમાં ભીન્નતા છે એટલે ૫ સુસ્વભાવિની=સુભાંગીની. ૧૦ પદ્મનેત્ર=ગુઢશબ્દા. ૧૨ ચિત્રરૂપા=પુત્રવલ્લભા–ચિત્ર-વલ્લભા. ૧૮ ચંદ્રરેખા=પત્રલેખા ૨૪ ભાવચંદ્રા=ભાવમુદ્રા. ૨૮ મુજઘોષા=મંજુઘોષા. ૩૦ મોહિની=વિજયા ૩૧ ઉત્તાના=ચંદ્રવક્રા. ૩૨ તિલોત્તમા=ત્રિલોચના–કામરૂપા.

(४) उपरकी बत्तीस देवाङ्गनाएँ कई ग्रंथोंमें हैं। कईमें चोविस कही है। वृक्षार्णव और क्षीरार्णव ग्रंथमें और हमारे पुराने ग्रंथ संग्रह के ओलियेमें नाम भेद पृथक् पृथक् कहे हैं। कोई कई रूप लक्षणमें भी भीन्नता है। सुखभाविनी=सुभांगिनी १० पद्मनेत्रा=गुढ शब्दा १२ चित्ररूपा पुत्रवल्लभ=चित्रवल्लभा १८ चन्द्ररेखा–पत्रलेखा २४ भावचन्द्रा–भावमुद्रा=२८ भुजघोषा=मंजुघोषा ३० मोहिनी=विजया ३१ उताना–चन्द्रवक्ता ३२ तिलोत्तमा=त्रिलोचना–कामरूपा।

हंमावली६ सर्वकला७ तथा कर्पूरमंजरी ॥१०४॥
८पद्मिनी गूढशब्दा१० च चित्रिणी११ चित्रवल्लभा१२ ।
गौरी१३ गाधारिकाश्चैव१४ देवशाखा१५ मरीचिका१६ ॥१०५॥
चँद्रावली१७ चँद्ररेखा१८ सुगधा१९ शत्रुमर्दनी२० ।
मानवी२१ मानहंसा२२ च स्वभावा२३ भावमुद्रिका२४ ॥१०६॥
मृगाक्षी२५ उर्वशी२६ रंभा२७ सुजघोषा२८ जया२९ तथा ।
विजया३० चँद्रवक्रा३१ च कामरूपा३२ च संस्थिता ॥१०७॥

જઘાની ફરતી પ્રદક્ષિણામા પોતાના સ્થાને ઇશાન કોણથી ૧ મેનકા, ૨ લીલાવતી, ૩ વિધિચિતા, ૪ સુદરી, ૫ શુભગામિની (સુભાગીની) ૬ હમા વલી, ૭ સર્વકળા, ૮ કર્પૂરમજરી, ૯ પદ્મિની ૧૦ ગુઢશબ્દા (પદ્મનેત્રા) ૧૧ ચિત્રણી ૧૨ ચિત્ર વલ્લભા (પુત્રવલ્લભા, ચિત્રરૂપા) ૧૩ ગૌરી ૧૪ ગાધારી ૧૫ દેવશાખા ૧૬ મરિચિકા ૧૭ ચદ્રાવલી ૧૮ ચદ્રરેખા (પત્રલેખા) ૧૯ સુગધા ૨૦ શત્રુમર્દિની ૨૧ માનવી (માનિની) ૨૨ માનહમા ૨૩ સુસ્વભાવા ૨૪ ભાવમુદ્રિકા (ભાવચદ્રા) ૨૫ મૃગાક્ષી ૨૬ ઉર્વશી ૨૭ રભા ૨૮ સુજઘોષા (મજુઘોષા) ૨૯ જયા ૩૦ વિજયા (મોહીની) ૩૧ ચદ્રવક્રા (ઉત્તાના) ૩૨ કામરૂપા એ રીતે નૃત્ય કરતી બત્રીશ દેવ કન્યાના નામ જાણવા. વિજયાનુ મોહીની, ચદ્રવક્રાનુ ઉત્તાના અને કામરૂપાનુ તિલોત્તમા એમ ત્રણેના અપરના નામ જાણવા ४) ૧૦૩ થી ૧૦૭

जघाकी फिरती प्रदक्षिणामे अपने स्थानपर ईशान कोणसे १ मेनका, २ लीलावती, ३ विधिचिता, ४ सुदरी, ५ शुभगामिनी (सुभागिनी), ६ हसावली, ७ सर्वकला, ८ कर्पूरमजरी, ९ पद्मिनी, १० गुढशब्दा, (पद्मनेत्रा) ११ चित्रणी, १२ चित्रवल्लभा, (पुत्रवल्लभा, चित्ररूपा) १३ गोरी, १४ गाधारी, १५ देवशाखा, १६ मरिचिका, १७ चद्रावली, १८ चद्ररेखा, (पत्रलेखा) १९ सुगधा, २० शत्रु-मर्दिनी, २१ मानवी, (मानिनी) २२ मानहसा, २३ सुस्वभावा, २४ भावमुद्रिका, (भावचद्रा) २५ मृगाक्षी, २६ उर्वशी, २७ रभा, (उत्तान) २८ सुजघोषा, (मजुघोषा) २९ जया, ३० विजया, (मोहिनी) ३१ चद्रवक्रा, (उत्ताना) ३२ कामरूपा, (तिलोत्तमा) । इस तरह नृत्य करती बत्तीस देवागना–देवकन्याका नाम जानना ।४ १०३ से १०७

मडोवर वितानाद्य त्रिपुरुष रविजिना ।
मडपाश्चैव सोभाढ्या च गीतनृत्य समन्विता ॥१०८॥

माह्वा स्थान मुत्कीर्णा द्वात्रिंशं च प्रदक्षिणे ।
स्वयं क्षीरार्णवे प्राज्ञ विशेषेण चतुर्मुखे ॥१०९॥
तथाश्च जंघामारुह्य रूपवत्योऽमराङ्गना ।
त्रय स्थाने भवेद्रंभा चतुःस्थाने च मेनका ॥११०॥
उर्वशी च द्विधास्थाना मरिची पंच भागतः ।
पङ्विधा मुजघोषा च चत्वारं च तिलोत्तमा ॥१११॥
विष्णु दशावतारं च तथा सप्त प्रजापतिः ।
शिवं च पंचधा प्रोक्त तथा देवाङ्गनादिका ॥११२॥

બ્રહ્મા વિષ્ણુ અને રૂદ્ર, સૂર્ય અને જિન એ સર્વના પ્રાસાદો અને મંડપોમાં સુશોભનમાં ગીત અને નૃત્ય કરતાં દેવ દેવાંગનાઓ અને ઉત્તમ સ્થાનમાં ફરતી બત્રીશ દેવાંગનાઓ પ્રદક્ષિણાએ કરવી. સ્વયં ક્ષીરાર્ણવમાં ઉત્પન્ન થયેલ અને વિશેષે કરીને ચતુર્મુખ પ્રાસાદની જંઘામાં સ્વરૂપવાન એવી દેવાંગનાઓનાં સ્વરૂપો કરવાં. એક જ પ્રાસાદમાં રંભાના સ્વરૂપો ત્રણ સ્થળે કરી શકાય; મેનકા ચારે સ્થાને; ઉર્વશી બે સ્થળે; મરિચીકા પાંચ સ્થાને, મુજઘોષા છ સ્થાને અને તિલોત્તમા ચાર સ્થાને ફરી ફરીને કરી શકાય, જંઘામાં યથાયોગ્ય પ્રાસાદમાં વિષ્ણુપ્રાસાદોમાં વિષ્ણુના દશ અવતારો, બ્રહ્માના પ્રાસાદોના સાત પ્રજાપતિ, શિવ પ્રાસાદમાં શિવના પાંચ સ્વરૂપો. (૧ સદ્યોજાત્ત ૨ વામદેવ ૩ અઘોર ૪ તત્પુરુષ ૫ ઈશાન.) કરવાં કહ્યાં છે. તે ઉપરાંત દેવાઙ્ગનાઓના સ્વરૂપો પણ ફરતાં કરવાં. ૧૦૮ થી ૧૧૨.

ब्रह्मा विष्णु और रूद्र, सूर्य और जिन इन सर्वके प्रासादों और मंडपोंमें सुशोभनमें गीत और नृत्य करते देव–देवांगनाओं और उत्तम स्थानमें फिरती बत्तीश देवांगनाओंको प्रदक्षिणासें करना । स्वयं क्षीरार्णवमें उत्पन्न हुई और विशेष करके चतुर्मुख प्रासादकी जंघामें स्वरूपवान ऐसी देवांगनाओंके स्वरूपों करना । एक ही प्रासादमें रंभाके स्वरूपों तीन स्थलों पर हो सकते हैं । मेनकाको चारों स्थानमें उर्वशी दो स्थल पर, मरिचीका पाँच स्थानों पर, मुंजघोषा छः स्थानों पर, और तिलोत्तमा चार स्थानों पर फिर फिर करा सकते हैं । जंघामें यथायोग्य प्रासादमें, विष्णु प्रासादोंमें विष्णुके दश अवतारों, ब्रह्माके प्रासादोंके सात प्रजापति, शिव प्रासादमें शिवके पाँच स्वरूपों (१ सद्योजात्तर वामदेव ३ अघोर ४ तत्पुरुष ५ ईशान) करनेके लिये कहा है । इसके अतिरिक्त देवांगनाओंके स्वरूपों भी फिरते करना । १०८ से ११२.

मेनका खड्गखेटं च नृत्यति च पदस्तले।
आलस्या च लीलावती विधिचिता सदर्पणा ॥११३॥
सुंदरी नृत्य युक्ता च शुभा कंटक (गृक) निर्गता।
पाद श्रृङ्गार कर्त्री च हंसा कमल लोचना[५] ॥११४॥
गाथा उच्चारणा वाथ सर्वकला अतः शृणु।
'नृत्यंति च सर्वकला वरदादक्षपाणिना ॥'११५॥
मस्तके वामहस्ते च चिंतनमुद्रा संयुतम्।

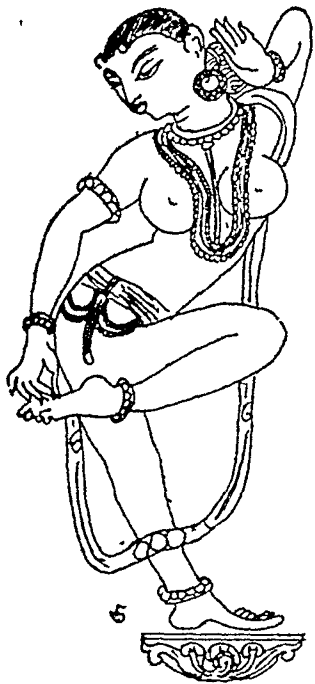


१ मेनका २ लीलावती ३ विधिचिता ४ सुन्दरी

१ મેનકાનુ સ્વરૂપ હાથમા ખડગ-ઢાલ ધારણ કરતી નૃત્ય કરતી (ડાબો પગ ઊચો), ૨ આળસ મરડતી હોય તેવા સ્વરૂપવાળી **લીલાવતી;** ૩ દર્પણ ધારણ કરી (મુખ જોતી) કે ચાદલો કરતી **વિધિચિના** જાણવી, ૪ નૃત્ય કરતી એવી **સુદરી** જાણવી ૫ પગનો કાટે કાઢની એવી **સુસ્વભાવીની** (શુભાગિની) જાણવી, ૬ પગનો શણુગાર (ઝાઝર) પહેરતી એવી કમળના લોચનવાળી ગાથાનો ઉચ્ચાર કરવી હોય તેવી **હસાવલી** જાણવી ૭ નૃત્ય કરતી સર્વકલા જેનો જમણો હાથ વરદ મુદ્રાવાળો છે અને ડાબો હાથ નૃત્ય કરતો મસ્તક ઉપર છે તેવી ચિતન મુદ્રવાળી **સર્વકલા** જાણવી ૧૧૩-૧૧૪-૧૧૫

५ पाठान्तर रणश्रृङ्गार भूषिता। ६ જૂની પ્રતોમા તે સહ ભૂઆણા મધ્યે ધિધુ ધિધુ ધિગ્ ધિગ્ जायति। परपुर वहि चतुर्मुखे द्विद्वा सुरनर नृत्यति भावना सहजाम्। પાઠ છે ६ पुरानी प्रतमें ते सह सहजाम्। पाठ है।

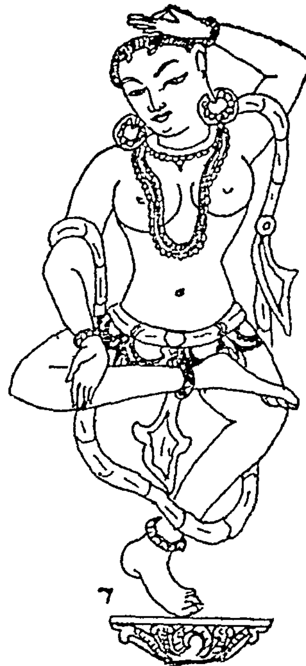
१ मेनकाका स्वरूप हाथमें खड्ग–ढाल धारण किया–नृत्य करना। (दाया पाँव ऊँचा।) २ आलसको व्यक्त करता स्वरूपवाली लीलावती। ३ दर्पण धारण कर (मुखको देखती) या तिलक करती विधिचिता जानना। ४ नृत्य करती ऐसी सुंदरी जानना। ५ पाँवसे काँटा निकालती ऐसी सुखभाविनी (शुभांगिनी) जानना। ६ पाँवका शृंगार (झाँझर) पहनती ऐसी कमल जैसे लोचनवाली गाथाका उद्धार करती हो वैसी हंसावली जानना। ७ नृत्य करती सर्वकला जिसका दाहिना हाथ वरदमुद्रावाला है, और बाँया हाथ नृत्य करता मस्तक पर है। वैसी चिंतन मुद्रावाली सर्वकला जानना। ११३–११४–११५.



५ शुभगामिनी



६ हंसावली



७ सर्वकला



८ कर्पूरमंजरी

[७]नग्न भावे कृतस्नाना नाम्ना कर्पूरमंजरी ॥११६॥
पद्महस्ते च नृत्याङ्गी पट्टे पद्मं च पद्मिनी।
[८]अभयदा शिशुयुक्ता पद्मनेत्रा सा उच्यते ॥११७॥
[९]कपाले वामहस्ता च नृत्यभावा च चित्रिणी।
चित्ररूपा स पुत्राङ्गो गौरि च सिंहमर्दिनी ॥११८॥

(८) नग्न (भग्न) भावथी स्नान करती अथवा भावमग्न नृत्य करती એવી કર્પૂરમંજરી જાણવી. (૯) જેના હાથમાં પદ્મ (કમળ) રાખીને નૃત્ય અંગવાળી કમળ–પદ્મના પટવાલી એવી **પદ્મિની** જાણવી) (૧૦) અભયમુદ્રાવાળી પડખે શિશુ બાળક છે એવી **પદ્મનેત્રા ગુઢશબ્દા** જાણવી (૧૧) નૃત્ય ભાવથી **જેને**

७. पाठान्तर—मग्नभावामलस्नान ८. चत्वारिंवद्धु युक्ता च ९. वामहस्ते शिरंदद्यात्।

ડાબો હાથ કપાળ (મસ્તકે) છે તેની **ચિત્રિણી** જાણવી (૧૨) જેણે અગે પુત્ર ધારણ કરેલ તેડેલ છે એવી **ચિત્રરૂપા** (ચિત્રવલ્લભા–પુત્રવલ્લભા) જાણવી (૧૩) સિંહનુ મર્દન કરનારી એવી **ગૌરી** જાણવી ૧૧૬–૧૧૭–૧૧૮



९ पद्मिनी १० गूढशब्दा पद्मनेत्रा ११ चित्रिणी १२ चित्रवल्लभा=पुत्रवल्लभा चित्ररूपा

(८) नग्न (मग्न) भावसे स्नान करती अथवा भावमग्न नृत्य करती ऐसी कर्पूरमजरी जानना। (९) जिसके हाथमे पद्म (कमल) रखकर नृत्य अगवाली कमल–पद्मके पटवाली ऐसी पद्मिनी (गूढशब्दा) जानना। (१०) अभयमुद्रावाली पासमें शिशु बालक है वैसी पद्मनेत्रा जानना। (११) नृत्य भावसे जिसका बाँया हाथ भाल (मस्तक) पर है वैसी चित्रिणी जानना। (१२) जिसने अग पर पुत्र धारण किया है ऐसी चित्ररूपा (चित्रवल्लभा–पुत्रवल्लभा) जानना। (१३) सिंहका मर्दन करनेवाली ऐसी गौरि जानना। ११६–११७–११८

[10]उत्तमाङ्गे करन्यस्ता गाधारी नामनर्तिका।
गोलचक्रं नृत्यकर्त्री देवशाखा सा चोच्यते ॥११९॥
धनुर्बाणाभ्यं संधाता वामदृष्टि मरिचिका।
[11]अजंली बद्धा नर्तकी च चद्रावली सुलोचना ॥१२०॥

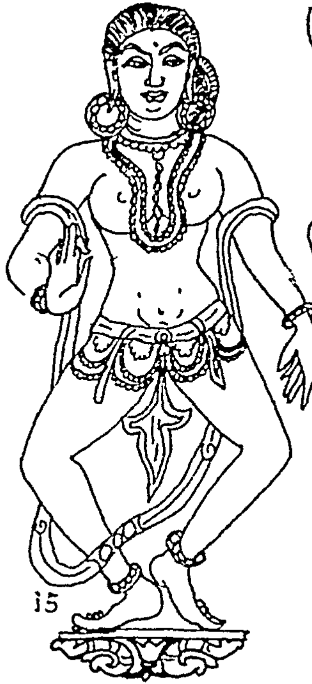
(૧૪) ઉત્તમ અગવાળી જમણો હાથ ઊચો રાખી રમ્ય એવી નૃત્ય કરતી **ગાંધારી** જાણવી (૧૫) ગોળચક્ર નૃત્ય કરતા અગવાળીને **દેવશાખા**

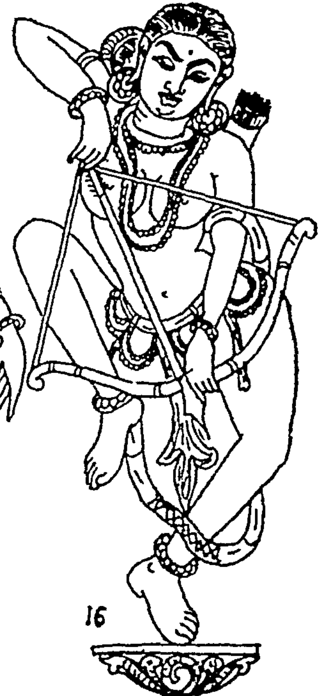
१० दक्षहस्त शिर सिरम्या ११ सन्मुखा दृष्टिभावा च।

(દેવજ્ઞા) કહી છે. (૧૬) ડાબી તરફ દૃષ્ટિ રાખીને ધનુષ–બાણ તાકતી એવી **મરિચિકા** જાણવી. (૧૭) સન્મુખ દૃષ્ટિભાવવાળી અંજલી મુદ્રાવાળી એવી સુંદર લોચનવાળી નર્તકી **ચંદ્રાવલી** જાણવી. ૧૧૦–૧૨૦



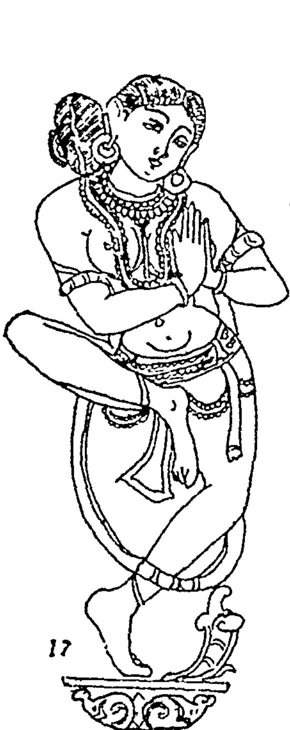






१३ गौरी १४ गांधारी १५ देवशाखा=देवज्ञा १६ मरिचिका

(१४) उत्तम अंगवाली दाहिने हाथको ऊँचा रखकर रम्य ऐसी नृत्य करती गांधारी जानना। (१५) गोलचक्र नृत्य करते अंगवालीको देवशाखा









१७ चन्द्रावली १८ चन्द्ररेखा पत्रलेखा १९ सुगंधा २० शत्रुमर्दनी

(देवज्ञा) कही है। (१६) बाईं तरफ दृष्टि रखकर धनुष-बाण ताकनी ऐसी मरिचिका जानना। (१७) सन्मुख दृष्टिभाववाली अंजली मुद्रावाली ऐसी सुन्दर लोचनवाली नर्तकी चँद्रावली जानना। ११९-१२०

दक्षिण हस्तकमले ताडपत्रं च धरित्री।[१२]
ललाटे चँद्ररेखा च सनाम विस्तरे सदा ॥१२१॥
सुगंधा च चक्रधरा चक्र नृत्यं च कुर्वति[१३]।
[१४]असिपुत्र धरा नृत्या शोभते शत्रुमर्दिनी ॥१२२॥

જેના જમણા હાથમા લેખિની છે અને તાડપત્ર ધારણ કરી લેખન કરતી એવી, જેના લલાટમા ચદ્રની રેખા તેના નામ પ્રમાણે છે એવી સદા વિસ્તારવાળી **ચદ્રરેખા**=(પત્ર લેખા) જાણવી (૧૯) ચક્રને માથે ધારણ કરીને ગોળ નૃત્ય કરતી એવી **સુગધા** જાણવી (૨૦) હાથમા છરી ધારણ કરી નૃત્યથી શોભતી એવી **શત્રુમર્દિની** જાણવી ૧૨૧-૧૨૨

(१८) जिसके दाहिने हाथमे लेखिनी है, और ताडपत्र धारण कर लेखन करती ऐसी जिसके ललाटमे चँद्रकी रेखा उसके नामके अनुसार है ऐसी सदा विस्तारवाली-चँद्ररेखा (पत्रलेखा) जानना। (१९) चँद्रको शिरपर धारण करके गोलाकार नृत्य करती ऐसी सुगधा जानना। (२०) हाथमे छूरी धारण कर नृत्यसे शोभती ऐसी शत्रुमर्दिनी जानना। १२१-१२२

एका स्वर्गस्य भवने द्वितिया द्योवने शुभे।
तृतीया च वसुधरे चतुर्मुखे क्षीरार्णवे ॥१२३॥

દેવાગનાનુ એક સ્વરૂપ સ્વર્ગ ભવનમા છે બીજુ ઉદ્યોત એવા શુભ વનમાં છે ત્રીજુ આ પૃથ્વી પર છે અને ચોથુ ક્ષીરાર્ણવના આ ચતુર્મુખ પ્રાસાદને વિશે છે ૧૨૩

देवागनाका एक स्वरूप स्वर्ग भवनमे है। दूसरा उद्योत ऐसा शुभ वनमे है। तीसरा इस पृथ्वी पर है, और चौथा क्षीरार्णवके इस चतुर्मुख प्रासादके अदर है। १२३.

हारहस्ता च नृत्याङ्गी मानवी कुल सुदरी।
[१५]पृष्ठ वंशोद्भवा नृत्या मानहंसा च सुदरी ॥१२४॥
[१६]ऊर्ध्वपादे चतुर्भङ्गी स्वभावा करौ मस्तके[१७]।
[१८]हस्तपादौ योगमुद्रा भावचंद्रा सुनर्तकी ॥१२५॥

१२ सुलेखा १३ वक्रनृत्य १४ छुरिकास्तु नृत्याङ्गी। १५ मपृष्ठा पृष्ठि मुखा च ऊपदा मानहसानी १६ स्वभावा द्विकरा शिर। शिरसि करा। १७ १८ दक्षपादो।

(२१) બે હાથમાં હાર ધારણ કરીને નૃત્ય કરતા અંગવાળી એવી કળાની કુળ સુંદરી **માનવી** (માનની) જાણવી. (૨૨) પોતાની પૂંઠે-વાંસો દર્શાવી નૃત્ય કરતી એવી જેનું મુખ પાછળ છે એવી સુંદરી **માનહંસા** જાણવી. (૨૩) જેનો જમણો પગ ઊંચો રાખી બે હાથો મસ્તક પર રાખીને ચાર અંગથી મરોડવાળી એવી **સ્વભાવા** જાણવી. (૨૪) જેના હાથ પગ યોગ મુદ્રા યુક્ત રહીને નૃત્ય કરતી એવી નર્તકી **ભાવચંદ્ર-ભાવમુદ્રિકા** જાણવી. ૧૨૪-૧૨૫









२१ मानवी (माननी) २२ मानहंसा २३ सुस्वभावा २४ भावमुद्रिका=भावचंद्रा

(२१) दो हाथमें हार धारण करके नृत्य करते अंगवाली ऐसी कलाकी कुल सुंदरी मानवी (माननी) जानना। (२२) अपनी पीठ बताकर नृत्य करती ऐसी जिसका मुख पीछे है ऐसी सुंदरी मानहंसा जानना। (२३) दाहिना पांव ऊँचा रखकर दो हाथी मस्तक पर रखकर चार अंगसे मरोडवाली ऐसी स्वभावा जानना। (२४) जिसके हाथ-पांव योगमुद्रा युक्त हो वैसी नर्तकी नृत्य करती भावचन्द्रा-भावमुद्रिका जानना। १२४-१२५.

मृगाक्षी सकला नृत्या तथोर्वशी अतः श्रृणुः[१९] ।
[२०]दशहस्ते दैत्यशिखा दैत्यखड्गेन हन्ति च ॥१२६॥

(૨૫) સર્વ કળાથી નૃત્ય કરતી એવી **મૃગાક્ષી** જાણવી. (૨૬) હવે ઉર્વશીનું સ્વરૂપ સાંભળો. જમણા હાથે દૈત્યની શિખા ખેંચી ખડગથી મારતી એવી[२६] **ઉર્વશી** જાણવી. ૧૨૬.

(२५) सर्व कलासे नृत्य करती ऐसी मृगाक्षी जानना। अब उर्वशीका स्वरूप सुनो। दाहिने हाथसे दैत्यकी शिखा खिचकर खडकसे मारती ऐसी[२६] उर्वशी जानना। १२६.

१९. तथा वाक्यं अतः श्रृणु २०. उर्वशी कोइल खड्ग प्रहारे दैत्यकं भवेन्।

विश्वकर्मण वदेत्वाक्यं जडको जानंति शिल्पिन? ।
तेन वास्तु-तिष्ठति अपोदस्ते चतुरङ्गना ॥१२७॥ १२७
१२७

[२१]हस्तद्वयेन छुरिके धृत्वा नृत्यं च कुर्वते ।
ऊर्ध्वी कृत दक्षपाद नाम्ना रंम्भा नर्तकी ॥१२८॥
[२२]हस्तद्वयेन खड्गे च नृत्यागतं च कुर्वति ।
भुजघोपंति नामा सा नृत्यंकरोति सर्वदा ॥१२९॥









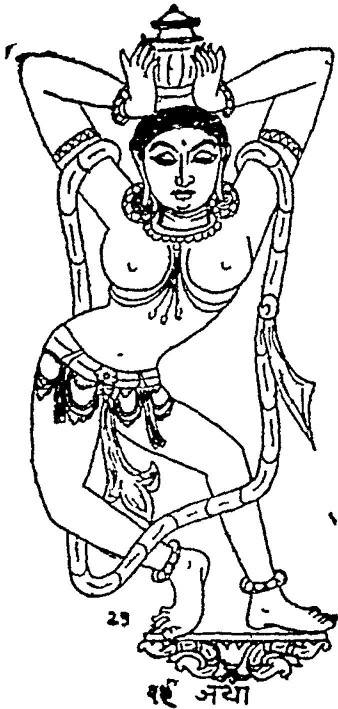
२५ मृगाक्षी   २५ उर्वशी   २७ रम्भा   २८ मुजघोपा (मजुघोपा)

(२७) બેઉ હાથમા છૂરી ધારણ કરીને જમણો પગ ઉચો રાખીને નૃત્ય કરતી એવી રભા જાણવી (૨૮) બે હાથોમા ખડગ ધારણ કરીને હમેશા ગોળ ભમતી નૃત્ય કરતી એવી ભુજઘોષા–મંજુઘોષા જાણવી ૧૨૮–૧૨૯

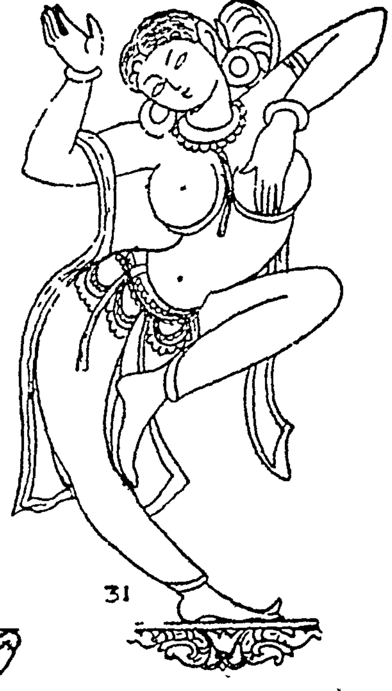
(२७) दोनो हाथमे छूरी धारण कर दाहिना पाँव ऊँचा रखकर नृत्य करती ऐसी रम्भा जानना। (२८) दो हाथोंमे खडग धारण कर हमेशा गोल फिरती नृत्य करती ऐसी भुजघोपा–मजुघोपा जानना। १२८–१२९

(२१) वज्रहस्ते छुरीका (२१) वाण विणायुक्त रभा ।
२२ धृताची कर्पूचिता च यानजाने च मपटी ।
द्वयो खड्गश्च साधारै (रभा) भ्रमरी आवर्त सयुता ॥१२८॥

[23] शिरसिकलशं धृत्वा जयानृत्यं च कुर्वति ।
[24] पुरुषालिङ्गा नयुक्ता मोहिनी नाम्ना नर्तकी ॥१३०॥
[25] लसत्सुंदराङ्गी नृत्या चोर्ध्व पादा तिलोत्तमा ।
काश्यमंजिवा पुष्पबाण कामरूपा पर तिलोत्तमा ॥१३१॥
कांस्य मंजि वंशी विणा शंख मृदंग खंजरी ।
विविधा वादित्र दश्याच क्वचित नृत्य नायक ॥१३२॥







२९ जया   ३० मोहिनी=विजया   ३१ चन्द्रवक्रा उत्ताना

૨૪. જૂની પ્રતોમાં આ શ્લોક ૧૨૭ થી જે સ્થિતિમાં છે તેવો જ પાઠ આપેલ છે. તેમાં બે હાથમાં ખડગ ધારણ કરેલી રંભા કે મુંજઘોષાનું સ્વરૂપ જાણવું, વળી મોહિનીના આગળના પાઠમાં ઈંદ્ર અને રંભાનું સ્વરૂપ કહ્યું છે. પરંતુ અહીં શ્લોક ૧૩૦ ના છેલ્લા પદ પ્રમાણે મોહની સ્વરૂપ પુરુપ–નરને આલિંગન આપતું કરવાનું કહે છે. વળી એક બીજી પ્રતમાં "नरयुक्ता समोहिनी" એમ સ્પષ્ટ કહ્યું છે. જો કે અહીં મોહીનીના સ્વરુપના પાઠ ભેદ છે પરંતુ તે એક જ ભાવ દર્શાવે છે.

पुरानी प्रतोंमें यह श्लोअ १२७ के बाद जो स्थिति है वैसा ही पाठ दिया है। उसमें दो हाथमें खडग रखनेवाली रंभा या—मुंजघोषाका स्वरूप जानना। मोहिनीका और आगेके पाठमें इंद्र और रंभाका स्वरूप कहा गया है। परंतु यहाँ श्लोक १३० के अंतिम पदके अनुसार मोहनी स्वरूप पुरुष-नरको आलिंगन देता करनेका कहते हैं। और एक दूसरी प्रतमें **"नरयुक्ता समोहिनी"** इस तरह स्पष्ट कहा है। जो कि यहाँ मोहिनीके स्वरूपके पाठ भेद हैं परंतु वह एक ही भाव बताता है।

૨૩. જયાના સ્વરૂપના પાઠ ભેદો છે. ગીરનડી कलश युक्ता બીજો એક પાઠ पादजंजरी जयाय એમ પણ પાઠ કોઈમાં મળે છે.

२३. जयाके स्वरूपके पाठ भेदो हैं। गीरनडी कलशंयुक्त, दूसरा एक पाठ पादज़ंजरी-जया च એમ પણ પાઠ કોઈમાં મળે છે.

२५. वासचिक (वालचीक) स्य संयुक्ता वदनेन तिलोत्तमा—पाठांन्तर।

(२९) મસ્તક પર કળશ ધારણ કરીને નૃત્ય કરતી એવી જયા જાણવી (૩૦) પુરુષને આલિંગન કરતી એવી વિજયા=મોહિની નામની નર્તકી જાણવી (૩૧) એક પગ ઊંચો રાખીને લચેલા અંગથી નૃત્ય કરતી એવી (ઉત્તાના)–ચંદ્રવક્રા જાણવી (૩૨) કાસીયા મંજીરા બજાવની અથવા પુષ્પબાણ ધારણ કરેલી એવી કામરૂપા (તિલોત્તમા) જાણવી ૧૩૦-૧૩૧



३२ कामरूपा (तिलोत्तमा)

કાસા–મંજીરા–બંસરી–વીણા–શંખ કે ઢોલ કે ખંજરી બજાવતી એવા વિવિધ વાજીત્રવાદી દેવાંગનાઓ પણ કોઈક પ્રાચિન શિલ્પમા દેખાય છે

कास्य–मजिरा, बसरी, वीणा, शख, ढोलक या खजरी बजाती ऐसी विविध वार्जित्र बजाती देवाङ्गनाओं क्वचित पुराने शिल्पमे दिखाती है।

(२९) मस्तक पर कलश धारण कर नृत्य करती ऐसी जया जानना। (३०) पुरुषको आलिंगन करती ऐसी विजया–मोहिनी नामकी नर्तकी जानना। (३१) लचे हुए अगसे नृत्य करती और एक पाँव ऊँचा रखकर नृत्य करती ऐसी उत्ताना–चँद्रवक्रा जानना। (३२) कासीया मजीरे बजाती अथवा पुष्पबाण धारण करती ऐसी कामरूपा (तिलोत्तमा) जानना। १३०–१३१



ढोल बजाती वीणा बजाती जाजरी बजाती कासीया बजाती देवाङ्गनाओं

शास्त्रोंका पाठसे विशेष प्राचिन मदिरोंमे देखनेमें आती पृथक पृथक स्वरूप, हावभाव, वाजित्रवाली देवाङ्गनाओंका स्वरूप।

अधोदृष्टि मताकार्या नृत्य भावेन नर्तकी ।
ज्ञायते सर्व लोकेऽस्मिन् स्थूलदेहा (च) महीतले ॥१३३॥
एते जंघा वितानादौ दिव्यस्थाने चतुर्मुखे ।
दिग्पाला यक्ष गंधर्व भास्करादि ग्रहस्तथा ॥१३४॥
मुनि तापसरुपश्च व्यालादि च जलांन्तरे ॥ इति देवाङ्गनादि जंघा स्वरूप ॥

સર્વ લોકમાં જાણીતી એવી દેવાંગનાઓ આ પૃથ્વી પર સ્થૂળ દેહ નૃત્ય ભાવવાળી નૃત્યાંગનાઓની દૃષ્ટિ નીચે રાખવી. પ્રાસાદના દિવ્ય સ્થાનમાં ચાતુર્મુખ પ્રાસાદની મંડોવરની જંઘા મંડપ ચોકી અને ઘૂમટો–વિતાન આદિમાં દિગ્પાલ લોકપાલ, યક્ષ, ગાંધર્વ અને સૂર્યાદિ નવ ગ્રહો ઇત્યાદિ સ્વરૂપો ફરતા કરવા. મુની તાપસ, વ્યાલ આદિના સ્વરૂપો પાણીતારમાં કરવા. ૧૩૩–૧૩૪. ॥ इति जंघास्वरुप ॥



शंख बजाती — वाल गुंथती — वंसरीवाली — बंसरी और पात्रवाली

शास्त्रोंका पाठोंसे विशेष प्राचिन मंदिरोंमें देखनेमें आती पृथक पृथक स्वरुप, हावभाव और वाजिंत्रवाली देवाङ्गनाओंका स्वरुप।

सर्वलोकमें विख्यात ऐसी देवाङ्गनाओं इस पृथ्वी पर स्थूल देहसे नृत्य भाववाली नृत्यांगनाओंकी दृष्टि नीचे रखना। प्रासादके दिव्य स्थानमें चातुर्मुख प्रासादकी मंडोवरकी जंघा मंडप चौकी और घुमट–वितान आदिमें दिग्पाल–लोकपाल यक्ष, गांधर्व और सूर्यादि नौ ग्रहों इत्यादि स्वरूपों फिरते करना। तापस व्याल आदि स्वरुप पानी तारमें करना। १३३–१३४ ॥ इति जंघा स्वरुप ॥

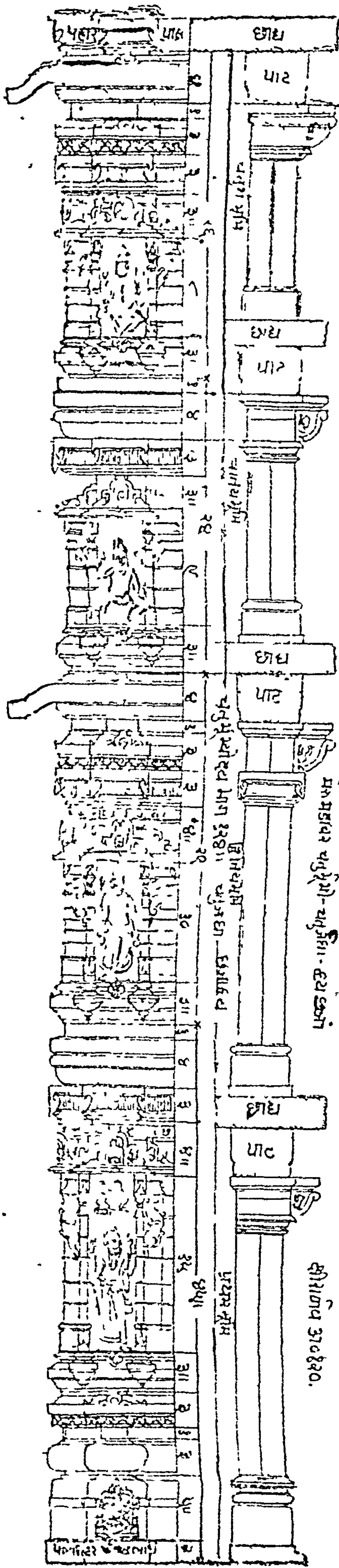
उद्गमं मार्द्धचत्वारि भरणी त्रिपदं भवेत् ।
उद्गमः कपि मंयुक्तो भरणी पल्लवैर्युता ॥१३५॥
शिरावटी चतुर्भागा शिरपट्ट समाकुला ।
छादनं पद मेकेन कपोताली च पूर्वतः ॥१३६॥
त्रिपदं कपोताली च अंतरपद मेव च ।
कूटछाद्य चतुर्भागं प्रहारं तत्समं भवेत् ॥१३७॥

(આગળ જઘા સુધીના ઉદયના ૩૩ ભાગ કહ્યા તેમા ૫દર ભાગની જઘા પર) આડા ચાર ભાગનો દોઢિયો–ત્રણ ભાગની ભરણી–દોઢિયામા ગ્રાસપટ્ટી ઉપર રાખી ખૂણે ખૂણે કપિ–વાદરાના સ્વરૂપા કરવા અને ભરણીને ખૂણે પાદડા કરી–(પ્રતિરથમા નીચે ગોળ–વૃત કણીકા કરવી) ચાર ભાગની શિરાવટી કરવી તેના ઉપરની પટ્ટીનો સમાસ કરવો એક ભાગનુ છાદન, ત્રણ ભાગનો કેવાળ, ફરી ત્રણ ભાગનો બીજો કેવાળ, એક ભાગની અધારી કરી ચાર ભાગનુ છજ્જુ કરવુ તે પર તેટલો જ એટલે ચાર ભાગના પ્રહારનો થર કરવો ૧૩૫ થી ૧૩૭

(आगे जघा तकके उदयके ३३ भाग कहे। उनमे पन्द्रह भागकी जघा पर) साढे चार भागका डेढिया–तीन भागकी भरणी–डेढियेमे ग्रासपट्टी उपर रख कर कोने कोनेमे कपि–बंदरका स्वरूप करना। और भरणीको कोनेमे पत्र (प्रतिरथमे नीचे गोल घृत कणिका) करना। चार भागकी शिरावटी करना उसके उपरकी पट्टीका समास करना। एक भागका छादन, तीन भागका केवाल फिर तीन भागका दूसरा केवाल, एक भागकी अधारी करके चार भागका छज्जा करना। उसके उपर इतने ही अर्थात चार भागके प्रहारका थर करना। १३५ से १३७

छादने न भवेत्मंची प्रमाण पूर्वमेव च ।
दिग् भागायुता जंघा भरणी पूर्ववत् क्रमे ॥१३८॥
कपोताली त्रयो भागा पदमेकं चान्तरं भवेत् ।
छाद्यं क्रियते पूर्वे प्रहारानि चतुष्पदम् ॥१३९॥

હવે બે જઘાનો મડોવર કહે છે (છાદન સુધીના ૪૫ાા ભાગ ઉપર) સાડા ત્રણ ભાગની માચી, દશ ભાગની જઘા, ત્રણ ભાગની ભરણી–કેવાળ ત્રણ ભાગનો, એક ભાગની અધારી અને ચાર ભાગનુ છજ્જુ કરવુ (કુલ ૭૦ ભાગ બે મજલાની બે જઘાના થયા) છજા પર ચાર ભાગનુ પ્રહાર કરવુ ૧૩૮–૧૩૯.



चार भूमि ४५॥ + २९ + २४ + २६ (१२४॥) विभाग उदय—चार जंघा और दो छज्जावाला महामंडोवर

अब दो जंघाका मंडोवर कहते हैं। (छादन तकके ४५½ भाग पर) साढे तीन भाग की माची दश भागकी जंघा, तीन भागकी भरणी—केवाल तीन भागका—एक भागकी अंधारी और चार भागका छज्जा करना। (कुल ७० भाग दो मजलेकी दो जंघाके हुए) छज्जे पर चार भागका प्रहार करना। १३८–१३९

द्वादशी जेष्ठा जंघा च भरणीकोर्ध्वं मंचिका।
नवधा पुनर्जंघा च उद्गमं त्रय सार्द्धतः ॥१४७॥
भरणी शिरावटी स्तत्र छादनं तु विशेषतः।
[२६] कपोताली भवेद्वे च कूटछाद्यं च मस्तके॥१४९॥

જ્યેષ્ઠ માનની બાર જંઘા સુધી ચડાવતાં બીજી જંઘાનું કહે છે. (ઉપરના છજા સુધી ૭૦ ભાગમાં) છજા પર માચી સાડા ત્રણ ભાગની, નવ ભાગની ત્રીજી જંઘા, સાડા ત્રણ ભાગનો ઢોઢીયો, ભરણી ૩ શિરાવટી ૪ છાદન ૧ બે કેવાળ ૩+૩ (કુલ ૩૦ ભાગ, એક ભાગ અંધારી) તે ઉપર છજું ચાર ભાગનું કરવું. (એટલે છજા સુધીના ૧૦૫ ભાગ થયા.) ૧૪૦–૧૪૧.

ज्येष्ठमानकी बारह जंघा तक चढ़ाते तीसरी जंघाका कहते हैं। छजातक ७० भागमें छज्जा उपर माची साढे तीन भागकी नौ भागकी तीसरी जंघा—साढे तीन भागका ढेढिया—भरणी ३ शिरावटी ४ छादन १ दो केवाल ३+३ (कुल ३० भाग, एक भाग अंधारी) उसके पर छजा चार भागका करना। (इससे छजा तकके १०५ भाग हुए।) १४०–१४१

(२६) કેવાળ ઉપર અને કૂટછાદ્ય નીચે અંતરાળ આવવો જ જોઈએ. પરંતુ અહીં લહીયાના દોષે એ પદ અપૂર્ણ જણાય છે.

(२७) केवाल उपर और कूटछाद्य नीचे अंतराल आना ही चाहिये, यहाँ लहियाकी गलतीसे दो पद अपूर्ण हैं।

छादने मंचिका तत्र पुनर्जंघाष्ट भागका ।
भरणी कपोताली च छाद्यं च प्रहारकः ॥१४२॥

ચોથી જંઘા ચડાવવાનું કહે છે (ઉપરના ૮૪ ભાગ છાદન સુધીના) છાદન ઉપર માચી ત્રણ ભાગની જંઘા આઠ ભાગની, ત્રણ ભાગની ભરણી, કેવાળ ત્રણ ભાગનો (અને એક ભાગનું અંતરાળ) પર છજુ ચાર ભાગનું કરી તે પર પ્રહારનો થર કરવો (એ રીતે ચાર જંઘાનો મહામંડોવર–બે છજા ને ચાર જંઘાનો ૧૧૬ ભાગનો જાણવો) १४१-१४२

चौथी जंघाको चढानेके लिये कहते है। (उपरके ८४ भाग छादन तकके) छादनके उपर माची तीन भागकी जंघा आठ भागकी, तीन भागकी भरणी, केवाल तीन भागका (और एक भागके अंतराल) पर छज्जा चार भागका कर उसके पर प्रहारके थर करना। १४१ इस तरह चार जंघाका और २ छज्जाका महामंडोवर १२४॥ भागका कहा) १४२

अथ कवलीमान—तथा च गर्भमध्ये च विस्तारं कवलिकोत्तमम् ।
दीर्घमान स्ततो रिपि श्रृणुत्वेकाग्रतो मुनि ॥१४३॥
चित्रो[1] विचित्रा[2] चैव ।
तृतीया अभया[3] चित्र रूपचित्र[4] चतुर्दलम् ॥१४४॥
पणमेकं प्रासादं कवली चाऽभयाभयो ।
कर्णांते पण स्त्रिकवली पण मेव च ॥१४५॥
पंच विस्तार प्रासाद कवली विचित्रांतके ।
[२८](पणमेक च प्रासादं कवली त्रिपणान्तक) ।
ना लंघयस्तत्रमानं च पण सप्तनतोत्पर ॥१४६॥
प्रासाद कर्ण सूत्रेण स्तूपस्तूर्ण विशेषतः ।
सिंहशाखा खल्वशाखा स्तेन स्तत्रे उदंबरः ॥१४७॥

હવે કવલીનું માન કહે છે ગર્ભગૃહના જેટલા વિસ્તારની કોળી ઉત્તમ માનની જાણવી તેની લંબાઈ એટલે નીકળતી કોળીનું માન હે ઋષિરાજ, હવે એકાગ્રતાથી સાંભળો કોળીના ચાર માનના નામો ૧ ચિત્રા ૨ વિચિત્રા ૩ અભયચિત્રા ૪ રૂપચિત્રા એ ચાર નામો જાણવા (૧) પ્રાસાદના જેટલી એક ખંડ જેટલી કોળી અભય નામે જાણવી (૨) પ્રાસાદ રેખાયે હોય તેના

(२८) કૌંસમાં આપેલા બે પદો વણી પ્રતોમાં નથી
कौंसमे दीये दो पद कीतनी प्रतामे नहीं है।



स्थंभ के ठेकेमें परिकर वाले इंद्रस्वरूप-(कल्याण)

लक्ष्मी नारायण युग्मरूप कडर्य महादेव मंदिर खजुराहो

कडय महादेव मंदिर में जधामें शिवपार्वती और देवाङ्गना के स्वरुप

ત્રીજા ભાગની **ચિત્રા** નામે જાણવી. (૩) પ્રાસાદના પાંચ ભાગમાંના એક ભાગ જેટલી કોળી કરવી તે **વિચિત્રા** નામે જાણવી. (૪) પ્રાસાદના પાંચ ભાગ ત્રણ ભાગ જેટલી કોળી રાખવીને **રૂપચિત્રા** નામે જાણવી. પ્રાસાદ રેખાયે હોય તેના સાતમા ભાગથી ઓછું માન-ઉલ્લંઘન કરી કોળી ન કરવી. સાંધાર પ્રાસાદના રેખા સૂત્રના પ્રમાણથી મધ્યનો સ્તૂપ અરધાથી કંઈક વિશેષ રાખવો. પ્રાસાદના રેખા સૂત્ર બરાબર સિંહ શાખા અને પત્રશાખા અને ઉંબરો રાખવા. ૧૪૩ થી ૧૪૭.

अब कवलीका मान कहते हैं। गर्भगृहके विस्तारके बराबर कोली उत्तम मानकी जानना। उसकी लम्बाई अर्थात् निकलती कोलीका मान हे ऋषिराज़! अब एकाग्रतासे सुनो। कोलीके चार मानके नामों १ चित्रा २ विचित्रा ३ अभयचित्रा ४ रूपचित्रा। इन चार मानोंको जानना। १ प्रासादके बराबर एक खंडके बराबर कोली अभय। नामसे जानना। २. रेखा पर हो उसके तीसरे भागकी चित्रा नामसे जानना। ३ प्रासादके पाँच भागमेंसे एक भागके बराबर कोली करना। उसे विचित्रा नामसे जानना। प्रासादके पांच भाग करके तीसरा भागकी कोली रूपचित्रा जानना। प्रासाद रेखाके पर हो उसके सातवे भागसे कम मान-उल्लंघन कर कोली न करना। सांधार प्रासादके रेखा सूत्रके प्रमाणसे मध्यका स्तूप आधेसे कुछ ज्यादा रखना। प्रासादके रेखासूत्रके बराबर सिंह शाखा और पत्रशाखा और उंबरा रखना। १४३ से १४७

अथ भिष्टिमान—दशहस्तोत्परे यत्र चतुर्दश यथा भवेत्।
मध्यस्तूप न दातव्या वेदिका सर्वकामदां ॥१४८॥
दशमांशे यदा भित्ति द्वादशांशेन मध्यतः।
त्रिविधं भित्तिमानं च ज्येष्ठमध्यकन्यसं ॥१४९॥
मध्य स्तूप प्रदातव्यं भित्तिस्यात्षोडशांशके।
पंचमांशे निरंधारे भित्ति प्रासाद शैलजे ॥१५०॥

દશ હાથથી ચૌદ હાથના સાંધાર પ્રાસાદના મધ્ય સ્તૂપ (મધ્ય લિંગ મૂળ ગર્ભગૃહ અને ભીંતો સાથેનો ભાગના નહિ પરંતુ બહાર રેખાયે હોય તે)ના દશમા-અગ્યારમા કે બારમા ભાગે એમ ત્રિવિધ માન જ્યેષ્ઠ મધ્યમ અને કનિષ્ઠ અનુક્રમે ઓસારનું જાણવું. મધ્ય સ્તૂપની ભિત્તિ સોળમા ભાગે રાખવી. નિરંધાર પ્રાસાદનું પાષાણનું ભિત્તિમાન પ્રાસાદના પાંચમા ભાગે રાખવું. ૧૪૮ થી ૧૫૦

दश हाथसे चोदह हाथके माधार प्रासादके मध्य स्तूप (मध्य लिंग-मूल गर्भगृह और दिवारोंके साथके भाग) के नहीं लेकिन बारह रेखा पर ही उनके दसवें ग्यारहवें या बारहवें भागमे इस तरह त्रिविधमान ज्येष्ठ मध्यम और कनिष्ठ अनुक्रमसे ओसारका जानना। मध्य स्तूपकी भित्ति सोलहवें भागमे रखना। पाषाणके निरधार प्रासादका भित्तिमान प्रासादके पाँचवें भागमे रखना। १४८-१४९-१५०

उपर्युपरिभूमीनां शंखावर्त (सव्यावर्त) प्रदक्षिणे।
नापसव्येन कुर्वीत् द्वारमारोहणीनि च ॥१५१॥
गर्भमध्ये कृतं द्वारं पुनर्बिंब च स्थाप्यते।
नंदवेद्याकृत्ये मध्ये शिखरं सर्वकामदम् ॥१५२॥

આ મહા ચોમુખની ઉપરની ભૂમિએ શંખાવર્ત (સવ્યાવર્ત) ફરતો પ્રદક્ષિણાએ કરવા તેના દ્વારના કમાડ અપસવ્ય ન કરવા ઉપર ગર્ભગૃહ કરીને તેમા વચ્ચે દ્વાર મૂકી ફરી બીબ-મૂર્તિની સ્થાપના ઉપરના માળે કરવી તે સર્વ કામનાને દેનારુ એવુ શિખર ૪૯ પદના મધ્યમા કરવુ ૧૫૧-૧૫૨

इस महा चोमुखकी उपरकी भूमि पर शखावर्त (सव्यावर्त) फिरते प्रदक्षिणामे करना। उनके द्वारके किवाड अपसव्य न करना। उपर गर्भगृह कर उसमे विचमे द्वार रखकर फिर बींब-मूर्तिकी स्थापना उपरके मजले पर करना। इससे सर्व कामनाको देनेवाला ऐसा शिखर ४९ पदके मध्यमे करना। १५१-१५२

शुकनास चतुपक्षे सर्वालंकार माश्रिते।
द्विभूमि सयुता स्तत्रा त्रयो भूमिकृते बुधे ॥१५३॥
एक भूमि द्वयो भूमि यावद् द्वादशभूमिका।
जंघा वृद्धि क्रम योगेन चकाद्यौ भास्करातिके ॥१५४॥

આવા મહા ચોમુખ પ્રાસાદને શુકનાશ ચારે તરફ સુશોભિત અલંકૃત કરવો તે બે ભૂમિવાળો કે ત્રણ ભૂમિવાળો બુદ્ધિમાન શિલ્પીએ કરવો મહા ચાતુર્મુખ પ્રાસાદ એક-બે મજલા એમ બાર માળ સુધી કરી શકાય તેની મંડોવરની જંઘા તે ક્રમના યોગે કરીને એકથી બાર જંઘા સુધી કરવી ૧૫૩-૧૫૪

ऐसे महा चोमुख प्रासादको शुकनाश चारो ओर सुशोभित अलकृत करना। वह दो या तीन भूमिवाला बुद्धिमान शिल्पीको करना चाहिये। महा चातुर्मुख प्रासाद एक दो मजले इस तरह बारह मजले तक कर सकते हैं। उसकी मंडोवरकी जघा उस क्रमके योगसे एकसे बारह जघा तककी करना। १५३-१५४

तथा युक्तिश्च विक्षाता रिषिराज श्रृणोत्तमाः ।
गर्भार्द्धं षडांशेन षणश्रेष्ठं च तं भवेत् ॥१५५॥
तत्षणं दिकूधा प्रोक्तं कन्यसं सप्तभागतः ।
षणमाने यदाशक्ति किंचिदधिके सविस्तरम् ॥१५६॥
त द्विषण भवेज्जेष्ठं कन्यसंतु द्विषोडश ।
विस्तारं युक्तिमित्याहु भद्रेरष्टादशैस्तथा ॥१५७॥

ભાવાર્થ—હે ઋષિરાજ, સર્વોત્તમ એવી (   )ની યુક્તિ હવે સાંભળો. સાંધાર-પ્રાસાદના ગર્ભગૃહના અર્ધ ભાગના છઠ્ઠા ભાગની ? (   ) શ્રેષ્ઠ જાણવી. તેના દશમા ભાગે કનિષ્ઠમાન અને સાતમા ભાગે મધ્યમાન-તેનાથી કંઈક અધિક રાખવું. તેના બે ભાગ જ્યેષ્ઠમાન તેનો બત્રીશમો ? કનિષ્ઠમાન (   ) વિસ્તારની યુક્તિ ભીંત જેટલી....ભદ્ર અઢાર ભાગ. ૧૫૫-૧૫૬-૧૫૭.

हे ऋषिराज, सर्वोत्तम ऐसी ? (   ) की युक्ति अब सुनो । सांधार प्रासादके गर्भगृहके आधे भागके छट्ठे भागकी ? (   ) श्रेष्ठ जानना । उसके दसवें भागमें कनिष्ठमान और सातवें भागमें मध्यमान; उससे कुछ अधिक रखना । उसके दो भाग ज्येष्ठमान-उसका बत्रीसवाँ ! (   ) कनिष्ठमान (   ) विस्तारकी युक्ति दिवारके बराबर....भद्र अठारह भाग । १५५-१५६-१५७

प्रासाद त्रिषणं वृक्ष्ये षणेकं भद्र मेव च ।
मंडपं च भवेत्रिणि क्वचिदायत निर्गमे ॥१५८॥
षणमेकं दंतरंतत्र ! द्येष्टं वा विचक्षणम् ? ।
द्विभूमि वेदिका कार्या त्रयोदश विवस्थिता ॥१५९॥
रंङ्गश्च तस्याग्रेन सार्द्ध भूमी विशेषत् ।
षणपंच प्रकर्तव्या मग्रे बलाणक मंडपः ॥१६०॥
तस्याग्रे द्वयोभूमि वेदीकुर्या द्विचक्षण ।
चत्वारो नवमि पाज्ञ कृत्वा नालीश्च मग्रत ॥१६०॥

ભાવાર્થ—મહા પ્રાસાદના રેખાયે હોય તેના ત્રણ ભાગ કહું છું. તેના એક ભાગના (બે) ભ્રમો કરવા. અને તેની ત્રણ બાજુ મંડપો કરવા. તે કંઈક નીકળતા રાખવા. એક ભાગ અંદર......વિચક્ષણ શિલ્પીએ કરવું. બે ભૂમિ વેદિકાવાળા મંડપો ત્રણ દિશાએ કરવા. આગળ રંગ મંડપની દોઢ મજલા જેટલી વિશેષ ભૂમિ ઊભણી રાખવી. પાંચ પદ વિભાગનો આગળનો બલાણક મંડપ બે ભૂમિયુક્ત અને વેદિકાવાળા વિચક્ષણ શિલ્પીએ કરવા. ચાર....નવ.... આગળ નાલી મંડપ ડાહ્યા શિલ્પીએ કરવા. ૧૫૮ થી ૧૬૧.

महा प्रासादके रेखापर हो उसके तीन भाग कहता हूँ। उसके एक भागके (दो) भ्रमों करना। और उसकी तीन बाजु पर मडपों करना। उन्हें कुछ निकलते करना। एक भाग अदर विचक्षण शिल्पीको करना। दो-भूमि वेदिकावाले मडपों तीन दिशाओंमें करना। आगे रंगमडपकी डेढ मजलेके बराबर विशेष भूमि-उभणी रखना। पाँच पद विभागका आगेका वलाणक मटप दो भूमियुक्त और वेदिकावाला विचक्षण शिल्पीको करना चाहिये। चार नव आगे नाली मडप बुद्धिमान शिल्पीको करना चाहिये। १५८ से १६१

विस्तार युक्तिमाख्यात निर्गमं श्रृणुतो मुनिः।
ब्रह्म मूलमार्गानि नालिद्वारं च षोडश ॥१६२॥
त्रयोदक्षे त्रयोपक्षे भद्रांते विचक्षण।
निर्गम भागमेकेन विस्तारं च त्रयोदश ॥१६३॥
मुखभद्र मूलसंस्थाने निर्गमे भाग भागांतरे।
फालयेत्प्राज्ञ .चतुर्दिक्ष विधिपता ॥१६३॥

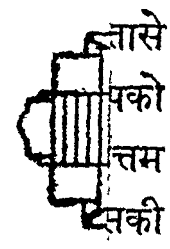
ભાવાર્થ—વિસ્તારના વિભાગ કહ્યા હવે નીકળતા કેટલા રાખવા તે હે મુનિ, સાંભળો ઊભા ગર્ભ બ્રહ્મ મૂલ માર્ગના નાલિદ્વારના સોળ ? કરવા ત્રણે દિશાએ ત્રણે બાજુ ભદ્રને અંતે વિચક્ષણ શિલ્પીએ કરવુ તેનો નીકાળો એકેક ભાગ અને વિસ્તારમાં તેર ભાગ-પદ-પણ જાણવા મૂખભદ્ર મૂળ સસ્થાન એકેક ભાગના આંતરે તેની ફાલનાઓ ચતુર શિલ્પીએ રાખવી તે રીતે ચાર દિશાઓનો વિધિ જાણવો १६२-१६३-१६४

विस्तारके विभाग कहे। अब निकलते कितने रखना यह हे मुनि, सुनो। खडे गर्भ ब्रह्म मूलमार्गके नालिद्वारके सोलह। करना। तीनों दिशाओंमे तीनों बाजु भद्रके अतमें विचक्षण शिल्पीको करना चाहिये। उसका निकाला एक एक भाग और विस्तारमे तेरह भाग=पद भी जानना। मुख भद्र मूल सस्थानके एक एक भागके अतरसे उसकी फालनाओं चतुर शिल्पी रखे। इस तरह चार दिशाओंका विधि जानना। १६२-१६३-१६४

पुनः चैंद्र समारभ्यं पद नंदे प्रदक्षणे।
चत्वारौ मूलयुक्ता च अष्टौते च महाधरा ॥१६५॥
एवंदा समायुक्ता संख्या मष्टोत्तरंशतम्।
तस्योर्द्ध पुनः द्यष्ट प्रमाणं च अतः श्रृणु ॥१६६॥
त्यक्ता नालि पुनः युक्ति श्रृणुत्वेकाग्रतो मुनि।
मेघनाद स - चाग्रे .मंडपे च क्षणंतरे ॥१६७॥

અને
ા તે
ઉપર
ક્તિ
ાદનું
મીને
યમાં
ાની

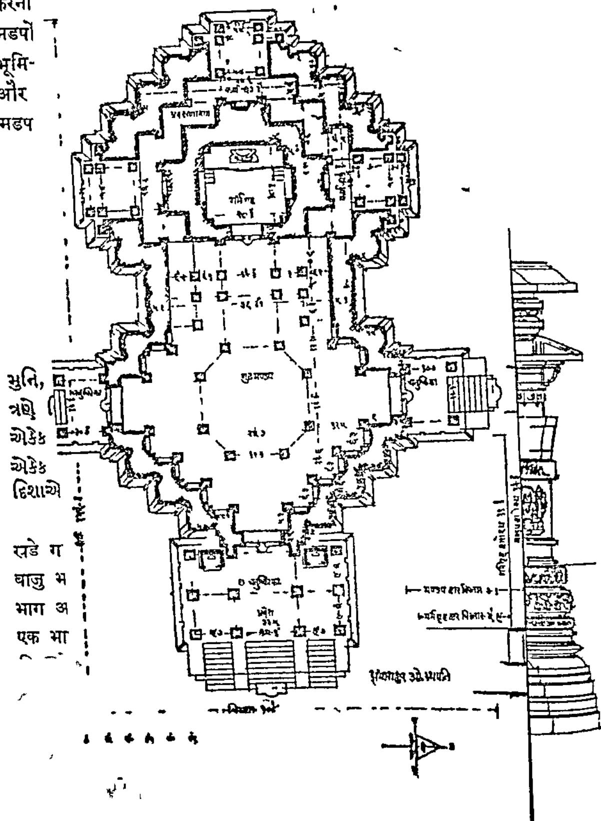
और
इस
ठका
तासे
पको
त्तम
सकी



ળો
ામાં

श्री तारंगा जैन (भ्रमयुक्त) सांधार प्रासाद तलदर्शन

(दो)
करना
मडपों
भूमि-
और
मडप



भुनि,
त्रणे
એકેક
એકેક
દિશાએ

सडे ग
बाजु भ
भाग अ
एक भा

षणान्तरे पुनदद्यात् सभ्रमा मंडपोत्तमा ।
समवसरण कृते मध्ये अर्चामूलस्य न्यूनतः ॥१६८॥

ફરી ચૈઈદ્ર (દેવકુલીકાઓ)ના આરંભથી છન્નુ-૯૬ પ્રદક્ષિણાએ અને ચાર મૂળ ખૂણાના અને આઠ મહાધર (ચાલુ પંક્તિમાં મોટા મંદિરો આવે તે મહાધર) એમ મળીને કુલ ૧૦૮ એકસો આઠની સંખ્યા જાણવી. તેની ઉપર ફરી આઠનું પ્રમાણ હવે સાંભળો. પ્રવેશની નાલી છોડીને મંડપોની ફરી યુક્તિ હે મુનિ, એકાગ્રતાથી સાંભળો. પ્રમુખ ચોમુખના આગળ મંડપનું એક પદનું અંતર છોડીને મેઘનાદ મંડપ આગળ કરવા. વળી એક પદનું અંતર રાખીને ફરી ભ્રમના પદ સાથેનો એવો ઉત્તમ મંડપ કરવો. તે મંડપની મધ્યમાં સમવસરણની રચના કરવી. અને તેની પ્રતિમા મૂળ નાયકથી નાની પધરાવવી. ૧૬૫-૧૬૬-૧૬૭-૧૬૮.

फिर चैइद्र (देवकुलिकाओं) के आरंभसे छियानवे (९६) प्रदक्षिणामें और चार मूल कोनेके और आठ महाधर (चालु पंक्तिमें बढ़े मंदिरों आवें वह महाथर) इस तरह मिलकर कुल १०८ एकसौ आठकी संख्या जानना । उसके पर फिर आठका प्रमाण अब सुनो । प्रवेशकी नालीको छोडकर मंडपोंकी युक्ति हे मुनि, एकाग्रतासे सुनो । प्रमुख चोमुखके आगे मंडपके एक पदका अंतर छोडकर मेघनाद मंडपको आगे करना । और एक पदका अंतर रखकर फिर भ्रमके पदके साथका ऐसा उत्तम मंडप करना । उस मंडपके बिचमें समवसरणकी रचना करना । और उसकी प्रतिमा मूलनायकसे छोटी पधरानी चाहिये । १६५-१६६-१६७-१६८

मंडप स्यांतरे यावत् मंडपाः सभूमिकाः ।
समवसरणं च दातव्यं सन्मुखे च महाधरः ॥१६९॥
एवमा चतुरोदक्ष कारयस्याद्विचक्षण ।
मंडपा चतुरोदक्ष यावत्मष्टोत्तरं शतम् ॥१७०॥
द्वितीया महाधरा मध्ये समवसरण च यावत् ।
द्वयोर्मध्ये च कर्तव्यं समवसर्ण महामुनि ॥१७१॥
तेन माने भवे युक्ति मुनि विद्याधरैर्युता ।
न तेषां दोषदा स्तत्र युक्ति येष्टेन संशय ॥१७२॥
महाधरा द्वितीया पंक्ति प्रदक्षणे त्पृष्टि दीयते ।
भ्रमं तं च जिनालयं शत् मष्टोत्तर (भवे)त्संख्या ॥१७३॥

બે મંડપના અંતર ભાગ સુધી (મધ્યનો) મંડપ ભૂમિ મજલાવાળો ઊંચો કરવો. મહાધરની સન્મુખ સમવસરણ કરવું. એવી રીતે ચારે દિશામાં

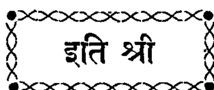
ચતુર શિલ્પીએ કરવુ ચારે તરફ મડપો યુક્ત એકસો આઠ જિનાયતન સુધીની દેવકુલીકાઓની રચના કરવી બીજા મહાધરોની વચ્ચે સમવસરણની રચના કરવી તેમ જ બે મહાધરોની વચ્ચે પણ હે મુનિરાજ, સમવસરણાદિની રચના કરવી તે સર્વ માન પ્રમાણ યુક્તિથી કરવા તેમા મુનીદ્રો, વિદ્યાધરો, ગધર્વાદિના રૂપો સહિત કરવા તેમા વેધ દોષોનો સશય ન રહે તેમ કરવુ મહાધરની બીજી પક્તિમા તેની પાછળ પ્રદક્ષિણા કરવી એ રીતે ભ્રમયુક્ત જિનાયતન એકસો આઠની સખ્યામા રાખવી ૧૬૯ થી ૧૭૩

दो मडपके अतरभाग तक (मध्यका) मडप भूमि मजलेवाला ऊँचा करना। महाधरकी सन्मुख समवसरण करना। इस तरह चारों दिशाओंमे चतुर शिल्पीको करना। चारों तरफ मडपोसे युक्त एकसौ आठ जिनायतन तककी देवकुलिकाओंकी रचना करना। दूसरे महाधरोंमे समवसरणकी रचना करना। और दो महाधरोंके विच भी हे मुनिराज, समवसरणादिकी रचना करना। उसमें सब मान प्रमाण युक्तिसे करना। उसमे मुनींद्रों, विद्याधरों, गधर्वादिके रूपोंके सहित करना। उसमे वेध दोषोंका सशय न रहे इस तरह करना। महाधरकी दूसरी पक्तिमे उसके पीछे प्रदक्षिणा करना। इस तरह भ्रम युक्त जिनायतन एकसौ आठकी सख्यामे रखना। १६९ से १७३

इति श्री विश्वकर्मा कृताया क्षीरार्णवे नारद पृच्छाया क्षीरार्णव महा चातुर्मुखादि लक्षण नाम शताग्रेविंशतितमोऽध्याय ॥१२०॥

ઈતિ શ્રી વિશ્વકર્મા વિરચિત ક્ષીરાર્ણવ શ્રી નારદજીએ પૂછેલ મહાચતુર્મુખ લક્ષણ શિલ્પ વિશારદ સ્થપતિ શ્રી પ્રભાશકર ઓઘડભાઈએ રચેલી ગુર્જર ભાષામા સુપ્રભા નામની ભાષા ટીકાનો એકસો વીસમો અધ્યાય ॥ ૧૨૦ ॥ (ક્રમાક અ૦ ૨૨)

इति श्री विश्वकर्मा विरचित क्षीरार्णवमें श्री नारदजीके पूछे हुए महाचतुर्मुख लक्षण शिल्प विशारद स्थपति श्री प्रभाशकर ओघडभाईकी रचि हुई गुर्जर भाषामें सुप्रभा नामकी भाषाटीका का एकसौ बीसवाँ अध्याय ॥ १२० ॥ (क्रमाक अ० २२)



स्थपति प्रभाशंकर ओघडभाई सोमपुरा शिल्प विशारद का संशोधित
प्राचिन शिल्प स्थापत्य कलाका अलभ्य साहित्य ग्रंथों का

प्रकाशन

१. दीपार्णव—

श्री विश्वकर्मा प्रणित शिल्पका प्राचिन महान ग्रंथ ७६ + ४८८ = ५५४ पृष्ठों बड़ी रोयल साइज ३५० लाईन ब्लोक रेखाचित्र, १०५ हाफटोन फोटो ब्लोक सहित-मूल संस्कृत श्लोक और उनके गुजराती अनुवाद-मर्म और टीप्पणके साथ भरपुर संपूर्ण विवरणके साथ दलदार ग्रंथ, अध्याय २७-जीनमें प्रासादका संपूर्ण प्रमाणो अनेक देव-देवीयोंकी शिल्पाकृतीयां :अनेक प्लानों इलिवेशन साथ दीये गये हैं। स्थपति श्री प्रभाशंकरजीका दीर्घ-सक्रीय अनुभवकी प्रसंशा विद्वानोंने की है। ५० पृष्ठकी विद्वद्पूर्ण प्रस्तावना पढ़नेसे संपादक की कुशलता और विद्वद्ताका परिचय होता है। यह ग्रंथ संपादन में ६० प्राचिन ग्रंथोंका प्रमाण दीया गया है। मूल्य रु. २५ पच्चीस डाक खर्च पृथक्।

२–३. प्रासाद मञ्जरी—हिन्दी और गुजराती अनुवादित

मूल संस्कृत साहित्य, हिन्दी-गुजराती अनुवाद पृथक् पृथक् ८० रेखाचित्र हाफटोन ब्लोक २० है। यह ग्रंथ पंदरमी शताब्दीमें मेवाड़में कुंभाराणाके समयमें मंडन सूत्रधारका लघुबंधु नाथजीने ग्रंथ रचना की है। संपादकका शील्पका विस्तृत ज्ञान और विद्वत्ताका परिचय होता है। अनुवादके साथ मर्म-टीप्पणसे भरपुर है। अनेक शिल्पग्रंथोंका प्रमाण दीया गया है। प्रत्येकका मूल रु. ७ सात। डाक खर्च पृथक।

4. PRASADA MANJARI—

मूल सहित अंग्रेजी अनुवाद-उपरोक्त दीये हुए विवरणकी अंग्रेजी आवृत्ति जीनका अंग्रेजी अनुवाद और अन्य विभाग स्थपति प्रभाशंकरजीकी प्रस्तावनाका अंग्रेजी अनुवाद, प्रासादकी १४ जातियाँ वर्तमान प्राप्त शिल्पग्रंथोंका विवरण आदि पुरातत्वज्ञ श्री मधुसुदनभाई अ० ढाकीने अच्छी तरहसे लीखा है। भारतके प्रत्येक प्रांतकी शिल्प स्थापत्य कलाका सुंदर परिचय दीया है। श्री मधुसुदनजी अब अमेरिकन एकेडेमीमें वास्तुशास्त्रके शब्दकोश तैयार कर रहे हैं। यह ग्रंथ प्रेसमें है। मूल्य रु. १५ बारा डाक खर्च पृथक।

५. जिनदर्शन शिल्प—

यह ग्रंथ दीपार्णवके उत्तरार्ध रुप है-इनमें जैन प्रासाद शिखर जिन प्रतिमा लक्षण, परिकर लक्षण, २४ यक्ष, २४ यक्षीणी, दश दीग्पाल नौग्रहो षोडश विद्यादेवी-आदि। जीनमें १७५ देव-देवीयोंका रेखाचित्र स्वरुप फोटा आदि दीया गया है। मूल्य रु. १० दश, डाक खर्च पृथक।

६. वेधवास्तु प्रभाकर—

मूल हिन्दी-गुजराती अनुवाद सहित है। इस ग्रंथमें प्रासादगृह प्रतिमा आदिके वेध दोष आदि अनेक प्रकारके दीये हुए है। विविध प्राचिन ग्रथोंके प्रमाणोंके सार अच्छी तरह दीये हैं। दीपार्णव ग्रथकी पूर्ति रुप है। घर स्थापन शल्यविज्ञान-द्वार स्तभ पाट घंटा आदिके मुहूर्तचक्र-वास्तु-वज्रलेप, सक्षिप्त पुजाविधि मंत्र-पुजाद्रव्यादी सूत्रधार पूजनविधि गणित कोष्टक अनेक विषयोंसे भरपुर अलभ्य सुंदर ग्रंथमें रेखाचित्रों, फोटा आलेखनों आदि दीया हुआ है। मूल्य रु १० दश, डाक खर्च पृथक।

७. वेडाया प्रासाद तिलक—

मूल हिन्दी गुजराती अनुवाद सहीत है। पंदरमी शताब्दीका सूत्रधार वीरपालकी सुन्दर ग्रथ रचना अन्य शिल्पग्रंथोंसे पृथक है, यह ग्रंथ सुंदर छंद रचनासे लीखा है। प्रासाद शिल्पविषयका अपूर्ण ग्रंथका सशोधन कार्य पुरा हुआ है। थोडे रोजमें प्रेसमें जायगा। मूल्य रु १० दश, डाक खर्च पृथक।

८. क्षीरार्णव ग्रंथ। ९. वृक्षार्णव ग्रंथ—

विश्वकर्मा प्रणित है, नारद और विश्वकर्माका सवाद रुप अद्भुत अद्वितिय महाग्रथ है। साधार प्रासादों-चातुर्मुख महाप्रासादोंके विषय सविस्तर दीया हुआ है। तीन साढेतीन भूमिका मेघनादादि मंडप-रचना-द्वादश जया युक्त १२ भूमिका मंदिरकी रचना अनेक मडपो पृथक पृथक प्रकारके कहा है जीनमें अनेक विषयोंकी चर्चा की है। यह दोनु ग्रथ दुष्प्राप्य अवर्णनिय है।

क्षीरार्णव ग्रंथका २२ अध्याय ८०० श्लोक पुरे हैं। क्षीरार्णव ग्रथमें मूल संस्कृत, हिन्दी और गुजराती अनुवाद टीप्पण मर्म प्रत्येक अङ्गका आलेखन अनेक देव-देवीयोंका सुन्दर आलेखन अनेक नकसे-फोटो, श्लोक बत्तीस देवाङ्गनाका मूल संस्कृत पाठ सहित उनका आलेखन दीया हुआ है। शिल्प स्थापत्यके अब तक जो ग्रंथका प्रकाशन हुआ है। उनमें क्षीरार्णवका प्रकाशन अद्भुत है। भूमिका पुरातत्त्वज्ञ विद्वान डॉ मोतीचंद्रजीने लीखी है।

वृक्षार्णव ग्रंथका सशोधनकार्य पूर्ण हुआ है। आशा है के यह ग्रंथ गुजरातकी वडी विद्वद सस्थाकी तरफसे प्रकाशन होनेका सभव है।

क्षीरार्णव ग्रथका मूल्य रु २७ सत्ताईश, डाक खर्च पृथक।

शिल्प स्थापत्य साहित्य-सपादक स्थपति प्रभाशकर ओ० सोमपुरा, शिल्प विशारद

शिल्प स्थापत्यकला साहित्य प्रकाशन
३ पथिक सोमायटी, सरदार पटेल कोलोनी
Publisher अहमदावाद-१३
B P. Sompura & Bros
3 Pahtik Society, *Ahmedabad-13*

गोराव.डी पालीताणा (सौराष्ट्र)
प्रकाशक
बलवतराय प्र सोमपुरा,
आदि भ्रातओ।